द्वितीय संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण: वाराणसी, १९८४
पुनर्मुद्रण : दिल्ली, १९९६

बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७
८, महालक्ष्मी चैम्बर, वार्डेन रोड, मुम्बई ४०० ०२६
१२०, रायपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, मद्रास ६०० ००४
सनाज प्लाजा, सुभाष नगर, पुणे ४११ ००२
१६, सेन्ट मार्क्स रोड, बंगलौर ५६० ००१
८, कैमेक स्ट्रीट, कलकत्ता ७०० ०१७
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
चौक, वाराणसी २२१ ००१

मूल्य : रु० २०० (अजिल्द)
रु० १२५ (अजिल्द)

नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड,
दिल्ली ११० ००७ द्वारा प्रकाशित तथा जैनेन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस,
ए-४५ नारायणा, फेज़-१, नई दिल्ली ११० ०२८ द्वारा मुद्रित

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक फलित-ज्योतिष के विख्यात ग्रन्थ लघुपाराशरी का, जिसको स्वयं मूल-लेखक ने उडुदायप्रदीप नाम दिया है, भाषान्तर है। भाषान्तर का अर्थ हिन्दी अनुवाद नहीं है। स्वयं भाषान्तरकार ने इसको लघुपाराशरी भाष्य कहा है और यह नाम सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है। मूल ग्रन्थ के श्लोंका का अनुवाद तो है ही, इसके साथ बहुत सी ऐसी सामग्री समाविष्ट की गई है जिससे विषय के समझने में सहायता मिलती है। यथा स्थान पाश्चात्य सूत्रों से प्राप्त अवतरण भी दिए गए हैं। मेरा विश्वास है कि जो लोग फलित ज्योतिष से प्रेम रखते हैं और उस विषय का अध्ययन करना चाहते हैं उनको यह पुस्तक हर दृष्टि से उपादेय प्रतीत होगी। मैं स्वयं फलित-ज्योतिष से प्रेम रखता हूँ। इसलिए अपने को इस भाषान्तर के सम्बन्ध में सम्मति देने का अधिकारी नहीं समझता। मूल-पुस्तक "दैवविदाम् मुदे" लिखी गयी थी। इस भाषान्तर के विषय में भी दैवज्ञ ही यथार्थ सम्मति दे सकते हैं। हां एक बात कह सकता हूं। दीवान रामचन्द्र कपूर की ज्योतिष के प्रति जो लगन है वह सर्वथा स्तुत्य है। व्यापार-व्यवसाय में लगे रहत हुए जो व्यक्ति ज्योतिष जैसे विषय में इतना प्रवेश कर सकता है वह निश्चय ही अभिनन्दनीय है। ऐसा विश्वास होता है कि उनके वर्षों के अध्यवसाय के फलस्वरूप जो पुस्तक लिखी गई है वह तद्विषयक विद्वानों को संग्राह्य प्रतीत होगी।

ज्योतिष सम्बन्धी एक ऐसा विषय है जिसमें ऐसे लोगों की भी अभिरुचि है जो इस विषय के विशेषज्ञ नहीं है। सायन-गणना से काम लिया जाय या निरयन से ? लेखक महोदय ने इसकी चर्चा की भी है परन्तु मेरी समझ में यह चर्चा और विस्तार की अपेक्षा करती है। परिशिष्ट 'क' में लिखा गया है "ग्रहजनित प्राकृतिक उपद्रवों का सम्बन्ध पृथ्वी तथा ग्रहों के पारस्परिक स्थानसम्बन्ध से है जिसकी गणना सायन-गणना है—पर मनुष्य के भाग्या-भाग्य में इन उपरोक्त पदार्थों का कोई विशेष स्थान नहीं है। भाग्याभाग्य परिणाम निरयन नक्षत्रों में ग्रहों के प्रवेश तथा उनके भौगोलिक स्थान, इन दोनों के तारतम्य से होता है।" यह सोचने की बात है कि

प्राकृतिक उपद्रवों और भाग्याभाग्य में क्या कोई सम्बन्ध नहीं है ? ज्वालामुखी के विस्फोट से प्रदेश के प्रदेश तबाह हो जाते हैं, भूकम्प सहस्रों मनुष्यों की मृत्यु का साधन बन सकता है। फिर यह कैसे मान लिया जाय कि भाग्याभाग्य के निर्णय में सायन-गणना का स्थान नहीं है ? यह ठीक है कि फलादेश में राशियों के प्रभाव का भी महत्त्व है परन्तु लेखक की यह बात कैसे मान ली जाय कि सायन प्रणाली सर्वथा तर्क-विरुद्ध है। प्रत्येक क्षण में प्रत्येक ग्रह, प्रत्यक्षरूप से किसी न किसी राशि में, किसी न किसी नक्षत्र के सामने, रहता ही है। मान लिया जाय कि किसी काल में सूर्य सायन-दृष्टि से मकर राशि में है परन्तु निरयन दृष्टि से धनु में। लोगों के भाग्य पर धनुराशि के तारकाओं का भी प्रभाव पड़ता है और मकर का भी, ऐसी दशा में मकर के नक्षत्र को लेकर क्यों न फलादेश किया जाय। यह भी तो नहीं है कि तारे सर्वथा अचल हैं। बहुत मन्द गति से हिलते हैं। हिलने का प्रभाव हजार दो हजार वर्षों में न दीख पड़े परन्तु दस बीस हजार वर्षों में तो देख पड़ता ही है। तारकपुञ्जों की आकृति बदल जाती है। जो तारा आज एक राशि में है कल वह खिसक कर दूसरी राशि में हो सकता है। यदि इन सब विषयों पर कुछ विस्तार से विचार हुआ होता तो पुस्तक साधारण पाठक के लिए कुछ अधिक रुचिकर हो जाती। सम्भवतः उनलोगों को जो स्वयं ज्योतिष के विद्वान हैं यह सब शंकाएँ सताती ही नहीं। मैं एक बार फिर दीवान रामचन्द्र कपूर को उस श्रम और लगन के लिए बधाई देता हूं जिसके बिना ऐसी पुस्तक का लिखना निश्चय ही कठिन होता।

जयपुर
दिनांक मार्च ३, १९६४ ई०

सम्पूर्णानन्द
राज्यपाल, राजस्थान
(भूतपूर्व मुख्यमन्त्री, उत्तरप्रदेश-शासन)



दीवान रामचन्द्र कपूर

जन्म काशी में ता० २० दिसम्बर सन् १९०१ ई०

समर्पण

—:❋:—

पूज्य-श्रद्धास्पदा माता श्रीमती यमुनादेवी तथा
पूज्य-श्रद्धास्पद पिता योगीराज दीवान बालमुकुन्द जी
कपूर (जिनके पार्थिव शरीर अब इस संसार
में नहीं हैं) के प्रति परम श्रद्धा से यह
लघुपाराशरी-भाष्य पुष्प के रूप में उनकी
स्मृति में अर्पित करता हूँ, जिनकी
छत्रछाया में पले इस शरीर ने बहुत
सुख पाया तथा जिनकी प्रेरणा से
खत्री परिवार के इस व्यव-
सायी सदस्य में
विद्याध्यसन की
प्रवृत्ति हुई ।

—:❋:—

रामचन्द्र कपूर
(वाराणसी)

जिस प्रकार समस्त दर्शन और पुराणधर्मशास्त्रादि ग्रन्थों का सार श्रीमद्-भगवद्गीता में निहित है जिनकी अनेक मनीषियों की टीकायें होने पर भी किसी में सर्वथा अर्थसम्पन्नता नहीं देखी जाती है—उसी प्रकार उडुदाय प्रदीप लघुपाराशरी में समस्त ज्योतिष जातक दशाफल ग्रन्थों का सार भरा है जिसकी अनेक ज्योतिषज्ञों की अनेक टीकाएं हो चुकी किन्तु किसी में इयत्ता नहीं हो पाई। अतः—काशी के सुप्रसिद्ध नागरिक विद्वद्वंशोद्भव-सुप्रतिभा सम्पन्न दिवान श्री रामचन्द्र कपूर ने इस पर एक सविस्तार हिन्दी भाषा भाष्य लिखकर ज्योतिष जगत् का परम उपकार किया है। इस भाष्य में मूल श्लोकों के अन्वय-अर्थ लिखकर युक्ति सहित उदाहरण द्वारा तत्त्वार्थ समझाने का सुप्रयास किया गया है। आशा है—ज्योतिष शास्त्र प्रेमी अन्यटीकाओं के पढ़ने के बाद इस भाष्य को सावधानतया पढ़कर अवश्य सन्तुष्ट होंगे। यहाँ अधिक लिखना सूर्य को दीपक दिखाने का प्रयास होगा।

सीताराम झा

आभार प्रदर्शन

महामान्य डा॰ श्रीसम्पूर्णानन्द जी महोदय, राज्यपाल राजस्थान का लेखक अनुगृहीत है जिन्होंने कृपाकर इस लघुपाराशरी भाष्य पर प्राक्कथन में अपना सारगर्भित स्वतन्त्र मन्तव्य व्यक्त किया है। और राजकाज में व्यस्त रहते हुए भी इस काम के लिए अपना अमूल्य समय दिया है। महामान्य के सुझावों पर तथा अन्य विद्वानों की सम्मतियां प्राप्त होने पर इस ग्रन्थ के अगले संस्करण में यथोचित संशोधन तथा परिवर्धन कर दिया जायगा। मनुष्य के भाग्याभाग्य जानने के लिए निरयन फलादेश प्रणाली तथा प्राकृतिक उपद्रवों के लिए सायन प्रणाली अभीष्ट है इस पर भी अगले संस्करण में विस्तार से विवेचना की जायेगी। परिशिष्टों के क्रम में भी परिवर्तन किया जायेगा।

मान्य ज्योतिषी पण्डितवर श्री सीतारामजी झा, का लेखक अनुगृहीत है जिन्होंने इस ग्रन्थ के भाष्य पर अपनी अमूल्य तथा स्वतन्त्र सम्मति प्रदान की है। उन्होंने लघुपाराशरी पर अपनी टीका भी की है जो प्रकाशित हो चुकी है फिर भी उन्होंने इस भाष्य पर साधुवाक्य लिखे यह उनकी उदारता है। लेखक सभी विद्वानों का अनुगृहीत होगा जो इस भाष्य पर अपनी स्वतन्त्र सम्मति प्रदान करेंगे और सुझाव देंगे।

रामचन्द्र कपूर

लघुपाराशरीय भाष्य

एक विचार

मयैवैते निहताः पूर्वमेव, निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्

(गीता अ० ११ श्लो० ३३)

महाभारत के युद्धक्षेत्र में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा:—

"हे सव्यसाची, ये सब शूरवीर मेरे द्वारा पहले ही से मारे जा चुके हैं तू तो केवल निमित्त होजा (है) ।

Events do not happen, they already exist but are seen on time machine only (Ei nstine)

घटनाएं घटती नहीं, वे घटित रहती हैं जिन्हें केवल समय के व्यवधान से ही देखा या जाना जा सकता है ।

(विश्व के एक प्रमुख वैज्ञानिक आचार्य आइन्स्टीन)

स्व अस्तित्वभान वर्तमान (feeling of self-existence in present-tense) से हम जिस भी घटना को देखते हैं उसे देखने के समय से पहले उस घटना से चल चुके हुए प्रकाश के सहारे देख पाते हैं, इसलिए किसी एक द्रष्टा के लिए उसके सभी दृश्य (दृष्ट वस्तु वा घटनाएं) उसकी गत अवस्थाएं ही होती हैं । साथ ही साथ वे घटनाएं दूसरे गतद्रष्टा के लिए भविष्य का विषय बन चुकी रहती हैं पर वे द्रष्टा की सापेक्षता से भूत वा भविष्य का विषय बन जाती हैं । यह भूत व भविष्य को एक इकाई वैशेषिक के कालदिक् के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध का एक फल है । यदि यह सम्बन्ध स्थित न हो तो विश्व में अनवस्था (chaos) आ जाए । यह सब होते हुए द्रष्टा-पुरुष दृष्ट से असंग है । "द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः" योगसूत्र २।२० ।

ज्योतिष का गोल, गणित तथा फलित विज्ञान विश्व के भूत भविष्य सम्बन्ध की समस्त कड़ियों को जानने के प्रयास में है । उसका यह वैज्ञानिक

प्रयास पूर्णरूपेण अभी सफल नहीं हुआ है पर उसका एक लघु तथा संकीर्ण प्रयास, मनुष्य के भाग्याभाग्य जानने के प्रसंग में बहु समुदाय का विश्वास पाने में तो आंशिक सफल अवश्य रहा है।

जिस प्रकार वट के बीज में एक विशाल वटवृक्ष समाया हुआ है और वह अनुकूल भूमि तथा अनुकूल जलवायु में पनपता व फैलता रहता है और उसी वातावरण में (प्रकृति की देन रहते हुए भी) समाप्त हो जाता है और जिस प्रकार फैलने में वट की डालियां वहीं से अंकुरित होती हैं जहां से उनका उस छोटे से बीज में स्थान नियत है उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति (मनुष्य) का विकास उसके कर्माशय पुंज-गर्भज पिंड में उसके छिपे (दृष्टादृष्ट) 'व्यक्तित्व' के अनुरूप परिवार-समाजरूपी भूमि में ग्रहजनित विपरीत या अनुकूल वातावरण में होता रहता है। वृक्ष अचल प्राणी है। मनुष्य चल है इसलिए उसके विकास का सहायक स्थल समस्त विश्व है और उसके विकास की निर्धारित दिशा तथा उसका फैलना ग्रहाधीन है।

रामचन्द्र कपूर

द्वितीय संस्करण की भूमिका

मुझे अपने ८३वें वर्ष में इस ग्रन्थ के द्वितीय संस्करण को मान्य पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में बड़े हर्ष का अनुभव हो रहा है।

इस द्वितीय सस्करण में हमने उडुदाय प्रदीप ग्रन्थ के समस्त श्लोकों का भाष्य पूर्ववत् ही रक्खा है, उसमें कोई संशोधन, परिवर्तन व परिवर्द्धन नहीं किया है। पूर्वतः परिशिष्ट हटा दिए गए हैं। मूल ग्रन्थ के भाष्य में कोई परिवर्तन न करने का कारण यह है कि आज से लगभग २५ वर्ष पूर्व हमने इसका भाष्य अपने काशीस्थ वरुणातट के उद्यान वरुणाश्रम में परम शान्त वातावरण में लिखा। ग्रन्थ के सिद्धान्तको हृदयंगम किया और उसके फलको अंकों में परिणत करने का प्रयास किया। अब यदि हम अन्य लेखकों के विचार को उसमें अर्थात् अपने भाष्य में स्थान दें तो पाठकों को निर्णय लेने में भ्रम हो जायगा, साथ ही हमारी अंकों की श्रृंखला भी टूट जाएगी। अस्तु हमने मान्य पाठकों के आगे भाष्य पूर्ववत् जैसे का तैसा रख दिया है। यदि किसी विद्वान या विद्यार्थी को हमारे भाष्य व श्लोकों के अर्थ में कोई शंका हो तो वे दूसरा ग्रन्थ देखकर निर्णय ले सकतेहैं। हमने सही अर्थ का प्रयास किया है पर हम यह दम्भ नहीं भर सकते कि अर्थ सब इत्थंभूत है। उडुदाय प्रदीप ग्रन्थ पर कोई भाष्य स्वयं ग्रंथकार का नहीं है, कई श्लोक क्लिष्ट भी हैं, इसलिए हमारा भाष्य करना ग्रंथकार के हृदय तक पहुँचाने का प्रयास रहा है। यदि कहीं भावार्थ में त्रुटि रह गई हो तो कृपया पाठक हमें उसका सुझाव दें ताकि आगे उसका सुधार किया जा सके। अस्तु।

इस संस्करण में हम गोचर तथा ग्रहारिष्ट प्रकरण जोड़ना चाहते थे पर पुस्तक का आकार बड़ा हो जाने से नहीं जोड़ा गया। पर हमारा मत है कि विंशोत्तरी दशा के ग्रहों के दशान्तरदशा के समय उन ग्रहों के गोचर स्थान पर भी ध्यान देना चाहिए। क्यों कि गोचर का प्रभाव सामूहिक होता है पर वह कुछ हद तक व्यक्ति विशेष पर भी प्रभाव डालता है, विशेषतया गोचर, शनि, बृहस्पति और राहु का। गोचर प्रकरण हमारी दूसरी पुस्तक 'काल चक्र' में है, पाठक गण उसका उपयोग वहाँ कर सकते हैं। गोचर प्रकरण में हमारा एक विशेष सुझाव है कि प्रबल कारक व मारक ग्रहों की दशा के समय उन

सायन सौर वर्ष का अर्थ है कि सूर्य जब पुनः विषुव + क्रांतिवृत्त के सायन पर आ जाए। अर्थात् जब पृथ्वी सूर्य की एक बार परिक्रमा कर ले। वास्तव में यही वैज्ञानिक व व्यवहारिक वर्ष है। ऋतुओं का इसी से सम्बन्ध है। यह सौर मण्डलीय व्यवस्था है पर चूंकि भारतीय ज्योतिष में नक्षत्र मण्डल तथा सौर मण्डल इन दोनों मण्डलों के तारतम्य से फलादेश स्थिर किया जाता है इसलिए विंशोतरी दशा में भी निरयन सौर वर्ष का ही मान है जिसका अर्थ है कि सूर्य एक बार जब पुनः अश्विनी तारे पर (नक्षत्र मण्डल के आरम्भ) स्थान पर आ जाए। नक्षत्र मण्डल सौर मण्डल से विलोम गति से ५०.२ विकल की गति से उक्त सम्पात से पीछे की ओर खिसक रहा है और आज दिन उसका सायन विषुव-क्रांति संपात से पीछे २३°.३८″ चला गया है इसलिए सूर्य को क्रांति सम्पात से इस स्थान तक पहुँचने में लगभग १५ दिन और लगते हैं। इसलिए सायन और निरयन सौर दिवस का अन्तर २० मि. २३.४६ से. है। निरयन वर्ष सौर से इतना अधिक है। अस्तु,

दशा में चान्द्र वर्ष उपयुक्त नहीं है। तिथियां घटती बढ़ती रहती हैं। मासों में घटना होता है। तीसरे वर्ष सम्वत् वर्ष में एक मास जोड़ दिया जाता है अस्तु यह एक स्वाभाविक वर्ष भी नहीं है। चन्द्रमा जब एक बार पृथ्वी के साथ-साथ जब पुनः अश्विनी पर पहुँचे तो वही असली चान्द्र वर्ष है यह प्रचलित तिथियों वाला चान्द्र वर्ष तो असम है नाक्षत्रिक वर्ष भी दशा प्रसंग में अनुपयुक्त है। चन्द्रमा के नाक्षत्रिक समय का मान अर्थात् नाक्षत्रिक वर्ष का मान २७.३२१६६०८ दिन है। इसे १२० से गुणा किया तो विंशोतरी

व. मा. घ. से.

दशा चन्द्र का समय ३२७८.५९.९२ दिन अर्थात् सौर मान से ८ ११ १७ ०५ होता है। यदि चान्द्रमास वाले वर्ष को लिया जाए तो एक चान्द्र वर्ष का

दि. दि. घ. मि. से.

मध्यममान से ३५४ ३६७०६ अर्थात् ३५४ ०८ ४८ ३४ है। १२० से गुणा तो=४२५२४.०४७ दिन=निरयन सौर वर्ष से चान्द्र वर्ष का अन्तर १०.८८९३ दिन का है। चान्द्र वर्ष सूर्य से दूना छोटा है। इसे सौर से मिलने में तीसरे वर्ष एक मास जोड़ देते हैं। अस्तु यह वर्ष विंशोत्तरी दशानयन में अव्यवहार्य है। ढूंढना पड़ेगा मलमास व अधिमास का वर्ष।

ग्रहारिष्ट

प्रायः लोग किसी विपत्ति के समय ज्योतिषी के यहाँ आते हैं और वे

केवल यही नहीं जानना चाहते कि वे किस ग्रह से पीड़ित या त्रस्त हैं, उसके निराकरण का उपाय भी जानना चाहते हैं। ज्योतिषी लोग प्रायः अपनी शैली से वर्तमान अनिष्ट प्रद ग्रह की उपासना आदि का उपाय बताते हैं। प्रश्न उठता है कि क्या ग्रहों के मन्त्र जाप या अनुष्ठान आदि से अरिष्ट टल जाते हैं। इस विषय में तो प्रमाण शास्त्र तथा श्रद्धा है। खगोल शास्त्र (Astronomy) में तो इसकी चर्चा नहीं है। इस शास्त्र के अनुसार सभी ग्रह निर्जीव ठोस जड़ पदार्थ हैं, उनमें किसी व्यक्ति विशेष के अरिष्ट को दूर करने की क्षमता कहां से आई। हां, उनमें प्रकृति की नियति के मातहत हर प्राणी, पृथ्वी के हर कण-कण पर अपने-अपने ढंग का प्रभाव तो पड़ ही जाता है। यह प्रभाव पृथ्वी के निरयवी पदार्थ पर तो भौतिकीय पड़ रहा है जैसे सूर्य की स्थिति से ताप तथा ऋतुओं में परिवर्तन, चन्द्रमा से ज्वार-भाटा पर चूंकि मनुष्य में प्रकृति की ही देन मन बुद्धि अहंकार भी है जो जड़ ही है उस पर ग्रहों के पृथ्वी के स्थूल पञ्चतत्व पर पड़ने वाले स्वभाव से भिन्न होता है। प्रत्यक्ष है कि पृथ्वी पर भूकम्प की स्थिति उत्पन्न होने पर मानव में कम्पन नही होता। अस्तु ग्रहों का मानव जीवन पर प्रभाव तो अनेक प्रमाणों से सिद्ध है पर क्या उनकी पूजा से उस प्रभाव में कमी आ जा सकती है। इसका उत्तर मूर्तिपूजा है। लोग अभीष्ट देव की मूर्ति की पूजा से अभीष्ट सिद्धि प्राप्त करते हैं जबकि मूर्ति जड़ है और देवता काल्पित है अर्थात् उनके रूप की कल्पना की गई है। इसी प्रकार ग्रहों को मूर्ति मान करके उनकी उपासना का फल होता है,ऐसा शास्त्रकारों का विश्वास है। वेदों में तो अग्नि, वायु, वरुण जो जड़ हैं उनकी उपासना का भी विधान है। वेदों में ग्रहों के मन्त्र भी हैं। वेदप्रतिपादित होने से ग्रहशान्ति प्रामाणिक है। परन्तु ग्रहों के अरिष्ट निवारण या उत्थान के लिए नगों का धारण करना तो पूर्णतया वैज्ञानिक है। ये नवग्रहों के रत्न तत्तद् ग्रहों की रश्मियों को अपने में समेटते हैं। इसलिए यदि किसी अरिष्टप्रद ग्रह की दशा हो उस ग्रह संबंधी रत्न को अंगुली में धारण करने से उस ग्रह की राशि उस रत्न में संग्रहीत होती रहेगी पर यदि वह रत्न शरीर को स्पर्श करें तो उसका प्रवाह शरीर में भी होने लगेगा इसलिए अरिष्ट के समय अरिष्टप्रद ग्रह का नग नहीं धारण करना श्रेयस्कर है, यदि किया भी जाय तो वह शरीर से स्पर्श न करे। इससे अच्छा है कि उस समय जातक की कुण्डली में जो सर्वश्रेष्ठ योगकारी ग्रह हो और यदि वह दशाधीश का शत्रु हो तो उसके धारण करने से निश्चय से अरिष्ट

में कमी हो जाएगी यह मेरा निजी मत है। यही स्थिति ग्रह सम्बन्धी जड़ी की है।

भाग्य और ग्रह

मूल प्रश्न है कि मनुष्य के भाग्य का निर्माता उसका कर्मफल है। आज कल जहाँ दर्शनों में तो ग्रहों की चर्चा है ही नहीं। इस जन्म में मनुष्य को अपने पिछले किए कर्म समुदाय का फल दुःख और सुख होता ही है जो अनिवार्य है। इसीको भाग्य या प्रारब्ध कहते हैं। इसके अधीन जीवन में बंधी घटना होकर रहती है। तो फिर क्या मनुष्य एक असहाय भोग-पिण्डमात्र है? ऐसा नहीं, हर मनुष्य अपने जीवन में स्वतन्त्र कार्य भी, चेष्टाएँ भी करता रहता है जिसे क्रियमाण कहते हैं। घटनाक्रम में जब प्रारब्ध बली होता है तो पूर्व निर्धारित फल ही घटकर रहता है। जब क्रियमाण बली होता है तो वह प्रारब्ध को ढकेलकर उसमें परिवर्तन ला सकता है। चूँकि प्रारब्ध जन्मजन्मान्तर के संस्कारों, कर्मों का फल है अस्तु उसके प्रभाव को अक्षुण्ण करने के लिए क्रियमाण बहुत बली होना चाहिए।

अब प्रश्न उठता है कि प्रारब्ध में ग्रहों का क्या हाथ है। स्पष्ट है कि कोई भी भोग किसी काल में होता है। सभी फल या सजाएँ एक साथ नहीं भुगतनी पड़ती तथा सभी भोग एक तरह के नहीं होते। और सभी प्रकार के भोगों की सजा भी एक सी नहीं होती और उनका समय भी भिन्न-भिन्न होता है यही स्थिति ग्रहों की है इस ससार में भी Penalcode में भिन्न-भिन्न अपराधों की सजा भिन्न-भिन्न है तथा उनके समय की सीमा निर्धारित तथा विभिन्न Seetar का Twal अलग-अलग अधिकारी करते हैं। इसी प्रकार मानव के समस्त प्रकार के वैभव तथा समस्त प्रकार के अनिष्ट के काम व स्थान का निर्धारण करना तत्तद सजा देनेवाले अरिष्टप्रद या इनाम देनेवाले कारक ग्रहों के आधीन है पर सजा तो पूर्वकृत कर्म की ही होती है ऐसा हमारा मत है।

हमारे इस ग्रन्थ से यदि किसी एक भी पाठक को लाभ पहुँचा तो हम अपनेको कृत-कृत्य मानेंगे।

ज्योतिषां ज्योतिरेकं, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

विनीत

रामचन्द्र कपूर

C K११/४ ब्रह्मनाल, वाराणसी

ता. १।७।१९८४

इस ग्रन्थ के भाष्य में प्रयुक्त विशिष्ट वाक्यों संकेतों तथा चिन्हों के अर्थ

चिह्न

= इस चिह्न का अर्थ है "अर्थात्" "का अर्थ है।"

उदाहरणः—सू चं=अर्थात् सूर्य और चन्द्रमा

सू+चं=इसका अर्थ है कि सूर्य और चन्द्रमा यदि आपस में सम्बन्ध करें।

× दो ग्रहों के बीच में जहां × का चिह्न हो वहां उसका अर्थ है "यदि वे दोनों ग्रह परस्पर सम्बन्धित हों।" ग्रहों के परस्पर सम्बन्ध की व्याख्या इस ग्रन्थ के पृष्ठ संख्या ३९ से ४५ तक में दी हुई है।

उदाहरणः—सू × च का अर्थ है। कि "यदि सूर्य तथा चन्द्रमा परस्पर सम्बन्धित हों।"

+ ग्रहों के आगे जहाँ + का चिह्न तो और उसके आगे कोई संख्या दी गई हो तो वहां + का अर्थ उन ग्रहों के शुभत्व से है। वहां + शुभ का बोधक तथा + के बाद की संख्या शुभत्व के परिणाम की संख्या है। दशा प्रसंग में द्वादश कुंडलियों के शुभ अशुभ तथा मारकेश फल के परिणाम को लेखक ने अपनी योजना द्वारा अंकों में परिणित करने का प्रयास किया है।

उदाहरणः—योगजफल सारणियों में जहां श+सू=+९ ऐसा उल्लेख है वहां उसका अर्थ है कि उस कुण्डली में शनि तथा सूर्य का योगजफल शुभ है और उस शुभ की संख्या नौ है। यों तो प्रत्येक लग्नकुंडली के शुभ योगों के गुणों की संख्या की चरमसीमा भिन्न-भिन्न है पर साधारण तया सभी योगों के शुभफल की चरमसीमा + १७ तक तथा पापफल —१७ तक आंकी गई है। +० से + ४ तक समफल तथा + ४ से + १७ तक क्रमशः शुभफल की उत्तरोत्तर वृद्धि समझनी चाहिए। इसी प्रकार ० से —४ तक की अशुभ की ओर समफल तथा—४ से —१७ तक पाप फल समझना चाहिए।

± जहां ग्रहों के फल की संख्या + के नीचे — की रेखा हो वहां उसका अर्थ है कि उक्त अंतरेश के अन्त में अशुभ फल होगा।

उदाहरण:—योगफल प्रसंग में मिथुन कुंडली में बृ+बु=±११ लिखा है वहां उसका अर्थ है कि बृहस्पति मारकेश है इसलिए बुध की दशा बृहस्पति के अन्तर में आरंभ में + ११ शुभफल होकर उत्तरोत्तर अन्तर के अन्त तक अशुभ फल हो जायगा।

— जहां दो ग्रहों के बीच — ऐसा चिन्ह हो वहां – का अर्थ है "असंबंध" अथवा "ये यदि परस्पर सम्बन्धित न हों तो।

उदाहरण। सू—चंद्रमा का अर्थ है सूर्य और चन्द्रमा यदि सम्बन्धित न हों अथवा सूर्य चन्द्रमा परस्पर सम्बन्धित न हों।

| जहां दो ग्रहों के बीच। खड़ी रेखा हो वहां उसका अर्थ "अंतरदशा" से है, उदाहरण। सू। चं=सूर्य की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर।

/ जहां दो ग्रहों के बीच ऐसी / तिर्यक रेखा हो वहां उसका अर्थ "दृष्टि" से है। इस ग्रन्थ में ग्रहों की दृष्टि के नियम अन्य जातकग्रहों से भिन्न हैं।

, उदाहरण। सू / चं=सूर्य पर चन्द्रमा की दृष्टि।
जिस ग्रह के आगे , ;का चिह्न हो वहां उसका अर्थ "अथवा" से है।
उदाहरण। सू; चं=सूर्य अथवा चन्द्रमा।

भाव [क] यदि १, २, ३, ४, आदि कोई अंक किसी ग्रह के पूर्व अंकित हो तो वहां अंक "भाव" का सूचक है।

उदाहरण। १ सू=लग्नस्थ सूर्य, ८ सू=अष्टमस्थ सूर्य।

[ख] भावों वा गृहों के अधिपतियों के संकेत भावों के नाम के प्रथमाक्षर से होते हैं।

उदाहरण। ल=लग्नेश. द्वि=द्वितीयेश, तृ=तृतीयेश इत्यादि।
पर कुण्डली के प्रथम भाव को लग्न, अष्टम को अष्टम अथवा रंध्र, नवम को नवम तथा भाग्य, एकादश को आय, द्वादश को व्यय के नाम से सम्बोधित किया है यथा एकादश भाव के अधिपति को आयेश संज्ञा पड़ी।

[ग] केन्द्रेश=लग्न, चतुर्थ, सप्तम वा दशम गृह के स्वामी, मारकेश= द्वितीय, सप्तम-गृह के स्वामी।

[घ] द्वादश भावों की संज्ञा सामान्य ग्रन्थों में दी हुई है। इन्हें गृह भी कहते हैं। पर इस ग्रन्थ में भावों की शुभाशुभ संज्ञा मात्र है. उन भावों से किस बात का विचार होता है यह जातक फलादेश का विषय है।

ग्रह—[क] ग्रहों का संकेत उनके प्रथमाक्षर से किया गया है।

उदाहरण:—सू=सूर्य, चं=चन्द्रमा, मं=मंगल इत्यादि।

[ख] प्रसंगवश, के=केन्द्रेश, त्रिक=तृषडायेश, त्रि=त्रिकोणेश, मा= मारकेश, स=सदोष ग्रह [त्रिषडायेश], नि=निर्दोष त्रिषडायेशा-तिरिक्त त्रिकोणेश, म=मह.दशा, अं=अंतर, न=नक्षत्र च=चरण।

[ग] ग्रहों की राशि का कोई पृथक संकेत नहीं है। राशि संकेत के लिए ग्रह के आगे अंक पर "रा" लिख दिया गया है अथवा यों ही छोड़ दिया गया है। अं से अंश जिसका चिह्न अंक के ऊपर ° है. क=कला, संकेत' वि=विकला, संकेत" व=वर्ष, मा= मास, दि=दिवस। घं=घंटा, मि=मिनट, से=सेकेण्ड; ग्रहों के राश्यादि स्पष्ट में राशि को एक अंक कम करके लिखा गया है।

उदाहरण:—[१] चन्द्रस्पष्ट ५।१०°।१०'।३२"=चन्द्रमा कन्या राशि में दश अंश, पन्द्रह कला तथा तीस विकला पर था। वहाँ राशि के ५ अंक को छठी राशि मानने की प्रथा है। जिसका अर्थ है कि चन्द्रमा पांचवीं राशि के बीत जाने पर छठी राशि के १० अंश पर था। गणना में यही उपयुक्त है।

वर्षादि—[क] वर्षादि का अर्थ है वर्ष मास दिवस घटी पल।

उदाहरण—वर्षादि ५।३।२०।१०।१५=पांच वर्ष, तीन मास बीस दिन, दश घटी तथा पन्द्रह पल।

[ख] ग्रहों की दशा में वर्ष मास दिवस का मान सौर वर्ष, मास दिवस से है।

उदाहरण—संवत् २०२०।२।१५=सम्वत् २०२० के मिथुन राशि के पन्द्रह अंश पर सूर्य था। इस सौर जेष्ठ की

पन्द्रहवीं तिथि अथवा सूर्य प्रविष्टे मिथुन गतांश पन्द्रह भी कहते हैं।

[ब] भारतीय पञ्चांगों में वर्ष का अर्थ निरयन सौर वर्ष है जिसका मान ३६५ दि. १५ घ. ३१ प. ३० वि. है विकल्प से अंग्रेजी मान ३६५ दि. ६ घं. ९ मि. ८·९७ से. है। जन्म समय में इतना जोड़ देने से जातक के प्रथम वर्ष की समाप्ति तथा द्वितीय वर्ष का आरम्भ रोता है। उस समय पर जो लग्न तथा ग्रह स्पष्ट होगा वह जातक के द्वितीय वर्ष प्रवेश की ताजिक कुण्डली होगी। इसी प्रकार प्रत्येक वर्ष का मान बढ़ता जाता है।

जातक'—जिस किसी व्यक्ति की जन्मकुण्डली पर विचार किया जा रहा हो, उस कुण्डली का वह जातक होता है।

ताजिक'—जन्म कालिक कुण्डली के स्थायी ग्रहों से उसके भाग्याभाग्य जानने की रीति को जातक फलादेश कहते हैं। वार्षिक कुण्डली से फल जानने की रीति को 'ताजिक' कहते हैं। नक्षत्रों से उनके स्वामियों से सामयिक फलादेश की रीति को नक्षत्र दशा पद्धति कहते हैं जिनमें से एक विंशोत्तरी दशा है। जिस किसी समय किसी जातक के विचार करने वाले समय के ग्रहों से उसका विचार किया जाता हो उसे गोचर कहते हैं।

वाक्य

'शुभ फल नहीं देता'

इस ग्रन्थ में जब तक किसी ग्रह या ग्रहों के योगजफल को पापफलद न कहा गया हो तब तक उसे अनिष्ट वा पापफलद नहीं समझना चाहिए। जहां यह कहा गया हो कि अमुक ग्रह या योग "शुभफल नहीं देता"। 'न दिशन्ति शुभं नृणाम' वहां इसका अर्थ यह समझना चाहिए कि वह न शुभफल देता है और न पापफल अर्थात् वहां फल सम होता है।

कारक नहीं

योगजफल सारणियों में कहीं कहीं ग्रहों के फल के आगे "कारक नहीं" लिखा है। वहां उसका अर्थ है कि वे ग्रह इस ग्रन्थ की संज्ञा-

नुसार "कारक" तो है पर लेखक के मत से वे दशाप्रसंग में परस्पर-दशान्तर में शुभफल नहीं देंगे। इस ग्रन्थ में केन्द्र त्रिकोण पतियों के परस्पर सम्बन्ध को "कारक" सम्बन्ध कहा है और उन कारक ग्रहों का फल शुभ माना गया है।

सौम्य तथा क्रूर

(क) जातक ग्रन्थों में सूर्य मंगल शनि राहु केतु यह ग्रह क्रूर माने गये हैं। पापयुत बुध तथा क्षीण चन्द्रमा भी पापी हो जाता है। चन्द्र बुध शुक्र वृहस्पति ये सौम्यसंज्ञक ग्रह हैं। पर इस ग्रन्थ में न कोई ग्रह क्रूर (पापी) है और न कोई शुभ। सभी ग्रह ग्रन्थ की परिभाषा तथा कुण्डली स्थित ग्रहों की परिस्थितियों पर शुभ तथा पापी हो जाते हैं।

उदाहरण:—जातक ग्रन्थों में मंगल क्रूर ग्रह है पर इस ग्रन्थ की संज्ञानुसार कर्क लग्न कुण्डली में मंगल ग्रह पंचमेश-दशमेश होकर दशाप्रसंग में कारक बनकर शुभ हो जाता है। वही मंगल कन्या कुण्डली में तृतीयेश-अष्टमेश होकर पापी हो जाता है। जातक फलादेश के अनुसार उच्चस्थ वृहस्पति शुभ ग्रह है। जब कि वहां वृष लग्न कुण्डली में अष्टमेश-एकादशेश होकर दशा में परम पापी हो जाता है अथवा मिथुन कुंडली में सप्तमेश होकर मारकेश हो जाता है। लेखक ने भाष्य की सारणियों में मारकेशों की दो श्रेणी करदी हैं। एक वे जो मारते नहीं पर मरणतुल्य अवस्था वा अरिष्टफल देते हैं दूसरे जो दशान्तर में मार देते हैं। जो अरिष्टफल देते हैं लेखक ने उन्हें मारकेश मात्र कहा है तथा मारनेवाले ग्रहों को मारक-मारकेश संज्ञा दी है।

इस ग्रन्थ के अनुसार ग्रहों की दशा का फल जातक के जीवन की परिवर्तित अवस्थाओं से सम्बन्ध रखता है। जिस जातक के जन्मज ग्रह वा नक्षत्र उत्तम होते हैं उसे लोग "नक्षत्री जीव" कह कर सम्बोधित करते हैं। उसके जीवन में घटने वाली अशुभ घटनाओं का प्रभाव लोगों को देखने में अक्षुण्ण रहता है। ग्रहों की दशा जातक के 'बुरे या अच्छे दिन' संज्ञक होते हैं। इसलिए जन्मकालिक ग्रहों के बल तथा दशाकाल में उन ग्रहों की इस ग्रन्थ की शुभाशुभ संज्ञा के अनुसार फल इन दोनों के सामञ्जस्य से आंकना चाहिए।

(ग) इस ग्रन्थ में ग्रहों के अकेले बैठने तथा योगज फल को केवल शुभ अशुभ-पाप, मारक कहा है। तत्तत्पापी या शुभ ग्रह जातक के जीवन में उसके किस अंग पहलू पर प्रभाव डालते हैं अथवा किस अर्थ में शुभ वा पापी हैं अथवा उसका फल किस दशा में होता है इसका उल्लेख इस ग्रन्थ में नहीं है। इसी प्रकार मारकेशों का अरिष्टफल जातक के लिए किस दिशा में अधिक होता है यह भी स्पष्ट नहीं है। ग्रन्थ के अन्तिम श्लोक में नवमेश-दशमेश के अन्योन्याश्रित योग को राजयोग कहा है और उसका फल जातक के लिए 'विख्यात और विजयी होना' बताया है पर यह स्पष्ट नहीं है कि वह फल उन ग्रहों के दशान्तर में होता है वा जन्मज है। अथवा उसका यह फल उसका व्यक्तित्व है। जातक ग्रन्थों में नवम गृह को धर्म तथा दशम को कर्म स्थान माना है। इस ग्रन्थ में भी इन भावों को वैसा ही मानकर उक्त नवमेश-दशमेश के अन्योन्याश्रित योग को धर्म फल को विख्यात तथा कर्म से विजयी कहा है। इससे यह संकेत होता है कि जिस जिस भाव से जीवन के जिस अंग का विचार होता है, उन गृह स्वामियों के योगज फल से तत्तद् फल की (शुभाशुभ) प्राप्ति होती है।

उदाहरणः—वृष, मिथुन, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु कुण्डलियों में आयेश विशुद्ध पापी हैं तथा ये यदि किसी दूसरे शुभ ग्रह से भी सम्बन्ध करें तो भी शुभ नहीं हो पाते। ऐसी दशा में इन कुण्डलियों के जातकों के आयेश की दशा द्रव्य प्राप्ति में बाधक हो ही सकती है। इसी प्रकार कर्क लग्न के जातक के लिए मंगल ग्रह स्वतः शुभ है। यदि यह ग्रह किसी दूसरे ग्रह से सम्बन्ध न करे तो यह ग्रह अपनी दशा में तथा शुभान्तर में साधारणतया जातक के कर्म तथा बुद्धि का उत्तम संयोग देगा तथा उसे उसमें पुत्र का सहयोग प्राप्त होगा। पर यदि इसका सम्बन्ध दूसरे ग्रह से हो जाए तो उससे सम्बन्धित गृहस्वामी के अनुसार शुभत्व के परिमाण में अन्तर पड़ जाएगा।

(घ) कुण्डली के दो ग्रहों का परस्पर सम्बन्ध साधारणतया चार भावों का सम्बन्ध है इसलिए सम्बन्ध की अनेक परिस्थितियों के कारण ग्रहों के योगज फल की दिशा का आंकना बहुत कठिन हो जाता है। इसलिए लेखक का मत है कि 'कारक' ग्रहों की दशा में जातक के 'अच्छे दिन' तथा पापी ग्रहों की दशा में बुरे दिन', मारकेशों में शारीरिक अरिष्ट से लेकर मृत्यु तक फल समजना उत्तम है।

परस्पर विरोधी वाक्य

इस ग्रन्थ में यदि कहीं किसी ग्रह फल को शुभ और दूसरी परिस्थिति में उसे अशुभ कहा हो तो फल तारतम्य से होगा ।, ऐसा समझना चाहिये । ऐसी स्थिति में लेखक ने वहां 'संदिग्ध' लिख दिया है । भाष्य में ग्रहों के फल आंकने में यत्र तत्र कहीं परस्पर विरोधी वाक्य या अंक आ गया हो तो पाठक कृपया इसकी सूचना लेखक को दें ।

भाष्य

संस्कृत साहित्य में मौलिक सूत्र ग्रन्थों के भाष्य ऋषि-प्रणीत हैं इसलिए भाष्य शब्द सूत्रों की ऋषिप्रणीत विस्तृत व्याख्या के अर्थ में प्रयुक्त होता आया है परन्तु इस ग्रन्थ का नामकरण लघुपाराशरी भाष्य, भाष्य के साधारण अर्थ "क्लिष्ट तथा गूढ़ विषय को समझने योग्य साधारण भाषा में प्रस्तुत करना" में किया गया है । फिर भी ऋषियों के आदरणार्थ तथा भारतीय शिष्टाचार परम्परा का ध्यान रखते हुए भाष्यकार ने इस ग्रन्थ में कहीं भी अपने को भाष्यकार नहीं लिखा है प्रत्युत उसने सर्वत्र अपने को लेखक ही लिखा तथा माना है । साथ ही साथ उसने स्व शरीर में सदा जागृत रहने वाली व्याप्त सप्त ऋषियों की सत्ता का आश्रय लेकर इस ग्रन्थ की टीका की है । इस न्याय से ग्रन्थ की टीका "भाष्य" ही है जिसमें लेखनी तो लेखक की है पर प्रेरणा सप्त ऋषियों की है । इसमें वेद प्रमाण है ।

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् ।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ ॥

यजुर्वेद ३४।३५

सरस्वती वन्दना

सर्वरूपमयी देवी, सर्वं देवीमयं जगत् ।
अतोऽहं विश्वरूपां तां, नमामि परमेश्वरीम् ।।
या कुन्देन्दुतुषारहारधवला, या शुभ्रवस्त्रावृता ।
या वीणावरदण्डमण्डितकरा, या श्वेतपद्मासना ।।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता ।
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ।।

भूमिका

कोई भी व्यक्ति चाहे वह कितना ही सुखी या सम्पन्न हो उसे अपना भविष्य जानने की उत्कण्ठा बनी रहती है क्यों कि उसका भावी जीवन व जीवन की घटनाएं भविष्य के गर्भ में रहती हैं। अपनी तथा दूसरों की अनहोनी, अनुमान विरुद्ध, असङ्गत, अद्भुत घटनाओं को देखते-देखते उसके मन में ऐसी घटनाओं की मूल के कारण जानने की जिज्ञासा और प्रबल हो जाती है और साथ-ही-साथ वह सोचने लगता है कि जब सभी चेष्टाओं का फल भाग्याधीन है तो वह सुविचारित चेष्टा ही क्यों करे और सत्कर्मों में प्रवृत्त क्यों हो। यदि यह बात भी समझ में आ जाय कि इस जन्म का भोग पिछले जन्म की कृति है अथवा भोग कर्मों का ही फल है तो उसे यह बात समझ में नहीं आती कि उस भोग में ग्रहों का हाथ कहाँ तक है। एक कर्म के दो फल अथवा एक 'भोग' के दो कारण कैसे माने जायें। इन जिज्ञासाओं का जब तक समुचित उत्तर न मिले, जिज्ञासा का समाधान न हो, तो किसी विचारवान् की ग्रहजनित फलादेश में आस्था नहीं हो सकती, इसलिए लेखक ने फलित-ज्योतिष के इस ग्रन्थ के अन्त में परिशिष्ट 'क' में उपर्युक्त विषय पर प्रकाश डालने की चेष्टा की है। उस परिशिष्ट 'क' लेख में, जहाँ तक कि सृष्टि की रचना का वर्णन है, वह भारतीय वैशेषिक दर्शन के उस प्रसंग का सारांश है, जिसका शेष भाग भारतीय शास्त्रों तथा परम्परागत दार्शनिक विचारों के समन्वय से लेखक की भाव भाषा में लिखा गया एक लेख है। देखने में वह लेख इस ग्रन्थ के प्रस्तुत विषय फलादेश से भिन्न, एक दार्शनिक लेख लगता है परन्तु मूलतः वह प्रासंगिक है क्यों कि सृष्टि की रचना में मनुष्य का कैसा स्थान है और उस पर ग्रहों का प्रभाव कहाँ तक किस अंश तक पड़ता है, यह उसका विषय है। आशा है अपनी भाव भाषा में प्रकट किया गया वह लेख पाठकों को रुचिकर होगा।

जिज्ञासावृत्ति के कारण मनुष्य ने अपना व्यक्तिगत भावी जीवन जानने के लिए अनेक प्रकार की रीतियाँ खोज निकाली हैं। इनपर अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। जो विषय क्रम में सामुद्रिक शास्त्र, रमल, ग्रह-कुण्डली (जातक), ताजिक, ग्रहदशा पद्धति, प्रश्न आदि हैं। ये फलादेश की सभी विभिन्न पद्धतियाँ अपूर्ण हैं। अपूर्ण इसलिए हैं कि किसी भी पद्धति से गणितागत फल इत्थंभूत

नहीं कहा जा सकता । इन सभों में भृगुसंहिता नामक ग्रन्थ बहुत कुछ पूर्ण है और उसके फलादेश कभी-कभी विस्मय में डाल देते हैं । इस अद्भुत ग्रन्थ की रचना, का क्या आधार है, इसकी अभी तक खोज नहीं हो पाई है । क्यों कि जिस महानुभाव के पास इसका कोई प्रमाणिक खण्ड है वह उसको धन कमाने में ही उपयोग कर रहा है । अस्तु ग्रहों द्वारा भाग्य जानने की अनेक रीतियों में दो ही रीतियाँ प्रधान हैं । एक जातक पद्धति दूसरी नक्षत्रदशा पद्धति । जिस किसी व्यक्ति की कुण्डली पर विचार किया जा रहा हो उस व्यक्ति को उस कुण्डली का जातक कहा जाता है । जातक की जन्मकालीन आकाशीय स्थिति का मानचित्र उसकी कुण्डली है । वास्तव में कुण्डली जातक के जन्म समय का पूरे आकाश अर्थात् विश्व का मानचित्र नहीं है प्रत्युत वह क्रान्तिवृत्त के आसपास के तारा समूह तथा उसमें तात्कालिक ग्रहों के रहने का मानचित्र है, आकाश में फैले समस्त तारा समूह का नहीं । क्रान्तिवृत्त पृथ्वी के सूर्य-परिभ्रमण के मार्ग का नाक्षत्रिक वृत्त है जिसमें सूर्य चलता दिखाई देता है । यह संयोग की बात है कि जिस मार्ग से पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रही है उस मार्ग के आस-पास ही नक्षत्र गोल में समस्त ग्रहों का भी मार्ग है जो क्रांतिवृत्त से अधिक से अधिक क्रांतिवृत्त के दोनों तरफ उत्तर दक्षिण सात अंश का कोण बनाता है । यहाँ आस-पास का अर्थ दूरी से नहीं है प्रत्युत अंशात्मक दूरी से है । बुध का मार्ग क्रांतिवृत्त पर ७° कोणात्मक,(शर) शुक्र का ३°२३°२५°भौम का १°५१°०२°, बृहस्पति का ६°४१°१८° शनि का २°२९°४०°, यूरेनस का ०°४६°२०° नेपचून का १° ४७° ०२°, क्रांतिवृत्त पर झुका है चन्द्रमा का पृथ्वी परिक्रमा मार्ग क्रांतिवृत्त से ४°५६° से ४°२०° तक नीचे ऊपर है । इस तरह सभी ग्रह क्रांतिवृत्त से ऊपर ८° तक तथा ८° दक्षिण तक सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं । इसका दूसरा अर्थ यह है कि सभी ग्रह क्रांतिवृत्त से ८° की उत्तर दक्षिण की दूरी के आगे नहीं जाते । यह मार्ग क्रांतिवृत्त उत्तर दक्षिण फैली एक १६° की सड़क है जिसके भीतर ही ग्रह चलते हैं । इस विशिष्ट मार्ग (सड़क) का आकाशीय विस्तार राशि वा नक्षत्र-मण्डल है । राशि मण्डल के बारह भाग हैं, जिनमें प्रत्येक ३०° का होता है । प्रत्येक राशि पृथ्वी के जीव जन्तुओं आदि आकार वाली है इसलिए प्रत्येक राशि का नाम तत्तत् स्वरूपाकृत पशुओं तथा वाहकों के नाम पर विख्यात हुआ है यथा मेष वृष आदि । इसमें मकर राशि जल की लहर है मकर का उसमें स्वरूप नहीं दिखता अस्तु इस सड़क फैलाव का नाम विशिष्ट नक्षत्र-मण्डल व राशि मण्डल है और इस सड़क से इतर रहने

वाले तारा समूहों का वर्गीकरण तथा नामकरण इस विशिष्ट नक्षत्र-मण्डल से भिन्न है। चूँकि मनुष्य के भाग्य का संबंध नक्षत्र-मण्डल के तारतम्य से ग्रहों की गति पर अवलम्बित है और चूँकि ग्रहों की गति क्रांतिवृत्त के आस पास के ही नक्षत्र-मण्डल में होती है इसलिए ज्योतिषियों ने इस नक्षत्र-मण्डल को ही फलादेश के प्रसंग में पर्याप्त माना। इस नक्षत्र-मण्डल के २७ भागों के नाम २७ नक्षत्र हैं। चूँकि चन्द्रमा एक दिन में इस मण्डल के १३° २०° चलता है इसलिए उसकी दैनिक गति का नक्षत्र-मण्डल के २७ भागों में विभाजन किया गया। यह क्रांतिवृत्त का चान्द्र विभाग है। पृथ्वी भी उन्हीं नक्षत्रों में

३६५ १५. ३१. ३१.
३६५. ०६. ९. ९७. में सूर्य की एक परिक्रमा कर लेती है जिसे एक निरयन

सौर वर्ष कहते हैं। वह अपनी धूरी पर २३° २६° ५२° झुकी हुई है, इसलिए अपने मार्ग में चलते हुए उसका विषुववृत्त दो स्थान पर क्रांतिवृत्त से काट करता है और सूर्य इस संपात पर जब आता है तो उसे अयन कहते हैं। ये संपात आपस में १८०° दूर हैं और संख्या में दो हैं। प्रत्येक अयन का छठवाँ भाग एक राशि है जिसपर सूर्य एक मास तक रहता है, इसलिए क्रांतिवृत्ताश्रित नक्षत्र-मण्डल के ३० के एक भाग को राशि कहते हैं और पूरा मण्डल ३६०° का होता है। ये बारह विभाग राशि नाम से प्रसिद्ध हुए जिनका आरम्भ मेषादि विन्दु से होता है। यह २७ नक्षत्र या १२ राशियों वाला क्रांतिवृत्ताश्रित नक्षत्र-मण्डल हमारे फलित ज्योतिष के कुंडली फलादेश का आधारस्तम्भ है। कुंडली निर्माण में इसका ही उपयोग होता है। जातक के जन्म समय में पूर्वक्षितिज पर क्रांतिवृत्त का जो भाग लगा हो उसे लग्नस्फुट कहते हैं और वह भाग या अंश जिस राशि (नक्षत्र समूह) का हो वही राशि लग्न कही जाती है, जन्म समय में जो ग्रह जिस राशि में रहता है उसे उसी गृह में बैठा दिया जाता है और तब वह वैसा आकाशीय मानचित्र जातक की जन्म कुंडली होती है। लग्न, भाव, गृह, नक्षत्र तथा ग्रहों के विषय में लेखक ने इस ग्रन्थ के अन्त में एक अलग से लेख दिया है। उसमें यह बताया गया है कि भारतीय फलित ज्योतिष पद्धति में किस प्रकार के लग्न, भाव आदि का प्रयोग किया जाता है। चूंकि लघुपाराशरी का फलादेश जन्म-कुंडली से होता है इसलिए प्रामणिक कुंडली कौन है इसका निरूपण करना प्रासंगिक है और इसीलिए लेखक ने उसे अलग परिशिष्ट में दे दिया है।

जन्म कुण्डली में जिस नक्षत्र समूह को लक्ष करके लग्न तथा अन्य राशियाँ

अङ्कित की जाती हैं उनका आकाशीय आरम्भ स्थान विषुव तथा क्रांतिवृत्त का पूर्वीय संपात है, उस संपात से राशि वा नक्षत्र-मण्डल में विस्तार माना जाता है। इसे सायन संपात-बिन्दु कहते हैं, पर इस बिन्दु से नक्षत्र मण्डल ५०° २" प्रति वर्ष की गति से क्रांतिवृत्त के दक्षिणी भाग में खिसक रहा है। आज दिन वह लगभग २३° क्रांतिवृत्त के दक्षिणी भाग में खिसक कर चला आया है। भारतीय ज्योतिषी उस खसकने वाले मण्डल को अपना फलित क्षेत्र मानते हैं, जिसे कि निरयन गणना कहते हैं। आधुनिक पाश्चात्य प्रथा के अनुयायी उक्त संपात बिन्दु से ग्रहों के स्थान की गणना करते हैं जिससे अब सायन और निरयन ग्रहों के स्थान में लगभग २३° १९' का अन्तर हो गया है। यह अन्तर असह्य है इसलिए फलित ज्योतिष में सायन गणना से आए ग्रहों की मान्यता होनी चाहिए इस विषय पर लेखक ने इस ग्रन्थ के अन्त में विस्तार से विवेचना की है। लेखक प्राचीन पद्धति जो निरयन पद्धति है, उसी को कुण्डली फलादेश में प्रयोग करना प्रमाणिक मानता है।

फलित ज्योतिष में कुण्डली का आरम्भ-स्थान लग्न है, लग्न-स्थान जन्म कालिक क्रांतिवृत्त तथा पूर्वक्षितिज का संपात है। क्रांतिवृत्त की सीमा विषुव-वृत्त से उत्तर तथा दक्षिण २३° २६° ५२०" तक है। यह सीमा उत्तर में सायन मिथुन राशि के अन्त अथवा कर्क के आरम्भ की तथा दक्षिण में धनु के अन्त तथा मकर के आरम्भ की है। प्रत्येक व्यक्ति का अपने भूपृष्ठ स्थान के स्वस्तिक से आकाश में ९०° पर उसका क्षितिज है, जो व्यक्ति भूपृष्ठ पर जहाँ है भूकेन्द्र से उस स्थान से ठीक उसके ऊपर आकाश का बिन्दु उसका ख स्वस्तिक है। जिस स्थान पर आकाश पृथ्वी से मिलता दिखाई देता है उसे भूपृष्ठ क्षितिज कहते हैं। भूमध्यरेखा से उत्तर ६६° ३३०' अक्षांश वाले प्रदेश के दक्षिण क्षितिज में क्रांतिवृत्त की सायन राशि धनु-मकर की संधि लगी रहती है और जब उसकी मध्याह्नरेखा पर यह संधि आ जाती है तो राशि मण्डल का समस्त दक्षिणी भाग उसका दक्षिण, पूर्व, पश्चिम क्षितिज स्पर्श भाग हो जाता है। किसी अक्षांश के ख स्वस्तिक के उत्तर वा दक्षिण वा पूर्व पश्चिम ९०° पर उसका क्षितिज होता है। इस तरह ज्यों ज्यों कोई व्यक्ति उत्तर जाता जाएगा तत्तुल्य राशियों का अंश भी उसकी क्षितिज सीमा से दक्षिण होता जाएगा। यहाँ तक कि उत्तरीय अक्षांश लगभग ६९° २३०' प्रदेश में क्रांतिवृत्त की दो सायन राशियाँ, कन्या तथा तुला, इसके क्षितिज सीमा के बाहर हो जाती हैं और इस तरह वहाँ इन दो राशियों का, उदय होता ही नहीं। ध्रुव-प्रदेश में तो भूमध्य रेखा से दक्षिण

की सभी राशियाँ उस प्रदेश के क्षितिज से बाहर हो जाती हैं। ऐसी दशा में वहाँ की जन्म-कुण्डली में उन राशियों का जिनका उदय होता ही नहीं उन्हें लग्न कैसे माना जाय, वहाँ का लग्न क्या हो यह विचारणीय है। उस स्थान पर आने वाले अन्य नक्षत्र-मण्डल अर्थात् उन अक्षांशों से पूर्व क्षितिज में लगे हुए अन्य नक्षत्र-मण्डल को लग्न माना जाय वा किसको, यह महत्त्व का प्रश्न है। क्रांतिवृत्ताश्रित नक्षत्र-मण्डल के अतिरिक्त दूसरे नक्षत्र समूह को वहाँ यदि लग्न माना जाय तो उस नक्षत्र-मण्डल का स्वभाव मान्य राशियों से भिन्न होगा इसलिए वहाँ फलादेश की कल्पना भारतीय ज्योतिष से सर्वथा भिन्न हो जायगी। ऐसा सम्भव नहीं जान पड़ता कि भारतीय ज्योतिषियों को इस बात का ज्ञान न रहा हो कि पृथ्वी के विशिष्ट भूभाग में कुछ राशियों का उदय होता ही नहीं, साथ-ही-साथ ऐसा भी सम्भव नहीं जान पड़ता कि प्रचलित जन्म लग्न कुण्डली का निर्माण केवल भूभाग के विशिष्ट प्रदेशों के लिए ही सीमित किया गया हो, क्योंकि ग्रहों का प्रभाव तो समस्त संसार पर पड़ता है, एक विशिष्ट प्रदेश के निवासियों पर ही पड़ता हो ऐसी कल्पना हास्यास्पद तथा ज्योतिष फलित सिद्धांत के विरुद्ध है। अस्तु ज्योतिष का सार्वभौम रूप देखते हुए लेखक को यह कहने में संकोच नहीं होता कि आधुनिक लग्नानयन की रीति ही दोषपूर्ण है। इसके अतिरिक्त जिन प्रदेशों में पूर्व क्षितिज में क्रांतिवृत्त का भाग उदित होता है वहाँ भी उसके अंश लाने की त्रैराशिक रीति भी अशुद्ध है क्योंकि प्रत्येक राशि का जो उदय लग्न होता है वह दूसरी राशि के उदयमान के तुल्य नहीं होता तथा एक राशि के व्यतीत होने पर दूसरी राशि की उदयमान गति भी सहसा प्रथम राशि की गति से भिन्न नहीं हो सकती। उदाहरणार्थ निरयन वृष राशि का काशी उदयमान ११६ मिंट है तथा निरयन मिथुन का १३४ मिं. अब यदि त्रैराशि से वृष का १ अंश ३ मि. ५२ में उदित होता है तो मिथुन का १ अश ४ मि. ३२ में, अब वृष का अन्त होते ही मिथुन राशि ४/२८ से. प्रत्येक अंश की गति से चलने लगे अर्थात् वह टप से धीमी चलने लगे तो विश्व में उथल-पुथल हो जाय। गति विद्या के सिद्धान्त के अनुसार भूचक्र में गति का बढ़ना-घटना किसी नियत क्रम से होता है, सहसा नहीं, इसलिए त्रैराशिक से लाया गया अंशात्मक लग्न कभी शुद्ध नहीं कहा जा सकता, स्थूल ही कहा जायगा। इस दोष का निवारण चर सारणी से दूर किया जा सकता है पर यहाँ मौलिक प्रश्न यह है कि कई स्थानों पर किसी क्रांतिवृत्ताश्रित राशि के उदय न होने पर भी क्या वहाँ पूर्वोदित

अन्य राशि लग्न मानी जावे ? लेखक का मत है कि नहीं, वास्तव में उत्तर अक्षांश वाले जातक का लग्न वह है जो जातक के जन्म-कालीन याम्योत्तरवृत्त में पड़ने वाली क्रांतिवृत्त की दक्षिणी निरयन राशि का जो अंश पड़ता हो उसमें ९०° जोड़ने पर जो राश्यादि स्पष्ट हो वह उसका लग्न है, दक्षिण अक्षांश वाले जातक के लिए उसके याम्योत्तरवृत्त के उत्तरी क्रांतिवृत्त भाग में ९०° जोड़ने पर उसका लग्न होगा। प्रत्येक व्यक्ति या याम्योत्तरवृत्त वह वृत्त है जो उसके उत्तरी कदम्बप्रोत बिन्दु (ध्रुव बिन्दु) से उसके खस्वस्तिक से होता हुआ दक्षिणी कदम्बप्रोत बिन्दु में मिलता हो। इसे मध्याह्न रेखा भी कह सकते हैं। यह वृत्त जातक के क्षितिज के पार चला जाता है, ऐसे वृत्त पर जातक के क्षितिज का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए उपरोक्त लग्नानयन में कभी कोई त्रुटि नहीं हो सकती और ऐसा लग्न एक ही अक्षांश पर रहने वाले समस्त जातक के लिए एक सा होगा। इसमें चर संस्कार की आवश्यकता नहीं पड़ती। ऐसा लग्न भूकेन्द्राभिप्राय से किसी भी अक्षांश के पूर्व क्षितिज में लगा क्रांतिवृत्त का ही भाग होगा। लेखक के मत से इस गणना का लग्न वास्तविक लग्न है और ऐसे लग्न के आधार पर बनी कुण्डली का फलादेश भी ठीक होना चाहिए, यह अवस्था सार्वदेशिक है। इस व्यवस्था से क्रांतिवृत्ताश्रित नक्षत्र समूहों को छोड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता। लेखक के इस मत से काशी के कतिपय विद्वान् ज्योतिषी जिनमें आचार्य विद्वान् पंडित सीताराम झा ज्योतिषाचार्य भी हैं सहमत हैं, उनका मत लेखक से मिलता है।

विंशोत्तरी दशा का आधार नक्षत्र का भयात भभोग है। भयात का अर्थ है जन्मकालिक नक्षत्र का बीता हुआ अंश, जिस नक्षत्र में जातक का जन्म होता है उसे दशा का नक्षत्र जानते हैं और जन्मकालिक नक्षत्र के भयात तुल्य वर्ष को उस नक्षत्र के स्वामी की दशा का भोग पूर्वजन्म में बीत गया ऐसा मानते हैं और भोग्यकाल को जन्मारम्भ से लेते हैं। समस्त नक्षत्र चन्द्र राशियों के अङ्ग हैं इसलिए लेखक ने इस ग्रन्थ में नक्षत्रों के भयात भभोग पर से चन्द्र-स्पष्ट जानने की कुछ सारणियाँ दे दी हैं जिनसे जन्मकालिक भयात भभोग से चन्द्र का राश्यादिक स्पष्ट बन जाय और साथ ही साथ उस नक्षत्र के दशाधीश की जन्मकालिक भुक्त तथा भोग्य दशा का भी पता लग जाय। ऐसी सारणियों की उपयोगिता प्रत्यक्ष है। जिस किसी जातक की कुण्डली में नक्षत्र का भयात भभोग न दिया हो पर चन्द्र स्पष्ट दिया हो तो इन सारणियों के उपयोग से दशा का भुक्त भोग्य का अविलम्ब पता लग सकता है। इन सारणियों की क्रम संख्या पुस्तक के अन्त में दे दी गयी है।

लेखक ने इस ग्रन्थ के प्रत्येक श्लोक की टीका व अर्थ के साथ-साथ उसका उदाहरण भी दिया है और जहाँ आवश्यक हुआ उसको सारणीवद्ध भी कर दिया है। ये सारणियाँ उन्हीं श्लोकों के अर्थ के साथ-ही-साथ दे दी गई हैं, उन्हें अलग से परिशिष्ट में स्थान नहीं दिया गया ताकि श्लोक तथा उसकी व्याख्या के अध्ययन के साथ ही उसकी सारणी भी प्रस्तुत रहे।

लघुपाराशरी में अधिकतर ग्रहों का योगज फल दिया है और उसके जानने के लिए क्लिष्ट श्लोक हैं, उन्हें सरल बनाने की दृष्टि से तथा ग्रहों के शुभत्व तथा पापत्व के परिमाण के जानने के लिए लेखक ने एक योजना बनाई है जं: परिशिष्ट है, इस योजना के अनुसार ग्रहों के योगज फलों को आँकड़ों में परिणत किया गया है। ग्रहों के प्रभाव को जो एक प्रवाह शक्ति है उसे गणित में बाँधना दुस्साहस है फिर भी लेखक को आशा है कि यह प्रयास निरर्थक न होगा। इस परिशिष्ट की योगावली के द्वारा सरलता से ग्रहों की दशा तथा अन्तर का फल निकल आवेगा। इस सारणी में दिए गए फल की प्रामाणिकता तो इसका उपयोग करने वाले विद्वान् ज्योतिषी तथा विद्यार्थी ही बता सकेंगे। विद्वत्समाज तथा फलित ज्योतिषियों से लेखक का आग्रह है कि फलित ज्योतिष के हित में वे कृपया उक्त सारणी का कुण्डलियों के फलादेश में प्रयोग कर उसकी प्रामाणिकता पर प्रकाश डालें; इसके लिए लेखक उनका ऋणी होगा।

लघुपाराशरी दशा पद्धति का एक अद्भुत तथा वैज्ञानिक ग्रन्थ है, उत्तर भारत में तो इसका फलित ज्योतिष में बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है। मूल में यह छोटासा ग्रंथ है पर थोड़े से श्लोकों में ही इसमें समस्त कारक-मारक फलादेश का निर्णय कर दिया गया है। इस ग्रंथ की अनेक टीकाएँ की गयी हैं पर वे संतोषजनक नहीं हैं, उन टीकाओं पर पुनः टीका की आवश्यकता है। कहने का लेखक का यह आशय नहीं कि टीकाएँ अशुद्ध हैं या अनर्थकारी हैं प्रत्युत यह भाव है कि लघुपाराशरी ऐसे सर्वव्याप्त ग्रंथ का सविस्तार भाष्य न होना फलित ज्योतिष की एक भारी कमी है, इस कमी को पूरा करने की दृष्टि से लेखक ने इस लघुपाराशरी ग्रंथ का सविस्तार, सोदाहरण, ससारणी टीका करने का प्रयास किया है और उसके साथ-ही-साथ अनेक उपयोगी सारणियों तथा फलित ज्योतिष सम्बन्धी जिज्ञासाओं का उत्तर भी इसी ग्रंथ में सम्मिलित कर दिया है। इतना होने पर भी यह ग्रन्थ अपूर्ण तथा त्रुटिपूर्ण है, इस ग्रन्थ की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि विंशोत्तरी दशा में नक्षत्रों के जो दशा-

धीश हैं, ग्रहों के जो दशावर्ष नियत किये गए हैं इन सब में हेतु क्या है, उनकी व्युत्पत्ति क्या है, इसका इस ग्रन्थ में कोई विशेष उल्लेख नहीं है, इसका कारण लेखक की अल्पज्ञता है। इस ओर अभी अनुसंधान हो रहा है, भगवान् की इच्छा हुई और उसकी सहायता प्राप्त हुई तो अगले संस्करण में इस विषय पर भी प्रकाश डाला जायगा। विंशोत्तरी दशाधीश क्रम में क्या हेतु है, इसकी विवेचना लेखक ने की है जो परिशिष्ट में दी गई है। नक्षत्र भयात भभोग के प्रत्येक घटी पल पर दशाओं के भुक्त भोग्य वर्षादि जानने के लिए लेखक ने सारिणी तैयार कर रक्खी है पर उसका वृहद् आकार देख कर उसे इस गन्थ में सम्मिलित नहीं किया, उसे अलग से प्रकाशिन करने की योजना है।

अब दशापद्धति के सम्बन्ध में विचार प्रकट किया जाता है—

मनुष्य जिस समय जन्म लेता है उसी समय वह एक पारिवारिक प्राणी बन जाता है। जन्म लेते ही वह किसी का पुत्र, किसी का भाई, बहन, किसी का स्वामी आदि उपाधियों से युक्त हो जाता है साथ ही उसके पारिवारिक तथा सामाजिक अधिकार बन चुके होते हैं। ये अवस्थाएँ सारांशत: जन्मज होती हैं जिनका अध्ययन जन्मकुण्डली से किया जाना वैज्ञानिक है, विशेषतया कुण्डली के प्रथम से सप्तम गृह तक। ये गृह जन्म समय के खगोल का नीचे वाला अदृश्य गोलार्द्ध है अर्थात् जन्मकालिक पुरुषार्थ विहीन प्राणी का सांसारिक स्थान उसका प्रारब्ध सूचक जन्मकालिक नक्षत्र मण्डल का अदृष्ट गोलार्द्ध है। जब वह बालक वयस्क होकर पुरुषार्थयुक्त होता है तो उसकी जन्मज परिस्थितियों में भारी परिवर्तन होने लगता है जिससे उसका भावी जीवन बनता है। वह ज्यों-ज्यों समाज में अवतीर्ण होता है उसके विकास में पद-पद पर अनेक प्रकार की अनुकूल वा विपरीत शक्तियाँ काम करने लगती हैं जिनके प्रभाव से उसके सामाजिक जीवन में निरन्तर परिवर्तन, परिवर्धन तथा संशोधन होता रहता है, ऐसे परिवर्तनों का अध्ययन उसकी कुण्डली के दृश्य गोलार्द्ध से होता है। हर व्यक्ति के अपने जन्मज व्यक्तित्व, अधिकार तथा पारिवारिक स्तर में जो अन्तर होता रहता है, उसका कारण बहुत कुछ चल ग्रहों की परिस्थितियों से है। इसलिए जन्म कुण्डली के जन्मज स्थायी ग्रहों के फल की साधारण सीमा जातक की प्रारब्ध (बिना पुरुषार्थ) अवस्था है और पुरुषार्थ जनित फल में ग्रहों का प्रभाव काम देता है। ऐसे समय की जानकारी के लिए ग्रह-दशा पद्धति अपनाई जाती है। इसलिए किसी जातक का सांगोपांग तथा पूर्ण जीवन विकास जानने के लिए जातक तथा दशा इन दोनों के तारतम्य से जातक

का पूरा जीवन बनता है केवल प्रारब्ध वा केवल क्रियमाण से नहीं। अस्तु फलित ज्योतिष में साधारण उक्ति है कि जातक के बाल काल की ग्रह दशा उसपर उतना प्रभाव नहीं डालती जितना उसके माता पिता के ग्रह।

जातक फलादेश के अनेक ग्रन्थ हैं जिनमें ग्रहों तथा उनके योगों से फल का आदेश किया गया है पर सभी में फल ऐक्य नहीं है। इसी प्रकार दशा सम्बन्धी अनेक पद्धतियां हैं। इनमें भी ऐक्य नहीं है। जिस किसी एक पद्धति से किसी निश्चित काल में किसी एक ग्रह की दशा आती है दूसरी पद्धति से उसी जातक की कुण्डली के उसी निश्चित काल में दूसरे ग्रह की दशा आ जाती है। यह विषमता दशा पद्धति के मूल पर ही आघात करती है। प्रश्न उठता है कि क्या एक ही समय में विभिन्न दशा पद्धति से लाए गए भिन्न ग्रहों का प्रभाव एक सा होना सम्भव है जब कि कुण्डली में भिन्न स्थान पर बैठे ग्रह एक ही समय में एक ही प्रकार का फल देते हैं। वे एक ही स्वभाव के हैं अथवा उस समय उन सबका स्वभाव एक सा हो जाता है। इसका कोई भी उत्तर सन्तोषजनक न होगा। पुनः यदि यह कहा जाय कि एक ही समय में विभिन्न दशा पद्धति से गणितागत विभिन्न ग्रहों का फल मिश्रित ढङ्ग का होगा तो यह निर्णय करना असम्भव होगा कि कितनी और कौन-कौन सी दशापद्धतियां अपनायी जावें। इसलिए इन सब बातों का एक ही उत्तर है कि जिस दशा पद्धति से जातक कुण्डली का सामयिक फल अधिक से अधिक मिलता हो अथवा पूरा मिलता हो वही दशा पद्धति मान्य हो। यह बात भी सम्भव नहीं क्यों कि अबतक कोई ऐसा ठोस प्रयास नहीं देखा गया जिससे किसी ने सैकड़ों कुण्डलियों की विभिन्न दशाओं के फल का तुलनात्मक अध्ययन किया हो और उसपर आधारित अपना अनुभव प्रकाशित किया हो। राज-प्रश्रय न मिलने के कारण यह ऐसा हो नहीं पाया। अस्तु लेखक की दृष्टि में यहाँ आप्तप्रमाण ही उपयुक्त प्रमाण है। आप्त ज्योतिषियों का कथन है कि आज कल विंशोत्तरी दशा पद्धति से गणितागत ग्रहों की दशा का फल मिलता है। लेखक के लिए भी यह अनुभव सिद्ध है। इसके अतिरिक्त विंशोत्तरी दशा के सम्बन्ध में लघुपाराशरी जिसका दूसरा नाम उडुदायप्रदीप है एक वैज्ञानिक ढङ्ग का ग्रन्थ भी है। उस पद्धति के अनुसार ग्रहों के फल के सम्बन्ध में प्रौढ विवेचना भी की जा चुकी है अस्तु वह मान्य है। अष्टोत्तरी दशा के फलादेश का कोई अलग से ग्रन्थ नहीं है इसलिए अष्टोत्तरी का फल लघपाराशरी ग्रन्थ

के आधार पर कहना तो सर्वथा तर्क विरुद्ध है। जब कि उसग्रन्थ के कर्ता ने स्वयं कह दिया कि उसे अष्टोत्तरी दशा ग्राह्य नहीं। इसके अतिरिक्त योगिनी दशा में कल्पित नाम हैं जो स्वयं फल के सूचक हैं। पर वह केवल चन्द्र स्पष्ट की दशा है। ग्रहों के तारतम्य से उसमें कुछ नहीं कहा गया है। इस दशा का प्रचार अधिकतर पञ्जाब में है। इसके अतिरिक्त वृहत् पाराशर होरा शास्त्र में अनेक दशाओं की चर्चा है। उसमें एक कालचक्र नामक दशा है जो जैमिनीय नवमांश दशा से मिलती जुलती है। लेखक ने उसपर अच्छा मनन किया है और उसे अरिष्ट तथा आयुर्दाय प्रसंग में सिद्ध पाया है। अब इस ग्रन्थ के प्रकाशित होने के पश्चात् उसे प्रकाशित करने का विचार है। ईश्वर ने चाहा तो वह ग्रन्थ भी पाठकों के सन्मुख उपस्थित हो जायेगा।

लेखक इसे अपनी जन्म कुण्डली के ग्रहों का ही प्रभाव मानता है कि इस भाष्य को लिखने में तथा अन्य ज्यौतिषिक अनुसन्धान में उसे किसी महानुभाव से सहायता व सहयोग न प्राप्त हो सका यह उसका ही दुर्भाग्य है और निज की न्यूनता है। यह जो कुछ भी पाठकों के सन्मुख प्रस्तुत है वह उसका निजी प्रयास है जिसे वह श्रद्धा तथा विश्वास के रूप में पाठकों के समक्ष उपयोग तथा टीका के लिए प्रस्तुत कर रहा है। इस आशा से कि माननीय पाठक इस भाष्य का प्रयोग कर उसपर अप्रतिबन्धित विचार प्रकट करेंगे और त्रुटियों की ओर लेखक का ध्यान अवश्य दिलाएँगे ताकि अगले संस्करण में उनका निराकरण हो सके। अपनी अल्पज्ञता को स्वीकार करते हुए मान्य पाठकों का कृपाकांक्षी।

लक्खी चौतरा, वाराणसी।
वष संक्रान्ति सं० २०२० वि० } रामचन्द्र कपूर

लघुपाराशरीभाष्य

* श्रीः *

लघुपाराशरी-भाष्य

संज्ञाऽध्यायः

सिद्धान्तमौपनिषदं शुद्धान्तं परमेष्ठिनः ।
शोणाधरं महः किञ्चिद्वीणाधरमुपास्महे ॥१॥

अन्वयः—वयं औपनिषदं सिद्धान्तं परमेष्ठिनः शुद्धान्तं शोणाधरं महः किंचिद् वीणाधरम् उपास्महे ॥१॥

अर्थ—उपनिषदों द्वारा सिद्ध (प्रतिपादित) ब्रह्मा की शुद्धान्त (सत्वशक्ति) वीणाधर (सरस्वती) की हम उपासना करते हैं।

भाष्यः—उपनिषद् वेदों के अंग हैं। इन में सर्व व्याप्त आत्मा, ईश वा ब्रह्म का विवेचन किया गया है। आत्मा, ईश वा ब्रह्म शब्द पर्यायवाची हैं। यथा 'ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत्' ईशावास्योपनिषद्। 'तदेतद् ब्रह्मपूर्वपरमनन्तरमबाह्यमयमात्मा ब्रह्म सर्वानुभूरित्यनुशासनम्' बृहदारण्यकोपनिषद्। इन प्रसिद्ध ऋचाओं का भाव यह है कि यह जो कुछ भी है वह सब ईश है तथा ईश से व्याप्त है। वह ब्रह्म अपूर्व (कारण रहित) अनपर (कार्य रहित) अनन्तर (विजातीयता से रहित) अबाह्य है। वह आत्मा ही सब का अनुभव करने वाला ब्रह्म है। यही वेदों का अनुशासन है, उपदेश है। यही वेदान्त है।

सांख्य तथा योग सिद्धान्त के अनुसार उस ब्रह्म के दो रूप हैं। एक प्रकृति दूसरा पुरुष। पुरुष निर्लेप तथा प्रकृति त्रिगुणात्मिका है। ये त्रिगुण सत, रज तथा तम हैं जिन्हें योगसूत्र में प्रकाश, क्रिया तथा स्थिति शब्दों से सम्बोधित किया गया है। यथा 'प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम्'। इन तीनों गुणों की साम्यावस्था शुद्ध प्रकृति है। गुणों की विषम मात्रा से प्रकृति में जब क्षोभ होता है तो उससे सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति तथा लय की क्रिया होती है। प्रकृति में क्षोभ से महत्तत्व, महत् से अहंकार और अहंकार से विश्व का विकास अनवरत क्रम से होता रहता है। पुरुष और

प्रकृति का सदा से संसर्ग है पर पुरुष का प्रकृति से सम्बन्ध रहते हुए भी पुरुष अपरिणामी है तथा स्वयं निर्गुण है। गुण प्रकृति में है इसलिए परिणाम प्रकृति में होता है पर संसर्ग के कारण वह परिणाम (Changes) भ्रम से पुरुष में दीखता है। यथा 'द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोपि प्रत्ययानुपश्यः' योगसूत्र। द्रष्टा साक्षी मात्र है उस पर भी प्रकृति के प्रत्यय (गुण सामीप्य) से दृश्य भासता है, पर वह शुद्ध है।

उदाहरणः—जिस तरह रंगीन कटोरे में रखा जल रंगीन दीखता है या जल में रंग मिला रहने पर वह रंगीन दीखता है पर है मूलतः शुद्ध, रंग उसका गुण नहीं है।

पुरुष का प्रकृति से सदा का संसर्ग रहने के कारण उसके तीन रूप हैं। भारतीय भाषा में उसे ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश कहते हैं। इन तीन उपास्य महान् देवों की तीन शक्तियाँ जो प्रकृति रूप में उनसे सदा संसर्ग युक्त प्रत्यय हैं वे हैं सरस्वती, लक्ष्मी तथा काली। ये माया कही जाती हैं। महद् तथा अहंकार रूप (चेतना से युक्त) होने के कारण इन्हें महासरस्वती, महालक्ष्मी तथा महाकाली कहते हैं। उपासना जगत् की ये महामायाएँ भगवती महासरस्वती, भगवती महालक्ष्मी, भगवती महाकाली हैं। ब्रह्मा की प्रत्ययात्मक सत्वशक्ति (प्रकाश—Rythum) सरस्वती से ब्रह्माण्ड की सृष्टि (उत्पत्ति) होती है, भगवान् विष्णु की प्रत्ययात्मक रजोशक्ति—लक्ष्मी (क्रियात्मक—Mobility) से उसकी रक्षा, महादेव—शिव (रुद्र रूपमें) उनकी तमोशक्ति —काली से (Inertia) से सृष्टि के विस्तार का लय नवीन सृष्टि के लिए अनवरत अनाहत रूप से होता रहता है। इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु में उसकी उत्पत्ति, स्थिति तथा लय की क्रमिक क्रिया होती रहती है।

ब्रह्म, पुरुष तथा प्रकृति के समन्वय से तथा एकांगी होकर पूर्ण होता है। जिस प्रकार पुरुष और स्त्री की इकाई जगत् की पूर्ति है इसी प्रकार ब्रह्म की पूर्ति उसके तीन रूप वाले पुरुष की उनकी पत्नी रूप महामाया भगवती सरस्वती, लक्ष्मी तथा काली हैं। इनकी उपासना से तत्तद् कार्य की सिद्धि होती है जिसमें श्रद्धा तथा विश्वास सफलता का मुख्य प्रेरक है। इस में वेद वचन है कि 'यथा यथोपासते तदेव भवति' शतपथ। इसलिए यह भारतीय परम्परा रही है कि किसी भी सत्प्रयत्न तथा रचना की सफलता के लिए देवता तथा देवी की उपासना मंगलाचरण में की जाती रही है। इस न्याय से ग्रन्थकार ने अपनी उडुदायप्रदीपाख्य ग्रन्थ की रचना की सफलता में इस मंगलाचरण

श्लोक में भगवती सरस्वती की प्रार्थना की है। यह ग्रन्थ विश्व की रचना के प्रधान अंग ग्रहों से सम्बन्ध रखता है और उसका क्षेत्र समस्त विश्व है। विश्व तथा ग्रहों की रचना ब्रह्मा के अधीन है इसलिए ब्रह्मा की सत्व (शुद्धान्त) शक्ति की यहाँ उपासना प्रासंगिक है। मंगलाचरण श्लोक में वीणाधर शब्द से तात्पर्य उस शक्ति से है जिसमें समस्त वाणी निहित हो। भगवती सरस्वती की उपास्य मूर्ति में वीणाधारण तथा शोणाधर इस बात का द्योतक है कि भगवती की मृदुल तथा प्रसन्न मुद्रा से उत्पादन तथा रचना के कार्य में उपासक को उसके क्रमात्मक तथा अर्थात्मक रचना में एक स्वर हो जिससे पाठकों को उसमें आकर्षण हो। उपरोक्त मंगलाचरण में ग्रन्थकार ने वयं शब्द का उपयोग किया है। वह बहु-वचनांत शब्द है जिसका अर्थ है हम लोग। यह विनय तथा विद्या का उज्ज्वल भारतीय परम्परा का एक उदाहरण है। सैद्धान्तिक मूल ग्रन्थों में प्रायः सर्वत्र उनके रचयिता का नाम नहीं दीख पड़ता। उच्च-कोटि के ग्रन्थकार अपनी रचना को भगवत् प्रेरणा की प्रसादी ही मानते रहे हैं।

मैं दीवान बालमकुन्द कपूरात्मज रामचन्द्र कपूर, इस ग्रन्थ का एक तुच्छ व्याख्याता, भगवान् शंकर के आगे नतमस्तक होता हूँ। वे तम तथा अविद्या का नाश कर मुझे उडुदायप्रदीप पूर्व प्रतिपादित सिद्धान्त ग्रन्थ के भावार्थ का अनावरण करने में सफलता प्रदान करें। शिवं शरणं गच्छामि।

वयं पाराशरीं होरामनुसृत्य यथामति (यथाविधि)
उडुदायप्रदीपाख्यं कुर्मो दैवविदां मुदे ॥ २ ॥

अन्वयः—दैवविदां मुदे वयं पाराशरीं होरां अनुसृत्य यथामति (पाठान्तरे यथाविधि) उडुदायप्रदीपाख्यशास्त्रं कुर्मः ॥२॥

अर्थ—हम दैवज्ञों (ज्यौतिषियों) के मनोरञ्जनार्थ पाराशरहोराशास्त्र के अनुकूल अपनी विवेचना के अनुसार इस उडुदायप्रदीप नामक ग्रन्थ की रचना करते हैं।

भाष्य—पाराशर होराशास्त्र फलित ज्योतिष का एक वृहद् तथा मान्य ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ पाराशर ऋषि के नाम पर प्रसिद्ध है। होरा शब्द अहोरात्र शब्द का लघुरूप है। अहो का अर्थ है दिन, रात्र का अर्थ है रात्रि। इन दोनों के मिलने से दिन रात शब्द बनता है। यहाँ अहो का 'हो' अक्षर रात्र का 'रा'

अक्षर लेकर होरा शब्द बना। जिस शास्त्र वा ग्रन्थ में दिनरात का अर्थात् चौबीसों घण्टे की सार्वकालिक घटनाओं का आकाशीय पिण्डों के परत्व से विवेचन किया जावे वह ग्रन्थ होरा ग्रन्थ है।

उडुदायप्रदीप का अर्थ है आकाशीय पिण्डों द्वारा जनित फल को प्रकाश करने वाला ग्रन्थ। उपरोक्त श्लोक में वयं शब्द बहु-वचनांत है जिससे उन सभी दैवज्ञों का बोध होता है जो विंशोत्तरी दशा क्रम में विश्वास करते हैं तथा जिन्होंने ऐसी दशा में गवेषणाकर इस ग्रन्थ रचना में सहायता दी हो। इसी लिए ग्रन्थकार ने इसकी रचना में अपना नाम न देकर वयं शब्द का प्रयोग किया क्योंकि इस ग्रन्थ का प्रतिपादित विषय स्वतन्त्र नहीं है। यह एक विनय तथा निरहंभाव का एक उत्कृष्ट उदाहरण भी है। पाराशर होरा शास्त्र फलित ज्योतिष की विभिन्न प्रकार की पद्धतियों का एक वृहद् संग्रह है। यह किसी एक व्यक्ति विशेष की स्वतन्त्र रचना नहीं जान पड़ती। यह उडुदायप्रदीप नामक ग्रन्थ फलित ज्योतिष का वह अङ्ग है जो पाराशर होराशास्त्र में प्रति-प्रादित अनेक प्रकार की पद्धतियों में से केवल एक चन्द्र नक्षत्र दशा क्रम को ही, जिसे विंशोत्तरी दशा कहते हैं, स्वीकार करता है। इसी ग्रन्थ में कहा गया है कि इसे अष्टोत्तरी नक्षत्र दशा स्वीकार नहीं। दशा पद्धति के अतिरिक्त अन्य प्रकार के जातक फलादेश के सम्बन्ध में इस ग्रन्थ का कोई विरोध नहीं है। वे पद्धतियाँ स्वतन्त्र रूप से कार्यकारी हैं।

फलानि नक्षत्रदशाप्रकारेण विवृण्महे।
दशा विंशोत्तरी चात्र ग्राह्या नाष्टोत्तरी मता ॥३॥

अन्वयः—वयं नक्षत्रदशाप्रकारेण फलानि विवृण्महे, अत्र विंशोत्तरीदशा ग्राह्या अष्टोत्तरी न मता ॥३॥

अर्थ—हम ज्योतिषिक फलादेश नक्षत्रदशा पद्धति से कहेंगे जिसमें यहाँ विंशोत्तरी दशा ग्राह्य है, अष्टोत्तरी दशा में हमारा मत (विश्वास) नहीं है।

भाष्य—पाराशर-होरा-शास्त्र तथा अन्य सभी प्रामाणिक ज्योतिषिक फलादेश के ग्रन्थों में मनुष्य के भाग्याभाग्य, शुभाशुभ अवसर तथा घटनाओं को जानने के लिए अनेक प्रकार की पद्धतियाँ अपनायी गई हैं। इनमें सर्वप्रसिद्ध जन्मकुण्डली से जातक का फलादेश कहा जाता है। कुण्डलियों के आधार पर जो फलादेश किए जाते हैं उनमें ये पद्धतियाँ प्रसिद्ध हैं :—

(१) जन्म-कालीन-कुण्डली के ग्रहों की लग्नपरत्व से द्वादश गृहों में ग्रहों के बैठने के अनुसार तथा उन ग्रहों के पारस्परिक सम्बन्ध के अनुसार जो फल कहा जाता है वह जातक-पद्धति है। यह एक सर्वमान्य पद्धति है। जन्म-समय में क्रांतिवृत्त का जो भाग जातक के पूर्वक्षितिज में लगा हो वह लग्नस्फुट कहा जाता है तथा यह स्फुट जिस राशि का अंश हो वह राशि लग्न कही जाती है। जिस मनुष्य की कुण्डली के फलादेश पर विचार किया जा रहा हो उसे उस कुण्डली का जातक कहते हैं। जन्म-समय जिस किसी जातक की कुण्डली में जिस राशि में चन्द्रमा होता है उस राशि को जातक की जन्म-राशि कहते हैं। जन्म-समय जिस नक्षत्र में चन्द्रमा रहता है उस नक्षत्र को जन्म-नक्षत्र कहते हैं। उसी जन्म-नक्षत्र से विविध दशाओं का आरम्भ होता है।

(२) किसी जातक का सामयिक-फल जानने के लिए उस समय के आकाशीय पिण्डों से जो फल कहा जाता है वह गोचर-पद्धति है। इस पद्धति में जातक का जन्म-लग्न तो सदा वही रहता है पर कुण्डली में विचाराधीन समय के ग्रह तत्तद् राशि में बैठा लिए जाते हैं और तब उन सामयिक ग्रहों के गृह तथा आपसी सम्बन्ध से फल कहा जाता है। इस पद्धति में समयानुसार कुण्डली बदलती रहती है।

(३) जातक का जन्म जिस सौर-तिथि को जिस समय हुआ हो ठीक उससे प्रत्येक निरयन-सौर-वर्ष की समाप्ति तथा दूसरे के आरम्भ के समय जो कुण्डली बनती हैं वह वार्षिक-कुण्डली है। जिस समय किसी जातक का जन्म हो उससे ठीक दि० ३६५, घ० १५, प० ३१, वि० ३० पर जो लग्न हो और उस समय जो ग्रहों की स्थिति हो उसे वार्षिक-कुण्डली कहते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक वर्ष की आगे की कुण्डली का निर्माण किया जाता है। इन कुण्डलियों के आधार पर जो फल कहा जाता है उसे वर्ष-फल कहते हैं। इस पद्धति में मुंथा नाम का एक कल्पित-ग्रह माना गया है जो प्रत्येक वर्ष एक राशि बढ़ता रहता है। इस वार्षिक-पद्धति का आशय यह है कि पृथ्वी जब एकबार सूर्य की परिक्रमा कर उसी नक्षत्र-स्थान में आ जाती है तो जातक की आयु का एक वर्ष व्यतीत हो कर वह दूसरे वर्ष में प्रवेश करता है। दूसरे वर्षप्रवेश के समय की कुण्डली उस दूसरे वर्ष के शुभाशुभ की द्योतक है। पाश्चात्य पद्धति दूसरे ढंग की है। पृथ्वी जब अपनी धुरी पर एकबार घूम लेती है तो उसे वे जातक के भाग्याभाग्य का

एक वर्ष समाप्त हुआ मानते हैं। उनके यहाँ यही दशा-पद्धति है। ये दोनों मत आर्ष नहीं हैं।

(४) राशि-फलादेश-पद्धति, यह पद्धति जैमिनी ऋषि की है। जन्म-समय जो ग्रह जिस राशि में हो उसी के अनुसार राशि-सामञ्जस्य से जो फल कहा जाता है वह जैमिनि फलादेश है। इस पद्धति में लग्न की विशेष महत्ता नहीं है। इस में राशियों तथा नक्षत्रों की दशा चलती है। यह मत आर्षमत है। अति प्राचीन काल में केवल चन्द्र-नक्षत्र से फल कहा जाता था।

(५) (क) चन्द्र-नक्षत्र-दशा को ही नक्षत्र-दशा कहते है ! जन्म-समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में रहता है वही उस जातक का जन्म-नक्षत्र होता है। एक नक्षत्र का राशि मान १३° २०" तेरह अंश बीस कला होती है। जन्म-समय चन्द्रमा जितनी देर जन्म-नक्षत्र में रहता है उसे भभोग कहते हैं और उस भभोग में से जितने समय चन्द्रमा उस नक्षत्र को भोग चुका होता है उसे भयात कहते है; जितना समय उसे उस जन्म-नक्षत्र को भोगने में शेष रहता है उसे भोग्य कहते हैं। नक्षत्रों की संख्या २७ मानी गई है जिनका आरम्भ अश्विनी नक्षत्र से माना गया है। दशापद्धति में प्रत्येक नक्षत्र के स्वामी (ग्रह) माने गए हैं। जन्म-समय में जो चन्द्र-नक्षत्र होता है (जिसे पंचांग में नक्षत्र कहते हैं) उसी से दशा का आरम्भ किया जाता है। प्रत्येक नक्षत्र का एक ही स्वामी (ग्रह) होता है उस स्वामी का दशामान निर्धारित वर्षों में होता है इसलिए जन्म-कालिक नक्षत्र जन्म-समय में जितना बीत चुका होता है उतने अनुपात से उसके स्वामी की दशा भी बीत चुकी होती है। शेष दशा का आरम्भ जन्म-कालिक निरयन सौर-वर्ष के सौर-मास की तिथि तथा सूर्यांश से होता है। उस दशा के व्यतीत हो जाने पर आगे के नक्षत्र के स्वामी की दशा चलती है। उस वर्तमान नक्षत्र के स्वामी की दशा उसके निर्धारित पूरे वर्षों तक रहती है। इसी तरह सभी दशा-क्रम आगे बढ़ता जाता है।

(५) (ख)—चन्द्र-नक्षत्र-दशाएँ कई प्रकार की हैं। इनमें विंशोत्तरी. अष्टोत्तरी तथा योगिनी दशाएँ प्रसिद्ध हैं और आजकल प्रयोग में लायी जा रही हैं। जैमिनी की नवमांशदशा जो कालचक्र दशा-तुल्य है, आयुर्दाय प्रकरण में बहुत उपयोगी है पर उसका कहीं प्रचलन नहीं देखा गया। कदाचिद् बहुत कम ज्योतिषी उसके प्रयोग को समझ पाते है। अष्टोत्तरी दशा दक्षिण-भारत

में, योगिनी पंजाब में तथा विंशोत्तरी भारत के उत्तरी-भाग में अधिक प्रचलित है। अष्टोत्तरी के मत से मनुष्य की परमायु १०८ वर्ष आंकी गई है विंशोत्तरी में १२० वर्ष तथा योगिनी में ३६ वर्ष की एक आवृत्ति होती है। विंशोत्तरी में २७ नक्षत्रों के ९ ग्रह स्वामी हैं वहां समस्त नक्षत्रों की पूरी दशा ३६० वर्ष की होती है जो तीन आवृत्ति में समाप्त होती है। प्रत्येक ग्रह तीन नक्षत्रों का स्वामी होता है। अपने से दसवें नक्षत्र का वही स्वामी होता है। नौ नक्षत्रों के दशावर्ष का योग १२० वर्ष होता है जिसमें नौ ग्रहों की दशा की एक आवृत्ति हो जाती है। इस दशा-चक्र का आरम्भ कृत्तिका नक्षत्र से माना गया है। कृत्तिका का स्वामी सूर्य है पर जातक की दशा का आरम्भ उसके जन्म-नक्षत्र से ही होता है।

अष्टोत्तरी दशा में २८ नक्षत्र माने गए हैं। इसमें अभिजित् नक्षत्र उत्तराषाढ़ का अन्तिम तथा श्रवण का आरम्भ-भाग जोड़ दिया गया है। इस दशा में केतु-ग्रह का कोई स्थान नहीं है केवल अष्टग्रहों की ही दशा है। इन आठ ग्रहों की आवृत्तियों का जोड़ भी तुल्य नहीं है। कुल २८ नक्षत्रों के दशा वर्ष का जोड़ ३९६ वर्ष होता है। इसमें नक्षत्र-स्वामियों का क्रम भी नहीं है। विंशोत्तरी दशा में एक क्रम है। नव नक्षत्रों के स्वामी नव ग्रह हैं। और जिस नक्षत्र का जो स्वामी है उससे दसवें नक्षत्र का वह पुनः स्वामी हो जाता है। अष्टोत्तरी में ऐसा क्रम नहीं है। इन्हीं तथा अन्य कारणों से लघुपाराशरी प्रणेता ने अष्टोत्तरी दशा को मान्यता नहीं दी। इसमें जो अभिजित् नक्षत्र जोड़ दिया गया है वह भगवान् श्रीरामचन्द्र के आदरार्थ है क्यों कि राशि के उस भाग में भगवान् श्रीराम का जन्म हुआ था। वह भाग शुभ माना गया है और स्वामी बृहस्पति माने गए हैं।

तीनों दशाओं की एक अलग से सारणी दे दी गई है जो तुल्यात्मक है। इस सारणी को देखने से पता चलेगा कि तीनों दशाओं में आपस में कोई सामंजस्य नहीं है तथा तीनों के आधार भिन्न-भिन्न हैं। चन्द्र-नक्षत्र के पूरे भ-चक्र भोगने पर अष्टोत्तरी में ३९६ वर्ष, योगिनी में १११ वर्ष तथा विंशोत्तरी में ३६० वर्ष लगते हैं। चन्द्र भ-चक्र में अष्टोत्तरी के आठ ग्रहों की तथा योगिनी के ८ ग्रहों की पूरी-पूरी आवृत्तियां नहीं हो पाती पर विंशोत्तरी में ९ ग्रहों की क्रम से तीन पूरी-पूरी आवृत्तियां हो जाती हैं।

विंशोत्तरी ग्रहदशाओं के शुभा-शुभ फल जानने के लिए यह ग्रन्थ (उडुदायप्रदीप) प्रस्तुत है पर अष्टोत्तरी ग्रह दशाओं के फल जानने के लिए कोई अलग से ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। इसलिए अष्टोत्तरी दशा का फल विंशोत्तरी दशा के ग्रहों के अनुसार कहना अवैज्ञानिक है। एक ही समय में अष्टोत्तरी तथा विंशोत्तरी ग्रहों की जातक की कुण्डली के अनुसार दशा का होना आवश्यक नहीं है और यदि किसी समय में दोनों पद्धतियों के अनुसार एक ही ग्रह की दशा आती हो तो पूरे दशावर्ष तुल्य न होंगे। इसलिए लघुपाराशरी ग्रन्थ के अनुसार अष्टोत्तरी तथा अन्य किसी भी दशापद्धति से लाए गए ग्रहों का फल कहना समीचीन नहीं है।

योगिनी-दशा में मुख्यतया ग्रहों का नहीं वरन् मङ्गला, पिङ्गला आदि कल्पित योगिनियों की दशा मानी गई है, जो तत्तद् नाम के अनुसार फलदायी है। तन्त्र-शास्त्र में ८ योगिनियों की चर्चा है कदाचित् उन्हीं की यह दशा है। ये योगिनियाँ संसार की आठ जगन्नियन्त्रिका शक्तियाँ हैं जो मनुष्य के भाग्य में वा फलदातृत्व-प्रसंग में नियन्त्रण करती हैं। जो हो योगिनीदशा के सम्बन्ध में कोई विस्तृत प्रमाणिक ग्रन्थ नहीं है, प्रचलन में जो फलादेश कहा जाता है उसका सारांश पञ्चांगों में दिया रहता है।

बृहद्-पाराशर-होराशास्त्र में कालचक्र-दशा का वर्णन है। यह दशा सत्ताइस नक्षत्रों के प्रत्येक चरण की होती है। इसे नक्षत्र-चरण-दशा भी कहा जा सकता है। इसमें २७ नक्षत्रों की पूरी एक आवृत्ति में ९३९६ वर्ष व्यतीत होते हैं। यह दशा चन्द्रमा की सूक्ष्म गति पर अवलम्बित है। इस दशा-क्रम में प्रत्येक नक्षत्र के चरण के आरम्भ तथा अन्तिम में राशियों के स्वामी जीव तथा देह के अधिपति होते हैं। ये यदि दोनों एक साथ कुण्डली में कहीं भी पापग्रह के साथ हों तो उस राशि की दशा में देहान्त अवश्य होता है। आयुर्दाय तथा अरिष्ट-प्रसङ्ग में यह कालदशा बड़ी उपयोगी है। इसके फलादेश जानने के लिए अनुसन्धान की आवश्यकता है। लेखक ने इसपर मनन किया है और इसे सिद्ध पाया है।

विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी, योगिनी दशा चक्र

संख्या	नक्षत्र	अष्टोत्तरी न० स्वामी	दशा वर्ष	विंशोत्तरी न० स्वामी	दशा वर्ष	योगिनी दशा	स्वा०	दशा वर्ष
१	अश्विनी	शुक्र	२१	केतु	७	भ्रामरी	मं.	४
२	भरणी	शुक्र	२१	शुक्र	२०	भद्रिका	बु.	५
३	कृतिका	सूर्य	६	सूर्य	६	उल्का	श.	६
४	रोहिणी	सूर्य	६	चन्द्र	१०	सिद्धा	शु.	७
५	मृगशिरा	सूर्य	६	मङ्गल	७	सङ्कटा	के.	८
६	आर्द्रा	चन्द्र	१५	राहु	१८	मङ्गला	च.	१
७	पुनर्वसु	चन्द्र	१५	बृहस्पति	१६	पिंगला	सू.	२
८	पुष्य	चन्द्र	१५	शनि	१९	धान्या	गु.	३
९	आश्लेषा	चन्द्र	१५	बुध	१७	भ्रामरी	म.	४
१०	मघा	मङ्गल	८	केतु	७	भद्रिका	बृ.	५
११	पू० फाल्गुनी	मङ्गल	८	शुक्र	२०	उल्का	श.	६
१२	उ० फाल्गुनी	मङ्गल	८	सूर्य	६	सिद्धा	शु.	७
१३	हस्त	बुध	१७	चन्द्र	१०	सङ्कटा	के.	८
१४	चित्रा	बुध	१७	मङ्गल	७	मङ्गला	चं.	१
१५	स्वाती	बुध	१७	राहु	१८	पिंगला	सू.	२
१६	विशाखा	बुध	१७	बृहस्पति	१६	धान्या	गु.	३
१७	अनुराधा	शनि	१०	शनि	१९	भ्रामरी	म.	४
१८	ज्येष्ठा	शनि	१०	बुध	१७	भद्रिका	बु	५
१९	मूल	शनि	१०	केतु	७	उल्का	श.	६
२०	पूर्वाषाढ़	बृहस्पति	१९	शुक्र	२०	सिद्धा	शु.	७
२१	उत्तराषाढ़	बृहस्पति	१९	सूर्य	६	सङ्कटा	के.	८
२२/	अभिजित्	बृहस्पति	१९	×	×	×	×	
२३/२२	श्रवण	बृहस्पति	१९	चन्द्र	१०	मङ्गला	चं.	१
२४/२३	धनिष्टा	राहु	१२	मङ्गल	७	पिंगला	सू.	२
२५/२४	शतभिषा	राहु	१२	राहु	१८	धान्या	गु.	३
२६/२५	पू० भाद्रपदा	राहु	१२	बृहस्पति	१६	भ्रामरी	मं.	४
२७/२६	उ० भाद्रपदा	शुक्र	२१	शनि	१९	भद्रिका	बु.	५
२८/२७	रेवती	शुक्र	२१	बुध	१७	उल्का	श.	६
		जोड़	३९६ वर्ष	जोड़	३६० वर्ष	जोड़		१११ वर्ष

बुधैर्भावादयः सर्वे ज्ञेयाः सामान्यशास्त्रतः ।
एतच्छास्त्रानुसारेण संज्ञां ब्रूमो विशेषतः ॥४॥

अन्वय —बुधैः सर्वे भावादयः सामान्यशास्त्रतः ज्ञेयाः । एतत् शास्त्रानुसारेण संज्ञां विशेषतः ब्रूमः ॥४॥

अर्थ—विद्वानों को सामान्यशास्त्र से भाव आदि फलित-ज्योतिषिक संज्ञाओं को जान लेना चाहिए इस शास्त्र में विशेष संज्ञाएँ कही जाएँगी ।

भाष्य—ज्योतिष-शास्त्र के फलित-अंग के जातक ग्रन्थों में लग्न, द्वादश भाव, द्वादश राशियाँ, नव ग्रह इनके परत्व से ग्रहों का एकाकी तथा योगज फल कहा गया है तथा उनके स्वभाव से ग्रहों की शुभ तथा क्रूर व पापी संज्ञाएं भी दी गई हैं । उन ग्रन्थों में जहाँ तक उपरोक्त गृह, भाव, ग्रहों आदि की परिभाषा तथा संज्ञा का प्रश्न है वे सब इस ग्रन्थ में भी वैसे ही ग्रहण कर ली गई हैं पर फलादेश में ग्रहों के शुभाशुभ का निर्णय उन संज्ञाओं के अनुसार नहीं है । इस ग्रन्थ में ग्रन्थान्तर-प्रसिद्ध सूर्य-मंगलादि क्रूर ग्रहों का फल इस ग्रंथ की विशेष संज्ञाओं तथा परिस्थितियों के अनुसार होता है । इस ग्रंथ में ग्रहों की दृष्टि भी अन्य ग्रंथों से भिन्न है । इसलिए अन्य ग्रन्थों में जो ग्रह क्रूर मान लिए गए हैं, इस ग्रंथ के अनुसार विशेष परिस्थिति में वे अपनी दशा में शुभ भी हो सकते हैं । इसलिए जातक-फलादेश तथा दशा में समानता नहीं है । लेखक का मत है कि जन्म-कुण्डली के ग्रह जातक के लिए उसकी जन्मज-प्रवृत्ति तथा पारिवारिक स्थिति व स्तर व अधिकार से सम्बन्ध रखते हैं । उनका कुण्डली फलादेश-प्रसंग में जन्मज स्थायी परिस्थिति का ही महत्त्व है । ऐसे फलादेश ग्रहों के विभिन्न गृह में रहने तथा योगों पर निर्भर करता है । पर जब जातक समाज की कर्मभूमि पर उतरता है तो उसे अपने जन्मज अधिकारों तथा सुविधाओं को सुरक्षित बनाए रखने के लिए, समाज में अग्रसर होने के लिए अथवा जीवन निर्माण करने के लिए संघर्ष करना पड़ता है । ऐसा करने में उसे अनेक विघ्न तथा बाधाओं का सामना करना पड़ता है । उसे अनुकूल तथा विपरीत वातावरण में गुजरना पड़ता है । जीवन में ऐसे समय आते हैं जब कि किसी जातक को उसे अपनी जन्मज-प्रवृत्ति, तथा शक्ति में अनायास सहायता मिल जाती है जिससे वह अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है और

कभी उद्योग पर भी सफलता नहीं मिलती इसलिए ऐसे अनुकूल तथा विपरीत अवसर की जानकारी के लिए ग्रहों की दशा-पद्धति अपनायी जाती है।

एक तरफ मनुष्य के जन्म-कालीन-ग्रह यथाशक्ति उसके प्रारब्ध के सूचक बन उसे जन्मज सुविधाएँ या असुविधाएँ देते हैं दूसरी तरफ उसकी कुण्डली के वे ही ग्रह चल-स्थिति में उसके भावी जीवन में उसके लिए अनुकूल तथा विपरीत परिस्थितियां भी पैदा करते रहते हैं और इस प्रकार जन्म-कालीन ग्रह जातक के समस्त जीवन का जो एक स्थायी अस्तित्व बना रख चुके रहते हैं वे ही दशा-पद्धति में उससे विलक्षण प्रभाव पैदा करते हैं। अस्तु, किसी भी कुण्डली का फलादेश तभी सम्यक् हो सकता है जब कि उसके जन्म कालीन-कुण्डली के जातक फलादेश तथा उन ग्रहों की दशा का फल, तथा गोचर का फल, इन सबका समन्वय किया जाय। अन्यथा फलादेश अधूरा होता है। फलादेश कहते समय इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। इसी दृष्टि से ग्रंथकार ने इस श्लोक में स्पष्ट कर दिया कि ज्योतिषी को विंशोत्तरी फलादेश कहने में अन्य जातक-ग्रंथों में कहे गये ग्रहों की भावों के फल की भी जानकारी कर रखनी चाहिए। इस ग्रंथ द्वारा विशेष फलादेश जाना जा सकेगा।

पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजाः पुनः।
विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् ॥५॥

अन्वयः—सर्वे (ग्रहाः) (स्वाधिष्ठानात्) सप्तमं (सप्तमस्थग्रहं) पश्यन्ति। पुनः शनिजीवकुजाः तु विशेषतः (स्वाधिष्ठानात् यथासंख्यं) त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् (अपि) पश्यन्ति ॥५॥

अर्थ—सब ग्रह अपने स्थान से सप्तमस्थ को (सप्तमस्थानस्थित ग्रह को) देखते हैं तथा शनि, बृहस्पति, मङ्गल विशेषरूपसे अपने-अपने स्थान से यथा-क्रम तृतीय-दशम, पञ्चम-नवम तथा चतुर्थ-अष्टम स्थानों में रहने वाले ग्रहों को भी देखते हैं।

भाष्य—अन्य जातक ग्रंथों में त्रिदश (३–१०) की पाददृष्टि, त्रिकोण (५–९) की अर्द्धदृष्टि तथा चतुरष्ट (४–८) की त्रिपाददृष्टि मानी गई है परन्तु इस ग्रंथ में इन दृष्टियों को क्रम से शनि, बृहस्पति तथा मङ्गल के लिए पूर्ण दृष्टि मानी गई है। यहां पाददृष्टि की मान्यता नहीं है।

उपरोक्त श्लोक में सप्तम-त्रिदशादि पदों का प्रयोग केवल सप्तमादि स्थान-स्थित ग्रहों के लिए ही किया गया है सप्तमादि राशियों के लिए नहीं। कुछ

टीकाकारों का मत है कि ग्रह अपने से सप्तमादि स्थानों (राशियों) को भी देखते हैं परन्तु लेखक का ऐसा मत नहीं है। इस ग्रंथ में सर्वत्र ग्रहों की दशा का वर्णन है राशियों की दशा का नहीं। यदि कोई राशि किसी ग्रह से दृष्ट मानी जाय, और उस दृष्ट-राशि में कोई ग्रह न बैठा हो तो क्या उस दृष्ट-राशि के स्वामी पर द्रष्टा-ग्रह का कोई प्रभाव पड़ेगा ? ऐसा इस ग्रंथ में कहीं कोई प्रसंग नहीं है।

उदाहरण—किसी की वृष-लग्न-कुण्डली में यदि मङ्गल लग्नस्थ, शनि सप्तमस्थ, बृहस्पति तृतीयस्थ तथा सूर्य नवमस्थ हो तो मङ्गल, शनि तथा सूर्य, बृहस्पति परस्पर दृष्ट होकर परस्पर सम्बन्धित होंगे। ये योगकारी कहलायेंगे। अब यदि सिंह और धनु राशि मङ्गल से दृष्ट मानी जायें तो उन दृष्टराशियों के स्वामी सूर्य, बृहस्पति पर मङ्गल का प्रभाव मानना पड़ेगा पर ऐसा इस ग्रंथ के अनुसार नहीं है। जातक फलादेश में स्वामी से दृष्ट-राशि क्षेमकर मानी गई है पर यहाँ ऐसा फलादेश अप्रासंगिक है।

जैमिनीय-शास्त्र में दशा राशियों की चलती है इसलिये वहाँ किसी विशिष्ट नियम के अनुसार प्रत्येक राशि किसी राशि को देखती है चाहे द्रष्टा और दृष्ट इन दोनों राशियों में से किसी में भी ग्रह न हो। जिस नियम से एक राशि दूसरी राशि को देखती है उसी नियम से किसी राशि में बैठा ग्रह दूसरी दृष्ट-राशि में बैठे ग्रह को देखता है। वहाँ राशियों की प्रधानता है राशिस्वामियों की नहीं, यहाँ राशि के स्वामियों वा गृहस्वामियों (ग्रहों) की प्रधानता है केवल राशियों की नहीं। वहाँ राशियों से राशियों के सम्बन्ध हैं यहाँ भाव से राशियों का तदुपरान्त राशियों के स्वामियों का और अन्ततः भावेश से भावेश का ही सम्बन्ध रह जाता है।

क्रान्तिवृत्ताश्रित बारह राशियों का स्वभाव उसमें रहने वाले आकाशीय तारागण (नक्षत्र-समूह) के अनुसार निर्धारित किया गया है। यह स्वभाव वा प्रभाव तारागण का सामूहिक प्रभाव है इसलिए एक राशि-विशेष (जिसका विस्तार ३०° है) एक इकाई (One unit) है। जब एक राशि किसी दूसरी राशि की देखी गई मानी जाती है तो उसका अर्थ होता है कि वह दृष्ट-राशि द्रष्टा-राशि से प्रत्येक ३०° के नाम की एक एक राशि से दूर है। वहाँ दूरी का मापदण्ड ३०° की एक इकाई का है। पर ग्रहों के सम्बन्ध में ऐसा नहीं कहा जा सकता। ग्रह तो आकाश में विन्दुवत् हैं। जब एक ग्रह दूसरे ग्रह को देखता है तो उसकी दूरी का माप अंशात्मक होता है। यदि इस माप को राश्यात्मक

(३०°) माप-दण्ड में परिणत करें तो एक ही कुण्डली में द्रष्टा और दृष्ट ग्रहों की दूरी में कोई सामञ्जस्य न बैठेगा, इसलिये लेखक का मत है कि दृष्टि-विचार में दूरी का माप-दण्ड अंशात्मक होना चाहिये और दृष्टि बिन्दुके आस-पास की एक सीमा दृष्टि की सीमा होनी चाहिये।

उदाहरण—मेष-लग्न-कुण्डली में यदि मङ्गल-स्पष्ट ४/२° है तथा बृहस्पति ०।२९° तो उपरोक्त श्लोक के साधारण अर्थ के अनुसार मङ्गल बृहस्पति को देख रहा है ऐसा माना जायगा। अब यदि किसी दूसरी मेष कुण्डली में मंगल-स्फुट ४।२९° तथा बृहस्पति ०।२° हो तो यहाँ भी मंगल बृहस्पति को देख रहा है ऐसा माना जायगा। पर इन दोनों परिस्थितियों में से प्रथम में मंगल से बृहस्पति २३७° दूर है जबकि दूसरी कुण्डली में मंगल से बृहस्पति केवल १८३° दूर है। मंगल का ठीक सप्तम दृष्टि-बिन्दु उससे १८०° दूर है। क्या यह तर्कसम्मत है कि दोनों भिन्न-स्थितियों का योगजफल एक सा होगा।

लेखक के मत से लघुपाराशरी की ग्रहों की दृष्टि-सीमा इस प्रकार होनी चाहिए

१—सप्तम दृष्ट—बिन्दु=ग्रह-स्पष्ट	+	१८०°	(सब ग्रहों के लिये)
१—तृतीय „ „ = „ „	+	६०°	शनि की दृष्टि
दशम „ „ = „ „	+	२७०°	
३—पञ्चम „ „ = „ „	+	१२०°	गुरु की दृष्टि
नवम „ „ = „ „	+	२४०°	
४—चतुर्थ „ „ = „ „	+	९०°	मंगल की दृष्टि
अष्टम „ „ = „ „	+	२१०°	

इन दृष्ट-बिन्दुओं के आस-पास अर्थात् कुछ आगे तथा कुछ पीछे उस दृष्टि की सीमा होनी चाहिए। यदि १५° आगे तथा १५° पीछे रखी जाय तो अनुपयुक्त न होगा। वास्तव में दृष्टि की सीमा निर्धारण करना अनुभव का विषय है। इसपर गवेषणा की जानी चाहिए।

जो दृष्ट-ग्रह द्रष्टा के दृष्ट-बिन्दु से जितना निकट रहेगा उस पर द्रष्टा

की उतनी ही तीव्र तथा प्रभावकारी दृष्टि होगी। दूर होने से दृष्टि निर्बल होगी।

ग्रहों का स्फुट सायन हो या निरयन, दृष्टि-गणना में कोई अन्तर नहीं पड़ता इसलिये जहाँतक एक ग्रह का दूसरे ग्रह से दृष्टि-सम्बन्ध का प्रश्न है वह सायन अथवा निरयन कुंडली में एक-सा दृष्टि-फल देगा अन्तर स्थानाधिप का पड़ सकता है।

पाश्चात्य-फलित के अनुसार ग्रहों की दृष्टि की सारणी नीचे दी जाती है। अंग्रेजी में इसे Aspect कहते हैं।

ग्रह का दृष्ट-स्थान			अंग्रेजी नाम	संकेत	दृष्टि का साधारण फल
ग्रहस्फुट	+	४०°	Semisextile	⊻	उत्तम
,,	+	४५°	Semisquare	∠	निकृष्ट
,,	+	६०°	Sextile	✳	उत्तम
,,	+	७२°	Quintile	Q	मध्यम
,,	+	९०°	Square	□	निकृष्ट
,,	+	१२०°	Trine	△	उत्तम
,,	+	१२५°	Sesquiquadrate	⚼	निकृष्ट
,,	+	१४४°	Biquintile	+	साधारण
,,	+	१५०°	Quincumx	⚻	निकृष्ट
,,	+	१८९°	Oppositiou	☍	निकृष्ट

यह उपरोक्त दृष्टि-चक्र सभी ग्रहों के लिये है। सभी ग्रहों की दृष्टि-सीमा १८०° है इसके उपरान्त जो ग्रह होते हैं वे दृष्ट के स्थान पर द्रष्टा हो जाते हैं।

उदाहरण—सूर्य से शनि यदि ३००° दूर है तो शनि द्रष्टा और सूर्य दृष्ट होगा और यह दृष्टि शनि की सूर्य पर १२०° की होगी जिसका संकेत होगा शनि — सूर्य (Trine Aspect) ।

जैमिनीय मत से दृष्टि-चक्रः—

द्रष्टाराशि	दृष्ट राशि	द्रष्टा राशि	दृष्टराशि
१	५,८,११	१०	२,५,८
२	४,७,१०	११	१,४,७
३	६,९,१२	१२	३,६,९
४	२,१२,८		
५	१,१०,७		
६	९,१२,३		
७	११,२,५		
८	१०,१,४		
९	१२,३.६		

उदाहरण–मेषराशि,सिंह, वृश्चिक तथा कुम्भ राशि को देखती है। यदि मेष में कोई ग्रह हुआ और सिंह या वृश्चिक वा कुम्भ में भी तो मेषस्थ ग्रह सिंहस्थ ग्रह को देखेगा। यहाँ ग्रहों की दृष्टि का नियम भी राशियों की दृष्टि के नियम के अधीन है, उनका अपना कोई स्वतन्त्र दृष्टि-नियम नहीं है।

सर्वे त्रिकोणनेतारो ग्रहाः शुभफलप्रदाः।
पतयस्त्रिषडायानां यदि पापफलप्रदाः ॥६॥

अन्वय—सर्वे त्रिकोणनेतारो (सौम्याः क्रूराश्च) ग्रहाः शुभफलप्रदाः, यदि (ते) (केचिद्) त्रिषडायानां पतयः (तर्हि) पापफलप्रदाः ॥६॥

अर्थ—त्रिकोण-स्थान के सभी स्वामी चाहे वे सौम्य-ग्रह हों या क्रूर-ग्रह, शुभफल के देने वाले होते हैं। यदि वे अर्थात् उन सौम्य अथवा क्रूर ग्रहों में से जो भी त्रिषडायाधीश होंगे वे पापफल के देने

वाले होंगे। सारांश यह है कि त्रिषडायाधीशातिरिक्त जो त्रिकोणाधिपति ग्रह हैं वे ही शुभ हैं।

भाष्य—सूर्य और चन्द्रमा को छोड़ प्रत्येक ग्रह दो राशियों के स्वामी होते हैं। उनकी एक राशि सम-पद तथा दूसरी राशि विषम-पद की होती है। इसी प्रकार कुण्डली के द्वादश गृह भी सम तथा बिषम पद के होते हैं। इनमें त्रिकोण स्थान अर्थात् प्रथम, पञ्चम तथा नवम गृह सभी विषम-पद के हैं इसलिये इन गृहों में जो भी राशि पड़ेगी वह सब एक ही पद की होगी। यदि लग्न विषम राशि का है तो पञ्चम, नवम स्थान में भी विषम पद की राशियाँ पड़ेंगी। यदि लग्न में सम राशि पड़ेगी तो पञ्चम नवम में भी सम-पद की राशियाँ ही पड़ेंगी। ऐसी दशा में त्रिकोण के स्वामी कभी भी तृतीय अथवा एकादश स्थान के स्वामी नहीं हो सकते। अस्तु,यदि उपरोक्त श्लोक का भावार्थ यह लिया जावे कि 'त्रिषडायाधीशातिरिक्त त्रिकोणपति शुभ-फल देते हैं' तो प्रतिवादी पक्ष की यह शंका होगी कि जब त्रिकोणाधीश षष्ठस्थान को छोड़ अन्य त्रिषडाय-स्थान अर्थात् तृतीय तथा एकादश स्थान के स्वामी हो ही नहीं सकते तो ग्रन्थ-रचयिता ने इस श्लोक में 'पतयस्त्रिषडायानां' क्यों कहा 'पतयः षष्ठानाम्' क्यों नहीं कहा। इसका समाधान यह है कि इस श्लोक में 'पतयस्त्रिषडायानां यदि पापफलप्रदाः' कहने से इसी श्लोक द्वारा दो अर्थ की सिद्धि होती है। एक यह कि जिस प्रकार समस्त त्रिकोणाधिपति शुभ हैं उसी प्रकार समस्त त्रिषडायाधिपति पापफलद हैं। श्लोक में यदि 'पतयस्त्रिषडायानां' वाक्य न होकर 'पतयः षष्ठानां' होता तो त्रिषडाय के तृतीय तथा एकादश स्थान के पापत्व बोध के लिए ग्रन्थकार को एक पृथक् श्लोक की रचना करनी पड़ती।

इस श्लोक में 'यदि' शब्द त्रिषडायाधीश के पापत्व-बोध के सम्बन्ध में प्रयुक्त हुआ समझा जाय तो अर्थ का अनर्थ हो जायगा। तब श्लोक का अर्थ यह हो जायगा कि किसी कुण्डली में यदि त्रिषडायाधीश पापफलद हों तो उस कुण्डली में समस्त त्रिकोणपति शुभफल के देनेवाले होंगे। यह स्थिति असंभव होने के कारण 'यदि' शब्द का उक्त प्रकार से अर्थ करना असंगत है। श्लोक में 'यदि' शब्द का आशय यही है कि त्रिकोणाधिपति शुभ है पर यदि वह त्रिषडायाधीश (षष्ठेश) हो जाय तब वह शुभफलद न होकर पापफलद हो जावेगा। त्रिकोणेश का शुभत्व षष्ठेश न होने पर ही है। इस श्लोक में त्रिकोणेश का शुभत्व और त्रिषडायाधीश का पापत्व उनके किसी अन्य ग्रह से न सम्बन्ध होने के प्रसंग में है। यदि ये परस्पर सम्बन्ध करें या केन्द्रेश आदि

से सम्बन्ध करें तो इनका गुण परिस्थितिवश कैसा होगा इसका वर्णन इस ग्रंथ के योगाध्याय में है। इस अध्याय में द्वादश गृहों तथा उनके स्वामियों के शुभत्व पापत्व का वर्णन उनके अकेले रहने के प्रसंग में है।

न दिशन्ति शुभं नृणां सौम्याः केन्द्राधिपा यदि।
क्रूराश्चेदशुभं ह्येते प्रबलाश्चोत्तरोत्तरम् ॥७॥

अन्वयः—यदि सौम्याः केन्द्राधिपाः नृणां शुभं न दिशन्ति। क्रूराश्चेद् अशुभं हि एते, प्रबलाश्च उत्तरोत्तरम् ॥७॥ (सामान्यशास्त्रेषु प्रसिद्धाः) सौम्याः (ग्रहाः) केन्द्राधिपाः यदि (त्रिकोणनेतारो भवितुं न अर्हन्ति तदा सामान्य शास्त्रेषु वर्णितं) नृणां (जातकानां) शुभं (फलं) न दिशन्ति। हि क्रूराः (यदि पतयस्त्रिषडायानां भवितुं न अर्हन्ति तदा ग्रंथान्तरेषु शास्त्रेषु वर्णितं) अशुभं (फलं न दिशन्ति) हि (प्रत्युत एतत्शास्त्रानुसारेण फलं दिशंति)।

अर्थ—सामान्य-शास्त्र के अनुसार केन्द्राधिपति सौम्यग्रह (चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र) शुभफल देते हैं पर इस शास्त्र के अनुसार यदि वे त्रिकोणाधीश न हों तो शुभफल नहीं देते। इसी प्रकार क्रूर केन्द्राधिपति सामान्य-शास्त्रानुसार पाप-फलद होते हैं पर यदि वे त्रिषडायाधीश न हों तो वे शास्त्रानुसार अशुभ फल नहीं देते तथा फल-परिमाण-प्रसंग में वे क्रमशः उत्तरोत्तर बली होते हैं।

भाष्य—पहले श्लोक में त्रिकोण के शुभत्व और त्रिषडाय के पापत्व का वर्णन किया गया है। अब यह श्लोक पूर्व-श्लोक का अनुगामी तथा पूरक भी है। पहले श्लोक में कहा गया है कि कोई भी ग्रह चाहे वह ग्रंथांतर-प्रसिद्ध सौम्य हो या क्रूर वह त्रिषडायाधीश होकर पापी हो जाता है और त्रिकोणेश होकर (यदि वह षष्ठेश न हो) तो वह शुभफल देता है। पूर्व-श्लोक में ग्रहों के त्रिषडायाधीश अथवा त्रिकोणेश होने का फल कहा है पर सूर्य चन्द्र को छोड़ सभी ग्रहों की दो राशियाँ होती हैं, सो ग्रहों की अपनी दूसरी राशि का क्या फल होगा इसका वर्णन इस श्लोक में किया गया है। अस्तु शास्त्रकार ने इस श्लोक से स्पष्ट कर दिया है कि केन्द्रेश सौम्यग्रहों के शुभफलदातृत्व में उनका त्रिकोणाधीश होना तथा क्रूर ग्रहों के अशुभफलदातृत्व में उनका त्रिषडायाधीश होना आवश्यक है। यह शुभाशुभफल उनके केवल केन्द्रेश होने के नाते नहीं है। इस श्लोक में 'यदि' शब्द' इसी बात का द्योतक है कि समस्त केन्द्रेश केवल केन्द्रेश

होने के नाते शुभ नहीं होते और न वे अशुभ ही होते हैं प्रत्युत इस श्लोक तथा पिछले श्लोक में वर्णित परिस्थितिवश वे शुभाशुभ फल देते हैं। इस बात को और स्पष्ट करने के लिये शास्त्रकार ने उदाहरण देते हुए आगे और श्लोक की रचना की है। 'कुजस्य कर्मनेतृत्वप्रयुक्ता शुभकारिता। त्रिकोणस्यापि नेतृत्वे न कर्मेशत्वमात्रतः'। कर्क लग्न कुण्डली में मंगल केन्द्रेश (दशमेश) है। ग्रन्थान्तर-प्रसिद्ध वह क्रूर-ग्रह है। उसका फल क्रूर होना चाहिए पर इस शास्त्र के अनुसार वह त्रिकोणेश होने के नाते शुभ हो गया। उसका यह शुभत्व उसके केन्द्रेश होने के कारण-मात्र से नहीं है प्रत्युत त्रिकोणेश के नाते है। इससे यह लक्षित होता है कि केन्द्र का अपना कोई गुण-विशेष नहीं है। न वह शुभ है और न अशुभ।

लग्न केन्द्र तथा त्रिकोण इन दोनों का आद्य-स्थान है। इसलिए लग्नेश (केन्द्रेश) स्वयं त्रिकोणेश भी होने के नाते शुभ हैं पर यदि वह षष्ठेश हुआ तो त्रिषडायाधीश हो जाने के कारण अशुभ हो जावेगा। वृश्चिक-लग्न-कुण्डली में तो लग्नेश मंगल षष्ठेश भी है इसलिए वह शुभ नहीं है पर उसका पापत्व मिथुन-लग्न-कुण्डली के षष्ठेश-एकादशेश मंगल की अपेक्षा बहुत कम है अथवा सिंह-लग्न-कुण्डली के सप्तमेश-षष्ठेश शनि की अपेक्षा कम है। यदि लग्नेश की दूसरी राशि केन्द्र में ही पड़े तो वह शुभ हो जायगा। मिथुन-लग्न-कुण्डली में बुध लग्नेश-चतुर्थेश, कन्यालग्न कुण्डली में बुध लग्नेश है। वह केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश होने के नाते शुभ है। इसी प्रकार धनु तथा मीन कुंडली में बृहस्पति भी शभ है।

चतुर्थ तथा दशम स्थान केन्द्र का द्वितीय तथा चतुर्थ स्थान है और समपद है। इसका कोई भी अधिपति चाहे सौम्य-ग्रह हो या क्रूर-ग्रह वह लग्न के अतिरिक्त यदि चतुर्थ वा दशम केन्द्र (स्थान) का अधिपति हो जावे तो वह न शुभ होगा और न अशुभ। इसीलिए लग्नेश सूर्य अथवा चन्द्रमा शुभ हैं पर चतुर्थेश दशमेश होने पर न शुभ और न अशुभ होंगे। चन्द्रमा सौम्य-ग्रह है, वह चतुर्थेश अथवा दशमेश होकर भी शुभ नहीं होता पर लग्नेश होकर त्रिकोणाधिपति होकर शुभ हो जाता है। इसी प्रकार सूर्य क्रूर-ग्रह है, चतुर्थेश सप्तमेश होकर वह पाप फल भी नहीं देता क्यों कि त्रिषडायाधीश नहीं है। 'न दिशंति शुभं नृणां सौम्याः केन्द्राधिपा यदि 'क्रूराश्चेदशुभं ह्येते' श्लोक के ये उदाहरण हैं। सिंह, तुला तथा कुम्भ लग्न-कुण्डलियों में मङ्गल, शनि, शुक्र, क्रम से चतुर्थेश हैं और इनकी दूसरी राशि त्रिकोण में पड़ती है इसलिये ये केन्द्रेश शुभ हैं।

सप्तम स्थान केन्द्र का तृतीय-स्थान है और विषम-पद है। इस शास्त्र के अनुसार उसकी 'मारकस्थान' संज्ञा है और उसके अधिपति को मारकेश कहते हैं। मारक-प्रसंग में इसका अधिपति यदि सौम्य-ग्रह हो तो उत्तम नहीं होता। सप्तम-स्थान विषम-पद होने कारण उसका कोई भी अधिपति त्रिकोणाधिपति नहीं हो सकता इसलिये कोई भी सप्तमेश शुभफलद नहीं हो सकता चाहे वह सौम्य ग्रह हो या क्रूर-ग्रह। सप्तमेश सिवाय षष्ठेश के तृतीय एकादश का अधिपति नहीं हो सकता। षष्ठेश होने पर वह पापी हो जाता है। अष्टमेश होने पर शुभ नहीं होता प्रत्युत अनिष्टकारी होता है। सप्तम स्थान का अधिपति सिवाय षष्ठेश अष्टमेश होने के वह न तो त्रिकोणपति और न त्रिषडायाधीश हो सकता है। सिवाय शनि के सप्तमेश षष्ठ-स्थान अथवा अष्टम-स्थान का स्वामी नहीं हो सकता इसलिये सिवाय शनि के सभी सप्तमेश न शुभ हैं और न अशुभ, पर मारक-प्रसंग में सौम्य-ग्रह (सप्तमेश) अशुभ ही है। सारांश यह है कि साधारणतया सभी सप्तमेश उत्तम फल देने वाले नहीं होते। योगजफल तारतम्य से होता है।

'प्रबलाश्चोत्तरोत्तरम्' का अर्थ है कि फल देने में त्रिकोणान्तर्गत लग्न से पञ्चम, पञ्चम से नवम-स्थान अधिक शुभ है, त्रिषडायान्तर्गत तृतीय-स्थान से षष्ठ, षष्ठ से एकादश अधिक अशुभ है, इसी प्रकार केन्द्रान्तर्गत लग्न से चतुर्थ, चतुर्थ से सप्तम, सप्तम से दशम अधिक बली है।

उदाहरण—वृश्चिक-लग्न-कुण्डली में चतुर्थेश शनि तृतीयेश है, पापी है। पर इसकी अपेक्षा कर्क-लग्न में चतुर्थेश शुक्र एकादशेश होकर शनि से अधिक पापी है। अथवा एक ही कुण्डली में सिंह-लग्न में षष्ठेश-सप्तमेश शनि दशमेश-तृतीयेश से अधिक पापी है। मिथुन-लग्न में षष्ठेश एकादशेश मङ्गल पूर्णतया पापी है, उसमें कोई शुभत्व नहीं। वृश्चिक-लग्न-कुण्डली में अष्टमेश-एकादशेश बुध पूर्णतया पापी है (यदि वह अष्टमस्थ न हो)। अष्टमस्थ अष्टमेश को अष्टमेश होने का दोष निवारण हो जाता है, इसके लिए ग्रन्थ में अलग श्लोक है।

केन्द्र में सब से बली स्थान दशमेश है और त्रिकोण में नवम है।

वृष-लग्न-कुण्डली में दशमेश शनि नवमेश भी है। यहाँ दशमेश प्रबल केन्द्रेश तथा प्रबल त्रिकोणेश होकर प्रबल-शुभत्व को प्राप्त हुआ है इसलिए यह अकेला सर्वोत्कृष्ट शुभग्रह हो गया।

चतुर्थेश-पञ्चमेश ग्रह से दशमेश-पंचमेश अधिक बली और शुभ है, दशमेश-पञ्चमेश से दशमेश-नवमेश अधिक शुभ है। सिंह-लग्न कुण्डली में शुक्र तथा शनि ये दोनों केन्द्रेश त्रिषडायाधीश हैं। इसमें शुक्र दशमेश होकर तृतीयेश तथा शनि सप्तमेश होकर षष्ठेश है। तृतीय-स्थान पापत्व में तृतीय-श्रेणी का तथा षष्ठस्थान द्वितीय-श्रेणी का पाप-स्थान है अर्थात् तृतीय से षष्ठ अधिक पापी है। उधर केन्द्र में दशम-स्थान से सप्तम स्थान न्यून बली है अस्तु उपरोक्त शुक्र शनि में बलाबल की दृष्टि से शुक्र से शनि अधिक पापी है। इसी प्रकार वृश्चिक-लग्न-कुण्डली में मंगल तथा शनि पापत्व में समान है चूंकि मंगल लग्नेश (केन्द्रेश) होकर स्वयं ही त्रिकोणेश भी है इसलिए उसका पापत्व शनि की अपेक्षा कम है क्योंकि लग्न-स्थान त्रिकोणान्तर्गत भी है। अन्य कुण्डलियों में केन्द्रपतियों में आपसी तुलना पापत्व में नहीं की जा सकती। किसी भी कुण्डली में एक से अधिक कोई भी त्रिकोणेश त्रिषडायाधीश नहीं है इसलिए वहाँ पापत्व को श्रेणी की आपसी तुलना की ही नहीं जा सकती। किसी लग्न कुण्डली में पापी केन्द्रेश तथा पापी त्रिकोणेश में एक दूसरे से अधिक पापी कौन है इसका निर्णय स्पष्ट है। पापी केन्द्रेश से पापी त्रिकोणेश सर्वदा पापत्व में न्यून पापी है यथा कर्क-लग्न-कुण्डली में केन्द्रेश शुक्र या शनि से त्रिकोणेश बृहस्पति न्यून पापी है। मकर-लग्न-कुण्डली में बुध से मंगल अधिक पापी है।

लग्नात् व्ययद्वितीयेशौ परेषां साहचर्यतः।
स्थानान्तरानुगुण्येन भवतः फलदायकौ ॥८॥

अन्वयः—लग्नात् व्ययद्वितीयेशौ परेषां (अन्यस्थानाधिपानां) साहचर्यतः (तथा) स्थानान्तरानुगुण्येन फलदायकौ भवतः ॥८॥

अर्थ—लग्न से द्वितीय और द्वादश-स्थान के अधिपति अन्य भावाधिपों के साहचर्य से (साथसे) तथा अपनी दूसरी राशि के स्थान के अनुसार फल देते हैं।

भाष्य—पिछले दो श्लोकों में त्रिकोण, त्रिषडाय तथा केन्द्र के स्वभाव तथा गुण का वर्णन किया गया, अब इस श्लोक द्वारा द्वादश तथा द्वितीय स्थानों के गुण की चर्चा की गई है। इनके स्वामी इन स्थानों के अधिपति होने के नाते कोई शुभाशुभ गुण नहीं रखते प्रत्युत ये जिन ग्रहों के साथ रहते हैं तथा इनकी दूसरी राशि जिस स्थान में पड़ती है उसके अनुकूल उनका शुभत्व पापत्व

होता है। पूर्व-श्लोकानुसार केन्द्रेश का शुभत्व अथवा पापत्व उनकी दूसरी राशियों के ऊपर अवलंबित है पर द्वितीयेश और द्वादशेश ग्रहों का शुभत्व व पापत्व उनकी अपनी दूसरी राशि के अतिरिक्त दूसरे ग्रहों के साहचर्य पर भी आश्रित है। चूंकि प्रत्येक जातक की कुण्डली में द्वितीयेश अथवा द्वादशेश से सहयोग करने वाले ग्रह भिन्न-भिन्न होंगे इसलिए द्वितीयेश और द्वादशेश का गुण किसी एक श्लोक द्वारा निर्धारित नहीं किया जा सकता था। अकेले द्वितीयेश या द्वादशेश जो त्रिषडायाधीश भी हों पापी होंगे और त्रिकोणेश भी होंगे तो शुभ होंगे यदि और किसी के साथ सम्बन्ध न करें तो, अन्यथा उनसे जो सहयोग करेगा उसका भी असर उनपर हो जावेगा। अब प्रश्न उठता है कि ऐसा तो सभी ग्रहों में योगजफल होता है तो यदि द्वितीयेश द्वादशेश भी जिस किसी से सम्बन्ध करेंगे तदनुसार उनका भी फल योगज-फल होगा। इसका समाधान यह है कि इस ग्रन्थ के योगाध्याय में केन्द्रपति तथा त्रिकोणपति के परस्पर सम्बन्ध से ही 'कारकफल' होना कहा गया है दूसरे किसी स्थान के अधिपति से नहीं अस्तु, द्वितीयेश या द्वादशेश यदि त्रिषडायाधीश हो और उसका किसी त्रिकोणेश से सम्बन्ध हो तो उसे 'कारकत्व' नहीं प्राप्त हो सकता। कारकत्व उन्हीं त्रिषडायाधीशों को प्राप्त है जो केन्द्रेश होकर त्रिकोणेश से सम्बन्ध करें या त्रिकोणेश होकर किसी केन्द्रेश से सम्बन्ध करें।

उदाहरण—मिथुन लग्न-कुण्डली में चन्द्रमा द्वितीयेश है और अन्य किसी दूसरे स्थान का अधिपति नहीं है यदि यह द्वितीय में ही हो और किसी से सम्बन्ध न करे तो वह केवल मारकेश होगा। मारक प्रसंग में अनिष्टकारी तथा अन्य प्रसंग में समफलद होगा। यह चन्द्र यदिपंचमेश शुक्र से सम्बन्ध करे तो शुभ मारकेश तो होगा पर 'कारक' नहीं हो सकता। इसी प्रकार कर्क-लग्न-कुण्डली में द्वादशेश बुध (जो त्रिषडायाधीश है) किसी से भी सम्बन्ध करके 'कारक' नहीं हो सकता। सिंह लग्न-कुण्डली में चन्द्र तथा बुध, कन्या-लग्न में सूर्य, धनु-लग्न में शनि, मकर-लग्न में बृहस्पति, मीन-कुण्डली में शनि को 'कारकत्व' प्राप्त नहीं हो सकता क्योंकि ये न केन्द्रेश हैं और न त्रिकोणेश। अपरञ्च वृष-लग्न-कुण्डली में द्वितीयेश-पञ्चमेश बुध यदि नवमेश-दशमेश से सम्बन्ध करे, कन्या-कुण्डली में द्वितीयेश-नवमेश शुक्र यदि लग्नेश-दशमेश बुध से सम्बन्ध करे, अथवा शनि से सम्बन्ध करे, तुला-लग्न कुंडली में द्वितीयेश-सप्तमेश मंगल यदि चतुर्थेश-पञ्चमेश शनि से सम्बन्ध करे, अथवा बुध से सम्बन्ध करे, वृश्चिक-कुण्डली में द्वितीयेश-पञ्चमेश बृहस्पति यदि शनि या

चन्द्रमा से सम्बन्ध करे, धनु-कुण्डली में द्वादशेश-पञ्चमेश मंगल यदि नवमेश सूर्य से अथवा बुध वा बृहस्पति से सम्बन्ध करे, मकर कुण्डली में द्वितीयेश-लग्नेश यदि शुक्र से वा बुध से सम्बन्ध करे, कुंभ-कुंडली में शनि यदि किसी केन्द्रेश त्रिकोणेश से सम्बन्ध करे, मीन कुंडली में मंगल यदि बुध, बृहस्पति, चन्द्र से सम्बन्ध करे, तो ये द्वितीयेश या द्वादशेश 'कारक' हो सकते हैं।

भाग्यव्ययाधिपत्येन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः।
स एव शुभसंधाता लग्नाधीशोऽपि चेत् स्वयम् ॥९॥

अन्वयः—भाग्यव्ययाधिपत्येन (कारणेन) रंध्रेशो न शुभप्रदः—स एव शुभसंधाता चेत् स्वयं लग्नाधीशोऽपि भवेत्, (अपि च स्वगृहे लग्ने अष्टमे वा स्थितवान् भवेत्) ॥९॥

अर्थ—भाग्य का व्यय कारक होने के कारण अथवा भाग्य स्थान से द्वादश (व्यय) स्थान का अधिपति होने के कारण रंध्रेश (अष्टमेश) शुभ नहीं हाता परन्तु यदि वह लग्नेश होकर लग्न में अथवा अष्टम में बैठा हो तो वह शुभ हो जाता है।

भाष्य—ग्रंथकार ने पूर्व श्लोकों में केन्द्र, त्रिकोण, त्रिषडाय, द्वितीय तथा व्यय-भावों के गुण का वर्णन करने के पश्चात् इस श्लोक में अष्टम स्थान के गुण की चर्चा की है। अन्य स्थानों से विलक्षण इस अष्टम स्थान का गुण होने के कारण ग्रंथकार को इसके लिए एक अलग श्लोक की रचना करनी पड़ी। रंध्रेश केवल त्रिकाणेश होकर शुभ नहीं होता, जब तक वह लग्नेश होकर लग्न वा रंध्रस्थान में न बैठे यहाँ बैठने का बड़ा महत्त्व है। इससे यह भी लक्षित होता है कि सिवाय अष्टम के या (लग्नेश होकर) लग्न के रंध्रेश किसी भी भाव में बैठकर शुभ नहीं होता प्रत्युत जिस भाव में बैठता है उसका नाश करता है। लेखक का अपना निजी अनुभव भी ऐसा ही है। रंध्रेश-केन्द्रेश यदि किसी पापी त्रिकोणेश से सम्बन्ध करे या रंध्रेश-त्रिकोणेश किसी पापी केन्द्रेश से सम्बन्ध करे तो रंध्रेश को कारकत्व नहीं प्राप्त होता। 'धर्मकर्माधिनेतारौ रंध्रलाभाधिपौ यदि। तयोः सम्बन्धमात्रेण न योगं लभते नरः' इस श्लोक का तात्पर्य यही है। इसकी व्याख्या यथास्थान की गई है।

सारांश यह है कि स्वगृही लग्नेश-अष्टमेश शुभ है अन्य स्थिति में अष्टमेश अशुभ ही है। किसी ग्रह के स्वगृही होने अथवा अन्यत्र बैठने का क्या फल

होता है इसकी अलग से कोई विवेचना इस ग्रन्थ में नहीं की गई है पर जहाँ योगकारी सम्बन्ध की व्याख्या की गई है उससे जान पड़ता है कि केन्द्रेश त्रिकोणेश के संबन्ध में इनमें से किसी एक का स्वगृही होना या केन्द्र-त्रिकोण में परस्पर स्थान में एक दूसरे का होना एक अनिवार्य शर्त है। यथा 'निवसेतां व्यत्ययेन तावुभो धर्मकर्मणोः। एकत्रान्यतरो वाऽपिविशेच्चेद्योगकारकौ' इस हेतु लग्नेश-अष्टमेश यदि लग्न (केन्द्र + त्रिकोण) अष्टम में रहकर किसी त्रिकोणेश से संबन्ध करे तो उसे योग-कारकत्व प्राप्त हो सकता है अन्यथा वह यदि त्रिषडायाधीश होकर किसी त्रिकोणाधीश से सम्बन्ध करेगा तो वह स्वयं न योगकारी होगा और न त्रिकोणाधीश ही, योगकारी अर्थात् यदि कोई दो ग्रह आपस में संबन्ध करके योगकारी होते हों और उन दोनों में से एक अष्टमेश हो तो उनका योगकारकत्व भी भंग हो जाता है साधारणतया अकेला अष्टमेश (यदि अष्टमस्थ न हो) तो अनिष्टकारी होता ही है।

जिस प्रकार भाग्य-स्थान से द्वादश (रंध्र) भाग्य का व्ययकारक है उसी प्रकार अष्टम से द्वादश (सप्तम) आयु का व्ययकारक है। लग्न से अष्टम तथा तृतीय स्थान आयु-स्थान कहे गए हैं इनसे द्वादश स्थान (लग्न से द्वितीय तथा सप्तम) मारक-स्थान माने गये हैं। इस पहलू से विचार करने पर नवम स्थान कर्म का व्ययकारक मानना पड़ेगा। पर यह युक्तिसंगत नहीं है क्योंकि केन्द्र और त्रिकोण स्थान तो शुभत्व के सुरक्षित स्थान है और त्रिषडाय तथा अष्टम ही पापस्थान हैं इसलिए इनके बारे में कहा जा सकता है कि तृतीय स्थान सुख का व्ययकारक, षष्ठ पत्नी का व्ययकारक तथा एकादश व्यय का व्ययकारक अर्थात् आय-कारक है। नवम पंचम के बारे में सामान्यतया यह कहा जा सकता है कि यदि ये षष्ठेश होकर पापी हुए तो ये क्रम से कर्म तथा सुख में बाधा डाल सकते हैं। शुभ होने पर कर्म का फल स्फुटित होगा तथा सुख की वृद्धि होगी।

उदाहरण—मिथुन-कुण्डली में भाग्येश शनि रंध्रेश है इसलिए वह भाग्य का व्ययकारक है वह यदि दशमेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे तो योगाध्याय के श्लोकों के अनुसार उसे योगत्व प्राप्त होना चाहिए, पर ऐसा नहीं होता। ग्रंथकार ने लिखा है कि 'धर्मकर्माधिनेतारौ रंध्रलाभाधिपौ यदि। तयोः संबन्धमात्रेण न योगं लभते नरः।' यहाँ नवमेश रंध्रेश है और कर्मेश नवमेश से लाभाधिप है।

अगले सूत्र में इस श्लोक का एक अपवाद है। 'न रन्ध्रेशत्वदोषस्तु सूर्याचन्द्रमसोर्भवेत्' सूर्य और चन्द्रमा को अष्टमेश (रंध्रेश) होने का दोष नहीं है। सूर्य और चन्द्रमा अष्टमेश होकर और किसी दूसरे स्थान के अधिपति नहीं हो सकते इसलिए वे न पापी हो सकते हैं और न शुभ। इस श्लोक में केवल इतना ही कहा गया है कि सूर्य चन्द्रमा को अष्टमेश-दोष नहीं है इसका यह अर्थ नहीं कि वह शुभ है। सूर्य और चन्द्रमा यदि अष्टमेश होकर अष्टमस्थ हों तभी वे शुभ हो सकते हैं। धनु और मकर कुण्डलियों में ही यह स्थिति है।

कुछ टीकाकारों का मत है कि अष्टमेश यदि लग्नेश भी हो तो वह शुभ हो हो जाता है। यह स्थिति मेष तथा तुला लग्न कुंडली में है। हमारे मत से यह मत समीचीन नहीं इस श्लोक में चेत् स्वयं का आशय ही यह है कि यदि अष्टमेश लग्नाधीश होकर स्वयं अर्थात् स्वगृही भी हो तो शुभ होता है। अन्य किसी प्रकार से नहीं। यहाँ प्रसंग अष्टमेश के शुभत्व का है। सूर्य और चन्द्रमा अष्टमेश होकर लग्नेश अथवा किसी अन्य स्थान का स्वामी नहीं हो सकते इसलिए जब तक वे अष्टमेश होकर आत्म स्थित न हों उन्हें उभय नहीं प्राप्त हो सकता, स्वगृही न होने पर उनमें अष्टमेश दोष मात्र चला जाता है।

मिथुन, सिंह, कुंभ इन कुण्डलियों के अष्टमेश त्रिकोणेश हैं पर लग्नेश नहीं। ऐसी स्थिति में लग्नेश को शुभ माना जायगा या नहीं। उक्त श्लोक ९ के अनुसार इन्हें उभय नहीं प्राप्त हो सकता पर यदि वे अष्टमस्थ हों तो संभवतः अष्टमेश के दोष का निवारण हो जायेगा। मिथुन कुण्डली में अष्टमेश नवमेश शनि है। यदि वह अष्टमस्थ हो जाय तो स्वगृही होने के दोष का निवारण हो जायेगा क्यों कि वह अपने गृह का क्यों बिगाड़ करेगा। वही जब नवम में बैठेगा तब भी स्वगृही कहलाएगा ऐसी अवस्था में यही कहा जायगा कि नवम स्थान में यानी भाग्य स्थान में ही भाग्य का व्यय कारक बैठा है। भाग्य की वृद्धि तो कर ही नहीं सकता। हमने ऐसी कुण्डली देखी भी है। जातक को बढ़ोतरी में बराबर बाधाएँ आई हैं।

इस विषय पर अन्य टीकाकारों के भी मत स्पष्ट नहीं हैं।

केन्द्राधिपत्यदोषस्तु बलवान्गुरुशुक्रयोः।
मारकत्वेऽपि च तयोर्मारकस्थानसंस्थितिः ॥१०॥

बुधस्तदनु चन्द्रोपि भवेत्तदनु षड्विधः ।
न रन्ध्रेशत्वदोषस्तु सूर्याचन्द्रमसोर्भवेत् ॥११॥

अन्वयः—गुरुशुक्रयोः मारकत्वे केन्द्राधिपत्यदोषः (भवेत्) अपि च तयोः (यदि) मारकस्थानसंस्थितिः (भवेत्) (तदा) केन्द्राधिपत्यदोषः बलवान् भवेत । तद्विधः बुधः चन्द्रोऽपि भवेत् । सूर्याचन्द्रमसोः रन्ध्रेशत्वदोषः (तु) न भवेत् ।।१०–११।।

भाष्य—मारक प्रसंग में गुरु शुक्र को सप्तमेश होने का जो दोष है वह दोष गुरु शुक्र यदि मारक-स्थान में बैठे हों तो और प्रबल हो जाता है । तब उस दोष का परिमार्जन नहीं हो सकता ।सप्तम स्थान मारक-स्थान है और विषमपद का है। त्रिकोण भी विषमपद का है इसलिए कोई भी सप्तमेश त्रिकोणाधिपति नहीं हो सकता इसलिए वह शुभ भी नहीं हो सकता । इसीलिए कहा गया है कि गुरु, शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा, ये सौम्यग्रह यदि मारकेश होकर केन्द्रेश होते हैं तो इन्हें शुभत्व नहीं प्राप्त हो सकता । यह बात क्रूर ग्रहों (सूर्य, मंगल, शनि) के लिए नहीं है । इन क्रूर ग्रहों को सप्तमेश (मारकेश) होने का दोष नहीं है ।

उदाहरण—मेष-कुण्डली में सप्तमेश शुक्र द्वितीयेश है, प्रबल मारकेश है, मिथुन-कुण्डली में सप्तमेश बृहस्पति दशमेश है, कन्या-कुण्डली में सप्तमेश बृहस्पति चतुर्थेश है, वृश्चिक-कुण्डली में सप्तमेश शुक्र द्वादशेश है, मकर में सप्तमेश बुध दशमेश है, मीन में बुध चतुर्थेश है । इनमें से कोई भी त्रिकोणाधिपति न हैं और न हो सकते हैं । कोई भी क्रूर-ग्रह सप्तमेश होकर केन्द्राधिपति नहीं है इसलिए इन्हें केन्द्राधिपत्यदोष नहीं है । बृहस्पति और बुध तो केन्द्रपति हुए बिना सप्तमेश हो ही नहीं सकते और शुक्र सप्तमेश ही रहता है इसलिए ये सौम्य ग्रह चूंकि केन्द्रपति होकर मारकेश होते हैं इसलिए मारक-प्रसंग में इनका केन्द्रपति होना दोषयुक्त कहा गया है । यदि ये सौम्य-ग्रह त्रिकोणेश होकर किसी क्रूर केन्द्रपति से सम्बन्ध करें तो उत्तम राजयोग बनता है ।

सप्तमेश (केन्द्रेश) यदि किसी त्रिकोणेश से संबन्ध करे तो योगकारी तो हो जाता है पर मारक-प्रसंग में वह मारक ही बना रहेगा । एक श्लोक में कहा है कि 'आरम्भो हि राजयोगस्य भवेन्मारकभुक्तिसु । प्रथयन्ति तमारभ्य प्रायशो योगकारिणः ।।' सप्तमेश और त्रिकोणेश के सम्बन्ध से जो राजयोग बनता है उसमें त्रिकोणेश की महादशा तथा सप्तमेश के अन्तर में आरम्भ में राजयोग फल देकर मारक फल ही प्रधान हो जाता है ।

उदाहरण—मेष-कुण्डली में सप्तमेश-द्वितीयेश शुक्र यदि नवमेश-द्वादशेश बृहस्पति से संबन्ध करे तो बृहस्पति की दशा तथा शुक्र के अन्तर में अवश्य मारक फल होगा। यहाँ शुक्र द्विधा मारकेश है। सूर्य और चन्द्रमा को अष्टमेश दोष नहीं है। वे न शुभ हैं और न अशुभ। अष्टम में हों तो शुभ हो जाते हैं।

कुजस्य कर्मनेतृत्वप्रयुक्ता शुभकारिता।
त्रिकोणस्यापि नेतृत्वे न कर्मेशत्वमात्रतः ॥१२॥

अन्वयः— (कर्कलग्ने) कुजस्य कर्मनेतृत्व (दशमाधीशत्व) प्रयुक्ता (या) शुभकारिता (सा) त्रिकोणस्यापि नेतृत्वे न कर्मेशत्वमात्रतः ॥१२॥

भाष्य—कर्क-लग्न-कुण्डली में दशमेश मंगल (क्रूर-ग्रह) को जो शुभत्व प्राप्त है वह उसके केन्द्रेश होने के कारण ही नहीं है प्रत्युत उसके त्रिकोणेश होने के नाते है। यह श्लोक 'सर्वे त्रिकोणनेतारो ग्रहाः शुभफलप्रदाः। पतयस्त्रिषडायानां यदि पापफलप्रदाः॥' तथा 'न दिशंति शुभं नृणां सौम्याः केन्द्राधिपा यदि। क्रूराश्चेदशुभं ह्येते प्रबलाश्चोत्तरोत्तरम्।' इन दोनों श्लोकों का उदाहरण है। इस श्लोक द्वारा ग्रन्थकार ने स्पष्ट कर दिया है कि कोई क्रूर केन्द्रेश जब तक त्रिकोणेश न हो शुभ नहीं होता। ग्रन्थान्तर में भौम क्रूर ग्रह है, दशमेश होकर दशम में रहने से शुभ माना गया है पर इस ग्रन्थ के अनुसार वह जब तक त्रिकोणेश न हो शुभ नहीं हो सकता। सामान्य शास्त्रानुसार सभी क्रूर केन्द्रेश पाप-फलद तथा सौम्यग्रह शुभ-फलद होते हैं पर इस शास्त्र के अनुसार दशा-प्रसंग में वे ही सौम्यग्रह शुभ होंगे जो त्रिकोणाधिपति हों और वे ही क्रूर-ग्रह पापी होंगे जो त्रिषडायाधीश होंगे।

उदाहरण—कर्क-कुण्डली में चतुर्थेश शुक्र सौम्य ग्रह है पर वह आयेश होकर पापी हो गया है तथा दशमेश मंगल क्रूर ग्रह है जो यहाँ पञ्चमेश होकर शुभ हो गया है। मकर-कुंभ-कुंडलियों में केन्द्रेश भौम त्रिषडायाधीश होकर पापी हो गया है तथा केन्द्रेश शुक्र (सौम्यग्रह) त्रिकोणाधिपति होकर यहाँ शुभ ही है। सामान्यशास्त्रानुसार केन्द्रेश चन्द्र शुभ तथा सौम्य है और सूर्य क्रूर है पर इस शास्त्रानुसार वह न शुभ है और न पापी पर त्रिकोणाधिपति से संबन्ध करने पर शुभ हो जाते हैं। लग्नस्थान की गणना त्रिकोण में भी है क्यों कि बिना त्रि (तीन) कोण के त्रिकोण हो ही नहीं सकता। चूंकि लग्न त्रिकोणान्तर्गत भी है इसलिए कन्या कुण्डली में दशमेश बुध लग्नेश होकर, धन-कुण्डली में

चतुर्थेश बृहस्पति लग्नेश होकर, मीन-कुण्डली में दशमेश बृहस्पति लग्नेश होकर शुभ हैं। और इन्हीं कुण्डलियों में चतुर्थेश·सप्तमेश सौम्य बृहस्पति, सप्तमेश—दशमेश सौम्य बुध, चतुर्थेश —सप्तमेश सौम्य बुध सम होते हुए मारकेश हो गए हैं और मारक·प्रसंग में पाप फल देते हैं क्योंकि ये त्रिषडायाधीश नहीं हैं। अष्टमेश के विषय में पहले कहा जा चुका है कि बिना त्रिषडायाधीश हुए ही वह पापी है यदि वह स्वगृही लग्नेश न हो जावे।

यद्यद्भावगतौ वापि यद्यद्भावेशसंयुतौ।
तत्तत्फलानि प्रबलौ प्रदिशेतां तमोग्रहौ ॥१३॥

अन्वयः—प्रबलौ तमोग्रहौ यद् यद् भावगतौ वा अपि यद् यद भावेश-संयुतौ, तत्तत् फलानि प्रदिशेताम् ॥१३॥

अर्थ—प्रबल तम-ग्रह राहु और केतु जिस भाव में बैठें अथवा जिस भाव में जिस ग्रह के साथ बैठें उस भाव तथा साथ में बैठने वाले ग्रहों के अनुसार तारतम्य से अपना फल देते हैं।

भाष्य—जिस प्रकार विषुव तथा क्रांति, इन दो बड़े वृत्तों के दो संपात स्थानों को क्रम से सायन मेषादि तथा सायन तुलादि संपात (अयन) कहा जाता है उसी प्रकार क्रांतिवृत्त तथा चन्द्रमार्गवृत्त के दो संपातों को राहु तथा केतु कहते हैं। सायन मेषादि संपात वह स्थान है जहाँ से सूर्य भूमध्यरेखा (विषुववृत्त) से उत्तर जाता दीख पड़ता है इसी प्रकार राहु क्रांतिवृत्त में वह चन्द्रमार्ग तथा पृथ्वी-मार्ग का संपात-स्थान है जहाँ से चन्द्रमा क्रांतिवृत्त से उत्तर होने लगता है अर्थात् जहाँ से चन्द्रमा का शर उत्तर बनने लगता है। इसी के विपरीत जहाँ से सूर्य विषुववृत्त से दक्षिण होने लगता है वह सूर्य का सायन तुलादि संपात है और इसी तरह क्रांतिवृत्त में जहाँ से चन्द्रमा दक्षिण शर बनाने लगता है वह केतु संपात है।

सायन संपात बिन्दु क्रांतिवृत्त में ५०° २६" विकला की वार्षिक विलोम गति से चल रहे हैं उसी प्रकार राहु केतु भी विलोम गति से क्रांतिवृत्त में लगाया १९° वार्षिक गति से चल रहे हैं। सायन संपात के एक भचक्र भ्रमण का काल लगभग १९ वर्ष। सायन के दोनों संपात तथा राहु केतु के संपात परस्पर १८०° की दूरी में सदा बने रहते हैं इसलिए राहु तथा केतु के राश्यादि स्पष्ट सदा आपस में एक दूसरे से १८०° दूर रहते हैं और इनकी गति विलोम है।

राहु केतु स्थान (संपात) पर जब चन्द्रमा आता है तो पृथ्वी पर (तम) ग्रहण की स्थिति पैदा हो जाती है। इसी दृष्टि से राहु तथा केतु को तम वा छाया ग्रह माना जाता है। वास्तव में वे अन्य ग्रहों जैसे ठोस ग्रह नहीं हैं।

इन दोनों तम ग्रहों की अपनी कोई निजी राशि नहीं है। क्रांतिवृत्त (पृथ्वी की प्रदक्षिणा का मार्ग) के जिस भाग पर यह छाया पड़े उस समय वही उनकी राशि हो जाती है इसीलिए कहा गया है कि ये तम ग्रह जिस राशि में (भाव में) हों वे उसके अनुरूप फल देते हैं। उस समय वे उस भाव के ही अधिपति हो जाते हैं। इन के साथ जो ग्रह होगा उसके गुण के तारतम्य से इनका फल होगा। राहु या केतु के साथ यदि कोई ग्रह न हो तो वे जहां हों केवल उस भाव के अनुरूप ही फल देगें। इस हेतु से राहु यदि अकेले त्रिकोण में बैठे तो शुभ, अष्टम में बैठे तो भी शुभ (क्योंकि अष्टमस्थ अष्टमेश शुभ माना गया है), केन्द्र में सम, द्वितीय-सप्तम में मारकेश, द्वादश में सम पर व्ययकारक होते हैं। त्रिषडाय में बैठकर पापी हो जाते हैं। ग्रन्थान्तर में राहु को क्रूर तथा अशुभ माना है, केतु को सम अथवा शुभ।

योगज-फल विचार में राहु केतु यदि केन्द्र में रहकर त्रिकोणेश से सम्बन्ध करें या त्रिकोण में रहकर किसी केन्द्रेश या केन्द्रेश-त्रिकोणेश से संबन्ध करें तो कारक बन जाता है पर यहाँ संबन्ध की व्याख्या 'संयुक्तो' शब्दान्तर्गत ही करनी चाहिए। यहाँ दृष्टि-सबन्ध विहित नहीं है। राहु केतु का अन्य ग्रहों से संबन्ध केवल उनके साथ रहने वाले ग्रह से ही मानना चाहिए। अपनी निज की कोई राशि न होने के कारण उनका किसी दूसरे ग्रह से संबन्ध सिवाय स्थान-संबन्ध के और दूसरी श्रेणी का संबन्ध नहीं हो सकता।

राहु या केतु यदि सप्तम या द्वितीय-स्थान में हों तो उन्हें मारकेश मानना चाहिए या नहीं, इस पर कोई स्पष्ट श्लोक नहीं है। सौम्य-ग्रह बृहस्पति, शुक्र, बुध, चन्द्र सप्तमेश होकर मारकेश हो जाते हैं पर क्रूर ग्रह यदि मारकेश (सप्तमेश) हों तो उनका मारक-फल नगण्य माना है। इस न्याय से राहु (क्रूर) ग्रह को मारकत्व दोष से मुक्त होना चाहिए, ऐसा लेखक का मत है। पर यदि सप्तमस्थ या द्वितीयस्थ राहु या केतु के साथ सौम्य ग्रह द्वितीयेश या सप्तमेश बैठे हों तो राहु केतु निश्चय से मारकेश हो जायेंगे।

उदाहरण—मेष-लग्न-कुण्डली में सप्तमस्थ या द्वितीयस्थ राहु या केतु यदि शुक्र के साथ हो तो वह निश्चयेन प्रबल मारकेश हो जाएगा और अकेला हो

तो साधारण मारकेश, तुलेश या वृषेश होने के नाते हो सकता है। वृष-लग्न-कुण्डली में सप्तमस्थ राहु या केतु यदि मंगल के साथ हों तो मारकेश नाम-मात्र का होगा और वही यदि बुध के साथ हो तो तृतीय श्रेणी का मारकेश हो जायगा। मिथुन-कुण्डली में सप्तमस्थ राहु अथवा केतु यदि किसी दूसरे ग्रह के साथ भी न हो तो भी वह मारकेश होगा क्योंकि वह प्रबल मारकेश वृहस्पति के गृह का स्वामी है। उस ग्रह में यदि वृहस्पति बैठा हो तो भी राहु केतु प्रबल मारकेश हो जायेंगे, इसमें संदेह नहीं।

राहु या केतु त्रिकोण में किसी त्रिषडायाधीश के साथ बैठे तो त्रिकोण + त्रिषडाय के मिश्रित बलाबल के अनुसार फल देंगे। सारांश यह है कि इस शास्त्र के अनुसार राहु और केतु को सदा स्वगृही समझना चाहिए। 'यदि केन्द्रे त्रिकोणे वा निवसेतां तमोग्रहौ। नाथेनान्यन्तरेणापि सम्बन्धाद्योगकारकौ' इसश्लोक के अनुसार केन्द्र–त्रिकोणस्थ राहु-केतु यदि अन्य केन्द्र–त्रिकोणेश से सम्बन्ध करें तो योगकारक (विशेष शुभ फलदाता) हो जाते हैं।

संज्ञाप्रकरण वाला प्रथम अध्याय समाप्त हुआ। इस समाप्त हुए अध्याय में ग्रहों का शुभत्व तथा पापत्व उनके गृह-स्वामित्व के अनुसार कहा गया है, जिसे उनका एकाकी गुण मानना चाहिए। यदि वे किसी दूसरे गृह-स्वामी से सम्बन्ध करते हैं तो उनके शुभत्व या पापत्व में कैसा और क्या परिवर्तन हो जाता है इसकी विवेचना अगले योगाध्याय प्रकरण में की गई है।

अथ योगाध्याय:

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम् ।
इतरैरप्रसक्ताश्चेद् विशेषफलदायकाः ॥१॥

अन्वय:—केन्द्रत्रिकोणपतयः परस्परं सम्बन्धेन (शुभयोगज) फलदायकाः (भवन्ति) तथा इतरैः अप्रसक्ताः केन्द्रत्रिकोणपतयः परस्परं सम्बन्धेन विशेषशुभफलदायकाः भवन्ति ॥१॥

अर्थ—वे केन्द्र और त्रिकोणपति जिनकी अपनी दूसरी राशि भी केन्द्र और त्रिकोण के अतिरिक्त अन्य स्थान में न पड़ती हो, यदि वे परस्पर सम्बन्ध करें तो उनका योगज-फल विशेष शुभ होता है।

भाष्य—इस श्लोक में उन केन्द्र और त्रिकोणाधिपतियों के परस्पर संबन्ध की चर्चा की गई है जिनकी अपनी दूसरी राशि केन्द्र त्रिकोण में ही पड़ती हो। जो केन्द्रपति तथा त्रिकोणाधीश केन्द्र और त्रिकोण के अतिरिक्त अन्य स्थान के स्वामी हों अथवा उनमें से एक केन्द्र या त्रिकोण का ही स्वामी और दूसरा केन्द्र-त्रिकोण के अतिरिक्त त्रिषडाय आदि पाप स्थान का स्वामी हो और ये परस्पर सम्बन्ध करें तो उनके फल की चर्चा अगले श्लोकों में की गई है। इस श्लोक में तो केवल उन्हीं ग्रहों का फल (विशेष-शुभ) कहा गया है जो निर्दोष हैं।

परस्पर सम्बन्ध का अर्थ है कि जिन दो ग्रहों के सम्बन्ध का विचार किया जा रहा हो वे यदि परस्पर सम्बन्धित हों तभी योगज 'कारक' फल परस्पर दशान्तर में देंगे अन्यथा नहीं। अर्थात् यदि कोई ग्रह किसी दूसरे ग्रह से दृष्टि-सम्बन्ध करता हो और वह दूसरा ग्रह पहले वाले द्रष्टा ग्रह से सम्बन्ध न करे तो उसका योगजफल नहीं होगा।

योग करने वाले यदि तीन ग्रह या उससे अधिक हों जिससे पहला दूसरे से, दूसरा तीसरे से परस्पर सम्बन्ध करे और तीसरा पहले वाले से सम्बन्ध न करे तो इन तीनों का फल (परस्पर दशा अन्तर में) योगज-फल न होगा।

उदाहरण—यदि क, ख, ग, इन तीन ग्रहों में 'क' से 'ख' का परस्पर सम्बन्ध हो और 'ख' का 'ग' से और 'ग' का 'क' से तो 'क' से, 'ख' और 'ग'

ये दोनों परस्पर सम्बन्धित हो जायेंगे पर यदि 'क' का 'ख' से और 'ख' का 'ग' से परस्पर सम्बन्ध हो और 'ग' का 'क' से परस्पर सम्बन्ध न हो तो (१) 'क' 'ख' (२) 'ख' 'ग' इस प्रकार दो इकाई बन जायेंगी और तब प्रथम उदाहरण के अनुसार 'क' की महादशा, 'ख' के अन्तर और 'ग' के प्रत्यन्तर में जो शुभ फल होता दूसरे उदाहरण में वह 'क' की महादशा और 'ख' के अन्तर में ही सीमित रह जायगा।

दो ग्रहों के परस्पर सम्बन्ध से उत्पन्न योगजफल को आंकना कठिन नहीं है पर जहां दो से अधिक ग्रह यदि परस्पर सम्बन्ध करें तो उनके योगज-फल का आंकना बहुत कठिन हो जाता है। इस शास्त्र में दशा-फल प्रसंग में ग्रहों की महादशा, अन्तर तथा प्रत्यन्तर तक का ही विचार किया गया है उसके आगे सूक्ष्म प्राण-अन्तर दशाओं को नगण्य मान छोड़ दिया गया है। यहाँ अन्तर शब्द के लिए अन्तर अथवा भुक्ति शब्द का प्रयोग और प्रत्यन्तर के लिए 'दशाद्वयी मध्यगत.' वाक्य का प्रयोग किया गया है। यथा—'स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ केन्द्रपतिः शुभम्', 'तेषामन्तर्दशास्वेव दिशन्ति स्वदशाफलम्', 'दशाद्वयीमध्यगतस्तदयुक् शुभकारिणाम्'।

लेखक का मत है कि दो ग्रहों से अधिक ग्रह जहां परस्पर सम्बन्ध करते हों वहां उनमें से दो-दो ग्रहों की एक-एक इकाई बना ली जानी चाहिए और दो-दो ग्रहों की इकाइयों के ग्रहों के परस्पर दशा-अन्तर में उनसे उत्पन्न योगज-फल की प्रधानता माननी चाहिए और तीसरे सम्बन्धित ग्रह के अपने निजी गुण के अनुसार सम्बन्धित ग्रहों के प्रत्यन्तर में उसके फल का अनुमान करना चाहिए। महादशा और अन्तर की प्रधानता शास्त्रसम्मत भी है। इस शास्त्र के श्लोक में कहा है 'स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ केन्द्रपतिः शुभम्' अर्थात् जब केन्द्रपति की दशा हो उससे सम्बन्धित त्रिकोणपति का अन्तर हो वह शुभ होता है। मानों इन दो केन्द्र-त्रिकोणपति ग्रहों में अष्टमेश, एकादशेश आदि का भी स्थान-सम्बन्ध हो या ये परस्पर सम्बन्धित हों तो क्या त्रिकोणेश की दशा, केन्द्रपति के अन्तर में अष्टमेश के प्रत्यन्तर में शुभ-फल से अशुभ हो जाएगा। इसका उत्तर यही है कि किसी ग्रह की महादशा में दूसरे ग्रहों का अन्तर प्रधान रहता है और प्रत्यन्तर गौण, क्योंकि सभी योगकारी या अत्यन्त शुभ-कारक ग्रहों में सात अन्य ग्रहों का प्रत्यन्तर और प्रत्यन्तर में सूक्ष्म दशा भुगतती ही रहनी है और यदि प्रत्यन्तर और सूक्ष्म दशाधीश पापी हुए तो

इससे मूल दशाधीश और उसके अन्तराधीश के योगज फल में यदि कोई परिवर्तन माना जाय तो मूल दशा और अन्तर के फलादेश की कोई सार्थकता ही न रह जायगी।

उदाहरण—मेष-कुण्डली में यदि पञ्चम या नवम या चतुर्थ में यदि पञ्चमेश, नवमेश और चतुर्थेश क्रम से सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति एक साथ बैठे हों तो ये परस्पर सम्बन्धित होकर सभी कारक हो जाएंगे और विशेष शुभफल देंगे। इनसे यदि कोई चौथा पापी ग्रह भी सम्बन्ध करे तो भी इन तीन अथवा चार ग्रहों की दो-दो ग्रहों की एक-एक इकाई बनाकर फल का अनुमान करना चाहिए। 'तत्तद् भुक्त्यनुसारेण दिशेयुर्योगजं फलम्' इस श्लोक के आधार पर यहाँ इस प्रकार गणना करनी चाहिए। (१) सूर्य में चन्द्र, चन्द्र में सूर्य का अन्तर, (२) बृहस्पति में चन्द्र, चन्द्र में बृहस्पति (३) सूर्य में बृहस्पति, बृहस्पति में सूर्य। योगज-फल परस्पर सम्बन्धित ग्रहों के आपसी दशा-अन्तर में होता है अर्थात् एक की दशा दूसरे के अन्तर में।

केन्द्रेश और त्रिकोणेश दो प्रकार के हैं। एक वे जिनकी अपनी दोनों राशियाँ केन्द्र-त्रिकोण में ही पड़ती हैं। और दूसरे वे जिनकी अपनी दूसरी राशि त्रिषडाय, अष्टम, द्वितीय, द्वादश में पड़ती हो। उपरोक्त श्लोक में 'इतरैरप्रसक्ताश्चेत्' वाक्य का प्रयोग ऐसे केन्द्रत्रिकोणाधिपति के लिए किया है जिनकी अपनी दूसरी राशि त्रिषडाय अष्टम में न पड़ती हो। ऐसे ग्रह निर्दोष ग्रह हैं। इस अर्थ की पुष्टि अगले श्लोक से भी हो जाती है जिसमें कहा है कि 'केन्द्रत्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयम्' अर्थात् वे केन्द्र त्रिकोणपति जो स्वयं दोषयुक्त हैं अर्थात् जिनकी दूसरी राशि त्रिषडाय अष्टम में है।

इतरैरप्रसक्तकेन्द्रत्रिकोणाधिपतियों की तालिका:—
अर्थात् निर्दोष ग्रहों की सूची।

लग्न	भावेश	ग्रह	ग्रहों का योगजफल
मेष	चतुर्थेश —	चन्द्रमा	चं + सू = + १०
	पञ्चमेश —	सूर्य	शु + बृ = ± १०
			सू + बृ = + १३
	सप्तमेश — द्वितीयेश	= शुक्र	चं + शु = ± ५
			चं + बृ = + ११
	नवमेश — द्वादशेश	= गुरु	शु + बृ = ± १०

लग्न	भावेश		ग्रह	ग्रहों का योगजफल
बृष	चतुर्थेश —		सूर्य	श + बु = ± १७
	नवमेश —	दशमेश	= शनि	सू + श = + १३
	द्वितीयेश —	पञ्चमेश	= बुध	सू + बु = ± ८
मिथुन	लग्नेश —	चतुर्थेश	= बुध	बु + बृ = ± ११
	सप्तमेश —	दशमेश	= गुरु	बु + शु = + १३
	द्वादशेश —	पञ्चमेश	= शुक्र	
कर्क	लग्नेश —	लग्नेश	= चन्द्र	चं + मं = + १६
	पञ्चमेश —	दशमेश	= मङ्गल	
सिंह	लग्नेश —	लग्नेश	= सूर्य	सू + मं = + १५
	चतुर्थेश —	नवमेश	= मङ्गल	
कन्या	लग्नेश —	दशमेश	= बुध	बु + बृ = + १२
	चतुर्थेश —	सप्तमेश	= गुरु	बु + शु = ± १६
	द्वितीयेश —	नवमेश	= शुक्र	शु + बृ = — १०
तुला	चतुर्थेश —	पंचमेश	= शनि	श + मं = + ११
	सप्तमेश —	द्वितीयेश	= मङ्गल	श + बु = + १५
	द्वादशेश —	नवमेश	= बुध	श + चं = + १२
	दशमेश —	दशमेश	= चन्द्र	मं + बु = + १०
				बु + चं = + ११
वृश्चिक	द्वितीयेश —	पंचमेश	= गुरु	बृ + शु = ± ९
	सप्तमेश —	द्वादशेश	= शुक्र	चं + बृ = ± १३
	नवमेश —	नवमेश	= चन्द्र	शु + चं = ± १०
	दशमेश —	दशमेश	= सूर्य	सू + चं = +
धनु				सू + बु = ± ११
	लग्नेश —	चतुर्थेश	= गुरु	बृ = + ७
	द्वादशेश —	पञ्चमेश	= मङ्गल	बृ + मं = + १३
	सप्तमेश —	दशमेश	= बुध	बृ + बु = ± ११
	नवमेश —	नवमेश	= सूर्य	बृ + सू = + १४
				मं + बु = ± १०
				मं + सू = + १३
मकर	द्वितीयेश —	लग्नेश	= शनि	श + शु = + १६
	पंचमेश —	दशमेश	= शुक्र	श + चं = ± ९
	सप्तमेश —	सप्तमेश	= चन्द्र	शु + चं = ± १३
कुम्भ	द्वादशेश —	लग्नेश	= शनि	श + शु = + १५
	चतुर्थेश —	नवमेश	= शुक्र	श + सू = + ९
	सप्तमेश —	सप्तमेश	= सूर्य	शु + सू = + १२

लग्न	भावेश		ग्रह	ग्रहों का योगजफल
मीन	लग्नेश —	दशमेश	= गुरु	बृ+बु = ± १२
	चतुर्थेश —	सप्तमेश	= बुध	बृ+चं = + १५
	पंचमेश —	पंचमेश	= चन्द्र	बृ+मं = + १६
	द्वितीयेश —	नवमेश	= मङ्गल	म+चं = + १३
				मं+बु = ± १०
				चं+बु = ± ९

उपरोक्त तालिका में लेखक ने निर्दोष केन्द्रेश त्रिकोणेश में द्वितीयेश द्वादशेश को भी सम्मिलित कर लिया है क्योंकि यहाँ द्वितीयेश द्वादशेशों की दूसरी राशि केन्द्र या त्रिकोण राशि केन्द्र या त्रिकोण में ही पड़ी है और जब ये किसी दूसरे निर्दोष केन्द्रेश या त्रिकोणेश से परस्पर सम्बन्ध करेंगे तो उन्हें 'परेषां साहचर्यतः' न्याय से निर्दोष योगत्व प्राप्त हो जाएगा। उपरोक्त तालिका में द्वितीयेश सप्तमेश, बृहस्पति, शुक्र, बुध, चन्द्र मारकेश भी हैं (तालिका में ये मोटे टाइप से निर्दिष्ट हैं)। इनका जब सम्बन्धित ग्रहों में अन्तर आवेगा तो मारक फल देंगे। तब ये कारक से मारक हो जायेंगे। मारकेश के अंतर में पहले कारकफल बाद मारकेश का फल होता है। जहाँ मारक बृहस्पति है वहाँ उसके मारकत्व गुण की संख्या ऋण (—) हो जायेगी। शुक्र में बृहस्पति की अपेक्षा मारकत्व दोष कम है। ऊपर + (धन) का अर्थ है सम्बन्ध तथा अकों के पूर्व + (धन) का अर्थ है शुभ गुण संख्या। जिसकी चरमसीमा + १७ तक है।

निम्नलिखित सारणी में निर्दिष्ट ग्रह स्वतः योगकारी हैं क्योंकि वे केन्द्र तथा त्रिकोण इन दोनों स्थानों के स्वयं अधिपति हैं। ये यदि किसी दूसरे केन्द्र त्रिकोणपति से न भी सम्बन्ध करें और स्वराशिस्थ हों तो स्वयं योगकारी हो जाते हैं यदि स्वराशिस्थ न हों तो कारकत्व में न्यूनता आ जायेगी।

वे ग्रह जो स्वयं केन्द्रेश और त्रिकोणेश दोनों हैं—

वृष लग्न	— नवमेश	दशमेश	= शनि	+ ११
मिथुन ,,	— लग्नेश	चतुर्थेश	= बुध	+ २
कर्क ,,	— पंचमेश	दशमेश	= मंगल	+ १०
कर्क ,,	— लग्नेश	लग्नेश	= चन्द्र	+ ६
सिंह ,,	— चतुर्थेश	नवमेश	= मंगल	+ ९

कन्या लग्न	— लग्नेश	दशमेश = बुध	+	९
तुला ,,	— चतुर्थेश	पंचमेश = शनि	+	८
धनु ,,	— लग्नेश	चतुर्थेश = गुरु	+	७
मकर ,,	— पंचमेश	दशमेश = शुक्र	+	१०
कुम्भ ,,	— चतुर्थेश	नवमेश = शुक्र	+	६
मीन ,,	— लग्नेश	दशमेश = गुरु	+	९
मीन ,,	— पंचमेश	पंचमेश = चन्द्र	+	६

केन्द्र-त्रिकोण-पति से निर्दोष त्रिकोणपति के सम्बन्ध की तालिका---

कर्क	—	मंगल	+	चन्द्र	= + १६
सिंह	—	मंगल	+	सूर्य	= + १५
तुला	—	शनि	+	बुध	= + १५
धनु	—	गुरु	+	सूर्य	= + १४
		गुरु	+	मंगल	= + १३
कुम्भ	—	शुक्र	+	शनि	= + १५
मकर	—	शुक्र	+	शनि	= + १६
मीन	—	गुरु	+	चन्द्र	= + १५
		गुरु	+	मंगल	= + १६

उपरोक्त योग तत्तद् लग्न-कुण्डली के सर्वोत्कृष्ट योग हैं और निर्दोष हैं। इनमें मारकफल का संपर्क भी नहीं है।

ये उपरोक्त ग्रह स्वयं योगकारी 'कारक' हैं। ये यदि स्वराशिस्थ हों तभी पूरे 'कारक' माने जाएँगे क्योंकि केन्द्रेश और त्रिकोणेश का कारकत्व का परस्पर सम्बन्ध तभी सिद्ध होता है जब उनमें से कोई एक केन्द्र या त्रिकोण की अपनी राशि में स्थित हो।

उपरोक्त ग्रहों से यदि किसी दूसरे निर्दोष केन्द्रत्रिकोणपति का परस्पर सम्बन्ध हो जावे जो कर्क, सिंह, तुला, धनु, मकर, कुम्भ, मीन कुण्डलियों में ही संभव है। तो वह योग परस्पर दशा व अंतर में कुण्डली का सर्वोत्कृष्ट योग होगा। सदोष केन्द्रत्रिकोणाधीश की दशा और उपरोक्त सारणी के शुभ-ग्रहों के अंतर में वैसा शुभ फल नहीं होगा क्योंकि मूल दशा सदोष केन्द्र या त्रिकोण-पति की है।

केन्द्रत्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयम् ।
सम्बन्धमात्राद्बलिनौ भवेतां योगकारकौ ॥२॥

अन्वयः—बलिनौ केन्द्रत्रिकोणनेतारौ (दशमेश-नवमेशौ) यदि स्वयं दोषयुक्तावपि भवेतां (तदा) (परस्परं) सम्बन्धमात्रात् योगकारकौ भवेताम् ॥२॥

अर्थ—बली केन्द्र और त्रिकोण के नेता अर्थात् दशमेश और नवमेश यदि सदोष होते हुए भी परस्पर सम्बन्ध करें तो ये दोनों योगकारी (शुभफलद) होते हैं।

भाष्य—पहले श्लोक में कहा गया है कि वे केन्द्रेश और त्रिकोणेश जिनकी अपनी दूसरी राशि केन्द्रत्रिकोणातिरिक्त अन्यत्र न पड़ती हो। (अर्थात् निर्दोष केन्द्रेश-त्रिकोणेश) वे यदि आपस में सम्बन्ध करें तो ऐसा योग विशेष-शुभ फलदायक होता है। इस श्लोक में बताया गया है कि बली केन्द्रेश (दशमेश) और बली त्रिकोणेश (नवमेश) सदोष होते हुए भी अर्थात् केन्द्रत्रिकोणातिरिक्त अन्य स्थान के स्वामी होकर भी यदि परस्पर सम्बन्ध करें तो शुभ फलदायक होते हैं। पहली स्थिति में विशेष-शुभ फल-दायक और इस स्थिति में केवल शुभ फलदायक होते हैं। यहाँ 'दोषयुक्तावपि स्वयं' वाक्य पिछले श्लोक के 'इतरैर-प्रसक्ताश्चेत्' वाक्य का स्पष्टीकरण है। 'स्वयं दोषयुक्ता' कहने का तात्पर्य उन केन्द्रत्रिकोणाधिपतियों से है जिनकी दूसरी राशि पाप-स्थान में पड़ती हो और इसी कारण वे स्वयं दोषयुक्त हो गए हों, न कि 'परेषां साहचर्यतः' अर्थात् जिनका दूसरे पापी ग्रहों का साहचर्य हो। 'इतरैरप्रसक्ता' वाक्य का भी तात्पर्य यह है कि वे स्वय निर्दोष हों (जिनकी अपनी दूसरी राशि अन्यत्र न पड़ती हो)।

पहिले श्लोक के अनुसार लेखक ने ऐसे केन्द्रेश और त्रिकोणेश जो जिनकी अपनी दूसरी राशि द्वितीय अथवा द्वादश में हो उसे भी परस्पर सम्बन्धप्रसंग में निर्दोष केन्द्रेश त्रिकोणेश माना है क्योंकि ये "परेषां साहचर्यतः" इस श्लोक के अनुसार दूसरों के सहयोग से अपना फल देते हैं और चूँकि वहाँ दोनों ग्रह केन्द्र या त्रिकोण के स्वामी ही होकर आपस में मिलते हैं तो उनको वैसा ही फल मिलता है मानो वे द्वितीयेश द्वादशेश स्वयं केन्द्र -त्रिकोण के अधिपति हैं। परन्तु इस श्लोक के अनुसार यदि कोई नवमेश, द्वितीयेश या द्वादशेश हो और सदोष दशमेश से सम्बन्ध करे तो स्थिति बदल जायेगी। मेष-लग्न-कुण्डली में नवमेश बृहस्पति द्वादशेश है और दशमेश शनि

एकादशेश है। दोनों का परस्पर सम्बन्ध इस प्रकार माना जायगा कि द्वादशेश बृहस्पति नवमेश होकर शुभ है अर्थात् स्वयं शुभ है परन्तु एकादशेश शनि के साहचर्य से वह दोषयुक्त हो जायगा। चूंकि वह (द्वादशेश) स्वयं दोषयुक्त नहीं है और दशमेश शनि स्वयं दोषयुक्त है इसलिए इनका योगज-फल तारतम्य से होगा। इस सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि किसी भी कुण्डली में दशमेश तथा नवमेश—इन दोनों में से एक ही दोषयुक्त होता है, दोनों दोषयुक्त नहीं हो सकते।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार दशमेश, नवमेश की तालिका—जिनका योगज-फल शुभ माना गया है।

मेष —	नवमेश — द्वादशेश	= बृहस्पति	= स्वयं निर्दोष पर साहचर्य से सदोष	गु + श = + २
	दशमेश—एकादशेश	= शनि	= निर्दोष	
वृष —	नवमेश — दशमेश	= शनि	= निर्दोष	श+११
मिथुन —	नवमेश—अष्टमेश	= शनि	= सदोष	श + बृ = + ३
	दशमेश—सप्तमेश	= बृहस्पति	= सदोष (मारकेश)	
कर्क —	नवमेश—षष्ठेश	= बृहस्पति	= सदोष	बृ + मं = + ९
	दशमेश—पञ्चमेश	= मङ्गल	= निर्दोष	
सिंह —	नवमेश—चतुर्थेश	= मङ्गल	= निर्दोष	म + शु = + ६
	दशमेश—तृतीयेश	= शुक्र	= सदोष	
कन्या —	नवमेश—द्वितीयेश	= शुक्र	= सदोष (मारकेश)	शु + बु = ± १६
	दशमेश—लग्नेश	= बुध	= निर्दोष	
तुला —	नवमेश—द्वादशेश	= बुध	= निर्दोष	बु + चं = +११
	दशमेश—दशमेश	= चन्द्र	= निर्दोष	
वृश्चिक —	नवमेश—नवमेश	= चन्द्र	= निर्दोष	चं + सू = +११
	दशमेश—दशमेश	= सूर्य	= निर्दोष	
धनु —	नवमेश—नवमेश	= सूर्य	= निर्दोष	सू + बु = ± ११
	दशमेश—सप्तमेश	= बुध	= सदोष (मारकेश)	

मकर—	नवमेश—षष्ठेश = बुध	=	सदोष	बु + शु = + ९
	दशमेश-पञ्चमेश = शुक्र	=	निर्दोष	
कुम्भ—	नवमेश—चतुर्थेश = शुक्र	=	निर्दोष	शु + मं = + ६
	दशमेश—तृतीयेश = मङ्गल	=	सदोष	
मीन —	नवमेश—द्वितीयेश = मङ्गल	=	निर्दोष	मं + बृ = ÷ १६
	दशमेश—लग्नेश = बृहस्पति	=	निर्दोष	

उपरोक्त सारणी में मेष-लग्न कुण्डली में नवमेश-द्वादशेश बृहस्पति स्वयं दोषयुक्त नहीं है पर एकादशेश शनि (जो दशमेश भी है) के साहचर्य से दोषी हो गया है इसलिए यहाँ बृहस्पति+शनि का योग कारक योग नहीं है। मिथुन-कुण्डली में शनि अष्टमेश होकर स्वयं सदोष है और बृहस्पति मारकेश है इसलिए इनके योग दोनों सदोष हैं कारक नहीं हैं कन्या-धनु-कुण्डली में क्रम से शुक्र और बुध मारकेश हैं इनके अन्तर में मारक फल होता है।

निवसेतां व्यत्ययेन तावुभौ धर्मकर्मणोः।
एकत्राऽन्यतरो वाऽपि वसेच्चेद्योगकारकौ ॥ ३ ॥

अन्वयः—तावुभौ धर्मकर्मणः स्वामिनौ (बलिनौ केन्द्रत्रिकोणनेतारौ, दोषयुक्तावपि स्वयं) यदि व्यत्ययेन (स्वस्वस्थानेन वैपरीत्येन निवसेताम्) एकत्र (निवसेताम्) अन्यतरो वा अपि (एकः अन्यराशौ स्थित्वा अन्यं पश्यति चेत्) तदा योगकारकौ भवेतम् ॥ ३ ॥

अर्थ—धर्म-कर्म के स्वामी अर्थात् नवमेश-दशमेश (निर्दोष हों या सदोष) यदि (१) परस्पर स्थानगत हों अर्थात् नवमेश दशम स्थान में हो और दशमेश नवम स्थान में हो अथवा (२) ये दोनों नवम या दशम स्थान में एकसाथ बैठे हों अथवा (३) एक दूसरे के स्थान पर हों और दूसरा कहीं भी बैठकर पहले को देखता हो अर्थात् नवमेश दशम स्थान में हो और दशमेश नवमेश को देखता हो अथवा दशमेश नवमस्थानगत हो और नवमेश नवमस्थानगत दशमेश को कहीं से देखता हो तो ऐसे सम्बन्ध से नवमेश दशमेश दोनों योगकारी ग्रह हो जाते हैं।

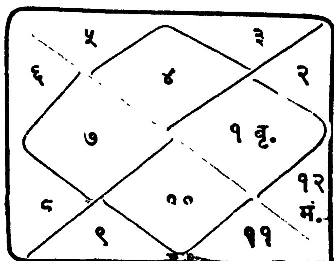
भाष्य—इस श्लोक में ग्रहों के पारस्परिक सम्बन्ध के नियम बताये गये हैं और उन्हें नवमेश तथा दशमेश में उदाहरण स्वरूप उपस्थित किया गया है। पहले श्लोक में 'सम्बन्धेन परस्परम्' और दूसरे श्लोक में 'सम्बन्धमात्रात्' इन दो वाक्यों का अर्थ कहीं भिन्न-भिन्न न समझा जाय इसके लिए भी उपरोक्त श्लोक में दशमेश नवमेश का उदाहरण दिया है। वास्तव में सम्बन्ध के उपरोक्त तीनों नियम सभी भावाधिपों के लिए एक से हैं। अन्तर यही है कि उपरोक्त नियमों के अनुसार यदि केन्द्रपति और त्रिकोणपति आपस में सम्बन्ध करते हैं तो वे योगकारी हो जाते हैं, अन्य भावाधीशों का परस्पर सम्बन्ध कारक नहीं होता।

सम्बन्ध की दृष्टि से प्रथम सम्बन्ध अन्य दो प्रकार के सम्बन्धों से श्रेष्ठ है। द्वितीय सम्बन्ध द्वितीय-श्रेणी का और तृतीय सम्बन्ध तृतीय-श्रेणी का सम्बन्ध है। पर लेखक के मत से जहाँ आपस में सम्बन्ध करने वाले दो ग्रहों में एक स्वतः योगकारी हो (अर्थात् स्वयं केन्द्र और त्रिकोण का स्वामी हो) वहाँ उपरोक्त तीन श्रेणियों में से तृतीय प्रथमश्रेणी में, द्वितीय द्वितीयश्रेणी में, प्रथय तृतीयश्रेणी में आ जायेगा। यह आगे लिखी उदाहरण-कुण्डली से स्पष्ट है।

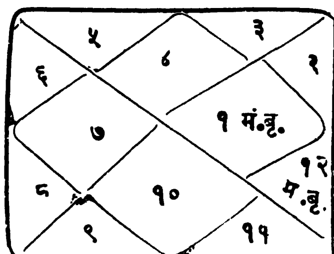
इस ग्रंथानुसार ग्रहों का (चाहे वे ग्रंथान्तर-प्रसिद्ध सौम्य हों या पापी) शुभाशुभ फल उनकी अपनी उन दो राशियों की स्थिति पर अवलम्बित है जो केन्द्र, त्रिकोण, त्रिषडायादि स्थान-विशेष में पड़ती हों, न कि ग्रहों के मूल-स्वभाव या उनकी अपनी राशियों के स्वभाव पर। सूर्य और चन्द्र को छोड़ अन्य सभी ग्रहों की दो राशियाँ हैं इसलिए परस्पर सम्बन्ध करने वाले दो ग्रहों में से एक ग्रह दूसरे ग्रह की जिस राशि में बैठा हो वह राशि जिस भाव में पड़े, माना जायगा कि वह प्रथम-ग्रह जिस राशि में बैठा है उसके अधिपति से सम्बन्ध कर रहा है न कि उस भावाधिप से जिसको दूसरी राशि पाप या पुण्य-स्थान में पड़ी हो। ऐसा न मानने से केन्द्रपति या त्रिकोणपति, दशमेश या नवमेश शब्दों का प्रयोग सार्थक ही नहीं हो सकेगा। अस्तु, सम्बन्ध-प्रसंग में दो ग्रहों में से एक का दूसरे के स्थान में बैठना आवश्यक है, इसके बिना संबंध अधूरा रह जाता है। इसी हेतु दशमेश नवमेश के परस्पर सम्बन्ध में इन दोनों में से किसी एक का दूसरे के स्थान में बैठना आवश्यक है। कुछ टीकाकारों का मत इससे भिन्न है वे दो ग्रहों के सम्बन्ध में ग्रहों के स्थानविशेष को महत्त्व नहीं देते। ऐसा तर्कविरुद्ध होने से उनका मत लेखक को मान्य नहीं है। नीचे लिखी उदाहरण-कुण्डलियों से यह स्पष्ट है।

उदाहरण-कुण्डली, कर्क-लग्न, सम्बन्धकर्ता नवमेश तथा दशमेश

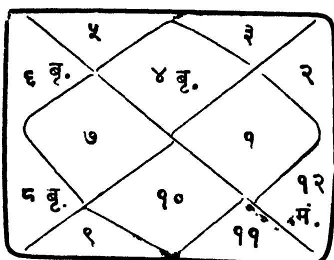
१



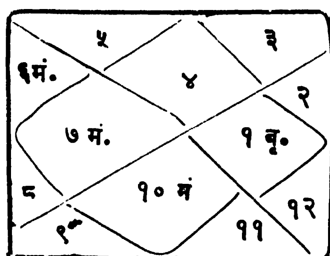
२



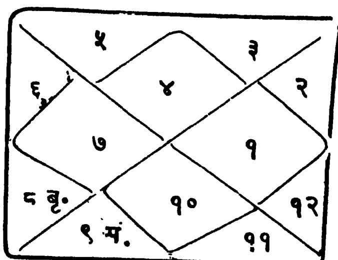
३



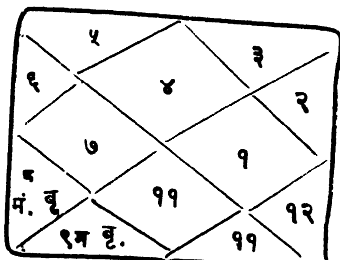
४



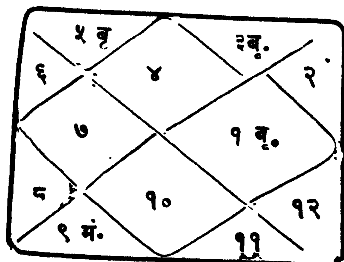
५



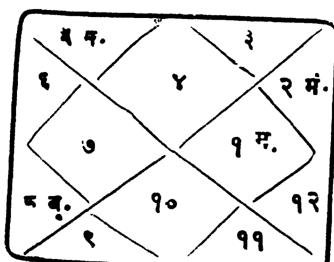
६



७



८



प्रथम कुण्डली में १:—दशमेश मङ्गल नवमस्थानगत तथा नवमेश बृहस्पति दशमस्थानगत है। यहाँ व्यत्ययेन परस्पर स्थानगत दशमेश नवमेश का अन्योन्याश्रित योग है। यहाँ मंगल की अपनी दूसरी राशि वृश्चिक पञ्चम में है तथा बृहस्पति की अपनी दूसरी राशि धनु षष्ठस्थानगत है पर यहाँ यह अन्योन्याश्रित योग पञ्चमेश षष्ठेश का नहीं माना जायगा। इसलिए यहाँ दशमेश-नवमेश का योग विशुद्ध दशमेश-नवमेश का ही योग है। योगों में यह प्रथम-श्रेणी का योग है।

द्वितीय कुण्डली में २:—दशम में नवमेश-दशमेश अथवा नवम में दशमेश-नवमेश एकसाथ बैठे हैं। यह योग नवमेश-दशमेश का एकत्र योग है। यह योग द्वितीय श्रेणी का योग है क्योंकि दो ग्रहों में से एक स्वस्थानगत है और दूसरा सम्बन्धित ग्रह के स्थान में है। यहाँ मेष में मंगल बृहस्पति का एकत्र योग वास्तव में नवमेश मंगल तथा दशमेश-षष्ठेश बृहस्पति का योग है तथा मीन में मंगल बृहस्पति का एकत्र योग वास्तव में दशमेश बृहस्पति का नवमेश-पञ्चमेश मगल से एकत्र योग है। इन दोनों योगों के शुभत्व परिणाम में अन्तर हो जायगा। लेखक के मत से प्रथम उदाहरण-कुण्डली के नवमेश-दशमेश के अन्योन्याश्रित योग से द्वितीय-कुंडली के मीनस्थ मंगल बृहस्पति का एकत्रयोग शुभत्व की दृष्टि से अधिक बली है क्योंकि यहाँ स्वस्थानगत बृहस्पति का दशमेश-पञ्चमेश मङ्गल से स्थानगत सम्बन्ध है जहाँ मङ्गल स्वयं योगकारी है। पर साधारणतया अन्योन्याश्रित योग से एकत्र योग निर्बल योग होता है।

तृतीय कुण्डली में ३:—दशमेश मङ्गल -नवमस्थानगत है और मङ्गल को नवमेश बृहस्पति लग्न में, अथवा पञ्चम में अथवा तृतीय में बैठकर देख रहा है। यह अन्यतरोवा योग तृतीय-श्रेणी का योग है। यहाँ मङ्गल बृहस्पति की नवमस्थ राशि में बैठा है और उसे बृहस्पति पंचम सप्तम तथा नवम दृष्टि से देख रहा है। उपरोक्त परिस्थिति में वास्तव में दशमेश-पंचमेश मङ्गल पर नवमेश बृहस्पति की दृष्टि वाला तृतीय-श्रेणी का योग है। इन तीन योगों में से नवमस्थ मङ्गल पर पञ्चमस्थ बृहस्पति की दृष्टि वाला योग पंचमेश-नवमेश का एक अन्योन्याश्रित योग भी हैं।

चतुर्थ कुण्डली में ४:—नवमेश बृहस्पति दशमस्थानगत है और उस पर दशमेश मङ्गल की सप्तम, चतुर्थ अथवा अष्टम दृष्टि है। यह भी

अन्यतरोवा योग है। इस योग में नवमेश-षष्ठेश बृहस्पति से दशमेश मङ्गल का दृष्टि-सम्बन्ध है। इन तीनों दृष्टि-योगों में मङ्गल भिन्न-भिन्न ग्रहों की राशियों में बैठकर नवमेश बृहस्पति को देख रहा है इसलिए ये योग तृतीय-श्रेणी के योग हैं। यहाँ चूँकि बृहस्पति मङ्गल की दशमस्थ राशि मेष में बैठा है इसलिए बृहस्पति पर मङ्गल की दृष्टि दशमेश की ही दृष्टि मानी जावेगी, पञ्चमेश-दशमेश की नहीं।

पञ्चम कुण्डली में ५:—पञ्चमेश मङ्गल षष्ठस्थानगत तथा षष्ठेश बृहस्पति पञ्चमस्थानगत है। यह पञ्चमेश-षष्ठेश का अन्योन्याश्रित योग है, नवमेश दशमेशका नहीं और न पञ्चमेश-नवमेश का। यह कारक योग नहीं है।

षष्ठ कुण्डली में ६:—पञ्चमस्थान में मंगल बृहस्पति अथवा षष्ठ में मङ्गल बृहस्पति का एकत्र योग है। पञ्चम में मङ्गल बृहस्पति का योग पञ्चमेश मङ्गल तथा षष्ठेश-नवमेश बृहस्पति का योग, इसी प्रकार षष्ठ में मङ्गल बृहस्पति का योग षष्ठेश बृहस्पति तथा पंचमेश-दशमेश मङ्गल का एकत्र योग है।

सप्तम कुण्डली में ७:—पञ्चमेश दशमेश मङ्गल षष्ठस्थानगत है और उसे षष्ठेश बृहस्पति दशमस्थ, द्वितीयस्थ अथवा द्वादशस्थ होकर देख रहा है। यह योग पञ्चमेश-दशमेश मंगल का षष्ठेश बृहस्पति का योग है जो कारक नहीं है साथ ही षष्ठस्थ मंगल और दशमस्थ बृहस्पति का आपस का अन्योन्याश्रित योग है न कि नवमेश-दशमेश का। यह कारक योग नहीं है।

अष्टम कुंडली में ८:—पञ्चमस्थ बृहस्पति पर दशमस्थ वा एकादशस्थ वा द्वितीयस्थ मंगल की दृष्टि है। यहाँ पञ्चमस्थ बृहस्पति पर दशमस्थ मंगल की दृष्टि का सम्बन्ध एक विशेष सम्बन्ध है। यह मंगल स्वगृही भी है और बृहस्पति उसी की राशि में बैठकर उसे देख रहा है। क्योंकि यह सम्बन्ध नवमेश-षष्ठेश पर पञ्चमेश-दशमेश की दृष्टि का अन्यतरोवा योग है फिर भी यह योग बृहस्पति पर मगल की सप्तमस्थ दृष्टि या चतुर्थ-दृष्टि से अधिक बली व शुभ है। मंगल स्वयं योगकारी है इसलिए इस कुण्डली का मंगल बृहस्पति का योग एक श्रेष्ठ योग है।

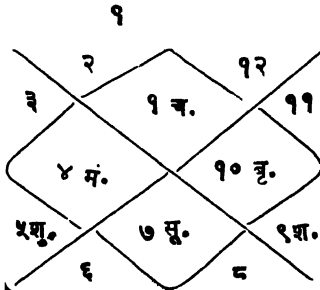
अन्योन्याश्रित योग की एक बड़ी विशेषता यह है कि अन्योन्याश्रित संबंध करने वाले दो ग्रहों में से यदि किसी एक के साथ कोई दूसरा ग्रह बैठा हो तो भी वह दो ग्रहों के अन्योन्याश्रित योग को भंग नहीं कर सकता। उन दो ग्रहों का अन्योन्याश्रित योग वैसा ही बना रहेगा उन दोनों ग्रहों के परस्पर दशान्तर में अन्योन्याश्रित योगज-फल होगा ही पर अन्तर यह पड़ेगा कि जिन दो ग्रहों का अन्योन्याश्रित योग है उनमें से जिसके साथ कोई दूसरा ग्रह स्थान-

सम्बन्ध या दृष्टि-सम्बन्ध कर रहा है उस ग्रह की दशा और स्थान-सम्बन्ध वाले ग्रह के अन्तर तथा स्थान-सम्बन्ध करनेवाले ग्रह के प्रत्यन्तर में जो फल होगा वह स्थान-सम्बन्ध न करने वाले ग्रह की दशा, अन्योन्याश्रित ग्रह के अन्तर तथा तीसरे के प्रत्यन्तर में वैसा फल न होगा।

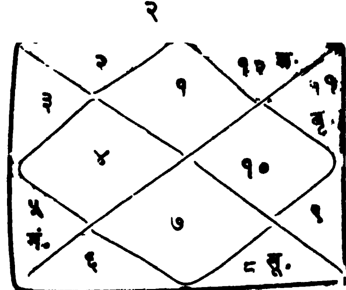
उदाहरण—कर्क-कुंडली में जहाँ बृहस्पति मंगल का (नवमेश-दशमेश का) अन्योन्याश्रित योग हो साथ ही बृहस्पति शनि का एकत्रयोग नवमेश-षष्ठेश तथा सप्तमेश-अष्टमेश का भी एक एकत्रयोग हो। वहाँ शनि अष्टमेश होने पर भी वह नवमेश-दशमेश के अन्योन्याश्रित योग को भंग नहीं कर सकता। यहाँ मंगल की दशा, बृहस्पति के अन्तर तथा शनि के प्रत्यन्तर में जो शुभ फल होगा उससे बहुत कम शुभ फल बृहस्पति की दशा, मंगल के अन्तर तथा शनि के प्रत्यन्तर में होगा। यहाँ मंगल शनि का कोई परस्पर सम्बन्ध नहीं है।

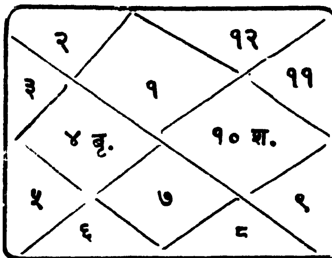
उदाहरण:—

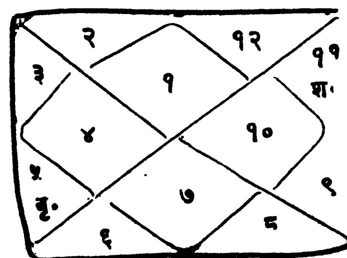
१



२







उपरोक्त उदाहरण-कुण्डली संख्या १ (क)—में नवमेश बृहस्पति दशमस्थ, दशमेश शनि नवमस्थ है। यह नवमेश-दशमेश का अन्योन्याश्रित योग है। यह

ख्यात राजयोग है। (ख)—सप्तमेश शुक्र पंचम में, पंचमेश सूर्य सप्तम में है। यह सप्तमेश-पंचमेश का अन्योन्याश्रित योग है, पर मारकेश के साथ। (ग)—लग्नेश मंगल चतुर्थ में, चतुर्थेश चन्द्रमा लग्न में, यह लग्नेश-चतुर्थेश का अन्योन्याश्रित योग है। (घ)—चतुर्थेश चन्द्रमा लग्न में और पंचमेश सूर्य सप्तम में होने से ये परस्पर दृष्ट हैं, यह अन्योन्याश्रित योग नहीं है केवल परस्पर दृष्टि-सम्बन्ध है। चन्द्र मेष में होने से उसका मंगल से राशि-सम्बन्ध, सूर्य तुला में होकर शुक्र से राशि सम्बन्ध भी करता है। इसलिए ये परस्पर दृष्ट सूर्य-चन्द्र विशुद्ध योगकारी कारक ग्रह तो नहीं हैं पर शुभ हैं।

कुण्डली संख्या २:—में एकादशेश शनि द्वादश में, द्वादशेश बृहस्पति एकादश में है इसलिए यह एकादशेश और द्वादशेश का अन्योन्याश्रित योग है, नवमेश-दशमेश का अन्योन्याश्रित योग नहीं है। इसी तरह सूर्य और मंगल का पञ्चमेश-अष्टमेश का अन्योन्याश्रित योग है जो कारक नहीं है।

कुण्डली संख्या ३:—में दशमेश शनि दशम में और बृहस्पति नवमेश द्वादशेश होकर चतुर्थ (चन्द्र की राशि) में बैठा है और वहाँ बैठकर ये दो ग्रह परस्पर एक दूसरे को पूर्णदृष्टि से देख रहे हैं। यह योग दशमेश शनि का चन्द्र-गृह में बैठे द्वादशेश-दशमेश का योग है।

कुण्डली संख्या ४:—में नवमेश-दशमेश परस्पर दृष्ट तो हैं पर नवम दशम गृह में नहीं हैं। इसलिए यह नवमेश-दशमेश का अन्योन्याश्रित योग नहीं है। यहाँ एकादशेश शनि नवमेश-द्वादशेश बृहस्पति से सम्बन्ध कर रहा है, इसलिए कारक योग नहीं है। इसीलिए इस शास्त्र में केवल सप्तम (परस्पर) दृष्टिमात्र से योग नहीं बनता। केन्द्रेश त्रिकोणेश योगकर्ताओं में से दो में एक यदि दूसरे के स्थान पर हो और दूसरा उसे सप्तम दृष्टि से अन्यत्र कहीं से देखे तभी 'कारक' सम्बन्ध समझना चाहिए।

इस प्रकार द्वादश गृहों में नवग्रहों के परस्पर सम्बन्ध से उत्पन्न अनेक योग बनते हैं। लेखक ने विभिन्न 'कारक' योगों की (ग्रंथ के श्लोकों के आधार पर) एक बृहत् सारणी तैयार की है जो इस ग्रंथ के अंत में दी गई है। इस सारणी से सहज ही कारक योगों के शुभ परिमाण का भी अनुमान किया जा सकता है। यह सारणी लेखक ने निजी योजना के अनुसार तैयार की है उसके आधार पर सामान्यतया सही फल आंका जा सकता है।

इस योगाध्याय के प्रथम-द्वितीय श्लोकों की व्याख्या के अनुसार योगकारी सारणी में ग्रहों के योगजफल के अंक भी दिये गए हैं वे सब लेखक की योजना के अनुसार हैं जिनका उल्लेख परिशिष्ट में है।

त्रिकोणाधिपयोर्मध्ये सम्बन्धी येन केनचित् ।
बलिनः केन्द्रनाथस्य भवेद्यदि सुयोगकृत् ॥४॥

अन्वयः—येनकेनचित् त्रिकोणाधिपयोर्मध्ये यदि बलिनः केन्द्रनाथस्य सम्बन्धो भवेत् तदा स सम्बन्धः सुयोगकृत् भवेत् ॥४॥

अर्थ—किसी भी त्रिकोणपति से यदि बली केन्द्रपति का सम्बन्ध हो तो यह सम्बन्ध अच्छा योग है ।

भाष्य—योगाध्याय के प्रथम दो श्लोकों में निर्दोष केन्द्र-त्रिकोणपति तथा सदोष नवमेश वा दशमेश के परस्पर सम्बन्ध की चर्चा कर ग्रंथकर्ता ने इस श्लोक में केन्द्रपतियों के शेष सम्बन्ध की चर्चा की है । इस श्लोक का भावार्थ है कि (१) यदि कोई त्रिकोणपति चाहे वह सदोष हो या निर्दोष, उससे बली केन्द्रपति से सम्बन्ध हो तो वह योग भी शुभ होता है । (२) दूसरा अर्थ है कि किसी भी त्रिकोणपति से यदि दशमेश का सम्बन्ध हो तो शुभ होता है । चूंकि पिछले श्लोक में नवमेश-दशमेश के सम्बन्ध की चर्चा हो चुकी है और उसकी व्याख्या भी हो चुकी है इसलिए इस श्लोक के अन्तर्गत निम्न केन्द्रपतियों से त्रिकोणपतियों के योग की विवेचना की जाती हैं ।

(१) नि न + स स, स न + नि द (६) नि पं + स ल, स पं + नि ल
(२) नि न + स च, स न + नि च (७) नि ल + स न, स ल + नि न
(३) नि न + स ल, स न + नि ल (८) नि ल + स द, स ल + नि द
(४) नि पं + स स, स पं + नि स (९) नि ल + स स, स ल + नि स
(५) नि पं + स च, स पं + नि च (१०) नि ल + स च, स ल + नि च

संकेत:—नि = निर्दोष, स = सदोष ल = लग्नेश, न = नवमेश द = दशमेश, पं = पंचमेश स = सप्तमेश, च = चतुर्थेश इसी प्रकार द्वि = द्वितीयेश इत्यादि ।

नवमेश सप्तमेश के योग

मेष —	न	द्वा	=	बृहस्पति	=	संसर्गदोष सदोष निर्दोष	बृ + शु = ± १०
	स	द्वि	=	शुक्र	=	निर्दोष सदोष	(दोनों मारक भी)
वृष —	न	द	=	शनि	=	निर्दोष	शनि + मंगल = +१४
	स	द्वा	=	मंगल	=	निर्दोष	

मिथुन —	न अ = शनि	= सदोष	} शनि + बृहस्पति = ± ३
	स द = बृहस्पति	= मारकेश	(शनि निहंता)
कर्क —	न ष = बृहस्पति	= सदोष	} बृ० + शनि = + ५
	स अ = शनि	= सदोष	(कारक नहीं)

शनि यदि अष्टमस्थ हो तो + १३ (कारक़)

सिंह —	न च = मङ्गल	= निर्दोष	} मङ्गल + शनि = + ४
	स ष = शनि	= सदोष	
कन्या —	न द्वि = शुक्र	= मारकेश	} शु + बृ = ± १०
	स च = बृहस्पति	= मारकेश	कारक़ पर दोनों मारक भी
तुला —	न द्वा = बुध	= निर्दोष	} बुध + मङ्गल = ± १०
	स द्वि = मङ्गल	= निर्दोष	
वृश्चिक —	न = चन्द्र	= निर्दोष	} चन्द्र + शुक्र = ± १०
	स द्वा = शुक्र	= मारकेश	
धनु —	न = सूर्य	= निर्दोष	} सूर्य + बुध = ± ११
	स द = बुध	= निर्दोष (पर मारकेश)	
मकर —	न ष = बुध	= सदोष	} बुध + चन्द्र = + २
	स = चन्द्र	= निर्दोष (मारकेश)	
कुम्भ —	न च = शुक्र	= निर्दोष	} शुक्र + सूर्य = + १३
	स = सूर्य	= निर्दोष	
मीन —	न द्वि = मङ्गल	= निर्दोष	} मङ्गल + बुध = ± १०
	स ष = बुध	= मारकेश	

उपरोक्त योगों में संख्या १, ६ कारक होते हुए दोनों प्रबल मारक हैं इसलिए नेष्ट हैं। कर्क-लग्न-कुण्डली के मङ्गल शनि का योग "कारक" नहीं है । मिथुन-मीन-कुण्डलियों में बृहस्पति बुध मारकेश हैं। मारक फल देते हैं, शनि निहन्ता है।

नवमेश-चतुर्थेश के योग

मेष —	न द्वा = बृहस्पति	= निर्दोष	} बृ + चं = + ११
	च = चन्द्र	= निर्दोष	
वृष —	न द = शनि	= निर्दोष	} श + सू = + ४
	च = सूर्य	= निर्दोष	

मिथुन —	न अ = शनि	= सदोष	}	श + बु = + १
	च ल = बुध	= निर्दोष		
कर्क —	न ष = बृहस्पति	= सदोष	}	बृ + शु − ५ (कारक योग नहीं है अशुभ योग है)
	च ए = शुक्र	= सदोष		
सिंह —	न च = मङ्गल	= निर्दोष	}	मंगल = + ९ (स्वयं कारक)
	च = मंगल	= निर्दोष		
कन्या —	न द्वि = शुक्र (पर मारकेश)	= निर्दोष	}	शु + बृ = ± १० (दोनों मारकेश अनिष्टकर योग हैं)
	च स = बृहस्पति (पर मारकेश)	= निर्दोष		
तुला —	न द्वा = बुध	= निर्दोष	}	बु + श = + १५
	च पं = शनि	= निर्दोष		
वृश्चिक —	न = चन्द्र	= निर्दोष	}	चं + श = + २
	च तृ = शनि	= सदोष		
धनु —	न = सूर्य	= निर्दोष	}	सू + बृ = + १४
	च ल = बृहस्पति	= निर्दोष		
मकर —	न प्र = बुध	= सदोष	}	बु + मं = − ८ (यह कारक योग नहीं हैं नेष्ट है।)
	च ए = मंगल	= सदोष		
कुम्भ —	न च = शुक्र	= निर्दोष	}	शुक्र = + ९ (स्वयं कारक)
मीन —	न द्वि = मंगल	= निर्दोष	}	मंगल + बु = ± १०
	च स = बुध (पर मारकेश)	= निर्दोष		

उपरोक्त योगों में मिथुन, कर्क और मकर कुण्डली के क्रमशः श + बु, बृ + शु, बु + मं योग कारक योग नहीं है। ये अशुभ योग हैं। कन्या-कुंडली में शुक्र-बृहस्पति का योग द्विधा मारकेश योग है, मार देने वाला योग है। मीन कुंडली में मंगल-बुध का योग भी साधारण मारकेश योग है।

नवमेश-लग्नेश के योग

मेष —	न द्वा = बृहस्पति	= निर्दोष	}	बृ + मं = + ५
	ल अ = मंगल	= निर्दोष		मंगल यदि लग्नस्थ हो तो + १२

वृष	— न द = शनि	= निर्दोष	श + शु = + ९	
	ल ष = शुक्र	= सदोष		
मिथुन	— न अ = शनि	= सदोष	श + बु = + १	
	ल च = बुध	= निर्दोष		
कर्क	— न ष = बृहस्पति	= सदोष	बृ + चं = + ५	
	ल = चन्द्र	= निर्दोष		
सिंह	— न च = मंगल	= निर्दोष	मं + सू = + १५	
	ल = सूर्य	= निर्दोष		
कन्या	— न द्वि = शुक्र	= मारकेश	शु + बु = ± १६	
	ल द = बुध	= निर्दोष		
तुला	— न द्वा = बुध	= निर्दोष	बु + शु = + १३	
	ल अ = शुक्र	= निर्दोष	शुक्र यदि लग्नस्थ हो तो + ५	
वृश्चिक	— न = चन्द्र	= निर्दोष	चं + मं = + ५	
	ल ष = मंगल	= सदोष		
धनु	— न = सूर्य	= निर्दोष	सू + बृ = + १४	
	ल च = बृहस्पति	= निर्दोष		
मकर	— न ष = बुध	= सदोष	बु + श = + ५	
	ल द्वि = शनि	= सदोष (बुध के साहचर्य से)	(बलाबल से कारकत्व नहीं है)	
कुम्भ	— न च = शुक्र	= निर्दोष	शु + श = + १५	
	ल द्वा = शनि	= निर्दोष		
मीन	— न द्वि = मंगल	= निर्दोष	मं + बृ = + १६	
	ल द = बृहस्पति	= निर्दोष		

उपरोक्त योगों में मिथुन-कुण्डली में श + बु का योग कारक नहीं है, कर्क में बु + चं का योग कारक नहीं है, कन्या-लग्न में शु + बु में शुक्र मारकेश है, अरिष्टप्रद है, मकर-कुण्डली में बु + श के योग को मारकत्व नहीं है, वृश्चिक-कुण्डली में चं + मं कारक नहीं है, सम है।

पञ्चमेश-सप्तमेश के योग

(सिवाय तुला तथा मकर लग्नकुण्डली के अन्य कुण्डलियों के सभी पञ्चणेश-सप्तमेश के योग अरिष्टप्रद हैं)

मेष	— पं = सूर्य	= निर्दोष	सू + शु = ± ९	
	स द्वि = शुक्र	= प्रबल मारकेश	(प्रबल मारक)	

वृष	-- पं द्वि =	बुध	= निर्दोष (पर मारकेश)	बु + मं = ±	९
	स द्वा =	मंगल	= निर्दोष		
मिथुन	— पं द्वा =	शुक्र	= मारकेश (साहचर्य दोष से)	शु + गु = ±	१०
	स द =	गुरु	मारकेश		
कर्क	— पं द =	मंगल	= निर्दोष	मं + श = +	५
	स अ =	शनि	= सदोष		
सिंह	— पं अ =	गुरु	= सदोष	गु + श = —	७
	स ष =	शनि	= सदोष	(यह कारक योग नही है)	
कन्या	-- पं ष =	शनि	= सदोष	श + गु = ±	१
	स च =	गुरु	= मारकेश	(यह योग अच्छा नहीं है गुरु मारकेश है और शनि प्रबल निहंता।)	
तुला	— पं च =	शनि	= निर्दोष	श + मं = +	११
	स द्वि =	मंगल	= निर्दोष		
वृश्चिक	— पं द्वि =	गुरु	= मारकेश	गु + शु = ±	९
	स द्वा =	शुक्र	= मारकेश	(दोनों प्रबल मारकेश हैं)	
धनु	— पं द्वा =	मंगल	= मारकेश (के साथ का दोष)	मं + बु = ±	१०
	स द =	बुध	= मारकेश	(बुध मारकेश है)	
मकर	—पं द =	शुक्र	= निर्दोष	शु + चं = ±	१३
	स =	चन्द्र	=निर्दोषप्राय		
कुम्भ	-- पं अ =	बुध	= सदोष	बु + सू = +	१
	स -	सूर्य	= निर्दोष		
मीन	-- पं =	चन्द्र	= निर्दोष	चं + बु = ±	९
	स च =	बुध	= मारकेश (सदोष)		

कर्क-कुण्डली में मं+श = सम हैं, वृश्चिक-कुण्डली में गु+शु दोनों मारकेश हैं कुम्भ कुण्डली में सू + बु = कारक नहीं हैं। मेष, वृष, मिथुन, कन्या, वृश्चिक, धनु और मीन कुण्डलियों में सप्तमेश-पञ्चमेश के योग (सप्तमेश मारकेश होने से) अरिष्टप्रद हैं। कारकत्व में मारकत्व दोष नष्ट होता है। कन्या-कुण्डली में शनि-गुरु का योग अनिष्टकर निहंता योग है। वहाँ मारकेश के सहयोग से शनि निहंता हो गया है। सिंह-कुंडली में गु + श का योग

मारक योग नहीं है। सारांश यह है कि सिवाय तुला मकर और मीन कुंडली के अन्य सभी लग्न-कुण्डलियों में पञ्चमेश + सप्तमेश के योग अनिष्टकर योग हैं। मकर-कुंडली में चन्द्र साधारण मारकेश है। तुला कुंडली मे श+मं निर्दोष योग है।

पञ्चमेश-चतुर्थेश के योग

मेष	— पं	= सूर्य	= निर्दोष	सू + चं = +	१०
	च	= चन्द्रमा	= निर्दोष		
वृष	— पं द्वि	= बुध	= मारकेश	बु + सू = ±	८
	च	= सूर्य	= निर्दोष		
मिथुन	— पं द्वा	= शुक्र	= निर्दोष	शु + बु = +	१३
	च ल	= बुध	= निर्दोष		
कर्क	— पं द	= मंगल	= निर्दोष	मं + शु = +	३
	च ए	= शुक्र	= सदोष		
सिंह	— पं अ	= गुरु	= सदोष	गु + मं = +	१०
	च न	= मंगल	= निर्दोष		
कन्या	— पं ष	= शनि	= सदोष	श + बृ = +	१
	च स	= गुरु	= प्रबल मारकेश	(शनि साक्षात् निहन्ता गुरु मारकेश ।)	
तुला	— पं च	= शनि	= निर्दोष	शनि स्वयं कारक=+८	
वृश्चिक	— पं द्वि	= गुरु	= मारकेश	बृ + श = ±	१
	च तृ	= शनि	= सदोष (तथा निहंता)	(प्रबल मारक योग है)	
धनु	— पं द्वा	= मंगल	= निर्दोष	मं + गु = +	१३
	च ल	= गुरु	= निर्दोष		
मकर	— पं द	= शुक्र	= निर्दोष	शु + मं = +	३
	च ए	= मंगल	= सदोष		
कुम्भ	— पं अ	= बुध	= सदोष	बु + शु = +	७
	च न	= शुक्र	= निर्दोष		
मीन	— पं	= चन्द्र	= निर्दोष	चं + बुध = ±	९
	च स	= बुध	= मारकेश		

उपरोक्त योगों में कन्या-कुण्डली में श+बृ तथा वृश्चिक-कुण्डली में बृ+श का योग प्रबल अरिष्टप्रद है। शनि निहंता है। वृष मीन कुण्डली में बुध साधारण मारकेश है, मकर में शु+मं कारक नहीं है अकेला शुक्र कारक है, कुंभ में बु+शु का योग सम योग है।

पञ्चमेश-दशमेश के योग

मेष	—पं = सूर्य	= निर्दोष	सू + श = +	१
	द ए = शनि	= सदोष		
वृष	—पं द्वि = बुध	= मारकेश	बु + श = +	१७
	(पर नवमेश के साहचर्य से शुभ)			
	द न = शनि	= निर्दोष		
मिथुन	—पं द्वा = शुक्र	= साहचर्य मारकेश	शु + गु = ± (मारकेश)	१०
	द स = गुरु	= मारकेश		
कर्क	—पं द = मंगल	= निर्दोष	मं (स्वयं कारक)=+	१०
सिंह	—पं अ = गुरु	= सदोष	गु + शु = — (कारक योग नहीं है)	५
	द तृ = शुक्र	= सदोष		
कन्या	—पं ष = शनि	= सदोष	श + बु = +	७
	द ल = बुध	= निर्दोष		
तुला	—पं च = शनि	= निर्दोष	श + चं = +	१२
	द = चन्द्र	= निर्दोष		
वृश्चिक	—पं द्वि = गुरु	= मारकेश	गु + सू = ±	१०
	द = सूर्य	= निर्दोष		
धनु	—पं द्वा = मंगल	= निर्दोष	मं + बु = ±	१०
	(पर मारकेश साहचर्य दोष)			
	द स = बुध	= मारकेश		
मकर	—पं द = शुक्र	= निर्दोष	शुक्र (स्वयंकारक)=+	१०
कुम्भ	—पं अ = बुध	= सदोष	बु + मं = — (कारक योग नहीं है)	५
	द तृ = मंगल	= सदोष		
मीन	—पं = चन्द्र	= निर्दोष	चं + गु = +	१५
	द ल = गुरु	= निर्दोष		

उपरोक्त योगों में मेष-कुण्डली में सू+श कारक नहीं हैं सिंह-कुंडली में बृ+शु कारक नहीं हैं। कन्या-कुण्डली में श+त्रु सम फलदाता हैं। कुम्भ-कुण्डली में बु+मं कारक नहीं हैं। कन्या कुण्डली में अकेला बुध कारक है, पर शनि के सहयोग से समफलद हो जायगा। वृष, मिथुन, वृश्चिक, धनु कुण्डलियों में क्रम से बुध, शु + वृ, बृ, बु मारकेश हैं इसलिए इनका योगजफल शुभ के साथ-साथ अरिष्टप्रद भी होगा। बु में अधिक, श बु में क्रमशः अरिष्टता कम होगी।

पञ्चमेश-लग्नेश के योग

मेष	— पं = सूर्य	= निर्दोष	} सू + मं = +	४
	ल अ = मङ्गल	= निर्दोष		
		यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो	+	१२
वृष	— पं द्वि = बुध	= मारकेश	} बु + शु = ±	४
	ल ष = शुक्र	= सदोष	(कारक नहीं)	
मिथुन	— पं द्वा = शुक्र	= निर्दोष	} शु + बु	+ १३
	ल च = बुध	= निर्दोष		
कर्क	— पं द = मंगल	= निर्दोष	} मं + चं	+ १६
	ल = चन्द्र	= निर्दोष		
सिंह	— पं अ = गुरु	= सदोष	} गु + सू = +	४
	ल = सूर्य	= निर्दोष		
		यदि लग्नस्थ हो तो	+	१२
कन्या	— पं ष = शनि	= सदोष	} श + बु = +	७
	ल द = बुध	= निर्दोष		
तुला	— पं च = शनि	= निर्दोष	} श + शु = +	६
	ल अ = शुक्र	= निर्दोष		
		यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो	+	१४
वृश्चिक	— पं द्वि = गुरु	= प्रबल मारकेश तथा पापी का साथ	} गु + म + ±	४
	ल ष = मंगल	= सदोष	(कारक नहीं तथा अरिष्टप्रद)	
धनु	— पं द्वा = मगल	= निर्दोष	} मं + गु = +	१३
	ल च = गुरु	= निर्दोष		
मकर	— पं द = शुक्र	= निर्दोष	} श + शु = +	१६
	ल द्वि = शनि	= निर्दोष		
कुम्भ	— पं अ = बुध	= सदोष	} बु + श = +	४
	ल द्वा = शनि	= बुध का साहचर्य	(कारक नहीं)	
मीन	— पं = चन्द्र	= निर्दोष	} चं + गु = +	१५
	ल द = गुरु	= निर्दोष		

उपरोक्त योगों में वृष-कुण्डली में बु+शु, वृश्चिक में गु+मं और कुम्भ में बु+श कारक योग नहीं हैं।

लग्नेश-दशमेश के योग

मेष	— ल अ = मंगल	= निर्दोष	} मं + श = −	७
	द ए = शनि	= सदोष	(कारक नहीं)	

मंगल यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो मं + श + १

वृष	—	ल ष = शुक्र	= सदोष	शु + श = + ९	
		द न = शनि	= निर्दोष		
मिथुन	—	ल च = बुध	= निर्दोष	बु + गु = ± ११	
		द स = गुरु	= मारकेश		
कर्क	—	ल = चन्द्र	= निर्दोष	चं + मं = + १६	
		द पं = मंगल	= निर्दोष		
सिंह	—	ल = सूर्य	= निर्दोष	सू + शु = + ३	
		द तृ = शुक्र	= सदोष	(कारक नहीं)	
कन्या	—	ल द = बुध	= निर्दोष	(स्वयं कारक)	
तुला	—	ल अ = शुक्र	= निर्दोष	शु + चं = + १०	
		द = चन्द्र	= निर्दोष		
				शुक्र यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो + २	
वृश्चिक	—	ल ष = मंगल	= सदोष	मं + सू = + ४	
		द = सूर्य	= निर्दोष	(कारक नहीं)	
धनु	—	ल च = गुरु	= निर्दोष	गु + बु = ± ११	
		द स = बुध	= मारकेश		
मकर	—	ल द्वि = शनि	= निर्दोष	श + शु = + १६	
		द पं = शुक्र	= निर्दोष		
कुम्भ	—	ल द्वा = शनि	= सदोष	श + मं = + ३	
			निर्दोष	(कारक नहीं)	
		द तृ = मंगल	= सदोष		
मीन	—	ल द = गुरु	= निर्दोष	बृ = + ९	
				(स्वयं कारक है)	

उपरोक्त योगों में मेष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ कुण्डलियों के लग्नेश दशमेश के योग कारक नहीं हैं मिथुन-कुण्डली में गुरु प्रबल मारकेश, धनु कुण्डली में बुध मारकेश है। ये योग अरिष्टप्रद हैं।

लग्नेश-सप्तमेश के योग

मेष	—	ल अ = मंगल	= निर्दोष	मं + शु = + १
		स द्वि = शुक्र	= मारकेश	
				मंगल यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो + ९
वृष	—	ल ष = शुक्र	= सदोष	शु + मं = + १
		स द्वा = मंगल	= सदोष	(कारक नहीं)

मिथुन — ल च = बुध = निर्दोष } बु + बृ = ± ११
च द = बृहस्पति = मारकेश }

कर्क — ल = चन्द्र = निर्दोष } चं + श = + १
स अ = शनि = सदोष }

सिंह — ल = सूर्य = निर्दोष } सू + श = + १
स ष = शनि = सदोष }

कन्या — ल द = बुध = निर्दोष } बु + बृ = ± १२
च स = बृहस्पति = मारकेश }

तुला — ल अ = शुक्र = निर्दोष } शु + मं = + १
स द्वि = मंगल = निर्दोष } (संदिग्ध)

शुक्र यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो + ६

वृश्चिक — ल ष = मंगल = सदोष } मं + शु = + १
स द्वा = शुक्र = मारकेश } (कारक नहीं)
तथा सदोष }

धनु — ल च = बृहस्पति = निर्दोष } बृ + बु = ± ११
स द = बुध = मारकेश }

मकर — ल द्वि = शनि = स्वयं } श + चं = ± ९
निर्दोष पर साहचर्य सदोष } (चन्द्र मारकेश शनि
स = चन्द्र = मारकेश } निहन्ता)

कुम्भ — ल द्वा = शनि = निर्दोष } श + सू = + ९
स = सूर्य = निर्दोष }

मीन — ल द = निर्दोष = निर्दोष } बृ + बु = ± १२
स च = बुध = मारकेश }

कुम्भ-लग्न-कुण्डली में श+सू का योग करक है बाकी योगों में कोई मारकशयुक्त और कोई अकारक योग हैं।

लग्नेश--चतुर्थेश के योग

मेष — ल अ = मंगल = निर्दोष } मं + चं = + ०
च = चन्द्र = निर्दोष }

मंगल यदि अष्टमस्थ या लग्नस्थ हो तो + ८

वृष — ल ष = शुक्र = सदोष } शु + सू = + ०
च = सूर्य = निर्दोष }

मिथुन — ल च = बुध = निर्दोष } बु (स्वयं कारक=)+ २

कर्क — ल = चन्द्र = निर्दोष } चं + शु = − १
च ए = शुक्र = सदोष }

सिंह —	ल =	सूर्य =	निर्दोष	सू + मं = + १५
	च न =	मंगल =	निर्दोष	
कन्या —	ल द =	बुध =	निर्दोष	बु + बृ = ± ११
	च स =	बृहस्पति =	मारकेश	
तुला —	ल अ =	शुक्र =	निर्दोष	शु + श = + ६
	च पं =	शनि =	निर्दोष	
			शुक्र यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो तो	+ १४
वृश्चिक —	ल ष =	मंगल =	सदोष	मं + श = − ७
	च तृ =	शनि =	सदोष	(कारक नहीं)
धनु —	ल च =	बृहस्पति =	निर्दोष	बृ (स्वयं कारक) = +७
मकर —	ल द्वि =	शनि =	साहचर्यदोष	श + मं = − १
	च ए =	मंगल =	सदोष	(संदिग्ध कारक)
कुम्भ —	ल द्वा =	शनि =	निर्दोष	श + शु = + १५
	च न =	शुक्र =	निर्दोष	
मीन —	ल द =	बृहस्पति =	निर्दोष	बृ + बु = ± १२
	च स =	बुध =	मारक	

वृश्चिक, वृष, मिथुन, कर्क, मकर, इन लग्न-कुण्डलियों के लग्नेश-चतुर्थेश के योग कारक नहीं हैं। कन्या-कुण्डली में बृहस्पति प्रबल मारकेश तथा मीन में बुध मारकेश है।

दशास्वपि भवेद्योगः प्रायशो योगकारिणोः।
दशाद्वयीमध्यगतस्तदयुक् शुभकारिणाम् ॥ ५ ॥

अन्वयः—प्रायशो (बाहुल्येन) योगकारिणोः या दशाद्वयी (यस्यां) तद् अयुक् शुभकारिणाम् (द्वयोः कारकग्रहयोः सम्बन्धरहितानां शुभकारिणां ग्रहाणां) मध्यगतः दशासु (अन्तरदशासु) शुभप्राप्तिर्भवेत् ॥ ५ ॥

भाष्य—शुभ-ग्रह का अर्थ त्रिकोणेश से है। यहाँ 'प्रायः' शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है कि ऐसे सम्बन्ध रहित सभी शुभ-ग्रहों के अन्तर में शुभ-फल नहीं होता मिश्र-फल भी होता है। महादशाधीश योगकारी होता हुआ भी यदि अधिक पापी हो और उससे सम्बन्ध न रखने वाला दूसरा (त्रिषडायातिरिक्त) त्रिकोणेश शुभ हो तो वह भी मूलदशा वाले योगकारी ग्रह के पापत्व को शुभत्व में परिणत करने में अपने अन्तर में समर्थ नहीं हो सकता। ऐसी दशा में तारतम्य से फल होता है। पर साधारणतया योगकारी ग्रहों की महादशा तथा उनसे असम्बन्धित शुभ-ग्रहों के अन्तर में शुभ ही फल होता है।

उदाहरण—वृष लग्न-कुण्डली में यदि शुक्र-शनि आपस में सम्बन्ध करें तो ये योगकारी ग्रह होंगे। अब शनि से यदि (पंचमेश-द्वितीयेश) बुध सम्बन्ध न भी करे तो भी शनि की महादशा एवं बुध के अन्तर में शुभ ही फल होगा। बुध साधारण मारकेश भी है इसलिए उसके अन्तर में उसके शुभ फल में किंचित् मारक फल भी होगा। इसी प्रकार शुक्र में भी बुध का अन्तर शुभ होना चाहिए पर चूंकि शुक्र षष्ठेश है (पापी है) और बुध पापी नहीं पर साधारण मारकेश है इसलिए शुक्र में बुध का अन्तर तारतम्य से फल देगा। यदि उसी वृष-कुण्डली में शनि और बुध आपस में संबन्ध करें तो ये प्रबल राजयोग कारक होंगे। तब यदि शनि से सूर्य या मंगल न भी संबन्ध करें तो भी शनि में सूर्य और मंगल का अन्तर अशुभ न होगा। सूर्य और मंगल केन्द्रेश होने के नाते सम हैं। इसी कुण्डली में यदि सूर्य और शनि आपस में संबन्ध करें तो ये योगकारी होंगे। तब योगकारी सूर्य में सूर्य से संबन्ध करने वाला (पञ्चमेश-द्वितीयेश) बुध, सूर्य की महादशा तथा अपने अन्तर में शुभ ही फल देगा। इसी प्रकार शनि-मङ्गल के योगकारकत्व में शनि से न संबन्ध रखने वाले बुध का शनि में अन्तर शुभ होगा पर मंगल में बुध का अन्तर उतना शुभ न होगा जितना शनि में बुध का अन्तर होता।

वृष-लग्न-कुण्डली में योगकारी शनि-सूर्य में से शनि से बुध का संबन्ध न हो पर सूर्य से बुध का संबन्ध हो तो ऐसी दशा में बुध का अन्तर जितना शुभ होगा उससे उसका सूर्य में अन्तर अधिक शुभ होगा क्योंकि यहाँ बुध और सूर्य परस्पर योगकर्ता हैं। शनि सूर्य परस्पर योगकर्ता नहीं हैं।

कुछ विद्वान् उपरोक्त श्लोक का यह अर्थ करते हैं कि किसी योगकारी ग्रह की दशा में उसके संबन्धी योगकारी ग्रह की अन्तरदशा में, उन दोनों से संबन्ध-रहित किसी तीसरे शुभ ग्रह के प्रत्यन्तर में शुभ फल की प्राप्ति होती है। पर यह अर्थ तभी उपयुक्त हो सकता है जब कि योगकारी ग्रह से असंबद्ध शुभ-ग्रह का प्रत्यन्तर सदा शुभ माना जावे। किसी ग्रह की महादशा में किसी ग्रह का अन्तर यदि शुभ हो तो उसका प्रत्यन्तर भी शुभ होगा ही।

उदाहरण—वृष-लग्न-कुण्डली में यदि शनि-सूर्य आपस में संबन्ध करें तो ये दोनों योगकारी होंगे। अस्तु, शनि की महादशा तथा सूर्य का अन्तर वा सूर्य की महादशा शनि का अन्तर शुभ फलद होगा। इसके अतिरिक्त बुध यदि सूर्य-शनि से संबन्ध न करे तो भी शनि में बुध का अन्तर शुभ फलद

होगा । इसी प्रकार शनि की महादशा सूर्य के अन्तर तथा बुध के प्रत्यन्तर में शुभ ही फल होगा ।

(त्रिकोणेश) शुभ ग्रहों की तालिका जिनकी दूसरी राशि त्रिषडाय में नहीं पड़ती—

लग्न	शुभ ग्रह	अष्टमस्थ होने पर ही शुभ
१	सूर्य गुरु	मङ्गल
२	बुध, (शनि)	×
३	बुध शुक्र	शनि
४	(मङ्गल) चन्द्र	×
५	सूर्य (मङ्गल)	गुरु
६	(बुध) शुक्र	×
७	शनि, बुध	शुक्र
८	गुरु, चन्द्र	×
९	गुरु, मङ्गल, सूर्य	×
१०	शनि (शुक्र)	×
११	शनि (शुक्र)	बुध
१२	(गुरु) चन्द्र, मङ्गल	×

इस तालिका में कोष्टक के ग्रह तत्तद् लग्न-कुण्डली में स्वतः योग-कारी हैं। जिनके नीचे रेखा है वे मारकेश हैं।

किसी लग्न-कुण्डली के किसी भी योगकारी ग्रह की महादशा में उस कुण्डली में उससे न भी सम्बन्ध करने वाले कोष्टक के ग्रहों का अन्तर प्रायः शुभ फलद होता है। वहाँ रेखायुक्त ग्रह का अन्तर प्रथम शुभ फलद होगा बाद वह मारक फल देने वाला होगा। अष्टमस्थ अष्टमेश का अन्तर भी शुभ होता है।

योगकारकसम्बन्धात्
पापिनोऽपि ग्रहाः स्वतः ।
तत्तद्भुक्त्यनुसारेण
दिशेयुर्योगजं फलम् ॥६॥

अन्वयः--पापिनोऽपि ग्रहाः योगकारकसंबंधात् स्वतः भुक्त्यनुसारेण तत्तद् योगजं फलं दिशेयुः ॥६॥

अर्थ—योगकारक ग्रह से सम्बन्ध करने वाला पापी ग्रह अपनी दशा तथा योगकारी ग्रह के अन्तर में तदनुसार योगज फल देता है जैसा उसका स्वतः बल है ।

भाष्य—पिछले श्लोकों में कहा गया है कि केन्द्र-त्रिकोणपति यदि स्वयं दोषयुक्त (त्रिषडायाधीश) भी हों तो भी उनका योगज फल शुभ होता है । इस श्लोक में संकेत है कि जो त्रिषडायाधीश केन्द्रेश त्रिकोणेश न हों और वे योगकारी ग्रह से संबन्ध करें तो अपनी महादशा में संबन्धित योगकारी ग्रह के अन्तर में अपने पापत्व के बलाबल से मिश्र फल देते हैं । इस अर्थ की पुष्टि इस ग्रन्थ के इस श्लोक से होती है 'पापाः यदि दशानाथाः शुभानां तदसंयुजाम् । भुक्तय. पापफलदाः तत् संयुक् शुभभुक्तयः । भवन्ति मिश्रफलदा भुक्तयो योगकारिणाम् ।' पापी दशानाथ में उससे सम्बन्धित पापी ग्रह के अन्तर का फल मिश्ररूप से होता है । पापी ग्रह यदि केन्द्रेश या त्रिकोणेश हो तो उससे सम्बन्ध करने वाला योगकारी ग्रह भी केन्द्रेश या त्रिकोणेश ही होगा, पर यदि पापी ग्रह केवल पापी हो तो योगकारी ग्रह से उसका सम्बन्ध होने पर फल दोनों के बलाबल पर आश्रित है ।

उदाहरण—वृष-लग्न-कुण्डली में सूर्य और शनि के सम्बन्ध होने पर सूर्य से यदि चन्द्रमा का सम्बन्ध हो पर शनि से नहीं हो तो चन्द्र में सूर्य या सूर्य में चन्द्र का अन्तर मिश्र शुभाशुभ फल देने वाला होगा । यदि चन्द्र, सूर्य और शनि इन दोनों से सम्बन्ध करे तो चन्द्रमा में शनि का अन्तर अपेक्षाकृत सूर्य से अधिक बली व शुभ होगा ।

उन पाप ग्रहों की तालिका जो केवल पाप हैं
(केन्द्रेश त्रिकोणेश नहीं है)

लग्न	त्रिषडायेश
१	बुध
२	चन्द्र, बृहस्पति
३	सूर्य, मङ्गल
४	बुध
५	बुध
६	चन्द्र, मङ्गल
७	बृहस्पति सूर्य
८	बुध
९	शनि, शुक्र, चन्द्र
१०	बृहस्पति (सूर्य)
११	चन्द्र, बृहस्पति
११	शुक्र, सूर्य, शनि

यदि ये पार्श्व-सूची के त्रिषडायाधीश योगकारी ग्रह से सम्बन्ध करें तो अपनी दशा, योगकारी के अन्तर में मिश्र फल देंगे और यदि ये ग्रह योगकारी ग्रहों से सम्बन्ध न करें तो अपनी दशा तथा योगकारी के अन्तर में अत्यन्त पाप फल देंगे।

केन्द्रत्रिकोणाधिपयोरेकत्वे योगकारिता।
अन्यत्रिकोणपतिना सम्बन्धो यदि किं परम् ॥ ७ ॥

अन्वयः—केन्द्रत्रिकोणाधिपयोः एकत्वे योगकारिता स्यात् तत्र यदि अन्यत्रिकोणपतिना सम्बन्धस्तदा किं परम्।

अर्थ—कोई ग्रह केन्द्र तथा त्रिकोण इन दोनों स्थानों का स्वामी हो तो वह स्वयं योगकारक हो जाता है। वह यदि किसी दूसरे त्रिकोणपति से सम्बन्ध करे तो इससे अच्छा और क्या सम्बन्ध हो सकता है।

भाष्य—एक ही केन्द्र-त्रिकोणपति यदि किसी केन्द्रेश से सम्बन्ध करे तो वह योग उत्तम होगा पर सर्वोत्कृष्ट नहीं। यदि वह दूसरे त्रिकोणपति से सम्बन्ध करे तो वह योग सर्वोत्कृष्ट होगा।

उदाहरण—वृष-लग्न-कुण्डली में नवमेश दशमेश शनि स्वतः योगकारी है। वह यदि दूसरे त्रिकोणपति बुध से सम्बन्ध करे तो शनि-बुध का सम्बन्ध वृष-कुण्डली का सर्वोत्कृष्ट योग होगा। इसी प्रकार कर्क-लग्न-कुण्डली में पञ्चमेश-दशमेश मंगल यदि लग्नेश चन्द्र से अथवा नवमेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे तो कर्क-कुण्डली का वह सर्वोत्कृष्ट योग होगा। वहाँ मंगल बृहस्पति की अपेक्षा मंगल-चन्द्र का योग अधिक बली होगा क्योंकि वहाँ लग्नेश चन्द्रमा में कोई पापत्व नहीं है। वृष-लग्न-कुण्डली में शनि से यदि सूर्य का सम्बन्ध हो तो यह योग शनि-बुध की अपेक्षा न्यून शुभ होगा। वृष-लग्न-कुण्डली में शनि-बुध का योग सर्वोत्कृष्ट होते हुए मारकेश दोषयुक्त भी है। 'आरम्भो राजयोगस्य भवेन्मारकभुक्तिषु। प्रथयंति तमारभ्य प्रायशो योगकारिणः॥' इस श्लोक के अनुसार शनि की महादशा में उससे सम्बन्धित बुध के अन्तर में अत्यन्त शुभ की प्राप्ति आरम्भ में होकर पश्चात् मारक फल की भी प्राप्ति होगी।

योगकारक एक-ग्रह की तालिका—

लग्न	योगकारी	अन्य त्रिकोणपति	त्रिकोणस्थ राहु केतु
मेष	×		,,
वृष	शनि	बुध, शुक्र	,,
मिथुन	बुध	शुक्र (शनि)	,,
कर्क	मङ्गल	गुरु, चन्द्र	,,
सिंह	मङ्गल	सूर्य (गुरु)	,,
कन्या	बुध	शनि, शुक्र	,,
तुला	शनि	शुक्र, बुध	,,
वृश्चिक	×		,,
धनु	गुरु	सूर्य, मङ्गल	,,
मकर	शुक्र	बुध, शनि	,,
कुम्भ	शुक्र	(बुध) शनि	,,
मीन	गुरु	चन्द्र, मङ्गल	,,

इस तालिका में दिये गये स्वतः योगकारी ग्रह के साथ यदि दूसरे त्रिकोणपति का सम्बन्ध हो तो वह उस कुण्डली का सर्वोत्कृष्ट योग होगा। इस तालिका में कोष्टक के जो ग्रह हैं वे अष्टमेश हैं। यदि अष्टमेश अष्टमस्थ न हुआ तो उसका योगकारी ग्रह से योग सर्वोत्कृष्ट योग न होगा।

यदि केन्द्रे त्रिकोणे वा निवसेतां तमोग्रहौ ।
नाथेनान्यतरेणापि सम्बन्धाद्योगकारकौ ॥ ८ ॥

अन्वयः—यदि तमोग्रहो (राहु या केतु) केन्द्रे वा त्रिकोणे निवसेतां तथा तयोरन्यतरेण नाथेन सम्बन्धात् योगकारको भवेताम् ॥ ८ ॥

अर्थ—राहु या केतु यदि केन्द्र या त्रिकोण में बैठे हों और उनका किसी केन्द्र या त्रिकोणपति से यदि सम्बन्ध हो तो वह योग कारक योग होता है ।

भाष्य—राहु या केतु यदि केन्द्र में होकर किसी त्रिकोणेश से सम्बन्ध करे अथवा त्रिकोण में बैठकर किसी केन्द्रेश से सम्बन्ध करे अथवा त्रिकोण में बैठकर किसी त्रिकोणेश से सम्बन्ध करे तो वह योगकारक सम्बन्ध होगा । राहु या केतु के विषय में इस ग्रन्थ के इस श्लोक में "यद्यद् भावगतो वापि यद्यद् भावेशसंयुतो । तत्तत्फलानि प्रबलो प्रदिशेतां तमोग्रहो" कहा जा चुका है जिसकी यथास्थान टीका भी की जा चुकी है । उस श्लोक में राहु केतु के फलदातृत्वप्रसंग में उसके किसी दूसरे भावेश के साथ बैठने के अनुसार जो गुण में परिवर्तन होता है वह सूचित किया जा चुका है और इस उपरोक्त श्लोक में योगकारी प्रसंग में 'सम्बन्ध' शब्द का प्रयोग हुआ है संयुक्त शब्द का नहीं । इस ग्रन्थानुसार सम्बन्ध तीन प्रकार के होते हैं उनमें से केवल एक सम्बन्ध स्थान-सम्बन्ध है । चूंकि राहु या केतु की अपनी कोई राशि नहीं इसलिए उनके लिए स्थान-सम्बन्ध के अतिरिक्त अन्य प्रकार का सम्बन्ध संबधश्रेणी में नहीं आ सकता । इस दृष्टि से राहु और केतु के लिए केवल स्थान-सम्बन्ध ही सम्बन्ध-प्रसंग में मान्य है । अस्तु, उपरोक्त श्लोक का अर्थ यह समझना चाहिए कि राहु या केतु यदि केन्द्र में किसी त्रिकोणेश के साथ या त्रिकोण में केन्द्रेश के साथ व त्रिकोण में त्रिकोणेश के साथ बैठें तो योगकारी होते हैं । ये यदि केन्द्र में किसी केन्द्रेश के साथ बैठें तो फल मिश्रित होगा, ऐसी स्थिति में यदि केन्द्रेश पापी हुआ तो वहाँ कारक योग न होगा । केन्द्रेश राहु पर यदि किसी त्रिकोणेश की सप्तम दृष्टि हो तो उसे कारकत्व प्राप्त होने में संदेह है । परस्पर दृष्टि-सम्बन्ध इस ग्रन्थ में मान्य नहीं है जब तक कि कोई ग्रह अपने दृष्टि-ग्रह की राशि में न बैठा हो । । यहाँ राहु और केतु की निज की कोई राशि न होने से उससे सप्तम परस्पर दृष्टियोग इस ग्रन्थ का कारक सम्बन्ध योग नहीं है ।

धर्मकर्माधिनेतारौ रन्ध्रलाभाधिपौ यदि ।
तयोः सम्बन्धमात्रेण न योगं लभते नरः ॥६॥

अन्वयः—धर्मकर्माधिनेतारौ नवमदशमाधीशौ तावेव यदि रन्ध्रलाभाधिपौ अष्टम एकादशाधिपौ तदा तयोः संबंधमात्रेण नरो योगं न लभते प्राप्नोति । परंतु नवमदशमाधीशयोरष्टमलाभेशत्वासंभवः ॥९॥

अर्थ—धर्म और कर्म के नेता अर्थात् नवमेश और दशमेश यदि क्रम से अष्टमेश और लाभेश हों तो इनका सम्बन्ध कारक योग नहीं बन सकता ।

भाष्य–किसी भी एक कुण्डली में नवमेश रंध्रेश हो और दशमेश लाभेश हो ऐसा संभव नहीं । इसलिए उपरोक्त अर्थ समीचीन नहीं है । श्लोक में पाठान्तर दीखता है । श्लोक का भावार्थ यह है कि नवमेश यदि अष्टमेश हो और वह दशमेश से सम्बन्ध करे अथवा दशमेश लाभेश हो और वह नवमेश से सम्बन्ध करे तो दोनों अवस्था में कारक योग नहीं प्राप्त हो सकता अथवा रंध्रेश त्रिकोणेश हो और केन्द्रेश त्रिषडायाधीश हो तो इनके परस्पर सम्बन्ध से मनुष्य को कारक योग नहीं प्राप्त होता । पहिले पूर्व श्लोकों में केन्द्र के चारों स्थान, त्रिषडाय के तीन स्थान, त्रिकोण के तीन स्थान, इनके शुभत्व पापत्व के क्रमश. बलाबल की विवेचना हो चुकी है । इस श्लोक में केन्द्रेश त्रिकोणेश के परस्पर सम्बन्ध से उत्पन्न कारक फल का अपवाद (exception) कहा गया है ।

उदाहरण—मिथुन-कुण्डली में नवमेश-रंध्रेश शनि यदि दशमेश सप्तमेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे, मेष-कुण्डली में दशमेश-एकादशेश शनि यदि नवमेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे, वृष-लग्न-कुण्डली में नवमेश-दशमेश शनि यदि रंध्रेश-लाभेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे, वृश्चिक कुण्डली में नवमेश चन्द्र यदि रंध्रेश-लाभेश बुध से सम्बन्ध करे या दशमेश सूर्य यदि रंध्रेश-लाभेश बुध से संबन्ध करे तो ये सब योग कारक योग नहीं होंगे ।

त्रिकोणेश-रंध्रेश + केन्द्रेश-त्रिषडायेश के सम्बन्ध अर्थात् रंध्रेशातिरिक्त त्रिकोणेश का त्रिषडायाधीशातिरिक्त केन्द्रेश के सम्बन्ध के उदाहरण—मेष-कुण्डली में मंगल रंध्रेश-त्रिकोणेश यदि दशमेश-लाभेश शनि से सम्बन्ध करे अथवा केन्द्रेश चन्द्र या शुक्र से सम्बन्ध करे तो कारक योग नहीं बनेगा । मेष-कुण्डली में दशमेश-लाभेश शनि यदि त्रिकोणेश सूर्य या बृहस्पति या मंगल से सम्बन्ध करे, कर्क-कुण्डली में चतुर्थेश लाभेश शुक्र यदि नवमेश-षष्ठेश बृहस्पति

से सम्बन्ध करे या लग्नेश चन्द्र से सम्बन्ध करे, मकर-कुण्डली में चतुर्थेश-लाभेश मंगल यदि नवमेश-षष्ठेश बुध से वा लग्नेश-द्वितीयेश शनि से सम्बन्ध करे तो इन परिस्थितियों में मनुष्य को उन ग्रहों का कारक योग नहीं प्राप्त होता। उपरोक्त परिस्थिति में रंध्रेश यदि अष्टमस्थ हो अथवा रंध्रेश लग्नेश होकर लग्न या अष्टम में बैठा हो और तब उपरोक्त ग्रहों से सम्बन्ध करे तो कारक होगा। मेष कुण्डली में यदि मंगल लग्नस्थ हो या अष्टमस्थ हो तो उपरोक्त परिस्थिति बिलकुल भिन्न हो जावेगी।

कारक-भंग-योग तालिका :—

मेष—श.बृ., मं.श., मं.चं., मं.शु.,
श.सू., बृ.श.
वृष—श.बृ.
मिथुन—श.बृ.
कर्क—शु.बृ., शु. चं.
वृश्चिक—(चं बु) (सू. बु)
मकर—मं.बु., मं. श.

इन योगों में कारक फल नहीं होगा, जिनके नीचे रेखा है वे पाप फलद होंगे वा जो कोष्टक में हैं वे कारक स्वयं नहीं हैं क्योंकि केन्द्रेश त्रिकोणेश नहीं हैं तथा पापी हैं।

आयुर्दायाऽध्यायः

अष्टमं ह्यायुषः स्थानमष्टमादष्टमं च यत् ।
तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥ १ ॥
तत्राप्याद्यव्ययस्थानाद् द्वितीयं बलवत्तरम् ।
तदीशितुस्तत्रगताः पापिनस्तेन संयुताः ॥ २ ॥
तेषां दशाविपाकेषु संभवे निधनं नृणाम् ।
तेषामसम्भवे साक्षाद्व्ययाधीशदशास्वपि ॥ ३ ॥
अलाभे पुनरेतेषां सम्बन्धेन तदीशितुः ।
क्वचिच्छुभानां च दशास्वष्टमेशदशासु च ॥ ४ ॥
केवलानां च पापानां दशासु निधनं क्वचित् ।
कल्पनीयं बुधैर्नॄणां मारकाणामदर्शने ॥ ५ ॥

अन्वयः—अष्टमं हि आयुषः स्थानं अष्टमात् यत् अष्टमं तदपि आयुषः स्थानं । तयोः अपि व्ययस्थाने सप्तमं द्वितीयञ्च मारकस्थानं उच्यते । तत्र मारकराशौ अपि आद्यव्ययस्थानात् अर्थात सप्तमात् द्वितीयं यद् व्यय-स्थानं, लग्नात् द्वितीयं तत् प्रबलमारकस्थानम् उच्यते । तदीशितुः सप्तम-द्वितीयेश स्वस्वस्थानगताः पापिनस्तेन संयुताः तेषां दशासु नृणां निधनं संभवः । तेषां असंभवे तदा सक्षात् व्ययाधीशदशासु निधनं संभवः । पुनः ते (उपरोक्तवक्ष्यमाणग्रहाणां) दशा अलाभे तदीशितुः संबन्धेन शुभानां च दशासु निधनं संभवः । मारकाणां अदर्शने केवलानां च पापानां दशासु क्वचिद् निधनं भवेत् ॥ १–५ ॥

अर्थ—कुण्डली का अष्टम-स्थान (रंध्र) आयु-स्थान है तथा अष्टम से जो अष्टम अर्थात् तृतीय स्थान भी आयु-स्थान है। इन दोनों (अष्टम तृतीय) स्थानों से जो व्यय-स्थान है अर्थात् सप्तम व द्वितीय, ये मारक-स्थान संज्ञक हैं। इन दोनों मारक-स्थानों में से द्वितीय-स्थान अधिक बली है।

इन मारकस्थानों के अधिपति यदि अपने-अपने मारकस्थानों में बैठे हों तथा पापयुत हों अर्थात् पापी ग्रहों के साथ में हों तो ऐसी अवस्था में जातक का निधन (मृत्यु) उनकी मूलदशा में हो जाता है। यदि ऐसा योग न बनता हो तो साक्षात् व्ययाधिप की महादशा में जातक की मृत्यु होती है। व्ययाधीश की भी दशा न प्राप्त होती हो अर्थात् उपरोक्त परिस्थितिवाले मारकेशों की तथा व्ययाधीश की भी दशा न प्राप्त होती हो तो इन मारकेशों से सम्बन्ध करनेवाले अथवा व्ययाधीश से संबंध करनेवाले पापी ग्रहों की दशा में निधन संभव होता है। उपरोक्त मारकेशों में से किसी की भी दशा न प्राप्त होती हो अर्थात् द्वितीयेश, सप्तमेश, द्वादशेश ग्रह यदि मारक-गुण-सम्पन्न न हों तो कभी-कभी शुभ ग्रह की दशा में अथवा अष्टमेश की दशा में भी निधन होता है

भाष्य—उपरोक्त श्लोकों में आयु तथा मारक-स्थान की परिभाषा बताई गई है। जिस प्रकार ग्रहों के आपसी सम्बन्ध से शुभाशुभ योगज फल होता है उसी प्रकार निधन-संभव ग्रहों की परस्पर दशा, अन्तर जानने के लिए मारकेशों तथा तत्सम्बन्धी ग्रहों के पारस्परिक सम्बन्ध की विवेचना आवश्यक है। जिस प्रकार केवल त्रिकोणेश राजयोग नहीं बनाते उसी प्रकार केवल (अकेला) मारकेश मारक (निधन) फल नहीं देता, अरिष्टप्रद मात्र हो जाता है। इसलिए अकेला सप्तमेश या द्वितीयेश अपनी दशा में मारक फल (मृत्यु) नहीं दे सकता जब तक उसका सम्बन्ध किसी पापी ग्रह से न हो। जिस प्रकार कारक-प्रसंग में दो ग्रहों का एकसाथ किसी एक की राशि में बैठना प्रथम-श्रेणी, दो में से एक का दूसरे की राशि में बैठना और पहिलेवाले का उसे देखना द्वितीय-श्रेणी का सम्बन्ध है उसी प्रकार मारकफल-दातृत्व-प्रसंग में मारकेश का अपने स्थान में बैठकर पापी ग्रहों से स्थान-सम्बन्ध करना प्रथम-श्रेणी का मारक-सम्बन्ध है। दूसरे प्रकार के सम्बन्ध में मारकफल उतना प्रधान नहीं रह जाता। बृहस्पत्यादि शुभ-ग्रह सप्तमेश यदि द्वितीय में तथा बृहस्पत्यादि शुभ ग्रह द्वितीयेश सप्तम में हों तो यह अन्योन्याश्रित प्रथम-श्रेणी का मारकयोग होगा। ऐसी अवस्था में परस्पर दशान्तरदशा में जातक की मृत्यु निश्चित होती है।

सप्तमेश-मारकेश के सम्बन्ध में :—

संज्ञा-प्रकरण में पहिले कहा जा चुका है कि "केन्द्राधिपत्यदोषस्तु बलवान् गुरुशुक्रयोः। मारकत्वेऽपि च तयोर्मारकस्थानसंस्थितिः" । सप्तमेश बृहस्पति और शुक्र मारक-प्रसंग में बलवान् दोषी हैं अर्थात् ये प्रबल मारकेश हैं । ये यदि मारक (सप्तम) स्थान में बैठें हों तो ये और प्रबल मारक हो जाते हैं। इनसे उतरकर बुध और बुध से उतरकर चन्द्रमा मारकेश है । इससे स्पष्ट है कि क्रूर सप्तमेश मारकेश भले ही कहे जायें पर मारक नहीं होते इसलिए सप्तमेश सूर्य, मंगल तथा शनि मारक नहीं होते । बुध चन्द्र साधारण मारक होते हैं अर्थात् अरिष्टप्रद ही रहते हैं। अस्तु सप्तमस्थ सप्तमेश बृहस्पति अथवा शुक्र यदि पापयुत हों तो वे निश्चयेन मारक (मार-देने वाले) हो जाते हैं। वे यदि सप्तमस्थ न हों और पापियों से सम्बन्ध करें तो मारकफल संदिग्ध हो जाता है पर सम्बन्धित ग्रह के अन्तर में वह अरिष्टफल अवश्य देता है।

उदाहरण—मिथुन-लग्न-कुण्डली में यदि सप्तम में बृ+श अथवा बृ + म, बृ + सू हों तो बृहस्पति की दशा मंगल, शनि के अन्तर में निधन होगा । बृहस्पति की दशा सूर्य के अन्तर में भी निधन सम्भव है क्योंकि सूर्य साधारण पापी तथा आयु का अधिपति भी है। आयुकारक का मारक से सम्बन्ध आयु-प्रसंग में कभी भी शुभ नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार बृहस्पति में शनि का अन्तर प्रबल मारक है। यहाँ भी आयु-कारक और मारक का सम्बन्ध है। पर इस ग्रन्थ में शनि के बारे में दूसरी व्यवस्था कही है। "मारकैस्सहसम्ब-न्धात् निहन्ता पापकृत् शनिः। अतिक्रम्येतरान् सर्वान् भवत्येव न संशयः" मारकेश के साथ बैठने वाला शनि साथ वाले मारकेश को लांघकर वह स्वयं मारक हो जाता है। इस न्याय से मिथुन कुण्डली में यदि सप्तमस्थ बृहस्पति के साथ शनि का योग हो तो मारकफल बजाय बृहस्पति की महादशा के वह शनि की महादशा तथा बृहस्पति के अन्तर में देगा। इसी प्रकार कन्या-लग्न-कुण्डली में सप्तमस्थ बृहस्पति + शनि के योग को समझना चाहिए तथा बृ+मं के योग को भी मारक योग समझना चाहिए।

सप्तमस्थ सप्तमेश बृहस्पति के साथ शनि का योग

लग्न	यदि सप्तम में	मारक फल की द.	अन्तर	अरिष्ट फल की द.	अन्तर
मिथुन	गु श	श	गु	गु	श
	गु मं	गु	मं	मं	गु
	गु सू	गु	सू	सू	गु
कन्या	गु मं	गु	मं	मं	गु
	गु श	श	गु	गु	श
	गु चं	गु	चं	चं	गु
मेष	शु श	शु	श		
	शु मं	शु	मं	मं	शु
	शु श	श	शु	शु	श
	शु बु	शु	बु	बु	शु
वृश्चिक	शु बु	शु	बु	बु	शु
	शु श	श	शु	शु	श
	शु मं			म	शु
				शु	म
धनु	बु शु	सदिग्ध		शु	बु
	बु श	बु	शु	बु	श
	बु चं	बु	श	बु	चं
				चं	बु
मीन		सदिग्ध			
	बु शु	बु	शु	शु	बु
	बु श	श	बु	बु	श
	बु सू	बु	सू	बु	सू
मकर	चं गु	संदिग्ध च	गु	गु	चं

इस सारणी में मिथुन कन्या लग्न कुण्डली में श+गु का योग कारक योग भी है इसलिए शनि की दशा तथा गुरु के अन्तर के आरम्भ में शुभ-फल होकर उपरान्त समान मारक-होगा। मारकेश के साथ यदि पापी शनि हो और साथ में अन्य पापी ग्रह भी हों तो शनि की दशा एवं मारकेश तथा मारकेश के अन्य पापी साथी ग्रहों के अन्तर में भी निधन सम्भव है।

द्वितीयेश-मारकेश के सम्बन्ध में :—

द्वितीयेश के सम्बन्ध में कहा जा चुका है कि 'लग्नाद्व्ययद्वितीयेशौ परेषां साहचर्यत: । स्थानान्तरानुगुण्येन भवत: फलदायकौ' । इस ग्रन्थ में ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता कि क्रूर-ग्रह द्वितीयेश मारक नहीं होता, शुभ-ग्रह ही मारकेश होते हैं । पर इस श्लोक के 'केन्द्राधिपत्यदोषस्तु बलवान् गुरुशुक्रयो: । मारकत्वेऽपि च तयो स्थानसंस्थिति:' इस अंश का 'मारकत्वेऽपि च तयो: मारकस्थानसंस्थिति:' का अर्थ है कि गुरु और शुक्र को केन्द्रपति होने का दोष तो है ही मारकेश होने का भी दोष है अर्थात् द्वितीयेश यदि बृहस्पति वा शुक्र हों तो उन्हें सप्तमेश होने के जैसा ही मारक-प्रकरण में द्वितीयेश होने का दोष है । इस न्याय से शुक्रतथा बृहस्पति को द्वितीयेश होना तथा उनका सप्तम वा द्वितीय में बैठना कड़ा मारक दोष है । इससे उतरकर बुध और चन्द्रमा हैं ।

द्वितीयेश-मारकेश (मारक) की सारणी

लग्न	द्वितीयस्थ द्वितीयेश पापयुत	मारक दशा व अन्तर		केवल अरिष्टप्रद दशा व अन्तर		
वृश्चिक	गु बु	गु	बु	बु	गु	
	*गु शु	गु	शु			
	गु श	श	वृ	गु	श	
	*गु म	गु	मं	मं	गु	
कुम्भ	गु बु	गु	बु	बु	गु	
	गु चं	गु	चं	गु	चं	
मेष	शुक्र	शु	शु	शु	शु	
	शु बु	शु	बु	बु	शु	
	शु श	श	शु	श	शु	
	*शु मं	शु	म	मं	शु	
कन्या	शु मं	शु	म	मं	शु	
	*शु श	श	शु	श	शु	
	शु चं	शु	चं	चं	शु	

लग्न	द्वितीयस्थ द्वितीयेश पा।युत	मारक दशा व अन्तर	केवल अरिष्टप्रद दशा व अन्तर	मारक फल संदिग्ध
वृष	बु गु	बु । गु	गु । बु	,,
	*बु शु		शु । बु	,,
	बु चं		बु । च	,,
			चं । बु	,,
सिंह	बु गु	बु । गु	गु । बु	,,
	बु श	श । बु	श । बु	,,
मिथुन	चं श	च । म	श । चं	,,
	च मं		मं । चं	,,
	चं सू		चं । सू	,,

जिनके नीचे रेखा है वे अति उग्र मारक योग हैं।

*ये कारक योग भी हैं। इनमें मारक की भुक्ति मारक होती है जिसका फल अन्तर के अन्त में होता है। मारक तो मारक है ही।

मारक मारकेशों की सूची

लग्न	सप्तमेश	द्वितीयेश	पापी ग्रह	द्वादशेश	अष्टमेश
मेष	शुक्र	शुक्र	श म बु	गुरु	मगल
वृष	×	बुध	गु शु चं	मगल	गुरु
मिथुन	गुरु	चन्द्र	श मं सू	शुक्र	शनि
कर्क	×	×	×	बुध	शनि
सिंह	×	बुध	वु श	चन्द्र	गुरु
कन्या	गुरु	शुक्र	मं च श	सूर्य	मंगल
तुला	×	×		बुध	शुक्र
वृश्चिक	शुक्र	गुरु	बु श म	शुक्र	बुध
धनु	बुध	×	शु श	मंगल	चन्द्र
मकर	चन्द्र	×	वु मं	गुरु	सूर्य
कुम्भ	×	गुरु	बु च	शनि	बुध
मीन	बुध	×	श श सू	शनि	शुक्र

उपरोक्त सारणी में जो ग्रह बड़े टाइप में हैं वे बली पापी हैं।

(१) कर्क तथा मकर लग्न-कुण्डलियों का मारकेश मारक नहीं है इसलिए इन दोनों कुण्डलियों में पापयुत द्वादश-स्थान की राशि मारकराशि होगी। यदि द्वादशस्थानाधिप द्वादश में हो या पापयुत हो तो द्वादशाधीश की दशा में निधन होता है। अकेला होने से अपने ही अन्तर में मारता है।

(२) यदि किसी कुण्डली में उपरोक्त सप्तमेश-द्वितीयेश मारकेश की दशा जन्मकाल के पहिले ही बीत चुकी हो तो वहाँ द्वादशेश ही मारकेश हो जावेगा अथवा जिसके मारकेश की दशा सकुशल बीत गई हो तो उसका मारकेश द्वादशेश होगा। पापयुत द्वादशस्थ द्वादशेश में भी मरण होता है।

(३) जिन कुण्डलियों में पूर्वजन्म में मारकेश द्वादशेश की दशा बीत चुकी हो (जैसा बहुत कम संभव है) अथवा उन ग्रहों की दशा सकुशल (अरिष्टप्रद मात्र) बीत चुकी हो तो अष्टमेश में निधन होता है।

(४) लेखक का मत है कि मारकेश से दूसरे मारकेश का संबंध हो तो परस्पर दशान्तर में अवश्य मारक-फल होता है। सम्बन्ध न होने पर यथायोग तारतम्य से मिश्रित-फल होता है। यदि दो मारकेशों का परस्पर स्थान-सम्बन्ध हो या मारकस्थान में एकसाथ दोनों बैठे हों तो निश्चय से परस्पर दशान्तर में निधन होता है। ऐसे योग मेष कुण्डली में शुक्र का स्वयं, मिथुन-कुण्डली में बृ चं, कन्या-कुण्डली में बृ. शु., वृश्चिक कुण्डली में शुक्र के बनते हैं। ये मारकस्थ या पापयुत योग मारक-प्रसंग में बड़े अरिष्टप्रद (मारक) होंगे।

(५) कभी कभी मारकेश से, द्वादशेश से, अष्टमेश से सम्बन्ध करने वाले पापी ग्रहों की दशा में भी निधन होता है।

(६) मारकेश यदि मारक-स्थान में न हों, अन्यत्र हों पर पापयुत हों तो भी वे अरिष्टप्रद होते हैं, स्वयं पापी होने पर मारक भी हो जाते हैं। जैसे सिंह-लग्न-कुण्डली में बुध और कुम्भ-कुण्डली में बृहस्पति मारक हैं।

ज्योतिष के अनेक आचार्यों का मत है कि इस ग्रन्थ में मारकफल-प्रसंग में जहाँ 'संभवे निधनं नृणाम्, अलाभे' आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है उसका

आशय यह है कि जैमिनी आदि ऋषियों द्वारा अल्पमध्य-दीर्घायु-खण्ड के जिस आयु-खण्ड में विंशोत्तरी मारक दशा आती हो उसमें निधन होता है अन्यथा मारकेश मारते नहीं। विद्वान् ज्योतिषियों को आयुबल देखकर ही मारक का निर्णय करना चाहिए।

मारकैस्सह सम्बन्धात् निहंता पापकृच्छनिः।
अतिक्रम्येतरान् सर्वान् भवत्येव न संशयः॥ ६॥

अन्वयः—पापकृच्छनिः मारकैस्सहसम्बन्धात् इतरान् सर्वान् अतिक्रम्य स्वयं निहन्ता भवति एव न अत्र संशयः॥ ६॥

अर्थ—पापी अर्थात् त्रिषडायाधीश एवं अष्टमेश शनि यदि मारकेश के साथ सम्बन्ध करे तो वह सभी मारकेशों को लांघकर स्वयं मारक हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं।

भाष्य—मारक-प्रसंग में यह श्लोक असंदिग्ध है। पापकृत् शनि का अर्थ है कि पाप-फल देने वाला शनि। इस ग्रन्थ के अनुसार त्रिषडायाधीश व अष्टमेश ही पापी संज्ञक ग्रह हैं (ग्रन्थान्तरप्रसिद्ध क्रूर-ग्रह नहीं) पर यदि ये सम्बन्ध-वशात् कारक ग्रह हो जाते हैं तो संबंधित ग्रहों के अन्तर में योगज शुभ-फल देते हैं इसलिए त्रिषडायाधीश शनि भी यदि किसी शुभ मारकेश से सम्बन्ध करे तो वह कारक बन जायगा और तब उसे सम्बन्धित मारकेश के अन्तर में योगज शुभ फल देना चाहिए, पर ऐसा नहीं है। इस उपरोक्त श्लोक के अनुसार पापी (त्रिषडायाधीश, अष्टमेश) शनि हर परिस्थिति में मारकेश के सम्बन्ध से अपनी दशा और मारकेश के अन्तर में मारता ही है चाहे उससे सम्बन्ध करने वाला मारकेश ग्रह शुभ ही क्यों न हो। इसीलिए ग्रन्थकार को इस बात के लिए एक पृथक् श्लोक बनाना पड़ा। "आरम्भो हि राजयोगस्य भवेन् मारकभुक्तिषु, प्रथयंति तमारभ्य क्रमशः पापभुक्तयः।" कन्या-कुण्डली में शनि पञ्चमेश षष्ठेश है वह यदि चतुर्थेश-सप्तमेश बृहस्पति से सम्बन्ध करे तो वह शुभ हो जाता है। कारकाध्याय के अनुसार शनि की दशा और बृहस्पति के अन्तर में कारक शुभ-फल होना चाहिए। पर "आरंभो हि राजयोगस्य" श्लोकानुसार यहाँ शनि की दशा और बृहस्पति का अंतर आरम्भ में योगज

शुभ-फल देकर बाद में मारक-फल देगा। इसी कुण्डली में शनि त्रिकोणेश तथा शुक्र मारकेश एवं नवमेश है। ये यदि संबंध करें तो परस्पर दशान्तरदशा में शुभ-फल की प्राप्ति होनी चाहिए पर कहा गया है कि "परस्परदशायां स्वभुक्तौ सूर्यजभार्गवौ। व्यत्ययेन विशेषेण प्रदिशेतां शुभाशुभम् ॥" जिसका अर्थ है कि शनि शुक्र परस्पर दशान्तरदशा में उल्टा करके शुभाशुभ फल देते हैं। इसलिए इस श्लोकानुसार भी शनि में शुक्र का अंतर मारक ही फल देगा। वृश्चिक-कुण्डली में शनि तृतीयेश-चतुर्थेश है और वृहस्पति तृतीयेश-पञ्चमेश, परस्पर सम्बन्ध से शनि-वृहस्पति कारक हो गये हैं इस पर भी शनि की दशा और वृहस्पति के अंतर में मारक ही फल प्रधान होगा। अन्य कुंडलियों में ऐसा योग नहीं बनता अर्थात् पापी शनि कारक नहीं बन सकता। अस्तु, निर्णय यही है कि त्रिषडायाधीश एवं अष्टमेश शनि यदि किसी भी मार केश से सम्बन्ध करे अथवा मारकेशों से सम्बन्ध करे तो वह सबको लांघकर (हटाकर) स्वयं मारक हो जाता है। इसमें संशयः नहीं है। स्वतः शुभ या स्वतः योगकारी शनि मारकेश के सम्बन्ध से मारक नहीं होता। वृष, तुला, मकर, कुम्भ, कुण्डलियों के शनि अमारक हैं। इनकी मूलदशा में निधन नहीं होता पर यदि कुम्भकुण्डली में वृहस्पति की दशा न प्राप्त हुई तो शनि पापयुत होने पर द्वादशेश होने के नाते मार सकता है।

उपरोक्त श्लोक में "सम्बन्धात्" शब्द का प्रयोग हुआ है जिसका आशय यह है कि मारकेश यदि स्वमारक-स्थानगत न भी हो और अन्यत्र बैठकर शनि से सम्बन्ध करे अथवा मारकेश स्वमारक-स्थान या द्वितीय मारक-स्थानगत हो और शनि उसके साथ न भी बैठकर दूसरे प्रकार का सम्बन्ध बनावे तब भी वह निहंता ही होता है सम्बन्ध के बलाबल पर मारक-फल आश्रित है इसलिए मारक-प्रसंग में मारक-स्थान में मारकेश के साथ यदि पापकृत शनि हो तो शनि अकाट्य मारक होगा, इसमें सन्देह नहीं।

उदाहरण—मेष-कुण्डली में द्वितीयस्थ या सप्तमस्थ शुक्र के साथ यदि शनि हो, वृश्चिक-कुण्डली में द्वितीयस्थ वृहस्पति के साथ यदि शनि हो, वा सप्तमस्थ शुक्र के साथ शनि हो तो शनि प्रबल निहंता हो जाता है और उसके साथ वाले मारकेश अमारक हो जाते हैं, यदि उनके मारकेशों की दशा शनि के पूर्व पड़ती हो।

लग्न	१ मारक द.	अंतर	२ अमारक ग्रह		३ अरिष्टप्रद द.	अंतर
मेष	श	शु	शु		शु	श
मिथुन	श	बृ	बृ	शु		
सिंह	श	बु	बु.चं.बृ.			
कन्या	श श	बृ शु	बृ सू	शु मं	श	श
वृश्चिक	श श	बृ शु	बृ बु	शु	शु	श
मीन	श	बु	बु	शु		

इस सारणी में (शनि शुक्र का सम्बन्ध होने पर) शनि की महादशा तथा सम्बन्धित ग्रह के अन्तर में मारकफल होता है तथा यदि दूसरे कोष्ठक के ग्रहों की दशा शनि की महादशा के पूर्व पड़ती हो तो उन ग्रहों की दशा में निधन नहीं होता। ऐसी परिस्थिति में द्वितीय कोष्ठक के वे ग्रह अमारक हो जाते हैं। तृतीय कोष्ठक के ग्रह मारकेश, द्वादशेश तथा अष्टमेश हैं जो यहाँ मारक न होंगे। तृतीय कोष्ठक के ग्रह की दशा शनि के अन्तर में भी विशेष अरिष्टप्रद फल होता है पर निधन नहीं।

दशाफलाध्याय:

न दिशेयुर्ग्रहाः सर्वे स्वदशासु स्वभुक्तिषु ।
शुभाशुभफलं नृणामात्मभावानुरूपतः ॥ १ ॥

अन्वयः—सर्वे ग्रहाः आत्मभावानुरूपत : निजस्थानानुरूपतः शुभ-अशुभ-फलं स्वदशासु स्वभुक्तिषु न दिशेयुः ॥ १ ॥

अर्थ—सूर्यादिक सभी ग्रह अपना त्रिषडायात्मक तथा अन्य भावात्मक फल अर्थात् अपनी अपनी शुभाशुभ राशि-जनित फल अपनी दशा के अपने ही अन्तर में नहीं देते ।

भाष्य—सिवाय सूर्य और चन्द्रमा के बाकी सभी ग्रहों की अपनी दो राशियां होती हैं । इस ग्रन्थ के संज्ञा-प्रकरण के अनुसार जिस ग्रह का अपनी दोनों राशियों के भावों (गृहों) के अनुसार जो शुभ अथवा अशुभ फल है वह अपनी दशा के अपने ही अन्तर में नहीं होता प्रत्युत जिस अन्तर में फल होता है उसे अगले श्लोक में बताते हैं ।

आत्मसम्बन्धिनो ये च ये वा निजसधर्मिणः ।
तेषामन्तर्दशास्वेव दिशन्ति स्वदशाफलम् ॥ १ ॥

अन्वयः—सर्वे ग्रहाः स्वस्वभावानुकूलं दशाफलं स्वदशायाम् आत्मसंबन्धी वा निजसधर्मी ग्रहान्तरदशासु दिशन्ति ॥ २ ॥

अर्थ—सम्बन्ध न होने पर सभी ग्रह अपना निजी शुभाशुभ फल अपनी दशा तथा अपने आत्मसम्बन्धी वा निज सधर्मी ग्रहों के अन्तर में देते हैं (और योगज फल सम्बन्धकर्ता ग्रह के अन्तर में देते हैं) ।

भाष्य—आत्म सम्बन्धी ग्रह वे हैं जो परस्पर मित्र हैं या दोनों उच्चस्थ या नीचस्थ हैं । सू चं, सू मं, सू बृ, मं बृ, बु शु, तथा शु श ये परस्पर मित्र ग्रह हैं इसलिए ये आत्मसम्बन्धी ग्रह हैं । इनमें से शनि शुक्र अभिन्न मित्र हैं क्योंकि सभी कुण्डलियों में जहां शनि केन्द्रेश है वहां शुक्र भी केन्द्रेश है शनि

त्रिकोणेश तो शुक्र भी त्रिकोणेश है। केन्द्रेश-केन्द्रेश, त्रिकोणेश-त्रिकोणेश, त्रिषडायेश-त्रिषडायेश, द्वितीयेश-द्वादशेश, परस्पर सहधर्मी ग्रह हैं। इसी प्रकार केन्द्रेश-त्रिकोणेश, त्रिकोणेश-केन्द्रेश आदि सहधर्मी हैं।

सारांश यह है कि अकेले ग्रह अपना निज फल अपने से न सम्बन्ध रखने वाले उन ग्रहों के अन्तर में देते हैं जो कि उनके स्वभाव या गुण के अनुकूल हों। इसलिए सम्बन्ध न होने पर परस्पर मित्र ग्रह परस्पर दशान्तरदशा में, उच्चस्थ या नीचस्थ ग्रह परस्पर दशान्तरदशा में, त्रिकोणेश त्रिकोणेश में केन्द्रेश केन्द्रेश में त्रिषडायेश त्रिषडायेश अथवा अष्टमेश के अन्तर में अपना फल देते हैं यदि आपस का सम्बन्ध हो तो परस्पर दशान्तरदशा में योगज फल होता है। अर्थात् पापी ग्रह दूसरे पापी ग्रह के अन्तर में, शुभ ग्रह शुभ के अन्तर में समग्रह सम के अन्तर में, द्वितीयेश द्वादशेश के अन्तर में अपना फल देते हैं यदि ये सम्बन्धित न हों। इस दृष्टि से असम्बन्ध होने पर केवल त्रिकोणेश केन्द्रेश में केवल केन्द्रेश त्रिकोणेश में शुभ फल नहीं देते।

इतरेषां दशानाथविरुद्धफलदायिनाम्।
तत्तत्फलानुगुण्येन फलान्यूह्यानि सूरिभिः॥ ३॥

सं०—इतरेषां दशानाथविरुद्धफलदायिनां तत्तत्फलानुगुण्येन फलानि सूरिभिः ऊहनीयानि॥ ३॥

अर्थ—जो ग्रह दशानाथ के आत्म स्वभाव के विरुद्ध फल देने वाले हैं उनका अन्तर दशानाथ तथा अन्तरेश के सामञ्जस्य से होता है।

भाष्य—न सम्बन्ध होने पर त्रिकोणेश की दशा में त्रिषडायेश का अन्तर शुभ अशुभ के सामञ्जस्य से होता है। त्रिकोणेश त्रिषडायेश या त्रिकोणेश अष्टमेश का आपस में सम्बन्ध हो, तथा त्रिषडायेश केन्द्रेश न हो तो कारकत्व न प्राप्त होने के कारण त्रिकोणेश की दशा त्रिषडायेश का अन्तर मिश्रफलदायक और त्रिकोणेश में निज का अन्तर शुभ, त्रिषडायेश की दशा त्रिकोणेश के अन्तर में भी मिश्रफल होगा।

स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ केन्द्रपतिः शुभम्।
दिशेत्सोऽपि तथा नो चेद् असम्बन्धेन पापकृत्॥ ४॥

अन्वयः—केन्द्रपतिः स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ तथा त्रिकोणेशः स्वदशायां केन्द्रेशभुक्तौ शुभं दिशेत्, असंबन्धेन पापकृत्॥ ४॥

अर्थ—केन्द्रेश अपनी दशा तथा त्रिकोणेश के अन्तर में आपस में सम्बन्ध करने पर शुभ फल देते है और यदि ये परस्पर सम्बन्ध न करें तो परस्पर दशान्तरदशा में इनका अशुभ ही फल होता है।

भाष्य—केन्द्र और त्रिकोण आपस में निज सधर्मी नहीं है। इसलिए जब तक इनका आपस में सम्बन्ध न हो ये कारक नहीं बन पाते और परस्पर दशान्तरदशा में अशुभ ही फल देते हैं।

आरम्भो राजयोगस्य भवेन्मारकभुक्तिषु।
प्रथयन्ति तमारभ्य क्रमशः पापभुक्तयः॥ ५॥

अन्वयः—योगकारकग्रहदशायां मारकग्रहभुक्तिषु यदि राजयोगस्य आरम्भो भवेत तदा पापभुक्तयः तमारभ्य क्रमशः प्रथयन्ति॥ ५॥

अर्थ—कारक ग्रह की दशा में जब किसी तत्सम्बन्धी कारक-मारक ग्रह का अन्तर आता है तो उस अन्तर में प्रथमतः कारक शुभ फलद् होकर क्रमशः बाद में पाप फलद् होता है।

भाष्यः – नवमेश दशमेश का परस्पर सम्बन्ध राजयोग है पर इनमें से यदि कोई एक मारकेश हो तो उसके अन्तर में पाप फल होता है। इसी प्रकार दो कारक ग्रहों में से एक मारकेश हो तो कारक की दशा मारकेश के अन्तर के अन्त में पाप फल होता है। जैसे धनु कुण्डली में सूर्य में बुध का अन्तर अन्त में पापफलद होगा पर मिथुन-कुण्डली में शनि में बृहस्पति का अन्तर पापफलद ही नहीं वरन् मारक होगा क्योंकि वहाँ निहन्ता है।

जहाँ दोनों कारक ग्रह मारकेश हों तो वहाँ परस्पर दशान्तरदशा में कारक के साथ-साथ मारक फल की ही प्रधानता होगी। वहाँ जातक का निधन अच्छी तथा अनुकूल परिस्थितियों में होना सम्भव है।

उदाहरणः—कन्या-कुण्डली में बृहस्पति में शुक्र का अन्तर निश्चयेन मारक है। शुक्र में बृहस्पति का अन्तर भी मारक है पर उपरोक्त की अपेक्षा कम।

तत्संबंधिशुभानां च तथा पुनरसंयुजाम्।
शुभानां तु समत्वेन संयोगो योगकारिणाम्॥ ६॥

अन्वयः—तत्सम्बन्धिशुभानां, यथा पुनः असंयुजां योगकारिणां शुभानां तु संयोगः समत्वेन स्यात् ।

अर्थ—कारक ग्रह का संबंधी ग्रह शुभ मारकेश हो तो उसके अन्तर में सम फल और संबंध न हो तो पाप फल ही होता है ।

भाष्य—केन्द्रेश त्रिकोणेश का आपस का सम्बन्ध होने पर दोनों ग्रह कारक ग्रह हो जाते हैं अब यदि उनमें से कोई ग्रह मारकेश और साथ ही वह त्रिकोणेश हो तो उसके अन्तर में सम फल और यदि वह मारकेश केन्द्रेश हो तो पाप ही फल होगा। न सम्बन्ध होने पर कारक ग्रह की दशा में मारकेश या पापी के अन्तर में पाप ही फल होता है और शुभ के अन्तर में सम फल होता है ।

शुभस्यास्य प्रसक्तस्य दशायां योगकारकाः ।
स्वभुक्तिषु प्रयच्छन्ति कुत्रचिद् योगजं फलम् ॥ ७ ॥

अन्वयः—योगकारकग्रहाः प्रसक्तस्य संबन्धवतोऽस्य शुभग्रहस्य दशायां स्वभुक्तिषु च कुत्रचिद् योगजं फलं प्रयच्छन्ति ॥ ७ ॥

अर्थ—कारक ग्रह से सम्बन्ध करने वाले शुभ ग्रह की दशा में कारक के अन्तर में कभी-कभी शुभ फल भी होता है ।

भाष्य—यह श्लोक मारक-प्रसंगों में प्रयुक्त होता है। मारक ग्रह यदि कारक भी हो तो उसकी दशा और उससे सम्बन्ध करनेवाले कारक ग्रह के अन्तर में कभी-कभी कारक फल होता है जो कि वहाँ साधारणतया मारक फल होना चाहिए था। कारक ग्रह से सम्बन्ध करने वाला अन्य शुभ ग्रह भी कारक हो जाता है इसलिए परस्पर दशान्तर में शुभ फल तो देता ही है तो इस बात के लिए इस अलग श्लोक की आवश्यकता क्यों पड़ी ? इस श्लोक का आशय है कि मारक ग्रह यदि कारक हो तो अपनी दशा तथा कारक के अन्तर में नहीं मारता अथवा किसी कारक ग्रह की दशा हो उससे सम्बन्ध करनेवाले दूसरे कारक से उसका सम्बन्ध न हो, प्रथम से ही उसका सम्बन्ध हो तो कभी-कभी सम्बन्धित कारक ग्रह के अन्त में तथा स्वयं की दशा में शुभ फल ही होता है ।

आपस में सम्बन्ध करके यदि निम्न मारकेश कारक भी हों तो

लग्न	त्रिकोणेश	केन्द्रेश	पाप फलद दशा	व अन्तर	मारक दशा	व अन्तर
मेष	बृ सू	शु (मा)	बृ सू	शु शु	×	
वृष	बु (मा)	श	श	बु	×	
मिथुन	शु बु	बृ (मा)	शु बु	बृ बृ	×	
कर्क	×	×	×		×	
सिंह	×	×	×		×	
कन्या	शु (मा) श (मा) श शु (मा) बु	बृ (मा) बृ (मा) बृ (मा)	 बु	 बृ	बृ शु श श	शु बृ बृ शु
तुला	×	×			×	
वृश्चिक	बृ (मा) बृ (मा) बृ (मा) मं	शु (मा) श मं शु (मा)	शु मं मं	बृ बृ शु	शु बृ श	बृ शु बृ
धनु	सू मं बृ	बु (मा)	सू मं बृ	बु बु बु	× × ×	
मकर	बु	चं (मा)	बु	चं	×	
मीन	मं चं बृ	बु (मा)	मं चं बृ	बु बु बु	× × ×	

तमोग्रही शुभारूढावसम्बन्धेन केनचित् ।
अन्तर्दशानुसारेण भवेतां योगकारकौ ॥८॥

अन्वयः—तमोग्रहो राहुकेतू यदि शुभारूढो शुभस्थानं गतो तत्साहचर्यात् तथा संबन्धरहितत्वेपि योगकारकग्रहदशायां स्वस्वान्तरदशायां तौ योगकारको भवेतामिति ॥ ८ ॥

अर्थ—राहु वा केतु यदि शुभस्थानगत हों अर्थात् लग्न, पंचम नवम में हों तो किसी योणकारी ग्रह से संबंध करते हों या नहीं तब भी योगकारी ग्रह के अन्तर में कारक फल ही देते हैं।

भाष्य—राहु केतु यदि शुभस्थानगत हों और उनके साथ कोई केन्द्रेश या त्रिकोणेश हो तो राहु स्वयं कारक हो जाता है और परस्पर दशान्तर दशा में कारक फल देता है, यह पहिले ही कहा जा चुका है। इस श्लोक का तात्पर्य है कि यदि वह कारक न भी हो, केवल त्रिकोणेश हो तो भी कारक ग्रहों के अन्तर में शुभ ही फल देता है इसी प्रकार अपनी दशा तथा कारक ग्रह के अन्तर में भी शुभ फल देता है। वह यदि केन्द्र में हो और त्रिकोणेश से सम्बन्ध न करे तो परस्पर दशान्तर दशा में अशुभ ही फल देगा जैसा कि कहा गया है कि केन्द्र और त्रिकोणपति आपस में न सम्बन्ध करने पर विपरीत फल देते हैं। इससे यह लक्षित होता है कि कारक तथा त्रिकोणेश राहु केतु शुभ हैं अन्य स्थिति में पापी। इसलिए त्रिकोणस्थान-रहित अन्यस्थ अकेला राहु या केतु शुभ नहीं है।

मिश्रफलाध्याय:

पापाः यदि दशानाथाः शुभानां तदसंयुजाम् ।
भुक्तयः पापफलदास्तत्संयुक् शुभभुक्तयः ॥ १ ॥
भवंति मिश्रफलदा भुक्तयो योगकारिणाम् ।
अत्यंतपापफलदा भवंति तदसंयुजाम् ॥ २ ॥

अन्वय:—यदि दशानाथा पापा: तदा तद् असंयुजां शुभानां भुक्तयोन्तर्दशा: पापफलदा: तत् संयुक् शुभभुक्तय: च पापफलदा:, तत् संयुक् योगकारिणाम् अन्तर्दशा मिश्रफलदा भवंति, तद् असंयुजां योगकारिणां अन्तर्दशा अत्यन्तपापफलदा भवन्ति ।

अर्थ—दशानाथ यदि पापी ग्रह (अष्टमस्थ-वर्जित अष्टमेश तथा त्रिषडायाधीश) हो तो उससे न सम्बन्ध करनेवाले शुभग्रह (त्रिकोणेश) के अन्तर में पाप फल होता है तथा उस पापी ग्रह से सम्बन्ध करने वाले शुभग्रह के अन्तर में तथा सम्बन्धकर्ता कारक ग्रह के अन्तर में तो मिश्रफल होता है अन्यथा न संबंध करने में कारक ग्रह के अन्तर में अत्यन्त पाप फल होता है ।

भाष्य—यहाँ पापग्रह से तात्पर्य है अष्टमस्थ-वर्जित अन्य अष्टमेश, त्रिषडायेश तथा पापयुत मारकेश, शुभग्रह से तात्पर्य है वह त्रिकोणेश जिसकी अपनी दूसरी राशि त्रिषडाय में न पड़ती हो । मिश्रफल से तात्पर्य है पापपुण्य-मिश्रित फल । पापी ग्रह दो प्रकार के हैं, एक वे जिनकी अपनी दूसरी राशि भी पापस्थानगत हो, दूसरे वे जो केन्द्रेश आदि हों । यदि पापी ग्रह विशुद्ध पापी हो तो उससे सम्बन्ध करने वाले शुभ ग्रह के अन्तर में पाप ही फल होगा, यदि दशानाथ पापी (शुभत्वयुक्त) हो तो उससे सम्बन्ध करने वाले शुभ-ग्रह में शुभ फल होगा । यदि पापी ग्रह किसी शुभ ग्रह से सम्बन्ध करके कारक बनता हो तो उसके अन्तर में योगज शुभ-फल होगा । यदि अन्तरेश पापी से असंबद्ध हो तो पापी की दशा में अपने अन्तर में अशुभ ही फल देगा चाहे अन्तरेश पापी हो, शुभ हो वा कारक ग्रह हो । पूर्ण पापी से तात्पर्य उस पापी ग्रह से है जो कुण्डली में कारक नहीं बन सकता ।

परमपापी, पापी, शुभ, अतिशुभ (स्वतः कारक) ग्रहों की सारणी

लग्न	परम पापी ग्रह	पापी ग्रह	शुभ ग्रह	अति शुभ ग्रह
मेष	बु	मं, श	सू, बृ	×
वृष	चं बृ	शु	बु	श
मिथुन	सू. मं	श	शु	बु
कर्क	बु	बृ, श	चं	मं
सिंह	बु	बृ शु श	सू	मं
कन्या	मं	चं, श	शु	बु
तुला	बृ	सू, शु	बु	श
वृश्चिक	बु	मं श	चं बृ	×
धनु	शु	चं, श	सू, मं	बृ
मकर	बृ	सू, मं, बु	श	शु
कुम्भ	चं	मं, शु	श	शु
मीन	सू, शु, श	×	चं, मं	बृ.

पापी ग्रहों की महादशा में उनसे सम्बंध करने वाले तथा न सम्बंध करने वाले अन्य ग्रहों के अन्तर में शुभाशुभ फल की सारणी

लग्न	क		ख		ग		घ		ङ	
	केवल पाप फल		मिश्रित पाप फल		समफल (नपाप न शुभ)		मिश्रित शुभ फल		अत्यन्त पाप फल	
	पापी– दशाधीश	असंबंधित शुभ का अन्तर	पापी+ की दशा	संबंधित शुभ का अन्तर	पापी+ की दशा	संबंधित शुभ का अन्तर	पापी+ की दशा	संबंधित शुभ का अन्तर	पापी– की दशा	असंबंधित शुभ का अन्तर
मेष	बु मं श	सू, बृ सू, बृ सू, बृ	बु बु	बृ सू	मं श	सू, बृ सू, बृ	×	×	×	×
वृष	चं ब शु	बु बु बु	च बृ	बु बु	शु	बु	चं बृ शु	श श श	चं बु शु	श श श
मिथुन	सू मं श	शु शु शु	सू मं	शु शु	श	शु	सू मं श	बु बु बु	सू मं श	बु बु बु
कर्क	बु बृ श	चं चं चं	बु	चं	बृ श	चं चं	बु बृ श	म मं मं	बु बृ श	म मं मं
सिंह	बु घ बृ शु	सू सू सू सू	बु	सू	श बृ शु	सू सू सू	बु श बृ शु	मं मं मं मं	बु श सू	मं मं मं

लग्न	क		ख		ग		घ		ङ	
	केवल पाप फल		मिश्रित पाप फल		समफल (न पाप न शुभ)		मिश्रित शुभ फल		अत्यन्त पाप फल	
	पापी—असंबद्ध		पापी+संबद्ध		पापी+संबद्ध		पापी+संबद्ध		पापी—असंबद्ध	
	दशाधीश	स्थित शुभ का अन्तर	की दशा	स्थित शुभ का अन्तर	की दशा	स्थित शुभ का अन्तर	की दशा	स्थित शुभ का अन्तर	की दशा	स्थित शुभ का अन्तर
कन्या	म	शु	म	शु	च	शु	म	बु	म	बु
	च	शु			श	शु	च	बु	चं	बु
	श	शु					श	बु	श	बु
तुला	बृ	बु	बृ	बु	सू	(बु)	(बृ)	श	बृ	श
	सू	बु			शु	बु	(सू)	श	सू	श
	शु	बु					शु	श	शु	श
वृश्चिक	बु	चं बृ	बु	च	श	च, बृ	×		×	
	श	चं बृ	बु	बृ	मं	चं, बृ				
	मं	च बृ								
धनु	शु	सू, मं	शु	सू, म	शु	(सू, म)	(शु)	बृ	शु	बृ
	श	सू, मं			च	(सू, मं)	(श)	बृ	श	बृ
	चं	सू, मं					चं	ब	च	बृ
मकर	बृ	श	बृ	श	बु	श	बृ	शु	बृ	शु
	बु	श			(म)	श	बु	शु	बु	शु
	सू	श			(सू)	श	म	शु	म	शु
	म	श					सू	शु	सू	शु
कुम्भ	च	श	च	श	म	श	च	शु	च	शु
	मं	श			बु	श	मं	शु	मं	शु
	बु	श			बृ	श	बु	शु	बु	शु
	बृ	श					बृ	शु	बृ	शु
मीन	शु	मं, च	शु	म, च	×		(शु)	बृ	शु	बृ
	सू	मं, चं	सू	म, चं			सू	बृ	सू	बृ
	श	मं, चं	श	मं, चं			श	ब	श	बृ

उपरोक्त सारणी में सभी महादशाधीश परम पापी या पापी ग्रह हैं। परमपापी ग्रह, केन्द्रत्रिकोणातिरिक्त त्रिषडायेश होते है। इनके अतिरिक्त ग्रह शुभ हैं। जो ग्रह स्वयं केन्द्र तथा त्रिकोण का स्वामी है वह स्वतः कारक ग्रह है, अति शुभ ग्रह है। परमपापी, पापी, शुभ तथा अति शुभ ग्रहों की सारणी

इस उपरोक्त सारणी के पहले दी जा चुकी है। इस सारणी में "क" कोष्टक में दिये गये अन्तरेश ग्रह दशाधीश से यदि न सम्बन्ध करें तो उनके अन्तर में केवल पापफल होता है। इसी प्रकार "ख" कोष्टक के अन्तरेश यदि तत्तत् पापी ग्रह से सम्बन्ध करें तो उक्त "ख" फल होता है। इसी प्रकार "ग" में अन्तराधीश यदि दशाधीश से सम्बन्ध करे, 'घ" में यदि अन्तराधीश दशाधीश से सम्बन्ध करे तो, "ङ" में यदि वहां पापी महादशाधीश से कारक शुभ ग्रह सम्बन्ध करें तो उक्त महादशाधीश में उक्त ग्रह के अन्तर में अत्यन्त पाप फल होता है। ऊपर संकेत – (ऋण) से अर्थ है "यदि सम्बन्ध न हो", + (धन) से तात्पर्य है यदि सम्बन्ध हो। सम्बन्ध का अर्थ परस्पर सम्बन्ध से है। महादशा तथा दशा इन दोनों का यहाँ अर्थ एक ही है। अन्तर का अर्थ महादशाधीश में उक्त ग्रह की अन्तर्दशा।। (खड़ी पाई) का अर्थ है अन्तर तथा बु। सू= बुध की महादशा में सूर्य का अन्तर। जिस ग्रह के नीचे रेखा है वह ग्रह मारकेश भी है। वहाँ फल में अन्तर पड़ जाएगा।

राहु तथा केतु के विषय में पहिले कहा जा चुका है कि वे जिस भाव में रहते हैं और जिस भावाधीश से स्थान-सम्बन्ध करते हैं उनका तद् रूप फल होता है। इस दृष्टि से यहाँ राहु केतु यदि त्रिषडाय में हों तो वे भी पापी होंगे। इनका फल भी उपरोक्त सारणी के आधार पर करना चाहिए। यहाँ तथा सर्वत्र राहु केतु से सम्बन्ध करने वाले ग्रह से तात्पर्य उनके साथ बैठने वाले ग्रहों से है, दूसरे प्रकार का सम्बन्ध उनके लिए कहीं भी अभीष्ट नहीं है। राहु यदि नवमस्थ हो तो तृतीयस्थ केतु से दृष्ट होने पर उसके शुभत्व में अन्तर नहीं होगा।

उपरोक्त श्लोकानुसार--राहु केतु यदि त्रिषडायस्थ और उसके साथ कोई ग्रह न हो तो ऐसी दशा में पापी ग्रह के अन्तर में पाप, शुभ के अन्तर में सम-पाप, कारक ग्रह के अन्तर में अति पाप फल देगा। राहु केतु यदि केन्द्रस्थ अकेला हो तो पापी के अन्तर में पाप, शुभ के अन्तर में सम पाप, योगकारी के अन्तर में भी पाप फल देगा। राहु केतु यदि सप्तमस्थ या द्वितीयस्थ हो तो वह मारक मारकेश होता है या नहीं वह द्विविधाजनक है। ऐसी दशा में उसकी मारकेश संज्ञा तो हो जावेगी पर केन्द्राधिपत्य दोष उसे नहीं लगने के कारण कदाचिद् मारक नहीं बन पाता प्रत्युत द्वितीयस्थ द्वादशस्थ या अष्टमस्थ होकर या त्रिषडायस्थ होकर यदि मारकेश के साथ हो तो स्वय

मारक हो सकता है। सर्व प्रकार से विचार करने पर अकेले राहु और केतु की दशा का फल आंकना कठिन है इसलिए राहु केतु के विषय में एक पृथक् सारणी दी जाती है जिसमें संभावित फल ही दिया गया है :—

लग्न	त्रिषडायअष्टमगत राहु केतु	मिश्रित समफल साथ मे बैठने वाले शुभ ग्रह का	मिश्रित शुभफल साथमे बैठने वाले कारक ग्रह का
	दशा	अन्तर	अन्तर
मेष	रा. के.	गु. सू	×
वृष	रा, के.	बु	श
मिथुन	रा. के.	शु	बु
कर्क	रा. के.	च	मं
सिंह	रा. के.	सू	मं
कन्या	रा. के.	शु	बु
तुला	रा. के.	बु	श
वृश्चिक	रा. के.	चं गु	×
धन	रा. के.	सू मं	बृ
मकर	रा. के.	श	शु
कुम्भ	रा. के.	श	शु
मीन	रा. के.	मं चं	वृ

अन्य परिस्थितियों में पाप फल ही संभावित है अर्थात् पाप स्थानगत राहु केतु साथ न बैठने वाले शुभ ग्रह के अन्तर में पाप फल होता है, पाप के अन्तर में तो पाप फल होता ही है।

सत्यपि स्वेन सम्बन्धे न हन्ति शुभभुक्तिषु ।
हन्ति सत्यप्यसम्बन्धे मारकः पापभुक्तिषु ॥ ३ ॥

अन्वयः—सति अपि सम्बन्धे शुभभुक्तिषु न हन्ति, सति अपि असम्बन्धे पापभुक्तिषु हन्ति ।

अर्थ—मारकेश अपनी दशा में अपने से सम्बन्ध करनेवाले ग्रह के अन्तर में नहीं मारता प्रत्युत अपने से न सम्बन्ध करने वाले पापी ग्रह के अन्तर में मारता है ।

भाष्य—मारकेश अपने सम्बन्धी शुभ-ग्रह के अन्तर में नहीं मारता । इससे यह प्रतिभासित होता है कि अपने से न सम्बन्ध करने वाले शुभ ग्रह में मिश्र फल देता है और अपने से न सम्बन्ध करने वाले पाप ग्रह के अन्तर में ही मारता है और सम्बन्ध करने वाले पापी ग्रह के अन्तर में संदिग्ध मारक होता है । मारकेश दो प्रकार के हैं । एक केन्द्रेश (सप्तमेश) दूसरा द्वितीयेश । कोई सप्तमेश सिवाय शनि के त्रिषडायाधीश नहीं है । शनि मारकेश नहीं है इसलिए कहा जा सकता है कि सप्तमेश-मारकेश पापी नहीं है । कोई सप्तमेश, त्रिकोणेश भी नहीं हो सकता इसलिए स्वयं शुभ भी नहीं है । अब यदि सप्तमेश (केन्द्रेश) किसी शुभ ग्रह (त्रिकोणपति) से सम्बन्ध न करे तो कारक नहीं हो सकता । ऐसी दशा में उसमें त्रिकोणेश का अन्तर पाप-फलद ही होता है यथा "स्वदशायां त्रिकोणेशभुक्तौ केन्द्रपतिः शुभं । दिशेत् सोऽपि यथा नो चेत् असम्बन्धेन पापकृत्" । रही बात द्वितीयेश की । सिंह और कुम्भ कुण्डलियों में क्रम से बुध और बृहस्पति एकादशेश होकर पापी हैं । "पापाः यदि दशानाथाः" इस पिछले श्लोकानुसार इन दोनों पापी ग्रहों में इनसे न सम्बन्ध करने वाले शुभ (त्रिकोणेश) के अन्तर में पाप ही फल होता है । वृष, कन्या, वृश्चिक, मकर इन कुण्डलियों में द्वितीयेश क्रम से बुध, शुक्र, बृहस्पति तथा शनि त्रिकोणेश हैं इसलिए शुभ हैं (शनि मारकेश नहीं है) ये यदि किसी शुभ ग्रह से न सम्बन्ध करें तो स्वयं शुभ होते हुए मारक प्रसंग में तो अपने से असंबद्ध शुभग्रह के अन्तर में अरिष्टप्रद होंगे ही क्यों कि द्वितीयेश और द्वादशेशों का शुभत्व और पापत्व विशेषतया शुभ या पापी ग्रहों के साहचर्य से उनके अन्तर में होता है । असम्बद्ध शुभ ग्रह का अन्तर मारक न होकर मिश्रफलद होता है । ऐसा आशय

है। मेष-कुण्डली में द्वितीयेश शुक्र सप्तमेश भी है। यह भी अपने से असम्बद्ध शुभ ग्रह के अन्तर में शुभ फल नहीं दे सकता। तुला, धनु, मीन के द्वितीयेश क्रूर ग्रह होने के नाते मारकेश ही नहीं माने गये हैं। अस्तु, कोई भी मारकेश अपने से न सम्बन्ध करने वाले शुभ ग्रह के अन्तर में यदि मारता नहीं तो शुभ फल भी नहीं देता। जब कोई शुभ ग्रह मारकेश से न सम्बन्ध करने पर मारकेश के अंतर में शुभ फल नहीं देता तो मारकेश से न संबंध करने वाले पापी ग्रह में तो मार ही देगा।

पापी ग्रह दो प्रकार के हैं। एक जो केवल त्रिषडायाधीश या अष्टमेश (अष्टमस्थ-वर्जित) हैं, दूसरे वे जिनकी दूसरी राशि केन्द्र या त्रिकोण में पड़े। इसी प्रकार मारकेश भी पापी व शुभ हैं। सो यदि सप्तमेश-मारकेश का संबंध किसी ऐसे त्रिषडायाधीश या अष्टमेश से हो जो त्रिकोणपति भी हो तो उसके अंतर में मिश्रफल होगा। यदि सप्तमेश-मारकेश का सम्बन्ध केवल पापी से हो तो पापी के अन्तर में अरिष्ट फल होगा ही जो मिश्र ढंग का होगा, मारक भी हो सकता है। इसी प्रकार द्वितीयेश यदि त्रिकोणेश हो और उससे न सम्बन्ध करने वाला पापी ग्रह केन्द्रेश हो तो योगज फल शुभ होना चाहिए, पर इस श्लोक के अनुसार "आरम्भो हि राजयोगस्य भवेन्मारकभुक्तिषु" मारकेश की दशा में सम्बन्धित पापी (परन्तु कारक) ग्रह के अन्तर में योगज फल प्रायः अशुभ ही होता है। मारक ग्रह की दशा में उससे असम्बंधित पाप ग्रह के अंतर में शुभत्व की तो गुंजायश ही नहीं है इसलिए उसके अंतर में मारकेश मार ही देता है।

इस ग्रंथ की संज्ञाओं के अनुसार निम्नलिखित मारकेशों तथा शुभ अशुभ ग्रहों की सूची में दिये गये मारकेशों का तत्संबंधी शुभ तथा पाप ग्रहों का अंतर तथा न संबंध होने पर उनका अन्तर कैसा फल देगा उसकी स्थिति निम्नलिखित अमारक, मारक, मिश्रफल के रूप में होगी और फल संभावित मारक या अमारक होगा। मिश्रफल में आरम्भ में शुभ उपरांत अरिष्टप्रद होना संभव है।

मारकेश तथा शुभ अशुभ ग्रहों की सूची:-

लग्न	१ सप्तमे (केंद्र.) मारके.	२ (केंद्रे) द्वि. ये मारके	३ द्वि. ये. त्रि.अ. मारके.	४ द्वि.ये. त्रि.अ. मारके	५ शु. प्र. त्रिकोणेश	६ कारक ग्रह	७ केवल त्रि.ये. पर.पा.	८ त्रिषडायेश पापी ग्रह	९ केवल द्वि.ये. मारके.
मेष	शु	शु	×	×	बृ.सू.	×	बु	म श	×
वृष	मं	×	बु	×	बु	श	चं. बृ	शु	×
मिथुन	बृ	×	×	×	शु	बु	सू. मं	श	चं
कर्क	श	×	×	×	चं	मं	बु	बृ. श	सू
सिंह	श	×	×	बु	सू	मं	बु	श. बृ. शु	×
कन्या	बृ	×	शु	×	शु	बु	मं	चं श	×
तुला	मं	मं	×	×	बु	श	बृ	सू. शु	×
वृश्चिक	शु	×	बृ	×	बृ. चं	×	बु	श. मं	×
धनु	बु	×	×	श	सू. मं	बृ	शु	श. च	×
मकर	चं	श	×	×	श	शु	बृ	बु. मं .सू	×
कुम्भ	सू	×	×	बृ	श	शु	चं	मं शु	×
मीन	बु	×	मं	×	मं चं	बृ	शु.सू.श		×

कोष्टक के ग्रह

(क) १+५ } अमारक,
१+६ } शुभ

(ख) २+५ } अमारक,
२+६ } शुभ

(ग) ३+५ } अमारक
३+६ }

(घ) ४+५ } मिश्रफल
४+६ } अमारक

कोष्टक के ग्रह

(ङ) १+८ } अमारक
२+८ } मिश्रफल

(ट) १+७ } मारक
२+७ }

(ठ) ४+७ } निश्चय से
४+८ } मारक

(च) १+५ } मिश्रफल
१+६ }

कोष्टक के ग्रह

(छ) २–५ } मिश्रफल
२–६ }

(ज) १–७ } मारक
१–८ }

(झ) २–७ } मारक
२–८ }

(ञ) ४–७ } मारक
४–८ }

+ = सम्बन्धी – = असंबन्धी

मारकेशों में मारक, अमारक, अरिष्टप्रद ग्रहों के अन्तर की सारणी

	१+५ २+५		३+५ ३+		४+ ४+६		१+८ २+८		१—५ १—६		२—५ २—६		१—७ १—८		२—७ २—८		४—७ ४—८		१+७ २+७		४+७ ४+८		१+५ २+६		३+७	
	अमारक		अमार.		मिश्रफ.		मिश्रफल		मिश्रफल		मिश्रफल		मारक		मारक		मारक		मारक		मारक		अमार		मारक	
लग्न	क, ख		ग		घ		ङ		च		छ		ज		झ		ञ		ट		ठ		ड		ढ	
	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं
मेष	शु शु	बृ सू	×		×		शु शु	मं श	शु शु	बृ सू	शु शु	बृ सू	शु शु शु	बृ मं श	शु शु शु	बु मं श	×		शु	शु	×					
वृष	मं मं	बु श	बु बु	बु श	×		मं	शु	मं मं	बु श	×		मं (मं	बृ शु)	×		×		मं	बृ	×				बु बु	चं बृ
मिथुन	बृ बृ	शु बु	×		×		बृ	श	बृ बृ	शु बु	×		बृ बृ बृ	सू मं श	×		×		बृ बृ	सू म	×		चं च	शु बृ		
कर्क	सू सू	चं मं																								

	१+५ २+५		३+५ ३+६		४+५ ४+६		१+८ २+८		१—५ १—६		२—५ २—६		१—७ १—८		२—७ २—८		४—७ ४—८		१+७ २+७		४+७ ४+८		२+५ १+६		३+७	
	अमारक		अमार		मिश्रफ		मिश्रफल		मिश्रफल		मिश्रफल		मारक		मारक		मारक		मारक		मारक		अमार.		मारक	
लग्न	क, ख		ग		घ		ङ		च		छ		ज		झ		ञ		ट		ठ		ड		ढ	
	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं
सिंह																	बु बु बु बु बु	चं बु श बृ शु			बु बु बु बु	बु श बृ शु				
कन्या	बृ बृ	शु बु	शु शु	श बृ	×		बृ बृ	चं श	बृ बृ	शु बु	×		बृ बृ बृ	मं चं श	×		×		बृ	मं	×				शु	मं
तुला	मं मं	बु श	×		×		मं मं	सू शु	मं मं	बु श	मं मं	बु श	मं मं	बृ सू	मं मं	बृ सू	×		मं मं	बृ बृ	×		मंगलकी दशा मारकेश नहीं, अंतर अरिष्टप्रद मारक नहीं			
वृश्चिक	शु शु	बृ चं	बृ बृ	बृ चं	×		शु शु	श चं	शु शु	बृ चं	×		शु	बु	×		×		शु	बु	×		×		बृ	बु

१+६ २+६	१+५ २+५		३+५ ३+६		४+५ ४+६		१+८ २+८		१—५ १—६		२—५ २—६		१—७ १—८		२—७ २—८		४—७ ४—८		१+७ २+७		४+७ ४+८		९+५ ९+६		३+७	
	अमारक		अमार.		मिश्रफ		मिश्रफल		मिश्रफल		मिश्रफल		मारक		मारक		मारक		मारक		मारक		अमार.		मारक	
लग्न	क, ख		ग		घ		ङ		च		छ		ज		झ		ञ		ट		ठ		ड		ढ	
	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं	द	अं
धनु	बु बु बु	सू मं बृ	×		श श श	सू मं बृ	बु बु	श चं	बु बु बु	सू मं बृ	×		बु बु बु	शु श चं	×		श श श	शु श चं	बु	शु	श श श	शु श चं				
मकर	चं चं श श	श शु श शु	×		×		चं चं चं श श चं	बु मं सू बु मं मं	चं चं	श शु	श श	श श	चं चं चं चं	बृ बु मं सू	श श श श	बृ बृ मं सू	×		चं श	बृ बृ	×					
कुम्भ	सू सू	श शु	×		×		सू सू	म शु	सू सू	श शु	×		सू सू सू	चं मं शु	×		बृ बृ बृ	चं मं शु	सू	चं	बृ बृ बृ	चं मं शु				
मीन	बु बु बु	मं चं बृ	मं मं मं	मं चं बृ	×		×		बु बु बु	मं चं बृ	×		बु बु बु	शु सू श	×		×		बु बु बु	शु सू श	×					

उपरोक्त सारणी में मारकेश दशा में शुभ तथा पापी ग्रहों के अन्तर का फल दिया गया है जैसा उनके अन्तर में होता है। जो ऊपर संख्या १, २ आदि है वह इस सारणी में उपरोक्त सारणी के मारकेश शुभ ग्रहों की सूची में दी गई संख्या है। + का अर्थ है मारकेश से सम्बन्ध करने वाला अन्तरेश, —का अर्थ उस ग्रह से है जो दशाधीश से सम्बन्ध न करे। द=महादशाधीश, अ=अन्तरेश, अमारक और मिश्रित फल का अर्थ है कि ऐसे योगों में मारकेश की दशा में तत्तद् अन्तरेश मारता नहीं, फल शुभ हो सकता है पर आयु-प्रसङ्ग में अरिष्ट प्रद होगा। क्रूर ग्रह सूर्य, मंगल, शनि मारकेश नहीं हैं, इसलिए मारक के अन्तर में वे अरिष्ट मात्र हो सकते हैं। मारकस्थानस्थित राहु व केतु की दशा में शुभाशुभ ग्रहों के अन्तर में वैसा ही फल होता है जैसे अन्य मारकेश की दशा में होता है। उसका मारक फल बृहस्पति, शुक्र जैसा होगा या बुध, चन्द्र सा इसका इस ग्रन्थ में कोई उल्लेख नहीं है।

परस्परदशायां स्वभुक्तौ सूर्यजभार्गवौ।
व्यत्ययेन विशेषेण प्रदिशेतां शुभाशुभम् ॥ ४ ॥

अन्वयः—सूर्यज (शनि) भार्गवौ (शुक्र) परस्परदशायां स्वभुक्तौ व्यत्ययेन विशेषेण शुभाशुभं प्रदिशेताम् ॥ ४ ॥

अर्थ—शनि और शुक्र ये दोनों परस्पर दशा में अपने अन्तर में शुभ अशुभ फल देते हैं अर्थात् शनि अपना शुभाशुभ फल शुक्र की दशा अपने (शनि के) अन्तर में तथा शुक्र अपना शुभाशुभ फल शनि की दशा अपने (शुक्र के) अन्तर में देते हैं।

भाष्य—इस ग्रन्थ के अबतक के श्लोकों के अनुसार शुक्र शनि यदि आपस में सम्बन्ध कर कारक बनते हों तो योगज फल शुक्र की दशा शनि के अन्तर में तथा शनि की दशा शुक्र के अन्तर में होना चाहिए। इस बात से उपरोक्त श्लोक में कोई विरोध नहीं पर श्लोक में 'व्यत्ययेन विशेषेण' वाक्य से बोध होता है कि जहाँ साधारणतया शुक्र का फल शुक्र की दशा और शनि के अन्तर में होना चाहिए वहाँ वैसा न होकर इसका उल्टा होता है। यह अवस्था इस प्रकार आती है :—

शुक्र शनि यदि आपस में न सम्बन्ध करें तो "आत्मसम्बन्धिनो ये च ये वा निजसधर्मिणः। तेषामन्तर्दशास्वेव दिशंति स्वदशाफलम्" इस श्लोका-नुसार शुक्र का अपना निज शुभ-अशुभ फल शुक्र की दशा शनि के अन्तर

में होना चाहिए क्योंकि शुक्र व शनि दोनों परस्पर आत्मसम्बन्धी [परस्पर मित्र] हैं; इसी प्रकार शनि का शुभाशुभ फल शनि की दशा शुक्र के अन्तर में होना चाहिए, पर उपरोक्त श्लोक इसका अपवाद है। ऐसा न होकर शुक्र के अन्तर में तथा शनि का फल शुक्र की दशा के अन्तर में उल्टे प्रकार से देता है। यह इन दोनों ग्रहों के बारे में विशेष बात है।

"मारकैस्सह सम्बन्धात् निर्हन्ता पापकृत् शनिः" इस श्लोकानुसार यदि पापी शनि, मारकेश शुक्र से सम्बन्ध करे तो बजाय शुक्र के शनि निहन्ता हो जाता है और मारकफल शनि में होता है। यहाँ मारकफल स्वयं उल्टा होने के कारण उपरोक्त श्लोक "परस्परदशायां" इसका उदाहरण हो गया है।

पापी शनि यदि किसी अन्य मारकेश से सम्बन्ध करे तो वह मारकेश अमारक हो जाता है और उसके स्थान पर शनि ही मारकेश हो जाता है, यह पहिले लिखा जा चुका है। अब यदि मारक (पापी) शनि बृहस्पति या बुध या चन्द्र के साथ सम्बन्ध करके शुक्र से भी सम्बन्ध करे तो शनि का मारकत्व तब शनि की दशा में न होकर शनि दृष्ट शुक्र की दशा शनि के अन्तर में होगा।

सारांश यह है कि शनि, शुक्र आपस में सम्बन्ध न करें तो परस्पर दशा में अपना निजफल देते हैं और मारक-प्रसङ्ग में निहन्ता शनि का सम्बन्ध शुक्र से हो और शुक्र का शनि से न हो तो शनि का मारकफल शुक्र की दशा शनि के अन्तर में होगा, ऐसा लेखक का मत है। परस्पर सम्बन्ध होने से योगज-फल परस्पर दशान्तर में होता ही है।

कर्मलग्नाधिनेतारावन्योन्याश्रयसंस्थितौ ।
राजयोगाविति प्रोक्तं विख्यातो विजयी भवेत् ॥५॥
धर्मकर्माधिनेतारावन्योन्याश्रयसंस्थितौ ।
राजयोगाविति प्रोक्तं विख्यातो विजयी भवेत् ॥६॥

अन्वयः—कर्मलग्नाधिनेतारौ अन्योन्याश्रयसंस्थितौ (तदा) राजयोगौ इति प्रोक्तं (तथा सति जातः) विख्यातः विजयी (च) भवेत्। धर्मकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयसंस्थितौ राजयोगौ भवतः इति प्रोक्तम् (तस्मिन् योगे जातः) विख्यातः विजयी च भवेत् ॥

भाष्यः—दशमेश-लग्नेश ये यदि परस्पर स्थानगत हों अर्थात् दशमेश लग्न में तथा लग्नेश दशम में हो तो इसे राजयोग कहते हैं। इसी प्रकार नवमेश यदि दशम में तथा दशमेश नवम में हो तो इसे भी राजयोग कहते हैं। इस

योग में उत्पन्न होने वाला जातक विख्यात तथा विजयी होता है तथा ऐसे योगकारी ग्रहों की परस्पर दशान्तर में जातक विजयी तथा प्रसिद्ध होता है। दशा में विख्यात होना अधिक तर्क-संगत है क्योंकि पहिले कहा जा चुका है कि 'आरम्भो राजयोगस्य' इस श्लोक के अनुसार राजयोग कारक कुण्डली के जातक को जब उस कारक की दशा आवे और उसमें सम्बन्धित मारक का अन्तर हो तो राजसुख देकर वह उपरान्त मारक हो जाता है। इस ग्रन्थ के राजयोगाध्याय (कारकाध्याय) के प्रथम श्लोक 'केन्द्रत्रिकोणपतय: सम्बन्धेन परस्परं। इतरैरप्रसक्ताश्चेद् विशेषफलदायका:' तथा द्वितीय श्लोक 'केन्द्र-त्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयं। सम्बन्धमात्राद्बलिनौ भवेतां योगकारकौ' में केन्द्र तथा त्रिकोणपति के परस्पर सम्बन्ध से कारकयोग की व्याख्या की जा चुकी है। अब उपरोक्त दो श्लोकों में उत्कृष्ट कारकयोग की व्याख्या उदाहरण रूप में दी गई है।

लग्न, केन्द्र के अतिरिक्त त्रिकोण का भी आद्यस्थान है इसलिए केन्द्र के आद्यस्थान के साथ-साथ वह त्रिकोण का भी आद्यस्थान होने से स्वयं कारक स्थान है उससे यदि दशमेश का सम्बन्ध हो तो कारकत्व की दृष्टि से यह बली योग है। 'निवसेतां व्यत्ययेन तावुभौ धर्म्मकर्मणो:' इस श्लोक से केन्द्रेश त्रिकोणेश का परस्पर स्थान में होना योगों में प्रथम श्रेणी का योग है इसलिए लग्नेश-दशमेश अथवा दशमेश-नवमेश का परस्पर स्थान में होना सर्वाधिक शुभ योग है। इसे राजयोग की संज्ञा दी गई है। नवमेश-लग्नेश यदि परस्पर स्थान में हों तो यह भी उत्तम कारक (शुभ) योग है पर चूंकि लग्न की प्रधानता त्रिकोण-स्थान होने में है इसलिए लग्नेश-नवमेश का योग कारक होते हुए भी राज योग संज्ञक नहीं है। वृष-लग्न-कुण्डली में शनि नवमेश-दशमेश स्वयं है, मीन-लग्न कुण्डली में लग्नेश-दशमेश स्वयं बृहस्पति है यदि अपने-अपने कुण्डली में लग्नस्थ या दशमस्थ हों तो स्वयं राजयोग कारक होंगे, इसी प्रकार कन्या कुण्डली में नवमस्थ या दशमस्थ बुध राजयोग कारक है। यदि ये लग्न या दशम में दशम या नवम में न बैठे तो वह कुण्डली राजयोग की न होगी क्योंकि यह सम्भव नहीं कि सभी वृष, कन्या तथा मीन कुण्डली वाले विख्यात और विजयी होंगे। राजयोग कारक कुण्डली वाला जातक राजयोग कारक ग्रहों की दशा में विख्यात और विजयी तो होगा ही, दशा न प्राप्त होने पर भी राजयोग कुण्डली का जातक जन्मज उच्च-श्रेणी का होता है ऐसा प्रतीत होता है। ● ●

परिशिष्ट "क"

विंशोत्तरी दशाधीश क्रम का उनकी नक्षत्र कक्षा से सम्बन्ध

ORDER OF PLAKETORY ORBITS IN SOLAR SYSTEN & ITS APPLICATION IN ViMSAOTTARI HORARY ASTOLOGY

चन्द्रनक्षत्रदशा में विंशोत्तरीदशा-पद्धति प्रसिद्ध है। पूरे भचक्र में २७ नक्षत्रों में नव नक्षत्रों की एक आवृत्ति १२० वर्ष की होती है। उन १२० वर्षों में सब ग्रहों की दशा भुगत जाती है। दशा का आरम्भ नक्षत्र से माना जाता है। क्रम से कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी के स्वामी सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु, शुक्र होते हैं। इसके उपरान्त नक्षत्रों की द्वितीय आवृत्ति उत्तराफाल्गुनी से आरम्भ होकर पूर्वाषाढ़ में समाप्ति होती है, जिसके स्वामी पुनः क्रम से सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि होते हैं। इसी प्रकार तृतीय आवृत्ति में दशा उत्तराषाढ़ से आरंभ होकर भरणी में समाप्त हो जाती है जिसके स्वामी उसी क्रम से सूर्य, चन्द्र आदि होते हैं। इस तरह जिस नक्षत्र का जो स्वामी होता है उसी नक्षत्र से दसवें दसवें नक्षत्र का वह पुनः स्वामी हो जाता है। विंशोत्तरी में नक्षत्र स्वामियों के दशा-वर्ष इस प्रकार नियत किये गये हैं।

सूर्य ६ वर्ष, चन्द्र १०, मंगल ७, राहु १८, बृहस्पति १६, शनि १९, बुध १७, केतु ७, तथा शुक्र के २० वर्ष हैं, जिसका योग १२० वर्ष होता है। इसकी तीन आवृत्ति में १२०+१२०+१२०=३६० वर्ष होते हैं। यह ३६० वर्ष चन्द्रमा के अपने पूरे नक्षत्रों के एक भचक्र का मान है। एक भचक्र ३६० अंशों का होता है इसलिए चन्द्रमा जब अपने मार्ग में १° चल लेता है तो विंशोत्तरी दशा का १ वर्ष पूरा होता है। यह वर्ष निरयन सौर-वर्ष है। चन्द्र जब १३° २०' (अर्थात् एक नक्षत्र) चल लेता है तो दशा में उसके १३ वर्ष, ०४ मा. लगते हैं पर विंशोत्तरीदशा-क्रम में प्रत्येक नक्षत्र-स्वामी की दशा का मान

भिन्न-भिन्न है पर अन्त में सब का योग १२० वर्ष तथा तीन आवृत्ति का ३६० वर्ष आता है। प्रत्येक १२० सौर-वर्ष के अन्त में सूर्य तथा चन्द्रमा पुनः अपने-अपने नक्षत्र में आ जाते हैं जिससे १२० वर्ष के अन्त की चन्द्रतिथि दशारम्भ के समय की चन्द्र-तिथि से मिल जाती है।

एक निरयन सौर वर्ष में मध्यम मान से ३७१.०२ तिथियां होती हैं। सूर्य तथा चन्द्र की आपस की अंशात्मक दूरी तिथि है। १२० निरयन सौर-वर्ष में ४४५२० तिथियां हो जाती हैं जो पूरे-पूरे १४८४ चान्द्र-मास हैं अर्थात् १२० सौर निरयन वर्ष बीतने पर सूर्य तथा चन्द्रमा आरम्भ से चलकर दोनों पुनः उसी स्थान पर पहुँच जाते हैं।

अब विचारणीय है कि विंशोत्तरी-दशा-क्रम में नव ग्रहों का क्रम सूर्य, चंद्र, मंगल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु, शुक्र ही क्यों है? सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र-शनिवार क्रम क्यों नहीं?

इस पद्धति में तथा समस्त भारतीय फलित-ज्योतिष में राहु तथा केतु को ग्रह माना है जो वस्तुतः ग्रह-श्रेणी में नहीं हैं। ग्रह सौर-मंडल का वह पिण्ड है जो सूर्य की परिक्रमा करता हो। चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ पृथ्वी के साथ-साथ सूर्य की भी परिक्रमा करता है इसलिए उपग्रह होते हुए भी वह ग्रह है। सूर्य स्थिर है तथा ग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं इसलिए सूर्य ग्रह नहीं है। पृथ्वी उसकी परिक्रमा कर रही है इसलिए पृथ्वी एक ग्रह है। चूंकि पृथ्वी जिस मार्ग से सूर्य की परिक्रमा कर रही है (Orbit) इसी के नक्षत्रीय विस्तार (Ecliptic) क्रांतिवृत्त में सूर्य चलता दिखाई देता है जो वस्तुतः (पृथ्वी की ही गति है) इसलिए पृथ्वी के स्थान पर फलित में सूर्य को एक ग्रह माना है। राहु तथा केतु ये दोनों कल्पित ग्रह हैं। कल्पित ग्रह इस लिए हैं कि वे पार्थिव हैं (ठोस नहीं हैं) पर आकाश में उनका स्थान तो है ही। राहु तथा केतु, पृथ्वी तथा चन्द्र इन दोनों के कक्षावृत्तों का संपातस्थान है। जिस प्रकार पृथ्वी की कक्षा (क्रांतिवृत्त) तथा पृथ्वी के विषुव-वृत्त का संपात-स्थान आयन है उसी प्रकार चन्द्र तथा पृथ्वी के कक्षावृत्तों का संपात् राहु, केतु हैं। जिस संपात्-स्थान से चन्द्रमा क्रांतिवृत्त से उत्तर गमन करता है वह संपात् राहु तथा दक्षिण वाला केतु है। जिस तरह नक्षत्र-मंडल में क्रान्तिवृत्त की ५०·२६" प्रतिवर्ष की विलोम-गति है उसी प्रकार राहु तथा केतु संपात् की क्रांतिवृत्त में विलोमतः १८°-४२ प्रति सौर वर्ष की गति है। यह संपात् लगभग १९ वर्षों में पुनः संपात्-स्थान पर लौट आता है। इस

संपात् पर जब-जब चन्द्रमा सूर्य के साथ आता है तब-तब ग्रहण लगता है। विंशोत्तरी दशा में राहु का स्थान मंगल-कक्षा के बाद तथा केतु का शुक्र-कक्षा के बाद नियत किया गया है लेखक के मत से विंशोत्तरी नक्षत्र,दशाधीशों का दशाक्रम (सिवाय राहु और केतु के) उनके सौर-मण्डल के कक्षाक्रम के अनुसार है अर्थात् जिस ग्रह की कक्षा सूर्य से जिस क्रम से एक के बाद एक के बाद एक पड़ती है उसी क्रम से दशा चलती है। वह क्रम इस प्रकार है।

सू

⁝ ⁝ ⁝ ⁝ ⁝ ⁝ ⁝ ⁝

सू बु शु पृ चं मं बृ श

अब इस क्रम में पृथ्वी-कक्षा को यदि सूर्य की कक्षा मानें तो कक्षा का क्रम इस प्रकार होगा। बुध, शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बृहस्पति तथा शनि। चूंकि फलित में राहु की सीमा कक्षा मङ्गल के उपरान्त तथा केतु की सीमा शुक्र के पूर्व सूर्य की ओर मानी गई है इसलिए राहु केतु सहित ग्रह-कक्षाओं का क्रम इस प्रकार होगा। बुध, केतु, शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, राहु, बृहस्पति तथा शनि। इस कक्षाक्रम में सूर्य से कक्षाओं की दूरी इस प्रकार है। सूर्य तथा पृथ्वी की कक्षा (orbit) की दूरी को यदि माप में १ संख्या नियत की जावे तो सूर्य से बुध की कक्षा की दूरी ०·३८७ : शुक्र की ०·७२३, पृथ्वी की १·००, मङ्गल की १·५२३, बृहस्पति की ५·२०२, शनि की ९·५३९ दूरी क्रम से एक के उपरान्त दूसरे की आती है। इन नवग्रहों की कक्षाओं के अतिरिक्त आकाश में कई अन्य ग्रहों की कक्षा है। शनि के बाद यूरेनस, यूरेनस के बाद नेपच्यून, नेपच्यून के बाद प्लूटो ग्रहों की कक्षा है। मङ्गल तथा बृहस्पति के बीच दो अवान्तर ग्रहों की भी कक्षा है। पर ये दोनों छितरे-बितरे ग्रह हैं। यूरेनस ग्रह का पता पाश्चात्य विद्वान् ज्योतिषी श्री हार्शेल महोदय को ता० १३ मार्च सन् १७८१ को लगा था। इस ग्रह की कक्षा का धरातल क्रांतिवृत्त की धरातल से केवल ०·४६ कोणात्मक है अर्थात् पृथ्वी-मार्ग से इसका सूर्य-प्रदक्षिणा-मार्ग ०·४० कोणात्मक है तथा दोनों का धरातल आस-पास में हैं पर इसके (orbit) की सूर्य से दूरी पृथ्वी की दूरी से १९·१८ गुणा अधिक है अर्थात् पृथ्वी से शनि की कक्षा जितनी दूरी पर है उससे द्विगुण दूरी से भी अधिक दूरी यूरेनस की है। इस ग्रह का सूर्य की एक प्रदक्षिणा का काल ३०६८६·८२ सौर दिवस है (लगभग ८४ वर्ष) जिससे वह नक्षत्रों में लगभग ४ १५° प्रति वर्ष चलता है।

नेपच्यून ग्रह का पता एक फ्रांसिसी राजज्योतिषी ने २३ सितम्बर सन् १८४६ में लगाया था। इस ग्रह की कक्षा का धरातल क्रान्तिवृत्त के धरातल पर १°.४७'.०२" कोणात्मक है। सूर्य से इसकी कक्षा की दूरी पृथ्वी की दूरी से ३०°०५ गुना दूर है अर्थात् पृथ्वी से जितनी दूरी पर शनि ग्रह है उससे आगे नेपच्यून लगभग ६ गुना और दूरी पर है। इसका एक सूर्य परिक्रमा-काल ६०१८१·४१ दिवस वा १६४·७८ सौर वर्ष है।

प्लूटो ग्रह का पता गणितज्ञ श्री सी० डब्ल्यू० दांव ने ता० २३ जनवरी सन् १९३० में लगाया था। इस ग्रह की कक्षा का धरातल क्रांतिवृत्त के धरातल से १७° का कोणात्मक है। इसके सूर्य की परिक्रमा का समय २४८ वर्ष है।

उपरोक्त तीन ग्रहों में से यूरेनस, नेपच्यून के मार्ग नक्षत्र-मण्डल में क्रांतिवृत्त के आस-पास हैं इसलिए ये क्रांतिवृत्त के उत्तर-दक्षिण की १६° चौड़ी सड़क के भीतर आ जाते हैं पर प्लूटो नक्षत्र-मण्डल में इस निर्धारित सड़क से बहुत दूर उसके मध्यभाग से उत्तर-दक्षिण १७° दूरी पर पड़ जाता है जब कि सड़क की मध्यरेखा (क्रांतिवृत्त) से बुध का मार्ग अधिक से अधिक ७°०'८" दूर एक छोर पर पड़ता है। यदि इस प्लूटो ग्रह को फलित-ज्योतिष के नक्षत्र मण्डल की सीमा में ले लिया जावे तो राशियों की क्रान्तिवृत्त से उत्तर-दक्षिण की सीमा बहुत बड़ी हो जावेगी और इस समय के जो राशियों के स्वरूप उसमें हैं उनका वैसा स्वरूप न रह जावेगा जैसा अब है। इसलिए प्लूटो ग्रह का नक्षत्र-गमन का फल अन्य ग्रहों के नक्षत्र-गमन की सीमा में नहीं लाया जा सकेगा, जिसका दूसरा यह अर्थ होगा कि निरयन राशि-मान में इस ग्रह के कारण परिवर्त्तन करना पड़ेगा। इसलिए इस ग्रह को निरयनफलित में सम्मिलित करना निरयन नक्षत्र-मण्डल फलादेश के प्रभाव से परे है। इसके अतिरिक्त प्लूटो का राशि-गमन काल भी अति दीर्घकाल है। जब तक कई बार राशि-प्रवेश का फल न देख लिया जावे तब तक फल का निश्चय करना दुसाहस मात्र है। किसी एक राशि में पुनः आने का उसका समय लगभग १६५ वर्ष है इसलिए जब तक दस बारह आवृतियों का प्रभाव न देख लिया जावे तब तक उसके फल का निर्णय करना तो दुःसाहस ही है। नव ग्रहों के फल का तो अध्ययन आज से हजारहों वर्ष पूर्व से होता चला आ रहा है इसलिए उनके बारे में तो बहुत कुछ कहा जा सकता है, पक्ष में तथा विरोध में भी, पर प्लूटो के बारे में जिसका पता लगे अभी-अभी ३० वर्ष ही हुए हैं

तब से अब तक वह अभी एक ही राशि पार कर चुका है, उसके स्वभाव तथा विभिन्न राशियों में रहने का फल निर्धारित करना तो कल्पना मात्र है।

उपरोक्त दो ग्रह यूरेनस (हार्शेल) तथा नेपच्यून नव ग्रहों की नक्षत्र कक्षा के अन्तर्गत आ जाते हैं। पर उनका भारतीय फलित-ज्योतिष की दशा पद्धति में न लिया जाना दो बातों का द्योतक है। एक यह कि कदाचित् प्राचीन आचार्यों को इनका पता ही न था। दूसरा यह कि दूरी के कारण वे त्याज्य हों। पृथ्वी से अत्यधिक दूर होने के कारण यदि फलित में उनका प्रभाव नगण्य माना जावे तो नक्षत्र तो इनसे बहुत दूरी पर हैं फिर उनका भी प्रभाव क्यों माना जावे। इसका समाधान यह है कि नक्षत्रों का तो प्रभाव उनके समूह के अनुसार होता है जब कि ये ग्रह केवल एक-एक पिण्ड हैं जो किसी भी एकाकी नक्षत्र (योग तारा) से बहुत ही छोटे हैं। लेखक के मत से इन दो ग्रहों का दशा में न सम्मिलित किया जाना उनकी दूरी तथा राशि-गमन की अति मन्द गति है। देखने में ऐसा आता है कि विंशोत्तरी तथा अन्य किसी भी नक्षत्र दशा में इनका कोई स्थान नहीं है फिर भी नव ग्रहों का प्रभाव क्रमशः अपनी-अपनी दशाओं में होता है, इसलिए नव ग्रहों की दशा के बीच का कोई समय इनके लिए रिक्त नहीं है। इसके अतिरिक्त सूर्य तथा पृथ्वी के बीच और भी अवांतर ग्रह हैं, उनकी भी फलित में गुंजाइश नहीं है।

परिशिष्ट "ख"

सूर्य तथा चन्द्र की गति से उत्पन्न विविध पदार्थ

SOLAR AND LUNAR PERIODS

पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्रवत् पश्चिम से पूर्व की ओर घूम रही है और वह घूमती हुई सूर्य की परिक्रमा कर रही है। अपनी धुरी पर घूम जाने (Rotation) के कारण आकाश के समस्त पिण्ड एक दिन में पूरब से पश्चिम खगोल में घूम जाते दिखाई देते हैं। इस चक्र-भ्रमण (Rotation) से आकाश का कोई लक्षित तारा जब किसी के याम्योत्तरवृत्त (Meridian) पर आता है और उससे दूसरे दिन वह जब उसी याम्योत्तरवृत्त में आ जाता है तो इतने समय में पृथ्वी अपनी धुरी पर एक बार घूम जाती है। ऐसी दैनिक चक्रगति (Rotation) को लक्ष करने के लिए भूमध्यरेखास्थित तारा (Equitorial star) का ही उपयोग किया जाता है। इस काल को नक्षत्र-दिवस (Siderial day) कहते हैं। नक्षत्र (तारे) स्थिरप्राय हैं। वे अपने गोल में नहीं-से चलते हैं तथा उनका पारस्परिक स्थान-सम्बन्ध एक-सा बना रहता है। पर सूर्य इन नक्षत्रों में क्रांतिवृत्त में चलता है जो वस्तुतः पृथ्वी की अपनी गति है। वह क्रांतिवृत्त में पश्चिम से पूर्व लगभग ०°५९' ३२" ४०" की माध्यम गति से चल रहा है इसलिए किसी समय याम्योत्तरवृत्त का कोई तारा सूर्य के साथ हो तो दूसरे दिन वह तारा उसी याम्योत्तरवृत्त पर जब आवेगा तो उस समय उसी तारे पर सूर्य नहीं दिखाई पड़ेगा क्योंकि इस बीच वह उससे पूर्व लगभग १° खसक चुका होगा। वह उस तारे से कुछ बाद वहाँ आवेगा। इसलिए पृथ्वी के परिभ्रमण (Rotation siderial period) काल से सूर्य का किसी याम्योत्तर वृत्त में पुनः आने का काल बड़ा होता है। इस सौर-काल को सावन सौर दिवस कहते हैं। चूँकि सूर्य की गति असम है इसलिए उसके पूरे राशि चक्र ३६०° के भोग-काल की औसत दैनिक गति उसकी माध्यम दैनिक गति कहलाती है। यह गति वास्तव में एक कल्पित सूर्य की गति है जो ठीक उसी काल में नित्य याम्योत्तरवृत्त में आता हो। इस समय को यन्त्र (घड़ी) का

समय भी कहते हैं जिसकी सुइयाँ ठीक समय पर आवृत्ति करती हैं। ऐसी शुद्ध घड़ी जिसका यान्त्रिक काल परम शुभ रहे उसे (Chronometer) कहते हैं। इस घड़ी का उपयोग जहाजों पर होता है। नाक्षत्र-दिवस तथा माध्यम सौर दिवस का पारस्परिक सम्बन्ध इस प्रकार है।

	घण्टा मि० से०
माध्यम सौर दिवसीय समय के अनुसार एक नाक्षत्र दिवस=	२३ ५६.०४' ०९ है
नाक्षत्र दिवस समय के अनुसार एक माध्यम सौर दिवस=	२४.०३ ५६·५५६ है
घड़ी का माध्यम सौर-दिवस	२४ घण्टा

अस्तु, यदि माध्यम सौर-काल (Mean solar time) को नाक्षत्रिक माप में परिणत (Convert) करना हो तो माध्यम सौर-समय को १·००२७३७९१ गुणा से कर देना चाहिए, फल नाक्षत्रिक समय होगा। इसी प्रकार यदि नाक्षत्र समय (Siderial time) को माध्यम सौर-काल में परिगत करना हो तो नाक्षत्र समय को ०.९९७२६७५७ से गुणा कर देना चाहिए, फल माध्यम सौर-समय (Mean solar time) होगा। इसका उपयोग किसी समय के दशम-स्पष्ट के नाक्षत्र स्थान को जानने के लिए किया जा सकता है। ज्योतिष तथा समस्त नागरिक एवं निजी जीवन में माध्यम सौर दिवसीय समय (Mean solor time) का ही उपयोग किया जाता है। जिस प्रकार सौर तथा नाक्षत्र दिवसों में अन्तर है उसी प्रकार सौर तथा नाक्षत्र वर्ष के समय में भी अन्तर है। दिवस का अन्तर पृथ्वी की अपनी धूरी पर घूमने के कारण तथा वर्ष का अन्तर पृथ्वी के सूर्य प्रदक्षिणा के कारण होता है। पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा (Revolution) कर रही है जो देखने में वह सूर्य की गति है इसलिए जहाँ सूर्य की गति या उसका राश्यादिक स्पष्ट कहा जावे तो उसे पृथ्वी की गतितुल्य पदार्थ समझना चाहिए। सूर्य क्रांतिवृत्त में चलता है। वह क्रांतिवृत्त के किसी लक्षित-स्थान से पश्चिम से पूर्व चलते-चलते जब वहीं पहुँच जाता है तो उस काल को एक सौर-वर्ष कहते हैं। क्रांतिवृत्त का वह लक्षित-स्थान क्रांतिवृत्त तथा विषुववृत्त का प्रथम संपात्-बिन्दु है जिसे सायन-मेषादि-बिन्दु (First point of Aries) कहते हैं। सूर्य जब इस बिन्दु पर पुनः आता है तो उतने काल को सायन सौर वर्ष कहते हैं। पर यह सायन-संपात्-बिन्दु ५०-२६" वार्षिक गति से दक्षिण-पश्चिम विलोमतः खसक रहा है जिससे उस स्थान का नक्षत्र क्रांतिवृत्त में आगे

५०·२६" प्रति वर्ष की गति से खसक जाता है। सायन-संपात् के खकसने को अयन की विलोम गति (Precession of Equinoxes) कहते हैं। इसलिए संपात्-स्थान पर यदि कोई तारा हो तो सूर्य उस तारे पर अपनी पश्चिम गति के बाद पहुँचेगा और संपात्-बिन्दु पर पहिले ही पहुँच जायगा क्योंकि उस समय (एक वर्ष) में वह तारा क्रांतिवृत्त में ५०·२६" आगे बढ़ चुका होगा और संपात् उससे पीछे चला जायेगा। उस तक पहुँचने में तत्तुल्य गति उसका अन्तर होगा। इसलिए सायन सौर-वर्ष से निरयन सौर-वर्ष का काल दीर्घ होता है। इन दोनों का मान इस प्रकार है।

माध्यम सौर दिवसीय समय से अर्थात् घड़ी के समय से—

	दिन घं० मि० से०
एक सौर-वर्ष सायन—	३६५, ०५, ४८, ४५·५१ है
एक सौर-वर्ष निरयन—	३६५, ०६, ०९, ०८·९७ है

जिस प्रकार पृथ्वी अपनी धूरी पर घूमती हुई सूर्य की परिक्रमा कर रही है उसी प्रकार चन्द्र भी अपनी धूरी पर घूमता हुआ पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहा है। ऐसा करते हुए वह पृथ्वी के साथ-साथ सूर्य की भी परिक्रमा कर रहा है। उसके तीन कार्य हैं (१) अपनी धूरी पर घूमना (२) पृथ्वी की प्रदक्षिणा करना (३) सूर्य की परिक्रमा करना। उसका तीन प्रकार का सम्बन्ध भी है (१) पृथ्वी से (२) सूर्य से (३) नक्षत्रों से।

१—चन्द्रमा अपनी धूरी पर एक बार उतने ही समय में घूम जाता है जितना समय उसे पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने में लगता है। यह समय २७ दि०, ०७ घं०, ४३ मि०, ११·५४५ से०=२७·३२१६६०८ दिवस है। इसलिए उसका सूर्योदय अथवा सूर्यास्त का समय इस चक्र का आधा लगभग १४ दिवसों का है। भारतीय आर्ष विचारधारा में चन्द्रमा पितृलोक है और चूंकि उस लोक का एक दिन यहाँ के २७ दिनों से कुछ ही ऊपर का है और उसके अर्द्धदिवस अर्थात् सूर्योदय दिनार्द्ध का मान यहाँ के १४ दिनों का होता है इसलिए भारत में आस्तिक जन सौर-वर्ष में पितरों के लिए१५ दिनों के एक पक्ष को (जो लगभग पितरों का एक "दिवा" है) उनकी स्मृति में अर्पित करते हैं।

२—चन्द्रमा जिस नक्षत्र में हो उसी नक्षत्र में पुनः आने के समय को चान्द्र-नक्षत्र-मास कहते हैं (Siderial month) इसका मान २७ दि०, ०७ घं०, ४३ मि; ११·५४५ से० है। उसके परिभ्रमण (Rotation period)

काल का भी मान लगभग यही है। यही समय चन्द्रमा का पृथ्वी की एक प्रदक्षिणा (Revolution) का है।

३—चन्द्रमा जब एक बार पुनः क्रांति के सायन-संपात् पर आता है तो उस काल को सायननाक्षत्रिक चान्द्रमास (Tropical month) कहते हैं। यह समय २७ दि०, ०७ घं०, ४३ मि०, ०४·६८ से० है पर जब चन्द्रमा सायन-संपात् पर पहुँचता है तब तक सायन-संपात् का स्थान ५०·२६" वार्षिक गति के हिसाब से नक्षत्रों में पीछे विलोमतः हट चुका होता है और नक्षत्र उस संपात् से आगे बढ़ चुका होता है। चन्द्रमा को उस नक्षत्र तक पहुँचने में लगभग ६·८६५ घंटे लगते हैं। इतने घंटों बाद वह पुनः उस नक्षत्र को जिसमें वह पहिले था पकड लेता है इसलिए सायननक्षत्र चान्द्रमास से निरयननक्षत्र चान्द्रमास ६.८६५ घंटों से बड़ा होता है। चूँकि चन्द्रमा नक्षत्रों में चलता है और उसी आधार पर ज्योतिष-फलादेश आश्रित है इसलिए फलित- ज्योतिष में निरयननक्षत्र-समय की ही मान्यता है।

४—चन्द्रमार्गवृत्त तथा क्रांतिवृत्त जहाँ दो स्थानों पर काट करते हैं उन स्थानों को राहु तथा केतु कहते हैं। दो बड़े वृत्त दो स्थानों पर परस्पर १८०° की दूरी पर काट करते हैं इसलिए राहु तथा केतु की परस्पर अंशात्मक दूरी सदा १८०° की रहती है। यह चन्द्रमार्गवृत्त तथा क्रांतिवृत्त के संपात्-बिन्दु भी विलोम गति से क्रांतिवृत्त में पीछे हटते जाते हैं। यह वार्षिक गति राहु, केतु की गति है। चन्द्रमा जब एक बार पुनः इस संपात् पर आता है तो उतने समय को चन्द्र-राहु-मास (Draconite month) कहते हैं। इसका मान २७ दि०, ०५ घं०, ०५ मि०, ३५.८१ से० है। चन्द्रमार्गवृत्त तथा क्रांतिवृत्त का संपात् लगभग १९ वर्षों में एक पूरी आवृत्ति कर लेता है जब कि क्रांतिविषुवसंपात् लगभग २६ हजार वर्ष में एक आवृत्ति करता है।

५—चन्द्रमा जब पृथ्वी के सबसे निकट स्थान पर आता है तो उसे उसका नीच स्थान कहते है (Perigee) नीच स्थान से पुनः उसी स्थान पर आने के समय को चान्द्र नीच-मास (Anomalistic month) कहते हैं इसका मान २७ दि०, १३ घं०, १८ मि०, ३७·४४ से० है।

६—ये उपर्युक्त ५ पदार्थ पृथ्वीपरत्व से चन्द्रमा की अपनी कृति है और छठी कृति चन्द्र-मास है। चन्द्रमा तथा सूर्य जब एक बार एक ही राश्यादिकस्पष्ट में पुनः आ जाते हैं तो उस काल को चान्द्रमास कहते हैं। यह संसार का

एक व्यावहारिक समय है। यह सूर्य तथा चन्द्रमा के आपसी दिक्-सम्बन्ध का परिणाम है जिससे तिथियाँ बनती हैं। चन्द्रमा की कला इसी पर आधारित है। इस चान्द्रमास का उपयोग समस्त धार्मिक कामों में किया जाता है। इस का मान (Synodic month) २९ दि०, १२ घं०, ७४ मि०, ०२.८६४ से० है।

फलित-ज्योतिष में उपरोक्त मानों में से नक्षत्र-मान (निरयन) तथा राहु, केतु का ही अधिकतर उपयोग किया जाता है। उपरोक्त मान की क्रमबद्ध सूची इस प्रकार है।

	दि० घं० मि० से०
चान्द्र निरयन नक्षत्र-मास (Siderial month)	=२७,०७,४३,११.५७५ =२७°३२१८६०८ दिन
,, सायन नक्षत्र मास (Tropical month)	=२७,०७,४३,०४.६८
,, राहु मास (Nodical or draconite month)	=२७,०५,०५,३५.८१
,, नीच मास (Anomatistic month)	=२७,१३,१८,३७.४४
,, धूरी परिभ्रमण काल (Rotation period)	=२७,०७,४३,११.५४५
,, तिथि मास (Mean Synodical month)	=२९,१२,४४,०२.८६४

उपरोक्त सारणी देखने से पता चलेगा कि चन्द्रमा के सभी निजी पदार्थ २७ दिवस से कुछ ही ऊपर मान के हैं। तिथि तो चन्द्र सूर्य की अंशात्मक दूरी है और वह निज की कृति नहीं है। इसलिए चन्द्र के इतिहास में यह २७ अंक बड़े महत्त्व का अंक है। अस्तु, चन्द्रमा की उपरोक्त सभी पदार्थों की दैनिक गति (माध्यम) नक्षत्र-मण्डल का २७वाँ भाग है। इसी दृष्टि से चन्द्र-प्रसंग में ज्योतिष में चन्द्रभचक्र के २७ विभाग किये गये और प्रत्येक विभाग का नामकरण फलित-ज्योतिष के २७ नक्षत्र हैं। ये सब चन्द्र के क्रांतिवृत्ताश्रित तारासमूहों का क्रांतिवृत्त से उत्तर-दक्षिण १५° तक की सड़क के २७ भाग हैं जो स्वतः निरयन रहते हैं। फलित में इन विभागों के बीच चन्द्रमा के रहने का विशिष्ट फल कहा जाता है। इस दृष्टि से भारतीय फलादेश की निरयन-पद्धति वैज्ञानिक है।

चन्द्र-नक्षत्र को ही नक्षत्र कहा जाता है। चन्द्रमा जिन तारा-समूहों में गमनागमन करता दीख पड़ता है वे क्रांतिवृत्त से ५°२०' तक क्रांतिवृत्त के उत्तर तथा ५°३०' तक क्रांतिवृत्त से दक्षिण फैलावे के हैं। पर सब का माप क्रांतिवृत्त के अंशों में ही होता है जिसका एक-भाग १३°२०' है अर्थात्

$\frac{३६०}{२७}$=१३°२०' अस्तु, एक चन्द्रनक्षत्र का माध्यम मान १३°२०' है।

सूर्य तथा अन्य ग्रह जब क्रांतिवृत्ताश्रित नक्षत्र-मण्डल में चलते हैं तो उनके (फलित में) स्थान निर्धारण में क्रांतिवृत्त का २७ वाँ भाग (एक नक्षत्र) प्रायः प्रयोग में नहीं लाया जाता। उसका १२ सम विभाग प्रयोग में लाया जाता है। निरयन मेष से आरम्भ होकर मीन तक ३०°३०'' के प्रत्येक बारहवें विभाग पर पृथ्वी के किसी पशु तथा पदार्थ का स्वरूप बनता है। इसलिए ग्रहों के फलादेश में इन स्वरूपों वाले नक्षत्र-मण्डल का उपयोग किया जाता है। चूंकि क्रांतिवृत्त के आस-पास ही सभी ग्रहों के मार्ग का वृत्त है इसलिए क्रांतिवृत्त से उत्तर-दक्षिण फैली हुई १६° अंश की सड़क (मार्ग belt) में पड़ने वाले तारा समूह को फलादेश में पर्याप्त माना गया है अन्य तारा-समूह को नहीं। अस्तु, क्रांतिवृत्त का २७ वाँ भाग एक चन्द्र-नक्षत्र है, तथा बारहवाँ भाग एक राशि है। एक नक्षत्र १३°२०' का होता है तथा एक राशि ३०° की होती है। १३°२०' चन्द्रमा की माध्यम दैनिक गति है, तथा ३०° सूर्य की माध्यम मासिक गति है। सवा दो नक्षत्र की एक राशि होती है।

फलित-जगत् में चन्द्रमा का बहुत बड़ा महत्त्व है। उसका प्रभाव पृथ्वी पर तथा मानव के शरीर व मन पर अपेक्षाकृत अन्य ग्रहों से बहुत अधिक पड़ता है। वह सबसे निकटतम भी है। सूर्य तथा चन्द्रमा का सम्मिलित प्रभाव (चन्द्रप्रधान) पृथ्वी के जलतत्त्व पर है। जल एक हिलने वाला द्रव्य (mobile) है इसलिए उस पर उसका प्रभाव ज्वार भाटा है। ज्वार-भाटा चन्द्रमा की कला तथा उसके पृथ्वी से निकट आने पर अवलंबित है। चन्द्रमा शीघ्रगामी है, उस में चांचल्य है। चांचल्य (pertuberation) के कारण वह इधर उधर हट-बढ़ भी जाता है इसलिए अतिशीघ्रगामी—मनस् पर उसका प्रभाव अत्यधिक पड़ता है। चन्द्रमा जब पृथ्वी के निकटतम आता है तो पृथ्वी की चुंबकशक्ति में विक्षोभ पैदा हो जाता है। पृथ्वी के ताप को कम करने तथा औषधियों के फलने-फूलने में भी उसका हाथ है। इसके अतिरिक्त उसका पृथ्वी तथा मानव पर जो प्रभाव पड़ रहा है उसकी चर्चा अन्यत्र की जावेगी पर यह ऐतिहासिक बात है कि प्राचीन काल में सभी ज्योतिषियों ने नक्षत्रों में चन्द्र गमन की मान्यता दी थी। प्राचीन काल में मनुष्य के व्यक्तित्व के विषय में अथवा प्राकृतिक उपद्रवों की गणना में केवल नक्षत्रों का (चन्द्रस्पष्ट का) तथा ग्रहों के नक्षत्र-स्पष्ट का ही उपयोग किया जाता था। फलित में राशियों की कृति बाद की है।

●

परिशिष्ट "ग"

विंशोत्तरी दशानयन तथा दशान्तर प्रत्यन्तर–सारणियाँ

METHOD OF COMPUTATION OF VIMSHOTTER PERIODS

चन्द्रमा की गति को फलित-ज्योतिष में दशा का आधार माना गया है। प्राय: सभी आर्षदशा-पद्धति चन्द्र-नक्षत्र से ही सम्बन्ध रखती हैं। उनके विभाग से ग्रहों के दशा वर्ष नियत किये जाते हैं। विंशोत्तरी दशा का १२० वर्ष नक्षत्र-मण्डल का तृतीय भाग है। चन्द्रमा जब किसी विशिष्ट नक्षत्र से नव नक्षत्र पार कर दशवें में प्रवेश करता है तो विंशोत्तरी दशा की १२० वर्ष की एक आवृत्ति समाप्त हो जाती है और तब वह दूसरी आवृत्ति में प्रवेश करता है। इस तरह की तीन आवृत्तियां पूरे नक्षत्र-मण्डल की एक आवृत्ति ३६०° की है एक भचक्र आवृत्ति पर ९ ग्रहों के ३६० दशा-वर्ष व्यतीत हो जाते हैं। इस दृष्टि से चन्द्रमा का १° विंशोत्तरी दशा का एक सौर-वर्ष है। चन्द्रमा जब पृथ्वी-प्रदक्षिणा की १६०५ आवृत्ति कर लेता है तो उस बीच पृथ्वी सूर्य की १२० बार प्रदक्षिणा कर लेती है और सूर्य तथा चन्द्र उस समय पुनः उसी नक्षत्र में आ जाते हैं। उसकी गणना इस प्रकार है।

चन्द्र की १६०५ आवृत्ति=४३८२८·६ दिन

सूर्य की १२० आवृत्ति=४३८३०·२ दिन

इस तरह चन्द्र तथा सूर्य दोनों १२० सौर-वर्ष बाद अपने-अपने उसी नक्षत्र में आ जाते हैं जहाँ आरम्भ में थे। एक निरयन सौर-वर्ष में १७१·०२ तिथियाँ होती हैं। १२० निरयन सौर-वर्ष में ४४५२० तिथियां होंगी जो बराबर है १४८४ चन्द्र-मास के, इसलिए निरयन १२० वर्ष में सूर्य-चन्द्र की आपसी दूरी वैसी ही आ जाती है अर्थात् इष्ट-समय की तिथि १२० वर्ष बाद पुनः वही

तिथि तथा सूर्य-चन्द्र का वही नक्षत्र हो जाता है। इस तरह विंशोत्तरी दशा एक प्रकार से चन्द्रनक्षत्र-मण्डल की त्रिकोणदशा है। जातक के जन्म-काल में चन्द्रमा का जो नक्षत्र होगा उससे नवें नक्षत्र में उसकी विंशोत्तरी दशा की समाप्ति होगी। नवाँ नक्षत्र आदि-नक्षत्र का त्रिकोण है, उससे वह स्थान १२०° है। इस दृष्टि से जन्म-कुण्डली के चन्द्र-स्पष्ट में १२०° जोड़ने पर जो राशि-स्पष्ट हो वह जातक की विंशोत्तरी दशा की एक सीमा है।

चन्द्रमा की नाक्षत्रिक गति सम नहीं है इसलिए कभी वह एक नक्षत्र को ६ घटी में, कभी उससे कम, कभी अधिक भोगता है। इसकी गणना स्वदेशीय पत्रों में दी जाती है। चन्द्रमा जिस दिन एक नक्षत्र-विशेष में जितनी देर रहता है उसे नक्षत्र का भभोग-काल कहते हैं। इष्टकाल में चन्द्रमा उस नक्षत्र का जितना भाग जितने समय में भोग चुका होता है उस काल को भयात, भभुक्त कहते हैं। उस नक्षत्र का शेष भाग अर्थात् जितने काल में भोगना शेष रह गया हो उसे भभोग्य कहते हैं। चन्द्र-स्पष्ट करने में भयात, भभोग का उपयोग किया जाता है। इसी भयात, भभोग से विंशोत्तरीदशाक्रम में ग्रहों का भुक्त, भोग्य दशाकाल बनाया जाता है। दशा का आरम्भ जन्म-कालिक नक्षत्र-विशेष के आरम्भ से माना जाता है। उस नक्षत्र का भयात उस जातक का पूर्वजन्म में व्यतीत हुए दशा-वर्षादि है और भोग्य जन्म-कालिक समय से आरम्भ होता है।

नक्षत्रों के भभोग तथा भुक्तकाल से चन्द्र-स्पष्ट तथा दशा-वर्ष लाने की क्रिया यह है। जातक के जन्म-समय अथवा किसी इष्टकाल में जो विद्यमान नक्षत्र हो उससे पहिले वाला नक्षत्र गतनक्षत्र कहा जाता है। नक्षत्र का आरम्भ अश्विनी से होता है। उस गतनक्षत्र को १३°२०' से गुणा कर देने से चन्द्रमा का गतनक्षत्र का स्पष्ट हो जावेगा। अब वर्तमान नक्षत्र का भभोगकाल वर्तमान नक्षत्र के १३°२०' के भोगने का पूरा समय है। अब उस भभोगकाल में चन्द्रमा जितने काल चल चुका उतने कालतुल्य नक्षत्रमान भुक्तांश है।

यह भुक्तांश तथा गतनक्षत्र का स्पष्ट, इन दोनों का योग चन्द्रमा का इष्टकालीन राश्यादिस्पष्ट होगा। एक नक्षत्र का मान १३°२०' है=८००" कला है। चन्द्रमा यदि इष्टकाल में किसी नक्षत्र को ६० घटी में भोगता है

तो १ घटी में वह $\frac{८००}{६०}$ कला में भोगेगा। इस अनुपात से भुक्तकाल का समयतुल्य अंशादिक मान लाने से तथा उसे गत नक्षत्र मान में जोड़ देने से चन्द्र-स्पष्ट बन जाता है।

उदाहरण—जन्म समय इष्टकाल ३० घटी हो,

इष्टकाल में रोहिणी का भभोग ६० घटी, भुक्त ३० घटी हो तो।

रोहिणी का गतनक्षत्र कृतिका है। कृतिका नक्षत्रों में तृतीय नक्षत्र है।

अतः $१३^\circ२०' \times ३ = ४०^\circ$ हुए।

रोहिणी का भभोग ६० घटी है अर्थात् ६० घटी में चन्द्रमा रोहिणी नक्षत्र की ८०० कला को भोगेगा जिसमें से वह भुक्त ३० घटी भोग चुका है, इसलिए त्रैराशिक गणना में

६० घटी में—८०० कला।

तो ३० घटी में $\frac{८०० \times ३०}{६०} = ४००$ कला।

अब चूंकि इस काल में चन्द्रमा पूरे तीन गतनक्षत्र तथा वर्तमान रोहिणी के ४०० $''$ भोग चुका है इसलिए उसका राश्यादिक स्पष्ट $४०^\circ + ४००'' = ४०^\circ + ६^\circ४०'' = ४६^\circ \cdot ४०'' = १$ रा $०६^\circ \cdot ४०''$ = इष्टकाल का चन्द्र-स्पष्ट वृष के $६^\circ४०''$ है। इसका ध्रुवा यह है। गतनक्षत्र संख्या $\times १३^\circ२०''$ + वर्तमान नक्षत्र का भुक्त अंशादि = इष्टकालिक चन्द्र राश्यादि स्पष्ट।

इष्टकालिक नक्षत्र भयात, भभोग से जिस प्रकार चन्द्र-स्पष्ट बनता है, उसी रीति से भयात भभोग से विंशोत्तरी दशा की जन्म-कालिक भुक्त भभोग दशा बनाई जाती है। उसकी रीति इस प्रकार है।

विंशोत्तरी दशा में प्रत्येक नक्षत्र के स्वामी नियत हैं। उन स्वामियों के दशा-वर्ष भी नियत हैं। अस्तु, जन्म-कालिक नक्षत्र के स्वामी का नाम तथा उसके दशा-वर्ष को आधार मानकर इस प्रकार दशा साधन करना चाहिए।

उदाहरण:—

इष्टकाल में रोहिणी भभोग ६० घटी, भुक्त ३० घटी हो तो।

रोहणी का स्वामी चन्द्र है उसके विंशोतरी महादशा वर्ष १० है।

अब भभोग ६० घटी में चन्द्रमा के १० वर्ष

तो १ घटी में ,, ,, $\frac{१०}{६०}$ वर्ष

३० भुक्त घटी में ,, ,, $\frac{१० \times ३०}{६०}$ वर्ष=भुक्तदशा ५ वर्ष।

१० में –५=५ वर्ष भोग्य हुआ।

नक्षत्र के भभोग भयात भभुक्त जानने की रीति—

स्वदेशीय पत्रों (पंचाङ्ग) में प्रत्येक दिन के नक्षत्र का मान दिया रहता है। वह मान उस दिन के चन्द्रमा के एक नक्षत्र का भोग-काल है अर्थात पत्रों में वहाँ नक्षत्र के आगे जो घटी, पल दी गई होती है उसका अर्थ है कि उस दिन सूर्योदय-काल से उतनी घटी, पल तक चन्द्रमा उस नक्षत्र में रहेगा।

उदाहरण:—श्री बापूदेव पंचांग (काशी) में सम्वत् २०१९ के चैत्र शुक्ल द्वितीया वार शुक्र को अश्विनी नक्षत्र है जिसका भोग-काल घटयादि १७ घ० १५ प० दिया हुआ है। इसके पहिले वाले दिन वार गुरु को रेवती नक्षत्र का मान घटयादि २३/२३ दिया हुआ है। यहाँ वार शुक्र को नक्षत्र अश्विनी है अश्विनी का आरम्भ इस दिन (वार शुक्र) के पहिले वाले दिन वार गुरु को घटयादि २३/२३ पर आरम्भ हुआ क्योंकि वार गुरु को सूर्योदय-काल से २३ घ०, २३ प० पर रेवती नक्षत्र की समाप्ति हो चुकी थी। रेवती का समाप्ति-काल अश्विनी का आरम्भ होता है। अस्तु, पूरे अश्विनी का भोग-काल ६० घटी में ऋण २३ घ०, २३ प०, तथा धन १७।१५ होगा। (एक दिवस सूर्योदय से ६० घटी का होता है) ६० घ० – २३ घ०, २३ प०, ३६ घ०, ३=७ प०। ३६ घ०, ३७ प०+१७ घ०, १५ प=०५३ घ०, ५२ प०, यह उस दिन अश्विनी का भभोग-काल हुआ जिसे सर्वर्क्ष भी कहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अश्विनी नक्षत्र का आरम्भ वार बृहस्पति चैत्र शुक्ल १ को सूर्योदय से २३

घ०, २३ प० से आरम्भ होकर दूसरे दिन वार शुक्र को सूर्योदय से १७ घ०, १५ प० पर समाप्त हुआ। इतना काल कुल ५३ घ०, ५२ प० हुआ। यही उस नक्षत्र का चन्द्र भोग-काल है। इसकी दूसरी रीति यह है कि मानो गुरु-वार को २३ घ०, २३ प० पर रेवती का अन्त हो तो उसी समय अश्विनी का आरम्भ होकर यदि दूसरे दिन शुक्र वार को वह २३, २३ पर ही समाप्त हो तो उस काल को ६० घटी कहेंगे, पर यहाँ चूंकि उपरोक्त स्थिति में अश्विनी इससे पूर्व ही १७ घ०, १५ प० पर समाप्त हो जाता है इसलिए २३ घ०, २३ प० में ऋण १७ घ०, १५ प०, को किया तो लब्धि घटयादि ६ घ०, ०८ प० प्राप्त हुआ। इसे ६० घटी में घटा देने से लब्धि ५३ घ०, ५२ प० हुई। यह भभोग काल है। अब यदि नक्षत्र का पहिले दिन का भोग-काल दूसरे दिन से कम हो तो गणना इस प्रकार होगी—पहिले दिन के गत-नक्षत्र के भोगकाल नक्षत्र के भोगकाल में घटाकर उसे साठ घटी में जोड़ देने से भभोग-काल निकल आवेगा। जन्मकालिक नक्षत्र-मान की घटयादि में इष्ट-काल को घटा देने से जातक के नक्षत्र का भोग्यकाल तथा भभोग में घटाने से भुक्तकाल बनता है।

उदाहरण:—

उपर्युक्त अश्विनी का भभोग काल ५३, ५३ है। उस दिन का भोग्यकाल १७, १५ है और यदि इष्ट ७,१५ है तो।

घ, प,
१७, १५ भोग्य
७, १५ इष्ट
१० घटी नक्षत्र अश्विनी का भोग्यकाल होगा तथा

५३, ५२ भभोग
−१०, ०० भोग्य
४३, ५२ भुक्तकाल होगा।

अर्थात्

४३ घ०, ५२ प० भुक्त
१० घ०, ० प० भोग्य
५३ घ०, ५२ प० यह भभोग है।

भभोग−भोग्य=भुक्त
भभोग−भुक्त=भोग्य
नक्षत्र भोग्यइष्ट = काल से आगे भोग्य

भभोग, भयात, भोग्य से इष्टकालिक विंशोत्तरी दशानयन

उपरोक्त उदाहरण में अश्विनी नक्षत्र का स्वामी केतु है जिसकी दशा वर्ष ७ है। अश्विनी नक्षत्र भभोग=५३ घ०, ५२ प०। भुक्त ४३ घ०, ५२ प० भोग्य १० घ० है। इष्ट ७ घ०, १५ प० है।

भभोग ५३ घ०, ५२ प०=३२३२ पल,

भुक्त ४३ घ०, ५२ प०=२५८० पल,

भोग्य १० घ०, ० प०=६०० पल,

३२३२ पल में केतु के होते हैं ७ वर्ष

तो १ पल में केतु के होंगे $\frac{७}{३२३२}$ वर्ष

२५८० भुक्त पल में= $\frac{७ \times २५८०}{३२३२}$ वर्ष= $\frac{१८०६०}{३२३२}$ =

५ वर्ष, ७ मा०, १ दि०, ३७ घ०

यह विंशोत्तरी केतु की महादशा का इष्ट-समय पर भुक्त-काल हुआ। इसे महादशा वर्ष में घटा देने से (७—५ व० ७ मा० १ दि० ३७ घ० भुक्त) = व. ४ मा. २८ दि. २३ घटी यह जन्म-कालिक भोग्यदशा हुई अर्थात् सं० २०१९ चैत्र शुक्ल में यदि किसी का जन्म सूर्योदय से ७ घ०, १५ प० पर है तो उसे जन्म-समय में जन्म-समय से आरम्भ होकर विंशोत्तरी दशा में केतु की महादशा १ वर्ष, ४ मा०, २८ दि०, २३ घ० तक रहेगी और उसके जन्म-समय के पूर्व ही केतु की दशा के ५ व०, ७ मा०, १ दि०, ३७ घ० बीत चुके होंगे।

दशानयन का ध्रुवा यह है।

$\frac{\text{नक्षत्र स्वामी महादशा वर्ष} \times \text{नक्षत्र भुक्त दशा पल}}{\text{नक्षत्र भभोग पल}}$ =नक्षत्र स्वामी की भुक्त वर्षादि दशा

इस भुक्त वर्षादि को नक्षत्र स्वामी के दशा वर्ष में घटा देने से जन्म-कालिक भोग्य दशा बन जाती है। फलादेश के लिए इस पदार्थ को निम्न प्रकार से लिखने की प्रथा है।

उदाहरण :—

किसी जातक का जन्म यदि सं० २०१९ चैत्र शुक्ल २ वार शुक्र को सूर्योदयात् इष्ट ७।१५ पर हो और उस दिन सूर्यस्पष्ट ११ रा०, २२° है तो उसे इस प्रकार लिखेंगे।

विंशोत्तरी महादशा चक्र

भुक्त	केतु भोग्य	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	
वर्ष ५	१	२०	६	१०	७	
मा. ७	४					
दि. १	२८					
घ. ३७	२३					
संवत्	२०१९	२०२१	२०४१	२०४७	२०५७	२०६४
सूर्य अंश	१०	०३	०३	०३	०३	०३
कला	२२	२०	२०	२०	२०	२०

इस चक्र में केतु के नीचे भोग्यवर्ष लिखा है और उसके नीचे दशा का वर्ष, सूर्य मास तथा दिन अर्थात् जन्म-कालिक सौर वर्ष, मास, दिवस, से आरम्भकाल लिखा है। उसमें भोग्यकाल जोड़ने से दूसरे कोष्टक के नीचे दशा का समास-काल है। यहाँ केतु की महादशा सं० २०१९·१०।२२ से आरम्भ होकर सं० २०२१।०३।२० तक रहेगी।

कोई-कोई दशाधीश के कोष्टक के पहिले वाले कोष्टक में ही भोग्यकाल लिखकर नीचे उस दशाधीश ग्रह की दशा का समाप्ति-काल लिखते हैं पर अधिक प्रचलित उपरोक्त प्रथा है।

भोग्य	केतु	शुक्र
	१	२०
	४	
	२८	
२०१९	२०२१	२०४१
१०	०३	०३
२२	२०	२०
से	तक	तक

इस कोष्टक में केतु कोष्टक के नीचे केतु की महादशा का अन्त सं० २०२१।०३।२० तक दिखाया गया है।

इस प्रकार महादशा-चक्र बना लेने पर ग्रहों के अन्तर का भी चक्र बनता है। नव ग्रहों की दशा में प्रत्येक ग्रह में नवग्रह का अन्तर आता है। जातक के आरम्भ-ग्रह की दशा का अन्तर लगाना कुछ कठिन है शेष का सारणीवत् है। उपरोक्त उदाहरण में केतु की महादशा का भुक्तकाल वर्षादि ५.७.१ है। प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा उसी ग्रह के आरम्भ से चलती है। केतु की अन्तर्दशा-चक्र में प्रथम केतु का अन्तर ४ मा०, २७ दि०। शुक्र का अन्तर १ व०, २ मा०। सूर्य अन्तर० व०, ४ मा०, ६ दि चन्द्र का अन्तर

वर्षादि ० । ७ । ० । भौम का वर्षादि ० । ४ । २७ । राहु का वर्षादि १ । ० । १८ । बृहस्पति का वर्षादि ० । ११ । ६ कुल योग वर्षादि ४ । १० । २४ यहाँ इष्टकाल तक बीत चुका । शनि का १ । १ । ९ उस समय नहीं बीत पाया क्योंकि इसका योग करने में वर्षादि ६ । ०० । ०३ आते हैं जो महादशावर्ष से अधिक हो जाता है । इसलिए ६ व० ०० मा० ०३ दि० में ५ व० ७ मा० १ दि० घटाने से ० व० ०५ मा० ०२ दिन शनि का अन्तर शेष रह जाता है । अस्तु, जन्म-काल में यहाँ केतु की महादशा में शनि का अन्तर जन्म-काल से ० । ०५ । ०२ तक रहेगा । उसका चक्र इस प्रकार बनता है ।

उपरोक्त उदाहरण में केतु की महादशा में ग्रहों का अन्तर चक्र

	शनि	बुध
वर्ष	०	०
मास	[illegible]	११
दिन	१	२७
संवत्	२०१६	२०२०
सूर्य राशि	१०	०३
,, अंश	२२	२३

अन्य ग्रहों में अन्तर्दशा उस ग्रह के आरम्भ के वर्षादिक समय में ग्रहों के अन्तर काल को जोड़ते जाने से बनेगी । अन्तर्दशा महादशाधीश ग्रह से ही आरम्भ होती है । ग्रहों की अन्तर्दशा के वर्षादि जानने के लिए इस ग्रन्थ में उसकी सारणी दी गई है । प्रत्यन्तर की भी सारणियाँ दी गई हैं ।

अन्तर निकालने के कई ध्रुवे हैं, उनमें से एक सरल यह है:—

महादशाधीश के वर्ष को अन्तराधीश के वर्ष से गुणा करने पर जो अंक आवें उन अंकों का अन्तिम अंक त्रिगुणित करने पर वह अंक अन्तर का दिवस होगा, शेष उसके पहिले के अंक अन्तर्दशा के मास होंगे ।

उदाहरण:—बृहस्पति में चन्द्रमा का अन्तर-काल जानने के लिए बृहस्पति की महादशावर्ष १६ × चन्द्रमहादशावर्ष १०=१६ गुणे १०=१६० इस १६० अंक के अन्तिम अंक ० का ३ से गुणा तो लब्धी ० आयेगी । पूर्व के अंक १६ अन्तर दशा के मास हुए । दोनों का जोड़ १६ मा०, ० दिन हुआ जो बृहस्पति में चन्द्रमा के के अन्तर का काल है ।

प्रत्यन्तर निकालने का सरल ध्रुवा:—

(क) $\frac{\text{महादशाधीश} \times \text{अन्तरेश तथा प्रत्यन्तरेश}}{४०}$ = दिवादि प्रत्यन्तर का मान

सत्ताईस '२७' चन्द्र नक्षत्रों के नाम तथा उनकी राश्यादि सीमा व विंशोत्तरी दशाधीश की सारणी

नक्षत्र	चन्द्रस्पष्ट	नक्षत्रदशाधीश	दशा वर्ष	योग तारा का अंग्रेजी नाम
	राशि अं. क.		वर्ष	
१. अश्विनी	० ०० ०० से ० १३ २० तक	केतु	७	B. ARIETIS
२. भरणी	० २६ ४० ,,	शुक्र	२०	35 ARIETIS
३. कृत्तिका	१ १० ०० ,,	सूर्य	६	E. TAURI
४. रोहिणी	१ २३ २० ,,	चन्द्र	१०	ALDEBARAN
५. मृगशिरा	२ ०६ ४० ,,	मंगल	७	L. ORIONIS
६. आर्द्रा	२ २० ०० ,,	राहु	१८	A.ORIONIS
७. पुनर्वसु	३ ०३ २० ,,	बृहस्पति	१६	B.GEMINORIUM
८. पुष्य	३ १६ ४० ,,	शनि	१९	A. HYDROE
९. आश्लेषा	४ ०० ०० ,,	बुध	१७	C. CANCRI
१०. मघा	४ १३ २० ,,	केतु	७	REGULAS
११. पूर्वा फाल्गुनी	४ २६ ४० ,,	शुक्र	२०	D. LEONIS
१२. उत्तराफाल्गुनी	५ १० ०० ,,	सूर्य	६	B. LEONIS
१३. हस्त	५ २३ २० ,,	चन्द्र	१०	D. CORVIS
१४. चित्रा	६ ०६ ४० ,,	मंगल	७	SPICA VIRGINIS
१५. स्वाती	६ २० ०० ,,	राहु	१८	ARCTURuS
१६. विशाखा	७ ०३ २० ,,	बृहस्पति	१६	A: LIBROE
१७. अनुराधा	७ १६ ४० ,,	शनि	१९	D. SCORPIO
१८. ज्येष्ठ	८ ०० ०० ,,	बुध	१७	ANTARES
१९. मूल	८ १३ २० ,,	केतु	७	L. SCORPIE
२०. पूर्वाषाढ	८ २६ ४० ,,	शुक्र	२०	D. SAGITTARI
२१. उत्तराषाढ़	९ १० ०० ,,	सूर्य	६	S TARI
२२. श्रवण	९ २३ २० ,,	चन्द्र	१०	A; AQUILOE
२३. धनिष्ठा	१० ०६ ४० ,,	मंगल	७	B DELPHINUM
२४. शतभिषा	१० २० ०० ,,	राहु	१८	L. ACQUARIUS
२५. पूर्वाभाद्रपद	११ ०३ २० ,,	बृहस्पति	१६	A. PEGASI
२६. उत्तराभाद्रपद	११ १६ ४० ,,	शनि	१९	G. PEGASI
२७. रेवती	०० ०० ०० ,,	बुध	१७	Z. PISCUM
			१२०	

विंशोत्तरी अन्तर्दशा—सारणी।

अन्तर्दशा ग्रह	कृतिका, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तरा षाढ़ दशाधीश सूर्य—वर्ष ६ अन्तर्दशा व. मा. दि.	अन्तरसमाप्ति परदशाके भुक्त व. मा. दि.	अन्तर्दशा ग्रह	रोहिणी, हस्त, श्रवण चन्द्र वर्ष १० अन्तर्दशा व. मा. दि.	अन्तरदं समाप्तिपरदशा के भुक्त व.मा.दि.	अन्तर्दशा ग्रह	मृगशिर, चित्रा, धनिष्ठा मङ्गल वर्ष ७ अन्तर्दशा व. मा. दि.	अंतर समाप्ति परदशाके भुक्त व. मा. दि.	अन्तर्दशा ग्रह	आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा राहु वर्ष १८ अन्तर्दशा व. मा. दि.	अंतर समाप्ति परदशाके भुक्त व. मा. दि.
सू.	० ०३ १८	० ०३ १८	चं	० १० ००	० १० ००	मं.	० ०४ २७	० ०४ २७	रा.	२ ०८ १२	२ ०८ १२
चं.	० ०६ ००	० ०९ १८	मं.	० ०७ ००	१ ०५ ००	रा.	१ ०० १८	१ ०५ १५	बृ	२ ०४ २४	५ ०१ ०६
मं.	० ०४ ०६	१ ०१ २४	रा.	१ ०६ ००	२ ११ ००	बृ.	० ११ ०६	२ ०४ २१	श	२ १० ००	७ ११ १२
रा.	० १० २४	२ ०० १८	बृ	१ ०४ ००	४ ०३ ००	श.	१ ०१ ०९	३ ०६ ००	बु.	२ ०६ १८	१० ०६ ००
बृ.	० ०९ १८	२ १० ०६	श	१ ०७ ००	५ १० ००	बु.	० ११ २७	४ ०५ २७	के.	१ ०० १८	११ ०६ १८
श	० ११ १२	३ ०९ १८	बु	१ ०५ ००	७ ०३ ००	के.	० ०४ २७	४ १० २४	शु.	३ ०० ००	१४ ०६ १८
बु	० १० ०६	४ ०७ २४	के	० ०७ ००	७ १० ००	शु.	१ ०२ ००	६ ०० २४	सू.	० १० २४	१५ ०५ १२
के.	० ०४ ०६	५ ०० ००	शु	१ ०८ ००	९ ०६ ००	सू.	० ०४ ०६	६ ०५ ००	चं.	१ ०६ ००	१६ ११ १२
शु.	१ ०० ००	६ ०० ००	सू.	० ०६ ००	१० ०० ००	चं.	० ०७ ००	७ ०० ००	मं.	१ ०० १८	१८ ०० ००

अन्तर्दशा ग्रह	पुनर्वसु, विशाखा, पू० भाद्र वृहस्पति वर्ष १६					
	अन्तर्दशा			अन्तर समप्ति परदशाकेभुक्त		
	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
बृ.	२	०१	१८	२	०१	१८
श.	२	०६	१२	४	०८	००
बु.	२	०३	०६	६	११	०६
के.	०	११	०६	७	१०	१२
शु.	२	०८	००	१०	०६	१२
सू.	०	०९	१८	११	०४	००
चं.	१	०४	००	१२	०८	००
मं.	०	११	०६	१३	०७	०६
रा.	२	०४	२४	१६	००	००

अन्तर्दशा ग्रह	पुष्य, अनुराधा, उत्तरा भाद्र शनि वर्ष १९					
	अन्तर्दशा			अन्तरसमाप्ति परदशाकेभुक्त		
	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
श.	३	००	०३	३	००	०३
बु.	२	०८	०९	५	०८	१२
के.	१	०१	०९	६	०९	२१
शु.	३	०२	००	९	११	२१
सू.	०	११	१२	१०	११	०३
चं.	१	०७	००	१२	०६	०३
मं.	१	०१	०९	१३	०७	१२
रा.	२	१०	०६	१६	०५	१८
बृ.	२	०६	१२	१९	००	००

अन्तर्दशा ग्रह	आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती बुध वर्ष १७					
	अन्तर्दशा			अन्तरसमाप्ति परदशाकेभुक्त		
	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
बु.	२	०४	२७	२	०४	२७
के.	०	११	२७	३	०४	२४
शु.	२	१०	००	६	०२	२४
सू.	०	१०	०६	७	०१	००
चं.	१	०५	००	८	०६	००
मं.	०	११	२७	९	०५	२७
रा.	२	०६	१८	१२	००	१५
बृ.	२	०३	०६	१४	०३	२१
श.	२	०८	०९	१७	००	००

अन्तर्दशा ग्रह	मघा, मूल, अश्विनी केतु वर्ष ७					
	अन्तर्दशा			अंतर समाप्ति परदशाकेभुक्त		
	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
के.	०	०४	२७	०	०४	२७
शु.	१	०२	००	१	०६	२७
सू.	०	०४	०६	१	११	०३
चं.	०	०७	००	२	०६	०३
मं.	०	०४	२७	२	११	००
रा.	१	००	१८	३	११	१८
बृ.	०	११	०६	४	१०	२४
श.	१	०१	०९	६	००	०३
बु.	०	११	२७	७	००	००

अन्तरेश ग्रह	पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ भरणी शुक्र, वर्ष २०	
	अन्तर्दशा व. मा. दि.	अतर समाप्ति परदशाके भुक्त ब. मा. दि
शु.	३ ०४ ००	३ ०४ ००
सू.	१ ०० ००	४ ०४ ००
चं.	१ ०८ ००	६ ०० ००
मं.	१ ०२ ००	७ ०२ ००
रा.	३ ०० ००	१० ०२ ००
बृ.	२ ०८ ००	१२ १० ००
श.	३ ०२ ००	१६ ०० ००
बु.	२ १० ००	१८ १० ००
के.	१ ०२ ००	२० ०० ००

नोट – प्रत्येक ग्रहदशा के अन्तरचक्र के तृतीय कोष्टक में जो "अन्तर समाप्ति पर दशा के भुक्त वर्षादि" दिए गए हैं उनसे तात्पर्य है कि उस कोष्ठ के सामने वाले अन्तरेश की अन्तर्दशा की समाप्ति पर दशा के आरम्भ से उतने वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। सारणी में राहु में बुधान्तर का समय वर्षादि २।०६।१८ दिया है और साथ ही दशा का भुक्त वर्षादि १०।०६।०० । इसका वही अर्थ है कि जब बुध का अन्तर समाप्त होता है तो बुध की दशा के १०।०६।०० वर्ष समाप्त हो जाते हैं इस पदार्थ का उपयोग महादशा के भुक्त वर्षादि पर जातक के जन्मकालिक अन्तर की दशा के वर्षादि प्राप्त करने में सहायक होता है, साथ ही किसी दशा के अन्तर में जातक के कितने वर्षादि बीत चुके हैं इसता भी पता लग सकता है। इसका स्पष्टीकरण आगे है।

अन्तर्दशा सारणी का स्पष्टीकरण व उपयोग

उपरोक्त सारणी मे नक्षत्रों के दशाधीश में उनके प्रत्यन्तर ग्रहों की वर्षादि भुक्ति दी गई है साथ ही प्रत्येक अंतर की समाप्ति पर दशा के भुक्त वर्षादि भी दे दिए गए हैं। इससे जन्म-कालिक किसी ग्रह की दशा (महादशा) के भुक्त वर्षादि पर इस सारणी से जन्मकालीन अंतरेश तथा उसका भुक्त भोग्य काल सरलता से जाना जा सकता है।

नक्षत्र भयात भभोग की अनुपात गणना से अथवा सारणी संख्या १ व २ से चन्द्रस्पष्ट तुल्य दशा के भुक्त-भोग्य-वर्षादि प्राप्त होने पर जन्मकालिक अंतर के भुक्त-भोग्य जानने के लिए सारणी का उपयोग निम्न प्रकार से करना चाहिए।

उदाहरणः—चन्द्रस्पष्ट २।१५।१० पर सारणी संख्या १,२ से राहु की भुक्त ११।५।२१ तथा भोग्यदशावर्षादि ६।०६।०९ प्राप्त होते हैं।

(क) अब राहु भुक्त वर्षादि ११ । ५ । २१ से उपरोक्त अंतर सारणी में राहु के अंतर चक्र में भुक्त वर्षादि के कोष्टक को देखना चाहिए। वहाँ ११ । ५ । २१ । १० । ०६ । ०० से अधिक केतु तक भुक्त ११ । ०६ । १८ से कम है। अस्तु जन्म-कालीन अंतरेश केतु है। ११ । ५ । २१–१० । ०६ । ०० केतु का भुक्त ० । ११ । २१ है तथा केतु के अन्तर वर्षादि १ । ०० । १८–० । ११ । २१=० । ०० । २७ वर्षादि केतु भोग्य है। इन दोनों का योग वर्षादि ०।११।२१+० । ०० । २७=वर्षादि १ । ०० । १८ राहु में केतु के अन्तर का पूरा मान है। इस तरह जन्म-कालिक दशान्तर्दशा जान लेने पर भोग्य के अंतरमान में आगे के अंतरमान को जोड़ते जाने से तत्तदन्तर के अंतर के वर्षादि प्राप्त होंगे। यथा राहु में केतु का भोग्य यहाँ वर्षादि ०।११।२१ है अर्थात् जन्म समय से ०।११।२१ तक केतु का अंतर रहेगा।

शुक्र+ ३।००।००

३।११।२१ तक शुक्र का अन्तर रहेगा। इत्यादि।

(ख) यदि यह जानना हो कि अमुक दशा के अमुक अंतर का आरंभ व अंत जातक के जन्मसमय से कितने वर्षादि में होगा तो उपरोक्त सारणी का उपयोग इस प्रकार होगा।

उदाहरणः—जन्म-कालिक दशा यदि राहु भोग्य ६।०६।०९ वर्षादि हो तो शनि में शुक्र का अंतर (जातक के जन्म-काल से) कब आरंभ होगा और कब समाप्त।

राहु भोग्य	६।०६।०९
बृहस्पति की दशा+	१६। ०।००
शनि में केतु का अंत+	६। ९।२१
(शुक्र का आरंभ)	
	=वर्षादि २९।४।००

जातक के जन्म के समय से २९ वर्ष के उपरान्त तीसवें वर्ष में सूर्य की कर्क राशि के ४ दिवस पर जातक को शनि में शुक्र के अन्तर का आरंभ होगा। इसमें शनि में शुक्रान्तर वर्षादि ३।०२।०० जोड़ने से शुक्र के अन्तर का अन्त समय प्राप्त हो जायेगा।

प्रत्यन्तर्दशा विचार

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह की महादशा में नौग्रहों की अन्तर्दशा होती है, उसी प्रकार एक अन्तर्दशा में नो ग्रहों की प्रत्यन्तरदशा होती है; जैसे सूर्य की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा ३ मास १८ दिन है। इस तीन मास और १८

दिन में उसी क्रम और परिमाणानुसार प्रत्यन्तर भी होता है। प्रत्यन्तर्दशा निकालने का नियम यह है कि महादशा के वर्षों को अन्तर और प्रत्यन्तर्दशा के वर्षों से गुणा कर ४० का भाग देने पर जो दिनादि आवेंगे वही प्रत्यन्तर्दशा के दिनादि होंगे।

उदाहरण—सूर्य की महादशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर दशा निकालनी है—

सूर्य की महादशा ६ वर्ष × चं० की अन्तर्दशा १० वर्ष=६×१०= ६०×१०=६००÷४०=१५ दिन चन्द्रमाका प्रत्यन्तर; ६०×७=४२०÷४०= १०, २०×३०=१० दि० ३० घटी मंगल का प्रत्यन्तर; ६०×१८=१०८०= १८०÷४०=२७ दिन। राहु का प्रत्यन्तर; ६०×१६=९६०÷४०=२४ दिन जीव-प्रत्यन्तर; ६०×१९=११४०÷४०=२८ दिन, ३० घटी शनि का प्रत्यन्तर; ६०×१७=१०२०÷४०=२५ दिन, ३० घटी का बुध का प्रत्यन्तर; ६०×७=४२०÷४०=१० दि० ३० घ० केतु का प्रत्यन्तर; ६०×२०= १२००÷४०=३० दिन १ मास, शुक्र का प्रत्यन्तर; ६०×६=३६०÷४०=९ दिन आदित्य का प्रत्यन्तर=

सूर्य की महादशा में—सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

सू.	चं.	भौ.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दि.
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घ:

सू. द. चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

चं.	मं०	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मा.
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दि.
०	३०	०	०	०	३०	३	०	०	घ.

सू. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दि.
१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घ.

सू. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	ग्र.
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मा.
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८	दि.
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घ.

सू. द. गुरु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	ग्र.
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा.
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दि.
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ.

सू. द. शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्र.
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मा.
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दि.
९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६	घ.

सू. द. बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	ग्र.
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा.
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दि.
२१	५२	०	१८	३०	५१	५१	४५	२७	घ.

सू. द. केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दि.
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घ.

सू. द. शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर दशा

शु.	सू,	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
२	०	१	०	१	१	१	१	१	मा.
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दि.

चन्द्रमा की दशा, चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु	क.	श.	रा.	ग्र.
०	०	१	५	१	१	०	१	०	मा.
२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दि.
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ.

चं. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क	शु.	सू.	च.	ग्र.
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मा.
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दि.
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घ.

चं. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	ब.	श.	बु.	क.	शु.	र	च.	म.	ग्र.
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मा.
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दि.
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	घ.

चं. द. बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	क.	शु.	सू.	च	म.	रा.	ग्र.
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मा.
४	१६	८	२८	२०	१८	१०	२८	१२	दि.

चं. द. शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	ग्र.
३	२	१	३	०	१	१	[illegible]	२	मा.
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दि.
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घ.

चं. द. बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	क.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	ग्र.
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मा.
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दि.
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घ.

चं. द. केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मा.
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	दि.
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घ.

चं. द. शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मा.
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दि.

चं. द. सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क.	शु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मा.
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दि.
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घ.

मंगल की दशा में मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि.
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ.
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प.

मं. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	स.	चं.	मं.	ग्र.
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा.
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि.
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ.

मं. द. गुरु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के,	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	ग्र.
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा.
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि.
४८	१२	३६	६६	०	४८	०	३६	२४	घ.

मं. द. शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म	रा.	बृ.	ग्र.
०	२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा.
३	३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि.
१९	१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ.
३	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प.

मं. द. बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	ग्र.
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा.
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि.
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ.
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प.

मंगल की दशा—केतु के अन्तर में प्रत्यन्तर

के	शु.			म.	रा.	बृ.	श.		
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि.
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ.
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प.

मंगल की दशा—शुक्र के अन्तर में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क.	ग्र.
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा.
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि.
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ.

मंगल की दशा सूर्य के अन्तर में प्रत्यन्तर

सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क.	शु.	ग्र
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मां.
६	१०	७	१८	१६	१०	१७	७	२१	दि.
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ.

मंगल की दशा में चन्द्रमा के अन्तर में प्रत्यन्तर

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु	के.	शु.	सू.	ग्र..
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा.
१७	१२	१	२८	३	२७	१२	५	१०	दि.
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ.

राहु की महादशा और राहुही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ग्र.
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मा.
२५	९	३	१७	२६	१२	८	२१	२६	दि.
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घ.

राहु की दशा बृहस्पति के अन्तर में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	ग्र.
३	४	४	१	६	१	२	१	४	मा.
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दि.
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घ.

रा० द० शनि के अन्तर में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्र.
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मा.
१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	दि.
२७	२१	५१	०	१८	३९	५१	५४	४८	घ.

रा० द० बुध के अन्तर में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	ग्र
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मा.
१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	दि.
२	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घ.

रा० द० केतु के अन्तर में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु	ग्र.
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मा.
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	दि.
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घ.

रा० द० शुक्र के अन्तर में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मा.
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दि.

रा० द० रवि की अन्तरदशा में प्रत्यन्तर

सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा.
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दि.
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घ.

रा० द० चन्द्रमा के अन्तर में प्रत्यन्तर

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र.
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मा.
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दि.
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ.

रा. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

म.	रा	बृ	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च	ग्र.
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मा.
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दि.
३	४२	२४	५१	३३		९	५४	३०	घ.

बृहस्पति की दशा बृहस्पति के अन्तर में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	०	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	ग्र.
३	४	२	१	४	१	२	१	२	मा.
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दि.
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	१८	१२	घ.

बृ० द० शनि के अन्तर में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	ग्र.
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मा.
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दि.
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घ.

गु० द० बुध के अन्तर में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं	रा.	बृ.	श.	ग्र.
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दि०
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घ०

ग. द. केतु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा.
१०	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दि.
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घ.

ग. द. शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
५	१	२	१	४	४	५	१	०	मा.
१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६	दि.

ग. द. सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	०	०	१	१	०	१	०	१	मा.
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दि.
२४	०	४८	२६	२४	३६	४८	४८	०	घ.

ग. दशा चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

चं.	मं.	रा	बृ	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र.
०	०	२	२	२	२	०	२	२	मा.
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दि.

ग. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु	सू.	चं	ग्र.
०	१	१	१	१	१	१	०	०	मा.
१८	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दि.
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घ.

ग. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	प्र.
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मा.
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दि.
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घ.

शनि की दशा और शनि की ही अंतर्दशा में प्रत्यंतर

श०	बु०	कं०	शु०	सू०	च०	भ०	रा०	बृ०	ग्र०
५	५	२	६	१	३	१	५	४	मा०
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दि०
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

श० द० बुध के अन्तर में प्रत्यंतर

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मा०
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दि०
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

श० द० केतु के अंतर में प्रत्यंतर

क.	सू.	शु.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मा.
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	दि.
१६	२०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घ.
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प.

श० द० शुक्र के अंतर में प्रत्यंतर

शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क.	ग्र.
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मा.
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दि.
०	०	०	३०	०	०	२०	३०	३०	घ.

श० द० सूर्य के अंतर में प्रत्यंतर

सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा.
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दि.
६	३०	५७	१८	३६	९	५७	५७	०	घ.

श. द. चन्द्रमा के अन्तर में प्रत्यन्तर

च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र..
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मा.
१७	३	१६	१६	०	२०	३	५	२८	दि.
३०	१५	०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ.

श. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

मं.	रा.	बु.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	ग्र.
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मा.
२३	२९	२३	३	२६	२२	६	१९	३	दि.
१६	५१	१२	१०	३०	५६	३०	५७	१५	घ.
३०	०	०	३०	३०	३३	०	०	०	प.

श. द. राहु के अन्तर में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	ग्र.
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मां.
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दि.
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घ.

श. द. गुरु के अन्तर में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	ग्र.
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मा.
१	२४	९	२६	२	१५	१६	२३	१६	दि.
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	घ.

बुध की दशा बुध ही की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	ग्र.
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मा.
२	२०	२७	१३	१२	२०	१०	२५	१७	दि.
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घ.
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प.

बुध दशा केतु के अन्तर में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	१	०	०	०	१	०	१	१	मा.
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दि.
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घ.
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प.

बृ. द. शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
५	१	२	१	५	४	५	४	१	मा.
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९	दि.
०				०	०	३०	३०	३०	घ.

बृ. द. सूर्य की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	क.	शु.	ग्र.
०	१	०	१	१	१	१	०	१	मा.
१९	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दि.
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घ.

बृ. द. चन्द्रमा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	र.	ग्र.
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा.
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दि.
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घ.

बृ. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.
१	१	१	१	१	०	१	०	०	मा.
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२९	दि.
४९	३२	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घ.
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प.

बृ. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	ग्र.
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मां.
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दि.
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घ.

बृ. द. बृहस्पति की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	ग्र.
३	४	३	१	४	१	२	१	४	मा.
१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	दि.
४८	१२	२६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ.

बु॰ द॰ शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	ग्र.
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मा.
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दि.
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घ.
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प.

केतु की दशा केतु के ही अन्तर में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि.
३४	३०	२१	१५	३	३	३६	१६	४९	घ.
३०	०	०	०	३०	३०	०	३०	३०	प.

के॰ द॰ शुक्र के अन्तर में प्रत्यन्तर

शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा.
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि.
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ.

के॰ द॰ सूर्य के अन्तर में प्रत्यन्तर

सू.	च.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि.
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ.

के॰ द॰ चंद्रमा के अन्तर में प्रत्यन्तर

चं.	मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र.
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा.
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि.
३०	१५	३०	०	२५	४५	१५	०	३०	घ.

के. द. मंगल की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा.
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि.
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ.
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प.

के. द. राहु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	ग्र.
१	१	१	१	०	२	०	०	०	मा.
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि.
२४	२४	५१	३३	३	०	५५	३०	३	घ.

के. द. गुरु की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	ग्र.
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा.
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि.
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ.

के. द. शनि की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्र.
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा.
३	२६	२३	३	१९	३	२३	२९	२३	दि.
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ.
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प.

के. द. बुध की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	रा.	वृ.	श.	ग्र.
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा.
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि.
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ.
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प.

शु. द. शुक्र की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर दशा

शु.	सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	ग्र.
६	२	३	२	६	५	६	५	१	मा.
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	२१	दि.

शु. द. रवि के अन्तर में प्रत्यन्तर

सू.	च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	ग्र.
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मा.
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दि.

शु. द. चन्द्रमा के अंतर में प्रत्यंतर

च.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	ग्र.
१	१	३	२	३	२	१	३	१	मा.
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दि.

शु. द. मंगल के अंतर में प्रत्यंतर

मं.	रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	ग्र.
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मा.
२४	२	२६	६	२९	२४	४०	२१	५	दि.
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घ.

शु. द. राहु के अंतर में प्रत्यंतर

रा.	बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	म.	ग्र.
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मा.
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दि.

शु. द. बृहस्पति के अंतर में तत्यंतर

बृ.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	च.	मं.	रा.	ग्र.
४	५	४	१	५	१	२	१	४	मा.
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दि.

शुक्र दशा शनि के अन्तर में प्रत्यन्तर

श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	बृ.	ग्र.
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मा.
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दि.
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घ:

शुक्र दशा बुध के अन्तर में प्रत्यन्तर

बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं०	रा.	बृ.	श.	ग्र.
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मा.
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	२	दि.
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	०	घ.

शुक्र दशा केतु के अन्तर में प्रत्यन्तर

के.	शु.	सू.	चं.	म.	रा.	बृ.	श.	बु.	ग्र.
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मा.
२४	१०	२१	५	२४	३	२५	६	२९	दि.
०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घ.

परिशिष्ट "घ"

कपूर मध्यपाराशरी–मारक प्रकरण

अर्थात्

विंशोत्तरी नक्षत्रदशा के अरिष्टप्रद तथा मारक ग्रहों का निर्णय

१—निम्नलिखित ग्रहों को "पापी" संज्ञा दी जाती है (विंशोत्तरी दशा प्रसंग में)

(क) द्वितीयेश तथा द्वादशेश बृहस्पति, शुक्र, बुध तथा चन्द्र, यदि ये पाप स्थान (३,६,८,११) तृतीय, षष्ठ, अष्टम वा एकादश स्थान में हों, अथवा जिनकी अपनी दूसरी राशि पापस्थान में पड़े वा जो किसी त्रिषडायाधीश वा अष्टमेश के साथ हों।

(ख) द्वितीयेश बृहस्पति, शुक्र, बुध, चन्द्रमा यदि द्वितीयस्थ हों। द्वादशेश बृहस्पति, शुक्र, बुध, चन्द्रमा यदि द्वादशस्थ हो।

(ग) सप्तमेश बृहस्पति, शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा, ये यदि सप्तमस्थ हों तो "विशेष पापी"

(घ) द्वितीयेश, द्वादशेश, सप्तमेश मंगल यदि वह त्रिषडाय या अष्टम में हों।

(ङ) सूर्य के अतिरिक्त सभी षष्ठेश।

(च) सभी अष्टमेश। यदि वह अष्टमस्थ वा स्वराशि का होकर लग्नस्थ न हो।

(छ) षष्ठ, अष्ठम वा द्वादश स्थानगत चन्द्रमा।

(ज) शनि सर्वदा।

(झ) राहु वा केतु यदि वे पाप स्थानगत हों।

२—उपरोक्त पापी संज्ञक ग्रह यदि किसी उपरोक्त पापी संज्ञक ग्रह से सम्बन्ध करें तो वह अपनी महादशा में मारक फल देता है, और वह यदि किसी पाप ग्रह से सम्बन्ध न करे तो अपनी महादशा में केवल अरिष्टप्रद होता है।

—यहाँ सम्बन्ध के ये नियम हैं।

(क) विचाराधीन पापी ग्रह पर किसी पापी ग्रह की पूर्ण दृष्टि हो और वह उसे न देखता हो।

(ख) परस्पर दृष्टि हो (सप्तम दृष्टि)

(ग) विचाराधीन ग्रह, किसी दूसरे की राशि में हो और वह दूसरा ग्रह उसे देखता हो।

(घ) परस्पर एक दूसरे की राशि में हो—(यह प्रसिद्ध अन्योन्याश्रित योग है)

(ङ) दोनों एक साथ किसी एक ही राशि में बैठे हों।

(च) दोनों एक साथ कहीं बैठे हों।

उपरोक्त सम्बन्धों में से "क" सम्बन्ध मारक की दृष्टि से प्रबल सम्बन्ध है, उससे उतर कर "ग" सम्बन्ध है। "ख" तथा "च" बहुत ही साधारण सम्बन्ध हैं, परस्पर सम्बन्धित ग्रहों का मारकत्व (पापत्व) आपस में बट जाता है इसलिए मारक प्रसंग में ऐसा "ख" "च" निर्बल सम्बन्ध।

४—दृष्टि के नियम।

(क) सभी ग्रह अपने से सप्तमस्थ ग्रह को देखते हैं। यह साधारण दृष्टि सम्बन्ध है।

(ख) शनि अपने से तृतीयस्थ तथा दशमस्थ ग्रह को विशेष रूप से देखता है।

(ग) बृहस्पति अपने से पंचमस्थ तथा नवमस्थ ग्रह को विशेष रूप से देखता है।

(घ) मंगल अपने से चतुर्थस्थ तथा अष्टमस्थ ग्रह को विशेषरूप से देखता है।

५—उपरोक्त पापी संज्ञक ग्रह यदि किसी दूसरे उपरोक्त पापी संज्ञक ग्रह से सम्बन्ध करे तो उसकी "मारक" संज्ञा हो जाती है।

६—यदि कोई मारक ग्रह चन्द्र लग्न कुंडली में पापी ग्रह से सम्बन्ध करें अथवा चन्द्रमा से पाप स्थान ३,६,८,११ गत हो वह ग्रह निश्चयेन "मारक" हो जाता है। इस कपूर मध्य पाराशरी में पापी ग्रह का अर्थ है उपरोक्त नियम १ के अनुसार पापी संज्ञक ग्रह तथा पाप स्थान से तात्पर्य तृतीय, षष्ठ, अष्टम तथा एकादश स्थान वा भाव वा गृह से है। भाव वा गृह, लग्नस्थ राशि से लेकर द्वादश राशियों तक प्रथम द्वितीय भाव राशियां है, यहाँ भाव व राशि एक वस्तु है, चन्द्र कुंडली का अर्थ है चन्द्रमा जिस राशि में हो उसे लग्न

मान कर जो कुंडली बने। जब तक चन्द्र कुंडली की चर्चा न हो, सर्वत्र फल विचार में जन्म कुंडली ही समझना चाहिए।

७—जन्म कुंडली में एक से अधिक यदि मारक ग्रह हों तो उनमें से जिस ग्रह की प्रथमतः विंशोत्तरी दशा आवे उसमें जातक का निधन सम्भव होता है, पर जहाँ शनि वा अन्य ग्रह किसी मारक को लांघ लेता है तो उस मूल ग्रह में निधन न होकर लांघने वाले ग्रह में निधन होता है, ऐसी स्थिति में उस मूल मारक ग्रह की दशा "अमारक" हो जाती है और लाँघने वाले ग्रह की दशा मारक। यदि किसी लांघने वाले ग्रह की दशा जिसे वह लाँघता है उससे पहले ही पड़ जावे तो लांघने वाला ग्रह ही मारक रहता है।

मारक ग्रहों का अपवाद

८—(क) तृतीयेश, षष्ठेश, अष्टमेश तथा एकादशेश सूर्य या चन्द्रमा पापी तो होता है पर अन्य पापी ग्रह या ग्रहों से सम्बन्धित होने पर "मारक" नहीं होता, अर्थात् इनके सम्बन्ध से अन्य पापी ग्रह "मारक" हो जाते हैं, पर ये स्वयं मारक नहीं होते। द्वितीयेश, सप्तमेश चन्द्र पापी होकर अन्य पापी ग्रह से सम्बन्धित होकर "मारक" हो सकता है।

(ख) केन्द्रेश वा त्रिकोणेश सूर्य वा चन्द्र अर्थात् शुभ संज्ञक सूर्य वा चन्द्र यदि षष्ठेश एवं अष्टमेश इन दोनों ग्रहों से दृष्ट वा सम्बन्धित हों तो ये "मारक" हो जाते हैं पर पापी संज्ञक नहीं होते, अर्थात् इनसे सम्बन्ध करने से कोई पापी ग्रह "मारक" नहीं होता।

उदाहरण—वृश्चिक लग्न कुंडली में सूर्य दशमेश होकर शुभ है, वह सूर्य यदि मंगल तथा बुध षष्ठेश अष्टमेश इन दोनों से सम्बन्ध करे तो सूर्य "मारक" हो जाता है।

९—(क) परमोच्चांशगत ग्रह स्वयं "मारक" नहीं होता पर परिस्थितिवश "पापी" हो जाता है।

(ख) कोई उच्चस्थ या उच्चाभिलाषी पापी ग्रह यदि किसी नीचस्थ पापी ग्रह से वा अनेक पापी ग्रहों से सम्बन्ध न करे तो "मारक" नहीं होता।

(ग) नीचस्थ पापी ग्रह यदि किसी उच्चस्थ पापी ग्रह से सम्बन्धित हो तो भी वह "मारक" ही रहता है।

(घ) नीचस्थ पापी ग्रह यदि किसी नीचस्थ पापी ग्रह से सम्बन्ध करे तो वह "प्रबल मारक" हो जाता है।

(ङ) कोई पापी ग्रह जो स्वयं उच्चस्थ न हो यदि वह किसी उच्चस्थ पापी ग्रह से सम्बन्धित हो तो वह "मारक" ही रहता है यदि वह उच्चस्थ पापी ग्रह परमोच्चांश गत न हो,

(च) पापी परमोच्चांशगत ग्रह यदि अपने "परस्पर मित्र" पापी ग्रह से सम्बन्धित हो तो वह निश्चयेन "अमारक", मारक नहीं होता, पर यदि परस्पर मित्र पापी ग्रह भी परमोच्चांशगत हो तो पहले वाला विचाराधीन ग्रह अपने परस्पर मित्र आत्मसम्बन्धी ग्रह का बल लेकर कभी कभी स्वयं "मारक" हो जाता है।

१०—ग्रहों का परमोच्चांश तथा उनकी उच्च राशि।

(क) सूर्य ०।१०°, चन्द्रमा १।३°, मंगल ९।२८°, बुध ५।१५°, बृहस्पति ३।५°, शुक्र ११।२७°, शनि ६।२०°, राहु—वृष, केतु—वृश्चिक। इनसे सप्तम राश्यादि तत्तद् ग्रहों का नीच स्थान है तथा परम नीचांश है।*

(ख) कोई ग्रह अपने परमोच्चांश से ३०° पूर्व तक होने पर उच्चाभिलाषी कहा जाता है, उच्चाभिलाषी होने का फल उतना ही अधिक अच्छा होता है वह जितना परमोच्चांश के निकट हो। परमोच्चांश से आगे उसी राशि में रहने तक वह उच्चस्थ कहा जाता है, उच्च राशि छोड़ देने पर वह उच्चाभिलाषी नहीं कहा जाता।

११—परस्पर मित्र तथा परस्पर शत्रुग्रह।

(क) शनि शुक्र, शुक्र बुध, बृहस्पति मंगल, सूर्य चन्द्रमा, बृहस्पति सूर्य, सूर्य मंगल, ये परस्पर मित्र ग्रह हैं।

---

* अपनी कक्षाओं में चलते-चलते जब कोई ग्रह सूर्य से सबसे निकट अवस्था में आ जाता है तो उस समय की उसकी राशि "नीच राशि तथा अंश परम नीचांश होता है, इसी प्रकार अत्यधिक दूर होने पर उच्चस्थ कहा जाता है, ये उच्च नीच स्थान चल हैं पर फलित ज्योतिष में उपरोक्त उच्च-नीच राशियां रूढि [illegible] गई हैं। पर चन्द्रमा जब पृथ्वी के निकटतम होता है तो उसे नीच राशि, [illegible]तम दूरी वाली तात्कालिक राशि उच्चस्थ कही जाती है।

(ख) सूर्य शुक्र, सूर्य शनि, ये परस्पर शत्रु ग्रह हैं।
उपरोक्त परस्पर मित्र ग्रहों में शनि शुक्र अखड अभिन्न तथा बली परस्पर मित्र ग्रह हैं, इनसे उतर कर बृहस्पति मंगल की पारस्परिक मित्रता है, इनसे न्यून क्रमश: शुक्र बुध की, सूर्य चन्द्र की, बृहस्पति सूर्य की तथा सूर्य मंगल की परस्पर मित्रता है।

(अभिन्न परस्पर मित्र) शनि शुक्र के विषय में विशेष नियम।

१२—शनि जिस किसी पापी ग्रह से परस्पर सम्बन्ध करता है तो इससे सम्बन्धित ग्रह "अमारक" हो जाता है यदि उसकी महादशा शनि की महादशा से पूर्व पड़ती हो अर्थात् शनि अपने परस्पर सम्बन्धित मारक ग्रहों को लांघ कर स्वयं ही मारक हो जाता है यदि ऐसा "अमारक" ग्रह राहु से ग्रसित हो तो वह मारक ही बना रहता है।

१३—शनि चाहे (शुभ हो या पापी) वह जिस किसी भी पापी ग्रह से सम्बन्धित हो जाता है तो वह स्वयं "मारक" हो जाता है, अनेक पापी ग्रहों से सम्बन्धित होने पर "प्रबल मारक"।

१४—मारक शनि से यदि शुक्र तृतीयस्थ वा दशमस्थ हो तो शनि अपना "मारक" फल शुक्र की महादशा में देता है चाहे वह शुक्र शुभ ही क्यों न हो। ऐसी स्थिति में शनि "अमारक" होकर स्वयं नहीं मारता प्रत्युत उसका अभिन्न मित्र शुक्र मारता है।

१५—अमारक शनि से यदि मारक शुक्र तृतीयस्थ या दशमस्थ हो तो शनि का जो अमारक फल वह शुक्र की महादशा तथा शनि के अन्तर में होता है पर शुक्र मारक ही रहता है, अमारक शनि अर्थात् शुभ वा अशुभ शनि यदि किसी पापी से सम्बन्धित न हो और अमारक शुक्र यदि तृतीयस्थ वा दशमस्थ हो तो शुक्र भी अमारक रहता है।

१६—शनि शुक्र ये दोनों यदि अमारक हों और परस्पर सम्बन्ध करें अर्थात् परस्पर दृष्ट हों, एक साथ एक ही राशि में, पहला दूसरे की राशि में और पहला दूसरे को देखे तो शनि का फल शुक्र में तथा शुक्र का फल शनि की महादशा के परस्पर अन्तर में होता है जो फलत: अमारक होता है।

१७—मारक शनि तथा मारक शुक्र यदि परस्पर सम्बन्ध करे तो उपरोक्त नियम १४ के अनुसार शुक्र अमारक हो जाता है और शनि मारक बना रहता है पर यदि अमारक शुभ शुक्र का मारक शनि से अन्योन्याश्रित

सम्बन्ध हो तो शनि अपना मारक फल शुक्र में ही देगा क्योंकि ऐसी स्थिति में शनि का मारकत्व दोष शुक्र के सहयोग से नहीं हुआ प्रत्युत शनि किसी दूसरे पापी ग्रह के सम्बन्ध से मारक बना अस्तु ऐसी स्थिति में शुक्र अपने अभिन्न मित्र शनि का मारकत्व दोष अपने ऊपर ले लेता है। सारांश यह है कि मारक शनि तथा अमारक शुक्र यदि परस्पर दृष्ट हों, या दोनों एक ही राशि में बैठे हों अथवा दोनों परस्पर राशि में बैठे हों तभी मारक शनि का मारकत्व फल शनि की महादशा में न होकर शुक्र की महादशा में होता है।

१८—मारक शनि से मारक शुक्र का कोई सम्बन्ध न हो तो शुक्र मारक ही बना रहता है।

१९—शनि मारक हो वा अमारक, यदि वह मारक शुक्र से सम्बन्ध करे तो शुक्र अमारक हो जाता है और शनि मारक।

२०—शनि का जिस किसी भी पापी ग्रह से सम्बन्ध हो और इस सम्बन्ध करनेवाले पापी ग्रह से शुक्र का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध हो तो शनि अपना फल शुक्र की महादशा में देगा।

२१—उच्चस्थ मारक शनि मारता नहीं पर यदि वह अमारक शुक्र को देखे जिससे शुक्र मारक बन जाता है और शनि अमारक हो तो शुक्र पर उच्चस्थ शनि की दृष्टि शुक्र के लिए अमारक नहीं होती अर्थात् उच्चस्थ ग्रह की दृष्टि-मात्र से किसी ग्रह का मारकत्व दोष नष्ट नहीं होता।

२२—मारक शनि के साथ शुभ राहु या केतु बैठा हो अर्थात् राहु या केतु केन्द्र त्रिकोण में शनि के साथ हो तो राहु वा केतु मारक नहीं होता, पर यदि पाप स्थानगत राहु वा केतु शनि के साथ हो तो वह मारक हो जाता है।

परस्पर मित्र वृहस्पति मंगल के विषय में विशेष नियम।

२३—बृहस्पति की मंगल पर दृष्टि मंगल के लिए श्रेयस्कर होती है। पापी मंगल पर यदि पापी बृहस्पति की दृष्टि मात्र हो अर्थात् मंगल वृहस्पति से पंचमस्थ वा नवमस्थ हो, परस्पर दृष्टि न हो अथवा अन्य सम्बध न हो तो मंगल मारक होता हुआ भी नहीं मारता यदि वह अन्य पापी ग्रहों से सम्बन्ध न करे।

२४—पापी उच्चस्थ मंगल पर यदि उच्चस्थ वृहस्पति की दृष्टि मात्र हो (सप्तमस्थ नहीं) और मंगल पापी ग्रह से सम्बन्धित हो तो बलाबल

के अनुसार मंगल नहीं मारता। उसका राहु मुख में रहने का दोष भी नष्ट हो जाता है।

२५—अष्टमेश मंगल यदि लग्नस्थ या अष्टमस्थ हो और किसी पापी ग्रह से सम्बन्ध करे तो मारता नहीं पर मरणतुल्य अवस्था ला सकता है। इसी प्रकार अन्य अष्टमेश ग्रहों के विषय में भी जानना।

राहु और केतु के विषय में।

२६—राहु यदि जन्म लग्न से तृतीय, षष्ठ, अष्टम वा एकादश "त्रिषडाय तथा अष्टम" में बैठा हो तथा वह चन्द्रमा से द्वितीयस्थ वा अष्टमस्थ हो तो मारक हो जाता है।

२७—राहु लग्न से ३, ६, ८ तथा ११ स्थानगत होकर पापी शुक्र वा पापी बृहस्पति के साथ हों तो वह मारक हो जाता है।

२८—वृष राशि का राहु शुक्र के साथ या उससे दृष्ट हो, वह पापी होने पर भी प्रायः नहीं मारता।

२९—मीनस्थ राहु सदा अरिष्टप्रद होता है और यदि वह चन्द्रमा से द्वितीयस्थ या अष्टमस्थ हो तो वह मारक हो जाता है साथ ही यदि वह जन्म लग्न से भी द्वितीयस्थ, तृतीयस्थ वा षष्ठस्थ हो जावे तो निश्चय से मारक हो जाता है, केवल लग्न से अष्टमस्थ वा एकादशस्थ होने पर अरिष्टप्रदमात्र होता है। अन्य ग्रहों के योग से उसका फल तारतम्य से होता है। केतु की परिस्थिति राहु तुल्य है पर केतु प्रबल मारक नहीं होता।

मारक ग्रह की महादशा में मारक ग्रह के अन्तर का निर्णय।

३०—मारक महादशाधीश में इससे किसी प्रकार का सम्बन्ध रखनेवाला पापी ग्रह यदि महादशाधीश का आत्मसम्बन्धी हो वा उसका निज सहधर्मी हो तो उसके अन्तर में मारक महादशाधीश का मारक फल होता है। इसके अभाव में मारकेश ग्रह अपने ही अन्तर में मारक फल देता है।

३१—आत्मसम्बन्धी ग्रह ये हैं :—

(क) परस्पर मित्र ग्रह (ख) यदि कोई नीचस्थ हो तो दूसरा नीचस्थ, उच्चस्थ हो तो दूसरा कोई उच्चस्थ, स्वराशस्थि ग्रह (ग) एक उच्चस्थ, दूसरा शुभ केन्द्रपति योगकारी।

३२—निज सहधर्मी ग्रह ये हैं :—

(क) एक त्रिषडायाधीश, दूसरा अष्टमेश (ख) समस्त केन्द्रेश (ग) समस्त त्रिकोणेश (घ) द्वितीयेश, द्वादशेश।

३३ -- प्रत्येक ग्रह की दो राशियाँ होती हैं अर्थात् प्रत्येक ग्रह दो राशियों का स्वामी होता है (अतिरिक्त सूर्य चन्द्र के)। यदि विचाराधीन ग्रह की एक राशि त्रिषडाय में तथा उसकी दूसरी राशि त्रिकोण में हुई तो उसका निज सहधर्मी ग्रह वही होगा जिसकी भी एक राशि त्रिषडाय में तथा उसकी दूसरी राशि त्रिकोण में हो।

३४—(क) मारक ग्रह का आत्मसम्बन्धी यदि उसका सहधर्मी न हुआ तो उसके अन्तर में मारक फल में न्यूनता हो जाती है पर यदि आत्म-सम्बन्धी ग्रह मारक ग्रह का सहधर्मी भी हो तो मारक दशाधीश की दशा में और अपने अन्तर में मारक फल अवश्य देता है।

(ख) बुध शुक्र ये आत्म-सम्बन्धी हैं। यदि ये पापी होकर परस्पर सम्बन्ध करें तो मारक बुध की महादशा तथा शुक्र के अन्तर में मारक फल होगा पर यदि मारक या अमारक शुक्र अमारक शनि से दृष्ट हो तो शुक्र को शनि का फल प्राप्त होगा जो अमारक हो जाएगा इसलिए ऐसी परिस्थिति में शुक्र का अन्तर मारक न होकर बुध में शनि का अन्तर मारक हो जाएगा।

३५—मारक शनि का सम्बन्धी चन्द्र यदि राहु से ग्रसित हो तो शनि की महादशा और राहु के अन्तर में शनि का मारक फल होगा।

३६—मारक शनि की राशि में उसके साथ में बैठनेवाला राहु शनि की दशा तथा अपने अन्तर में मारता है।

३७—मारक राहु केतु के अन्तर में नहीं मारता।

३८—मारक शनि अपनी दशा तथा अपने परस्पर दृष्टादि सम्बन्ध करनेवाले ग्रह में नहीं मारता।

३९—परस्पर मित्र मारक ग्रह अपनी दशा तथा परस्पर मित्र के अन्तर में मारता है।

४०—परस्पर शत्रुग्रह आत्मविरोधी हैं। ये अपनी दशा तथा शत्रुग्रह के अन्तर में मारक फल नहीं देते। यदि ये सहधर्मी हो जावें तो तारतम्य से फल होता है।

४१—शनि यदि अष्टमेश हो और मारक चन्द्रमा अष्टमस्थ हो तो मारक शनि की दशा, चन्द्र के अन्तर में मारक फल होता है।

४२—अष्टमस्थ चन्द्र सदा पापवत् है।

विंशोत्तरी दशा के अरिष्टप्रद ग्रह

१. लग्नेश तथा अष्टमेश, इन दोनों के साथ बैठनेवाला ग्रह।

२. लग्नेश तथा षष्ठेश, इन दोनों के साथ बैठनेवाला ग्रह ।

३. षष्ठेश तथा अष्टमेश, इन दोनों के साथ बैठनेवाला ग्रह ।

४. षष्ठेश वा अष्टमेश के साथ बैठा केन्द्रेश सूर्य ।

५. वृष तथा तुला लग्न कुण्डली का मंगल (यदि उच्चस्थ आदि न हो)

६. जो ग्रह लग्नेश तथा अष्टमेश इन दोनों से ।

(क) केन्द्र में (ख) आपोक्लिम में (ग) एक से केन्द्र में दूसरे से आपोक्लिम में, (घ) एक से आपोक्लिम में, दूसरे से पणफर में (ङ) दोनों से पणफर में हो, तो वे ग्रह अरिष्टप्रद होते हैं । इनमें से योग संख्या 'क' तथा 'ख' विशेष अरिष्टप्रद हैं । इसी प्रकार लग्नेश तथा षष्ठेश से भी देखना चाहिए । दोनों रीति से फल एक ही आवे तो वह ग्रह निश्चय से अरिष्टप्रद होता है, यदि मारक हुआ तो निश्चय से मार देता है ।

उपरोक्त योग जानने की सरल सारणी ।

	केन्द्र में	आपोक्लिम में	केन्द्र मे वा आपोक्लिम	आपोक्लिम वा पणफर
ग्रह लग्नेश से यदि	१,४,७,१०	३,६,९,१२	१,४,७,१०वा	३,६,९,११
वही ग्रह अष्टमेश से यदि	१,४,७,१०	३,६,९,१२	३,६,९,१२	२,५,८,११
वही ग्रह षष्ठेश से यदि	१,४,७,१०	३,६,९,१२	३,६,९,१२	२,५,८,११

७. जो ग्रह लग्न से केन्द्र में तथा चन्द्रमा से पणफर २, ५, ८, ११ में हो वह शुभ होता है ।

८. जो ग्रह लग्न से जितने स्थान पर हो और वही षष्ठेश से जितने स्थान पर हो, इन दोनों संख्या का अन्तर ०, १, २, ३, या ७ हो तो वह ग्रह अरिष्टप्रद हो सकता है यदि अन्तर १० या १२ हो तो वह ग्रह शुभ होता है यदि मारक न हुआ तो ।

जन्म कुण्डली के निम्नलिखित योग अल्पायुकारक हैं, अल्पायु की अवधि ४० वर्ष तक है ।

१—नीचस्थ अष्टमेश पर नीचस्थ लग्नेश की दृष्टि तथा इन दोनों से नवमेश का सम्बन्ध । यहाँ सम्बन्ध का अर्थ लघुपाराशरी में वर्णित सम्बन्ध से है अर्थात् दृष्टि, स्थान तथा परस्पर राशिस्थ आदि सम्बन्ध ।

२—नीचस्थ नवमेश तथा नीचस्थ द्वादशेश का परस्पर अन्योन्याश्रित सम्बन्ध अर्थात् नवमेश द्वादश भावमें तथा द्वादशेश नवम में हो।

३—अष्टमेश नीचस्थ हो तथा चन्द्रमा भी नीचस्थ हो, और ये कुंडली में कहीं भी हों।

४—नीचस्थ लग्नेश कहीं भी तथा चन्द्रमा अष्टमस्थ हो।

५—नीचस्थ लग्नेश तथा नीचस्थ अष्टमेश कहीं भी।

६—नीचस्थ अष्टमेश के साथ लग्नेश कहीं भी।

उपरोक्त योगों का सारांश यह है कि आयुर्दाय की दृष्टि से नीचस्थ अष्टमेश नीचस्थ लग्नेश, नीचस्थ चन्द्रमा वा अष्टमस्थ चंद्रमा, ये उत्तम नहीं हैं। आयुबल देखने के लिए लग्नेश, अष्टमेश तथा चंद्रमा, इन तीनों से विचार करना चाहिये। ये यदि उच्चस्थ हुए तो आयु को बल प्राप्त होता है, ये जितना अपने उच्च के निकट होंगे उतनी अधिक आयु होगी। परमायु १२० वर्ष आंकनी चाहिए।

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
परमोच्च—	०।१०°	१।३°	९।२८°	५।१५°	३।५°	११।२७°	६।२०°
परमनीच—	६।१०°	७।३°	३।२८°	११।१५°	९।५°	५।२७°	०।२०°

कपूर आयुसाधन (उच्चांशवश)

साधारणतया—अष्टमेश, लग्नेश तथा चन्द्रमा जब अपने-अपने परमोच्चांश पर होते हैं तो उनमें से प्रत्येक ४० वर्ष आयु देते हैं पर परम नीचांश पर आयु ० शून्य वर्ष होती है। अपने परम नीचांश से ३० तीस अंश तक अर्थात् एक राशि आगे तक ६ व. ८ मा. प्राप्त होते हैं और उसके प्रत्येक अंश पर अनुपात आयु ० व.२ मा. २० दि. होती है,अपने परम नीचांश से अष्टमेश, लग्नेश तथा चन्द्रमा जितने अंश आगेउच्चांश तक व्यतीत कर चुका होगा जन्म कुंडली में उतने अंशों को वर्षादि ०।०।२।२० से गुणा करके तीनों ग्रहों के इस गुणनफल को जोड़ने से जातक की उच्चांशवश परमायु होती है। परमनीचांश पर आयु शून्य होती है।

उदाहरण :—

वृष लग्न कुंडली में लग्नेश शुक्र ७।२०° अष्टमेश बृहस्पति १।५° चन्द्रमा १०।३° हों तो।

शुक्र स्पष्ट ७।२०
परमनीच ५।२७

१।२३=५३° 'परमनीचांश से आगे ५३°×२. मा० २० दि=
११ व. ९ मा. १० दि०

बृहस्पति ११०५
परमनीचांश ९।०५

४.००=चार राशि अपने परमनीचांश से आगे ४×६° व ८ मा.=
२६ व. ८ मा.।

चन्द्रमा १०।३°
परमनीचांश ७।३°

३,०=तीन राशि अपने परमनीचांश से आगे ३×६ व ८ मा=
२४० मास=२० वर्ष।

अब ११।९।१०+२६।८+२०=वर्षादि ५८ वर्ष ५ मास १० दिन। यह उक्त जातक की उच्चांशवश परमायु होगी। अष्टमेश आदि ग्रह यदि अपनी परमोच्चांश से आगे हों तो उतने अंशों को ८० दिवसों से गुणा कर मूल को ४० वर्ष से घटाना चाहिए।

यदि इस प्रकार के आयु खण्ड में मारकेश की दशान्तर हुई तो मृत्यु होती है।

ग्रन्थान्तर प्रसिद्ध उच्चांशवश आयुसाधन

कुण्डली के सभी ग्रहों के अपने अपने परमोच्च स्थान पर रहने से वे जातक को जितनी आयु प्रदान करते हैं ग्रन्थों में उसे निसर्गायु तथा पिण्डायु कहा गया है। प्राचीन ग्रन्थों में ग्रहों के उच्चांशवश आयु निकालने की रीति इस प्रकार है :—

निसर्ग आयु प्रणाली में अपने परमोच्चांश पर प्रत्येक ग्रह जातक को निम्न आयु देते हैं :—चन्द्र १ वर्ष, सूर्य २० वर्ष; मंगल २ वर्ष; बुध ९ वर्ष;
बृहस्पति १८ वर्ष; शुक्र २० वर्ष; शनि ५० वर्ष=योग १२० वर्ष परमायु।

जब कोई ग्रह अपने परमोच्च पर रहता है तो वह उपर्युक्त आयु देता है, परमनीच पर होने से आयु का आधा रह जाता है अर्थात् अपने परमोच्च से आगे जो ग्रह जितना दूर परमनीच तक होगा, अनुपात से ग्रहप्रदत्त आयु के आधे में से उतनी आयु कम हो जाएगी। परमनीच से वह जितना आगे होगा ग्रह-

प्रदत्त आयु के आधे से आगे अनुपाततः उतनी आयु अधिक हो जाएगी। यहाँ नीच पर आयु शून्य नहीं होती प्रत्युत आधी हो जाती है।

गणना :—यदि कोई ग्रह परमोच्च से आगे परमनीच तक के बीच हो तो ग्रह स्पष्ट में से परमोच्च स्पष्ट घटावे, जो लब्धि हो उसे कला में परिवर्तित करे=क तब

$\frac{\text{क.} \times \text{ग्रह वर्ष}}{२१६००}$=ख.वर्ष; तब ग्रहवर्ष−ख=कुण्डली के उस ग्रह की आयु होती है।

यदि कोई ग्रह परमनीच से परमोच्च तक के बीच में हो तो ग्रहस्पष्ट में उसका परमोच्च स्पष्ट घटावे, जो शेष हो उसे कला में परिणत करे, मानो वह क. है तब

$\frac{\text{क} \times \text{ग्रह वर्ष}}{२१६००}$=वर्षादि ग्रह आयु।

उदाहरण :—

यदि किसी जातक का बुधस्पष्ट १।१४।२९ है। यह स्पष्ट बुध के परम-नीच स्पष्ट से आगे है अस्तु, बुध स्पष्ट १।२४।२९ में से बुध के परमोच्च स्पष्ट ५।१५ को घटाने से शेष ७।२९।२७ रहा=१४३६९। कला हुई इसे बुध निसर्ग आयु ९ से गुणा किया=१४३६९′ × ९=१२९३२१′. इसको २१६००′ से भाग दिया=

$\frac{१२९३२१}{२१६००}$=५वर्ष ११ मास, ११ दिवस यह जातक की बुधप्रदत्त आयु हुई। इसी प्रकार सभी ग्रहों की आयु निकालनी चाहिए। सभी का जोड़ जातक की कुण्डलीजन्य निसर्ग आयु होगी।

पिण्डायु प्रणाली भी इसी प्रकार है पर उसमें ग्रहों के दशावर्ष निसर्ग आयु से भिन्न इस प्रकार हैं :—सूर्य=१९ वर्ष, चन्द्र=२५ वर्ष, बुध=१२ वर्ष, बृहस्पति=१५ वर्ष, शुक्र=२१ वर्ष, शनि=२० वर्ष। योग १२७ वर्ष परमायु।

मङ्गल को छोड़ कोई ग्रह यदि अपनी शत्रुराशि में हों तो उसकी गणितागत आयु का १/३ भाग कम हो जाता है। शुक्र और शनि को छोड़ जो भी ग्रह अस्त होता है तो उसकी प्रदत्त आयु आधी हो जाती है।

नैसर्गिक आयुर्दाय में शनि बली आयुकारक है और पिण्डायु में चन्द्रमा बली आयुकारक ग्रह है। दोनों में बड़ा अन्तर है। नैसर्गिक परमायु १२० वर्ष तथा पिण्डायु की सीमा १२७ वर्ष है। किसी कुण्डली में दोनों प्रकार की

गणितागत आयु एक ही आई हो ऐसा लेखक को देखने में नहीं आया। यदि दोनों प्रकार से आयु एक समान या आसन्न हो तो वह आयु मान्य होगी।

जैमिनीय आयुर्दाय प्रकरण*

महर्षि जैमिनी के मत से आयुर्दाय के ३ भेद होते हैं १-दीर्घायु, २-मध्यायु, ३-अल्पायु। प्रत्येक का निर्णय भी ३ प्रकार से किया जाता है और प्रत्येक प्रकार में दो-दो अधिनायकों का विचार किया जाता है : वे हैं—(१) लग्नेश और अष्टमेश, (२) शनि और चन्द्रमा, (३) लग्न और होरालग्न। प्रत्येक प्रकार के दो अधिनायकों में-से दोनों चर-राशि में हों या कोई एक द्विस्वभाव में, दूसरा स्थिर राशि में हो तो जातक की दीर्घायु समझना। यदि दोनों द्विस्वभाव-राशि में हों अथवा कोई एक स्थिर राशि में दूसरा चर में हो तो मध्यायु समझना। इसके अलावा यदि दोनों स्थिर राशि में हों अथवा कोई एक चर राशि में दूसरा द्विस्वभाव राशि में हों तो अल्पायु समझना। यह सरलता से समझने और उपयोग के लिए आगे चक्र में दिया है—

आयुर्दाय-निर्णायक चक्र

दीर्घायु	मध्यायु	अल्पायु
एक चर में	एक द्विस्वभाव में	एक स्थिर में
दूसरा चर में	दूसरा द्विस्वभाव में	दूसरा स्थिर में
एक स्थिर में	एक चर में	एक चर में
दूसरा द्विस्वभाव में	दूसरा स्थिर में	दूसरा द्विस्वभाव में

दीर्घायु, मध्यायु और अल्पायु इन तीन आयु-कक्षाओं का निर्णय उपर्युक्त तीन प्रकार से होने के कारण प्रत्येक कक्षा के ३ खण्ड एवं कुल ९ खण्ड होंगे, जिनके वर्ष-मासादि सब विवरण आगे दिये गये हैं। मेष, कर्क, तुला, मकर राशियाँ चर हैं। वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशियाँ स्थिर तथा मिथुन, कन्या, धनु, मीन द्विस्वभाव राशियाँ हैं। उपर्युक्त तीनों प्रकार से दीर्घायु, मध्यायु या अल्पायु का निर्णय करना चाहिए तथा 'संवादात्प्रामाण्यम्' के अनुसार तीनों या दो प्रकार से जो आयु आये, उसे प्रमाण माने। विसंवाद में यानी तीनों

* विद्वद्वर श्री जगजीवनदास गुप्त, संपादक चिन्ताहरण जन्त्री, वाराणसी की कृपा अनुमति प्राप्त कर चिन्ताहरण जन्त्री १९७२ से साभार उद्धृत।

प्रकार से भिन्न-भिन्न आयु आये (किसी से दीर्घायु, किसी से मध्यायु और किसी से अल्पायु आये) तो द्वितीय और तृतीय प्रकारों में से कौन ग्रहण करना, इसका नियम बतलाते हैं—'पितृलाभगे चन्द्रे सति,चन्द्र मंदाभ्यां यदायु: समागच्छेत् तदेव ग्राह्यम् अन्यथा विसंवादे पितृ (लग्न) काल (होरा) लग्नाभ्यामदायु: समागच्छेत तदेव ग्राह्यम् । अर्थात् यदि चन्द्रमा लग्न में या सप्तम भाव में पड़ा हो तो द्वितीय प्रकार (चन्द्र शनि की स्थिति) से प्राप्त आयु को प्रमाण माने । यदि चन्द्र लग्न या सप्तम के सिवा अन्य किसी भाव में हो तो तृतीय प्रकार (लग्न और होरा लग्न* की स्थिति) से प्राप्त आयु को प्रमाण माने । विसंवाद में योगकर्त्ता चन्द्र के विषय में नियम बतलाने के बाद संवाद की स्थिति में मतैक्यकर्त्ता ग्रह शनि या गुरु हो तो उसके द्वारा होनेवाले कक्षा-ह्रास और कक्षा-वृद्धि का नियम बतलाते हैं—शनियोगहेतो कक्श्याह्रास: । अन्ये (केचनाचार्या:) विपरीतं (विलोमं) न कक्ष्याह्रास इति वदन्ति प्रत्युत केनाचार्य: कक्ष्यावृद्धि इति वदन्ति । अर्थात् शनि योग (आयु के त्रिविध भेद) का हेतु (निर्णायक) हो तो कक्षा-ह्रास होता है; इसके विपरीत कुछ आचार्यों के मतानुसार शनि-योग से कक्षा-ह्रास नहीं होता है, बल्कि कुछ के मतानुसार शनि-योग से कक्षा-वृद्धि होती है; किन्तु महर्षि जैमिनी के मत से शनि उच्च का या स्वक्षेत्री हो अथवा अन्यत्र केवल पापदृष्ट, युक्त न हो; बल्कि शत्रुक्षेत्री नीचास्तादि दोषयुक्त हो तभी कक्षा-ह्रास होता है,अन्यथा नहीं—यह अर्थात्सिद्ध है, (अर्थान्नीचराशौ शत्रुराशौ वा स्थिते शनौ कक्षाह्रासो नान्यत्र ।) इसी तरह आयु के त्रिविध भेद का निर्णायक गुरु हो और वह लग्न या सप्तम में पापयुक्त, दृष्ट न हो तथा अन्यत्र केवल शुभ ग्रह से युत, दृष्ट हो तब कक्षा-वृद्धि होती है (लग्न सप्तमगे गुरौ पापदृग्योगरहिते अन्यत्र केवल शुभदृग्योगिनीं च कक्षा-वृद्धि: ।) यहाँ 'कक्षा' उपलक्षण है; इससे वस्तुत: कक्षागत 'खण्ड' (श्रेणी) निपात-वृद्धि अभिलक्षित है; एतदर्थ आगे चक्र में जो ९ खण्ड दिये गये हैं, क्रमानुसार उन्हीं का उपयोग करना युक्तियुक्त है । यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि यदि दीर्घायु के प्रथम खण्ड में कक्षा वृद्धि का योग अथवा अल्पायु के तृतीय खण्ड में कक्षा-ह्रास का योग बने तो वहाँ ऊर्ध्वाधर खण्डाभाव में यह प्रक्रिया कैसे चरितार्थ होगी ? इस विषय में नये पुराने टीकाकारों के अनेक मत

---

*भावलग्न एवं होरालग्न-साधन की बड़ी सरल विधियाँ सन् १९७१ ई० की जंत्री में सोदाहरण प्रकाशित हैं; वहाँ देखिए ।

हैं; उन सबका विवेचन एवं समीक्षा यहाँ सम्भव नहीं। केवल गणितशास्त्र-दृष्टया एतद्विषयक अपने विचार मैं यहाँ प्रस्तुत करता हूँ। इस शास्त्र से परिचित प्रत्येक व्यक्ति यह भ.ी-भाँति जानता है कि ज्योतिष-गणित में मध्यममान के बगैर स्पष्टमानानयन कथमपि सम्भव नहीं, तदनुसार प्रस्तुत पद्धति में मानव का मध्यम (औसत) आयुष्य १२० वर्ष मान कर उसके स्पष्ट आयुर्दाय के तखमीने (Estimation) का गणितीय प्रयास किया गया है। यद्यपि इससे वर्ष, मास, दिन, घटी, पल, विपल पर्यन्त आयु स्पष्ट होती है, किन्तु पारमार्थिक रूपेण वह इत्थंभूत नहीं है; अर्थात् ठीक उसी वर्ष मास दिन घटयादि पर जातक का प्राणान्त नहीं हो जायेगा; प्रत्युत यहाँ गणितोपलब्ध आयुर्दाय पूर्वजन्मार्जित कर्मफल-बोधक ग्रहों के योगायोगवशात् वर्तमान जन्म के भोग्य वर्षादि का प्राक्कलन-मात्र है जिसमें केवल जन्माङ्गस्थ शनि, गुरु-कृत ह्रास-वृद्धि ही नहीं, बल्कि वर्तमान जन्म में स्वयं मानवकृत कर्म-जन्य न्यूनाधिक्य होना भी निसर्ग-सिद्ध एवं शास्त्रसम्मत है, अन्यथा धर्म-ग्रन्थों में नैतिकता एवं सदाचार के समस्त उपदेश और श्रुतिवाक्य 'शतायुर्वै पुरुषः। पश्येम शरदः शतम्, जीवेम शरदः शतम्।' इत्यादि व्यर्थ हो जायेंगे। अतः जिस जातक के दीर्घायु १ खण्ड में कक्षा-वृद्धि का योग प्राप्त हो, उसे आयुर्दाय की दृष्टि से 'औसत-मानव' से परे 'अति मानव' की कोटि का समझना चाहिये। ऐसा व्यक्ति अपने वर्तमान जीवन में नैसर्गिक यम नियमों के सम्यक् पालन से निर्बाधरूपेण १२० या उससे भी अधिक आयु का उपभोग कर सकते हैं, जिसके अनेक प्रमाण देश-विदेश में आज भी अक्सर मिलते रहते हैं। ऐसी स्थिति में दीर्घायु के प्रथम खण्ड में कक्षा-वृद्धि का योग बन जाने पर आगे स्पष्टायु गणित की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। इसी तरह अल्पायु के तृतीय खण्ड में कक्षा-ह्रास का योग बनने पर वहाँ तृतीय खण्ड-परक स्पष्टायु से भी पहले किसी प्रबलारिष्ट या मारक-ग्रहों की दशान्तर-दशा में जातक के अकाल-मृत्यु की सम्भावना समझनी चाहिये एवं उसके निवारणार्थ शास्त्रोक्त महामृत्युञ्जयादि प्रयोगों का निर्देश ज्योतिषी को कर देना चाहिये। अदृष्ट के आधार को लेकर जो गणित प्रवृत्त होता है, उसका परिणाम सम्भावनात्मक होता है, सर्वथा निश्चयात्मक नहीं—यह तथ्य किसी भी बुद्धिमान को समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिये; अस्तु। अब हम फलित-ज्योतिषानुरागियों के हितार्थ इस पद्धति का गणित-विवरण एवं उदाहरण यहाँ दे रहे हैं—

लेखारम्भ में कथित आयुर्दाय के १—दीर्घायु, २—मध्यायु, ३—अल्पायु को

त्रिविध कक्षाओं के वर्षमान ३२, ३६, ४० में-से प्रत्येक को क्रमशः १, २, ३ से गुण दें तो उन त्रिविध कक्षाओं के भी तीन-तीन खण्ड के वर्षमान हो जायेंगे, जिनमें १ से गुणित वर्ष-संख्या पूर्वोक्त एक प्रकार से आगत तीनों कक्षाओं के एक-एक खण्ड का वर्षमान होगा। इसी तरह दो और तीन से गुणित वर्ष-संख्यायें भी क्रमशः दो और तीन प्रकार से आगत प्रत्येक कक्षा के दूसरे-तीसरे खण्डों के वर्षमान होंगे; जैसा निम्नचक्र में सर्वथा स्पष्टांकित है—

	कक्षा-आयु	प्रकार	खण्ड	वर्षमान
आयु-खण्ड चक्र	प्रथम कक्षा दीर्घायु	तीनों प्रकार से	१	१२०
		दो प्रकार से	२	१०८
		एक प्रकार से	३	९६
	द्वितीय कक्षा मध्यायु	तीनों प्रकार से	१	८०
		दो प्रकार से	२	७२
		एक प्रकार से	३	६४
	तृतीय कक्षा अल्पायु	तीनों प्रकार से	१	४०
		दो प्रकार से	२	३६
		एक प्रकार से	३	३२

आयुर्दायक ग्रहों के राश्यारम्भ में रहने से वे स्व-कक्षा के वर्षमान (३२, ३६ या ४० के) तुल्य आयु देते हैं तथा राश्यन्त में रहने से वे कुछ भी आयु नहीं देते। इस तरह राशि के आरम्भ से अन्त तक के ३० अंशों में कक्षा-वर्ष का क्रमिक ह्रास होता है। अतः राश्यान्तर्गत ग्रह-भोगांश के वर्षादि-ज्ञान के लिए अनुपात करना चाहिए कि यदि ३० अंश में कक्षा-वर्ष तो ग्रह के भोगांश में क्या? यह अनुपात प्रत्येक आयुर्दायक ग्रह-भोगांश के लिए अलग-अलग न कर सम्मिलित रूपेण कर लेना चाहिए—तदर्थ सब आयुकारक ग्रहों के अंश, कला, विकला को जोड़कर योगफल में ग्रहों को संख्या का भाग दें एवं लब्धि अंशादि को उपर्युक्त अनुपात द्वारा वर्ष, मासादि में बदल लें। यह क्रिया निम्न सूत्रों से बड़ी सरलतापूर्वक सम्पन्न की जा सकती है—

प्रथम कक्षा-वर्ष ४० के लिए सूत्र—अंश × $\frac{४}{३}$वर्षादि, कला × $\frac{४}{१५}$=मासादि, विकला × $\frac{२}{१५}$=दिनादि।

द्वितीय कक्षा-वर्ष ३६ के लिए सूत्र–अंश $\times \frac{६}{५}$=वर्षादि, कला $\times \frac{६}{२५}$=मासादि, विकला $\times \frac{६}{२५}$=दिनादि।

तृतीय कक्षा-वर्ष ३२ के लिए सूत्र–अंश $\times \frac{१६}{१५}$=वर्षादि, कला $\times \frac{१६}{७५}$=मासादि, विकला $\times \frac{१६}{७५}$=दिनादि। सूत्र से प्राप्त वर्ष मासादि को स्वकक्षा संबधी खण्ड की वर्ष-संख्या में घटा दें तो शेष स्पष्ट-आयु के वर्ष मासादि होंगे। उपर्युक्त गणित को भली-भाँति समझ लेने के लिए यहाँ उदाहरण भी दिए जा रहे हैं —

(१) उदाहरण–इस जन्माङ्ग का पहले आयुर्दाय निर्णायक चक्र द्वारा विचार करें—

जन्माङ्ग



लग्नेश चन्द्र स्थिर (वृश्चिक ८) राशि में, अष्टमेश शनि चर (मकर १०) राशि में=मध्यमायु।

शनि चर (मकर १०) राशि में, चन्द्र स्थिर (वृश्चिक ८) राशि में, मध्यमायु जन्म-लग्न चर (कर्क४) राशि में होरा लग्न द्विस्वभाव (कन्या ६) राशि में=अल्पायु।

'संवादात्प्रामाण्यम्' के अनुसार दो प्रकार से मध्यमायु तथा 'आयु खण्ड-चक्र' के द्वारा द्वितीय कक्षा-मध्यमायु का द्वितीय-खण्ड (७२ वर्ष) निश्चित हुआ। यहाँ आयुर्दायक ४ हैं : १–लग्नेश, २–अष्टमेश, ३–शनि और ४–चन्द्र। अतः चारों के अंशादि का योग किया—

लग्नेश (चन्द्र)	१७°।२९'।४८"
अष्टमेश(शनि)	१५ ।१३ ।५५
शनि	१७ ।२९ ।४८
चन्द्र	१५ ।१३ ।५५

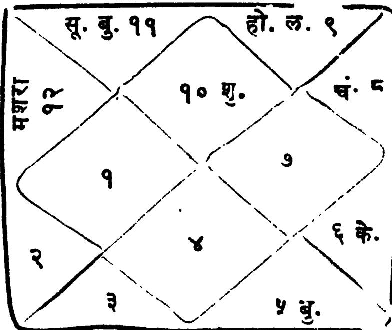
योग अंशादि ६५।२७।२६ हुआ, इसमें आयु-कारक ग्रह-संख्या ४ का भाग दिया तो लब्धि-अंशादि १६°।२१'।५१"।३०"' हुए, जिसे वर्षादि में परिवर्तित करने के लिए—अंश १६° $\times \frac{६}{५} = \frac{९६}{५}$=९६ ÷ ५=१९ वर्ष, शेष १ × १२=१२ ÷ ५=२ मास, शेष २ × ३०=६० ÷ ५=१२ दिन; कला २१' $\times \frac{६}{२५} = \frac{१२६}{२५}$= १२६ ÷ २५=५ मास, शेष १ × ३०=३० ÷ २५=१ दिन, शेष ५ × ६०=३००

÷२५=१२ घटी ; विकला $५१\frac{१}{२} \times \frac{३}{२५} = \frac{१०३}{२} \times \frac{३}{२५} = \frac{३०९}{५०}$ =३०९÷५०=६ दिन, शेष ९×६०=५४०÷५०=१० घटी, शेष ४०×६०=२४००÷५०=४८ पल ।

			वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
अर्थात्	१६	अंश=	१९	२	१२	०	०
	२१	कला=	०	५	१	१२	०
	५१½	विकला=	०	०	६	१०	४८

योग वर्षादि १९।७।१९।२२।४८ को मध्यमायु द्वितीय कक्षा के द्वितीय खण्ड की वर्ष-संख्या ७२ में घटाया तो शेष वर्षादि ५२।४।१०।३७।१२ बचे; अतः यही ५२ वर्ष ४ मास १० दिन ३७ घटी १२ पल जातक की स्पष्ट-आयु निर्णीत हुई ।

(२) उदाहरण—जन्मांग



लग्नेश शनि द्विस्वभाव (मीन १२) राशि में, अष्टमेश सूर्य स्थिर (कुम्भ ११) राशि में =दीर्घायु ।

शनि द्विस्वभाव (मीन १२) राशि में, सूर्य स्थिर (कुम्भ११) राशि में=दीर्घायु ।

जन्म-लग्न चर (मकर १०) राशि में, होरा लग्न द्विस्वभाव (धनु ९) राशि में =अल्पायु ।

यहाँ दो प्रकार से दीर्घायु सिद्ध होने के कारण प्रथम कक्षा के द्वितीय खण्ड का १०८ वर्षमान प्राप्त होता है । आयु-कारक ४ हैं । उनके अंशादि हैं—

लग्नेश (शनि)	१६°।१४'।५६"
अष्टमेश(सूर्य)	३ । ० । ४
शनि	१६।१४।५६
चन्द्र	१८।५४।४०

योग-फल अंशादि ५४।२४।३६ हुए । इसमें आयु-कारक ग्रह-संख्या ४ का भाग दिया तो लब्धि अंशादि १३°।३६'।९" हुए, जिसे वर्षादि में परिवर्तित

करने के लिए अंश १३ × ४/३ = ५२/३ = ५२ ÷ ३ = १७ वर्ष; शेष १ × १२ = १२ ÷ ३ = ४ मास; कला १२ × ४/५ = ४८/५ = ४८ ÷ ५ = ९ मास, शेष ३ × ३० = ९० ÷ ५ = दिन ; विकला ३ × २/५ = ६/५ = ६ ÷ ५ = १ दिन, शेष १ × ६० = ६० ÷ ५ = १२ घटी।

अर्थात्			वर्ष	मास	दिन	घटी
	१३	अंश=	१७	४	०	०
	३६	कला=	०	९	१८	०
	९	विकला=	०	०	१	१२

योगफल १८ । १ । १९ । १२ वर्षादि प्राप्त हुए। प्रस्तुत उदाहरण में आयु-कारक ग्रहों में शनि है तथा वह पाप-ग्रह राहु, मंगल से युत एवं केतु से दृष्ट ही नहीं, वल्कि शत्रु-क्षेत्री भी है। अतः यहाँ कक्षा-ह्रास की स्थिति उत्पन्न होती है। इसलिए दीर्घायु द्वितीय खण्ड के बजाय अधःस्थ तृतीय खण्ड के वर्ष-मान ९६ में उपर्युक्त वर्षादि १८।१।१९।१२ को घटाया तो शेष ७७ वर्ष १० मास १० दिन ४८ घटी स्पष्ट आयु जातक की सिद्ध हुई।

उपर्युक्त सूत्रों के गणित में गुणा भाग के श्रम की बचत के लिए आगे सारणियाँ भी दी जा रही हैं जिनके अंशादि फलों के योग-मात्र से वर्षादि ज्ञान हो जायेंगे। जैसे, प्रस्तुत उदाहरण में दीर्घायु अंशादि फल-सारणी के द्वारा भी १३ अंश का फल वर्षादि १७/४, ३६ कला का मासादि ९/१८ तथा ९ विकला का दिनादि १/१२ उपलब्ध होगा, जिनका यथारीति योग करने से वर्षादि १८।१।१९।१२ होंगे। सारणी के अभाव में गणित सम्पन्न करने के लिए ही उपर्युक्त सूत्र दिये गये हैं, अन्यथा सारणी के द्वारा बड़ी सरलता से फल वही प्राप्त होगा जो सूत्रों के द्वारा ; क्योंकि उन्हीं सूत्रों के आधार पर सारणियाँ बनायी गयी हैं।

जगजीवनदास गुप्त

आयुर्दाय के अनुभूत योग—रहै लग्नपति बहु बली शुभ खेचर से दृष्ट। साठ वर्ष सो जीवई मेटै सर्व अरिष्ट ॥ तनु ते, शशि ते पूर्ण शशि बुध गुरु भार्गव केन्द्र। रहै लग्न गुरु सो जियै सत्तर वर्ष नरेन्द्र ॥ रहै चन्द्रसुत बहु-बली शुभ खग कण्टक[१] माँहि। खेटहीन अष्टम भवन जीवै त्रिंश-समाँहि[२] ॥ लहै निधनगृह[३] सौम्य ग्रह सौम्य चतुष्टय बासि। चत्वारिंशत[४] वर्ष सो नर जीवै सुखभासि ॥ चन्द्र रहै निज भवन मँह तनु मद सौम्य न भोग। साठ वर्ष सो जन जियै यह भाषै बुधलोग ॥ शुभ ग्रह पञ्चम नवम गृह सुरगुरु लग्न कुलीर। असी वर्ष सो जन-जियै, कहैं देव चित धीर ॥ अष्टम-पति तनु मँह रहै, तनु-पति अष्टम भाव। क्रूर-दृष्ट चौबिस बरष तासु अयुर्दागाव॥ लग्नाष्ट-मपति मृत्यु-भवन, क्रूर विलोकति होइ। वर्ष सताइस जीवनो तासु कहै सब कोइ ॥ खलयुत गुरु तनु शशि बलहीना। अष्टम गृह मँह पाप मलीना ॥ आयु-र्बल द्वाविंशति साला। भाषै ताको बुद्धि विशाला ॥ खल ग्रह हीन लग्न औ' चन्दा। लग्ने गुरु त्रिषडाय[५] गमन्दा। खग-बिहीन मृतुगृह, शुभ केन्द्रा। सत्तरि वर्ष आयु कहि शन्द्रा ॥ रहै जीव तनु कर्कट रासी। शुक्र वीर्ययुत केन्द्र निवासी ॥ जीवै सो मानव सत वर्षा। सुत संपतियुत सदा सहर्षा ॥ कर्क लग्न तनुगत बागीशा। निज गृह केन्द्रे सौम्य कवीशा ॥ राहु शनैश्चर थिर त्रिष' डाया। जीवन तासु वर्ष शत गाया ॥

मृत्यु-समय-विचार—जिन अरिष्ट योगों में मरण नहीं कथित है, उन अरिष्ट योग-कारक ग्रहों में जो ग्रह बली हो, वह जन्म-समय जिस राशि में स्थित हो, उस राशि में जब चन्द्रमा आवे, तब कहना। (२) जन्म-काल में चन्द्रमा जिस राशि नक्षत्र में स्थित हो, जब फिर उसी राशि नक्षत्र में गोचर का चन्द्रमा आता हो, तब मरण कहना अथवा (३) चन्द्रमा जब लग्न राशि में आता है, तब मरण कहना। (४) वर्ष के भीतर जिस योगयुक्त स्थान में जाकर चन्द्रमा बली हो एवं पापग्रहों द्वारा देखा जाता हो, तब मरण कहना चाहिए ; किन्तु जबतक आयु का निर्णय न हो सके, तब तक अन्य विचार करना निरर्थक है ; इस वास्ते आयु का प्रथम विचार कर फिर मृत्यु-काल कहे।

(१) १, ४, ७, १० भाव। (२) ३० वर्ष। (३) अष्टम भाव। (४) ४० वर्ष। (५) ३, ६, ११ भाव।

दीर्घायु अंशफल-सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
वर्ष	४०	१	२	४	५	६	८	९	१०	१२	१३	१४	१६	१७	१८	२०	२१	२२	२४	२५	२६	२८	२९	३०	३२	३३	३४	३६	३७	३८	४०
मास	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०	४	८	०

कला-फल-सारणी

कला	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
मास	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२		३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७	८
दिन	८	१६	२४	२	१०	१८	२६	४	१२	२०	२८	६	१४	२२	०	८	१६	२४	२	१०	१८	२६	४	१२	२०	२८	६	१४	२२	०
कला	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
मास	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१६
दिन	८	१६	२४	२	१०	१८	२६	४	१२	२०	२८	६	१४	२२	०	८	१६	२४	२	१०	१८	२६	४	१२	२०	२८	६	१४	२२	०

विकला और प्रतिविकला-फल-सारणी

वि.	प्र.वि.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
दिन	घटी	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	४
घटी	पल	८	१६	१४	३२	४०	४८	५६	४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०

वि. प्र.वं.	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
दिन घटी	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	७	७	७	८
घटी पल	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	४	१२	२०	२८	३६	४४	५२	४

मध्यायु-अंश-फल-सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
वर्ष	३६	१	२	३	४	६	७	८	९	१०	१२	१३	१४	१५	१०	१८	१९	२०	२१	२२	२४	२५	२६	२७	२८	३०	३१	३२	३३	३४	३६
मास	०	२	४	७	९	०	२	४	७	९	०	२	४	७	९	०	२	४	७	९	०	२	४	७	९	०	२	४	७	९	०
दिन	०	१२	२४	६	१८	०	१२	२४	६	१८		१२	२४	६	१८	०	१२	२४	६	१८	०	१२	२४	६	१८	०	१२	२४	६	१८	०

कला-फल-सारणी

कला	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
मास	०	०	०	०	१	१	१	१	४	२	२		३	३	३	३	२	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	६	७
दिन	७	१४	२१	२८	६	१३	२०	२७	२	१२	१९	२६	३	१०	१८	२५	४	९	१६	२४	१	८	१५	२२	०	७	१४	२१	२८	६
घटी	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०

कला	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
मास	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१४	१४
दिन	१३	२०	२७	४	१२	१९	२६	३	१०	१८	२५	२	९	१६	२४	१	८	१५	२२	०	७	१४	२१	२८	६	१३	२०	२७	४	१२
घटी	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०

विकला और प्रतिविकला-फल-सारणी

वि.	प्र.वि.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
दिन	घटी	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३
घटी	पल	७	१४	२१	२८	३६	४३	५०	५७	४	१२	१९	२६	३३	४०	४८	५५	२	९	१६	२४	३१	३८	४५	५२	०		१४	२१	२८	३६
पल	विप.	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०

वि.	प्र.वि.	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
दिन	घटी	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७
घटी	पल	४३	५०	५७	४	१२	१९	२६	३३	४०	४८	५५	२	९	१६	२४	३१	३८	४५	५२	०	७	१४	२१	२८	३६	४३	५०	५७	४	१२
पल	विप.	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०

अल्पायु अंश-फल-सारणी

अंशाः	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
वर्ष	३२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
मास	०	०	१	२	२	४	४	५	६	७	८	८	९	१०	११	०	०	१	२	३	४	४	५	६	७	[illegible]	८	९	१०	११
दिन	०	२४	१८	१२	६	०	२४	१८	१२	६	०	२४	१८	१२	६	०	२४	१८	१२	६	०	२४	१८	१२	६	०	२४	१८	१२	६

कला-फल-सारणी

कला	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
मास	०	०	०	०	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	[illegible]	३	३	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	[illegible]	६
दिन	६	१२	१९	२५	२	८	१४	२१	२९	४	१०	१६	२३	२९	६	१२	१८	२५	१	८	१४	२०	२९	३	१०	१६	२२	२९	५	१२
घटी	२४	४८	१२	३६	०	३४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०

कला	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
मास	६	६	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२
दिन	१८	२४	१	७	१४	२०	२६	३	९	१६	२२	२८	५	११	१८	२४	०	७	१३	२०	२६	२	९	१५	२२	२८	४	११	१७	२४
घटी	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	५६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०

विकला और प्रतिविकला-फल-सारणी

विक.	प्र.वि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
दिन	घटी	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३
घटी	पल	६	१२	१९	२५	३२	३८	४४	५१	५७	४	१०	१६	२३	२९	३६	४२	४८	५५	१	८	१४	२०	२७	३३	४०	४६	५२	५९	५	१२
पल	विपल	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०

विक.	प्र.वि.	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
दिन	घटी	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६
घटी	पल	१८	२४	३१	३७	४४	५०	५६	३	९	१६	२२	२८	३५	४१	४८	५४	०	७	१३	२०	२६	३२	३९	४५	५२	५८	४	११	१७	२४
पल	विपल	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०	२४	४८	१२	३६	०

ग्रन्थान्तर प्रसिद्ध अरिष्टप्रद नक्षत्र

रेवती—अश्विनी, आश्लेषा–मघा, ज्येष्ठा-मूल इन नक्षत्रों की सन्धि को गण्डान्त कहते हैं। अश्विनी से लेकर प्रत्येक नौ नक्षत्रों के अन्त तथा दसवें के आरम्भ में (एक प्रहर प्रमाण) गंडान्त योग होता है; क्योंकि अश्विनी से नौ नक्षत्रों के अन्त में चार पूरी राशियों का अन्त हो जाता है। अश्विनी से आश्लेषा नवाँ नक्षत्र है। एक नक्षत्र १३°२० 'का होता है इसलिए १३°२०' ×९=१२०'=४ राशि=कर्क। इसी प्रकार आगे मघा अर्थात् सिंह से ज्येष्ठा तक नौ नक्षत्रों की ४ राशि वृश्चिक होती है। मूल (धनु राशि) से आरम्भ होकर नौ नक्षत्र रेवती तक ४ राशि मीन होती है। इस बीच किसी भी राशि का आरम्भ किसी नक्षत्र से अर्थात् नक्षत्र के प्रथम चरण से नहीं होता। मेष का आरम्भ अश्विनी (के प्रथम चरण) से, सिंह का आरम्भ मघा (प्रथम चरण) से, धनु का आरम्भ मूल (प्रथम चरण) से होता है। नौ नक्षत्रों की एक श्रृङ्खला जहाँ समाप्त होती और दूसरी आरम्भ हो जाती है उसे गण्ड (गाँठ) कहते हैं। वह श्रृङ्खला मीन, कर्क, तथा वृश्चिक में समाप्त होती है और मेष, सिंह, धनु से पुनः नौ नक्षत्रों की श्रृङ्खला आरम्भ हो जाती है। इसलिए ये तीन स्थान (रेवती–अश्विनी, आश्लेषा –मघा, ज्येष्ठा-मूल की संधियाँ) राशि-चक्र के तीन खण्ड (हिस्से) हैं। इन संधियों पर जब चन्द्रमा आता है तो उस समय जन्म लेने वाले जातक को घोर अरिष्ट होता है। इन सन्धियों की अरिष्ट सीमा निम्न प्रकार है—

(क) रेवती नक्षत्र का अन्तिम ४ दण्ड तथा अश्विनी के आरम्भ का ४ दण्ड अर्थात् चन्द्र ११।२९°।०' से ०।०°।५०' संध्यागड संज्ञक हैं।

(ख) आश्लेषा नक्षत्र का अन्तिम ४ दण्ड तथा मघा के आरम्भ का ४ दण्ड=चन्द्र ३।२९।१० से ४।० ५० तक=रात्रिगण्ड।

(ग) ज्येष्ठा नक्षत्र का अन्तिम ४ दण्ड तथा मूल के आरम्भ का ४ दण्ड= चन्द्रस्पष्ट ७।२९। ,० से ८।०।५०=तक दिवागण्ड वा अभुक्त मूल।

उपरोक्त गणना के अनुसार यदि किसी जातक की विंशोत्तरी दशा बुध-भोग्य १ वर्ष अथवा केतु भोग्यवर्षादि ६।८ से ७ वर्ष तक जन्म में हो तो उसका जन्म गण्डान्त में हुआ कहा जाएगा। इसे अपने तथा परिवार के लिए घोर अरिष्टप्रद समझना चाहिए।

(घ) ज्येष्ठा के भभोग का दशभाग करे, इसके जिस भाग में जातक का जन्म हो उसका फल निम्न होगा।

भाग	भाग	भाग	भाग
१—नानी	४—माता को	७—कुल के लिए	१०—सब के लिए
२—नाना	५—स्वयं को	८—वंश के लिए	अरिष्ट प्रद होता है।
३—मामा	६—कुल को	९—श्वसुर के लिए	

ज्येष्ठा नक्षत्र मंगलवार को जन्म हो तो बड़े भाई का नाश। ज्येष्ठा के प्रथम चरण में ज्येष्ठ भ्राता का, द्वितीय चरण में छोटे भाई का, तृतीय चरण में माता पिता का, चतुर्थ चरण में स्वयं का नाश होता है।

(ङ) मूल के प्रथम चरण में जन्म हो तो पिता का, दूसरे में माता का, तीसरे में धन का नाश करता है। मूल का चतुर्थ चरण शुभ है। पर मूल के चतुर्थ चरण में यदि चन्द्र ८।१२।२७, से ८।१३।३० का जन्मकालिक स्पष्ट हो तो यह भी चन्द्र की विषघटिका में जन्म हुआ कहा जाएगा जो अरिष्ट प्रद है। इस संबंध के इस ग्रन्थ में पाये चन्द्र विषघटिका सारणी देनी चाहिए। मूलनक्षत्र के भभोग काल का १५ वाँ हिस्सा करे (अर्थात् भभोग को १५ से भाग देकर जो लब्धि हो वह एक खण्ड होगा। ऐसे पन्द्रह खण्डों का फलादेश इस प्रकार है—

१=पिता; २=चाचा; ३=बहनोई; ४=मातापक्ष (नानी); ५=माता; ६=मौसी; ७=मामा; ८=चाची; ९=सबको; १०=पशु; ११=नौकर; १२=स्वयं; १३=ज्येष्ठभ्राता; १४=बहिन; १५=नाना—इन लोगों के लिए अरिष्टप्रद है।

(च) आश्लेषा प्रथम चरण=शुभ, द्वितीय चरण=धन के लिए अशुभ, तृतीय चरण=माता के लिए तथा चतुर्थ चरण पिता के लिए अरिष्टप्रद होता है।

(छ) अश्विनी, मूल, मघा के प्रथम चरण में पिता को, रेवती ज्येष्ठा श्लेषा के चतुर्थ चरण में पिता को अरिष्ट होता है।

(ज) रात्रि को रेवती के प्रथम चरण में माता को, दिन में ज्येष्ठा चतुर्थ चरण में पिता को, संध्या में आश्लेषा के चतुर्थ चरण में भ्राता को अरिष्टप्रद होता है। इन गण्डों में दिन को जन्म पिता को, रात्रि माता को, संध्या स्वयं को अरिष्टप्रद होता है।

पूर्वाषाढ़ धनुलग्न में जन्म=पिता का नाश; पुष्य कर्कलग्न=पिता की मृत्यु;

उ. फाल्गुनी प्रथम चरण, पुष्य द्वितीय चरण, चित्रा तृतीय चरण, भरणी पूर्वार्द्ध, हस्त तृतीय चरण, रेवती ४ चरण के अन्त भाग में जन्म लेने से पिता को अरिष्ट होता है, पुत्री के जन्म से माता को अनिष्ट होता है। अनिष्ट इन वर्षों में होता है :—

अश्विनी गंड का दोष=१६ वर्ष में, मघा गंड =८ वर्ष में; ज्येष्ठा=१ वर्ष, चित्रा और मूल=४ वर्ष, आश्लेषा २ वर्ष, रेवती १ वर्ष, उत्तरा २ मास पुष्य ३ मास, पू० षाढ़ ९ मास में पिता को अरिष्ट होता है। हस्त में जन्म होने से १२ वें वर्ष में पिता को अरिष्ट। अभुक्त मूल का बालक उसी क्षण पिता का नाश करता है।

आषाढ, पौष, मार्गशीर्ष, ज्येष्ठ, मास के गण्डदोष अधिक अरिष्टप्रद होते हैं। उनमें मृत्यु सम्भव है। अन्य मास के गण्ड उतने उग्र नहीं होते। उनका अरिष्टबल क्षीण हो जाता है।

वक्तव्य :—ग्रंथों में गण्ड दोष की अनेक उक्तियां हैं। प्राचीन समय में इस दोष को लोग इतना अधिक मानते थे कि यदि किसी बालक का जन्म अभुक्तमूल में हो जाए तो उसे परिवार का कोई व्यक्ति देखता भी नहीं था। वह कहीं दूसरी जगह पलने के लिए भेज दिया जाता था। अभुक्तमूल में जन्मे व्यक्तियों का इतिहास देखने पर लेखक ने उन्हें पारिवारिक अरिष्टों से घिरा पाया है। पर अन्य शुभ ग्रहों के प्रभाव से गण्डान्त दोष कम या दूर हुआ भी देखा गया है। गण्डान्त इत्थंभूत अरिष्टप्रद ही हो ऐसा नहीं है। जिस बालक का जन्म मूल में हो लोग उसका नाम मूलचन्द रख दिया करते हैं। जिसका नाम मूलचन्द हो समझना चाहिए कि उसका जन्म मूल नक्षत्र का है। उसकी जन्मराशि धनु है।

निम्नलिखित नक्षत्र विष घटिकाएं कही जाती हैं। इनमें जन्मे व्यक्ति को अरिष्ट होता है अर्थात् यदि किसी जातक के समय निम्न चन्द्र स्पष्ट हो तो अनिष्ट होगा।

जन्म कालिक अनिष्टप्रद चन्द्र विष घटिकाएं

नक्षत्र	चन्द्र स्पष्ट रा.अं.क.	नक्षत्र	रा. अं. क. रा. अं. क.
	५. ०. १—५. ०. १		५. ०. १—५. ०. १
अश्विनी	०.११.०७—०.१२. ०	स्वाती	६.०९.४७—६.१०.४०
भरणी	०.१८.४०—०.१९.३३	विशाखा	६.२३.०७—६.२४.००
कृत्तिका	१.०३.२०—१.०४.१३	अनुराधा	७.०५.३३—७. ६.३६
रोहिणी	१.१८.५३—१.१९.४६	ज्येष्ठा	७.१९.४७—७.२०.४०
मृगशिरा	१.२६..२७—१.२७.२०	मूल	८ १२.२१—८.१३.२०
आर्द्रा	२.११.२०—२.१२.१०	पूर्वाषाढ़	८.१८.४०—८.१९.३३
पुनर्वसु	२.२६.४०—२.२७.३३	उ०षाढ़	९.०१.०७ – ९.००.००
पुष्य	३. ७.४१—३. ८.३४	श्रवण	९.१२.१३—९.१३.०६
आश्लेषा	३.२३.४७—३.२४.४०	धनिष्ठा	९.२५.४३—९.२६.३६
मघा	४.०६.४०—४.०७.३३	शतभिषा	१०.१०.४०—१०.११.३३
पू. फा.	४.१७.४७—४.१८.४०	पू भाद्रपद	१०.२३.३०—१०.२४.२३
उ. फा.	५.००.४०—५.०१.५३	उ. भाद्रपद	११.०८.४०—११. ९.३३
हस्त	५.१४.४०—५.१५.३३	रेवती	११.२३.२०—११.२४.१३
चित्रा	५,२७.४१—५.२८.३४		

नोट—जातक देश मार्ग ग्रन्थ में विष घटिकाएँ घटी पल में दी गयी हैं जिन्हें हमने चन्द्र की राश्यादि स्पष्ट में परिणत कर ऊपर सारणी में जन्म कालिक अरिष्टप्रद चन्द्र स्पष्ट कर दिया है।

निम्नलिखित नक्षत्र में जन्मे व्यक्ति को निम्न फल होता है—

नक्षत्र	चरण	अरिष्ट	नक्षत्र	चरण	अरिष्ट	नक्षत्र	चरण	अरिष्ट
पुष्य	१	पिता को	पू०षाढ	१	माता को	मूल	१	पिता को
	२	माता को		२	चाचा को		२	माता को
	३	जातक को		३	जातक को		३	परिवार को
	४	मामा को		४	पिता को		४	स्वयं के लिए उन्नति

आश्लेषा	१	शुभ	हस्त	१	जातक को		
	२	परिवारके लिए		२	चाचा को		
	३	माता के लिए		३	माता को		
	४	पिता के लिए		४	पिता को		

जातक प्रकरण में नौ उपग्रहों की भी चर्चा है जो कल्पित है। इनकी गणना जातक ग्रंथों में है जिसका सारांश अरिष्ट प्रकरण हम देते हैं।

उपग्रह

(१) काल (२) परिवेष (३) धूप (४) अर्द्धयाम (५) यमकंटक
(६) इन्द्रधनु (शक्रचाप) (७) गुलिक (मांदि) (८) व्यतीपात
(९) ध्वज (उपकेतु)

इनमें से यमकंटक तथा गुलिक या मांदि का समय अनिष्टकर होता है। इसकी गणना जन्म के वार से होती है। दिवा या रात्रि में जो समय गुर्वंश का होता है, वह यमकंटक है तथा जो समय शन्यंश का होता है वह गुलिक या मांदी कहा जाता है।

गुलिक तथा यमकंटक के समय की सारणी

जन्म वार	गुलिक का समय			यम कंटक का समय		
	घं. मि		घं. मि.	घं. मि.		घं. मि.
रवि	१५.००	से	१६.३०	१०.००	–	१३.३०
सोम	११.३०	से	१५.००	१०.३०	–	१२.००
मंगल	१२.००	से	१३.३०	९.००	–	१०.३०
बुध	२२.३०	से	२४.००	७.३०	–	९.००
गुरु	९.००	से	१०.३०	६.००	–	७.३०
शुक्र	७.३०	से	९.००	१५.००	–	१६.३०
शनि	६.००	से	७.३०	१३.३०	–	१५.००

गुलिक को समय जन्म होने से अधिक अनिष्ट कर माना गाया है !

ताजिक (वर्ष फल संबंधी) ग्रंथों में मुंथा नाम का एक कल्पित ग्रह माना गया है जो जन्म लग्न से प्रति वर्ष एक राशि बढ़ता है। वार्षिक कुंडली में जब यह ग्रह अष्टमस्थ हो तो उस वर्ष अरिष्टप्रद होता है इत्यादि। इसके लिए ताजिक नीलकंठी पुस्तक देखनी चाहिए।

•समुद्री ज्वार भाटा

जन्म कुंडली में लग्नांश से चतुर्थांश के बीच जब चन्द्रमा हो या सप्तम ग्रह स्पष्ट से दशम स्पष्ट के बीच चन्द्रमा हो तो उस समय समुद्र की लहर घटती ओर लौटती Low tides होती है तथा कुंडली में चतुर्थ से सप्तम मध्य तथा दशम से लग्न स्थान के बीच चन्द्रमा हो तो उस समय समुद्र का जल चढाव (भाटा) की ओर होता है अर्थात् High tide बढ़ती Hiph tide चन्द्रमा बली तथा Low tide का निर्बल होता है। High tide बढ़ती भाटा के समय चन्द्रमा का पृथ्वी पर आकर्षण बढ़ जाता है जो मानव के मस्तिष्क पर भी प्रभाव डालता है। पर पूर्णिमा के दिन मानव का मस्तिक अधिक चंचल हो जाता है।

व्यतिपात, वैधृति तथा महापात

व्यतिपात व वैधृति ये दो पंचांग के योग हैं। शुभ नहीं माने गये हैं पर महापात तो जगत के लिए, मानव के लिए तथा उस समय में जन्मे जातक के लिए बहुत अनिष्टकारी माने जाते हैं। इसी प्रकार सूर्य या चन्द्र ग्रहण के समय का जन्म भी नेष्ट होता है। सूर्य और चन्द्रमा की जब उत्तर या दक्षिण की क्रांति declination सम होता है तो वह समय व्यतीपात (महापाल) तथा जब एक की क्रांति उत्तर और दूसरे की दक्षिण, या एक की दक्षिण और दूसरे की उत्तर में क्रांतिसाम्य Parrelal of declination होता है तो उसे महावैधृति (महापात) कहते हैं। अच्छे पंचांगों में यह समय दिया रहता है। इस महापात (व्यतीपात) तथा महापात (वैधृति) से उपरोक्त पंचांगों में दिये गये व्यतिपात व वैधृति से कोई संबंध नहीं है। इस महापात को पाश्चात्य फलित प्रकरण में भी बड़ा महत्व दिया गया है। यह तो सूर्य और चन्द्रमा की स्थिति हुई। पाश्चात्य ज्योतिष में सामयिक या चलित Progresied में भी सभी ग्रहों की आपस की समक्रांति Farrelal of declination गणना तथा उस पर फलादेश की पद्धति है।

सिनीवाली कुहू तथा दर्श नामक अमावस्या नेष्ट है। इन अमावस्याओं में जन्म अशुभ माना गया है। अच्छे पंचांगों में इसकी चर्चा रहती है।

जातकपारिजात ग्रन्थ के १८ वें अध्याय में वर्णित विंशोत्तरी दशा फलादेश का सारांश

(१) दशापति यदि शुभ ग्रह के साथ लग्नस्थ हो वा दशापति लग्नस्थ हो

या लग्न से ३।६।१०।११ स्थानों में (इनमें से किसी स्थान में) दशाधीश का मित्र ग्रह बैठा हो तो दशाधीश की दशा शुभ होती है ।। श्लोक ६ ।।

(२) दशाधीश की उच्चराशि में वा उसके मित्र ग्रहों की राशि में वा उससे ३।५।७।६।९।१०।११ स्थानों में से किसी स्थान में चन्द्रमा हो तो दशाधीश की दशा शुभफलद होती है । ऐसी स्थिति में चन्द्रमा जिस भाव में हो दशाधीश की दशा में उस भाव के अनुसार शुभ फल होता है ।। श्लोक ७।८ ।।

(३) दशाधीश लग्न में वा अपने मित्र ग्रह की राशि में हो अथवा वह षष्ठ दशम वा लाभ स्थान में हो और उसकी मित्र राशि में वा उच्च में वा उससे ५।७।९ स्थान पर वा उपचय में चन्द्रमा हो तो दशाधीश की दशा में शुभ फल होता है ।। १४ ।।

(४) शुभ ग्रह या मित्र ग्रह से युत वा दृष्ट ग्रह यदि स्वगृही, मित्र क्षेत्री वा उच्चस्थ हो तो उसकी दशा शुभ होती है ।। १५ ।।

(५) परस्पर मित्रग्रह की परस्पर दशा अन्तर में शुभफल की प्राप्ति होती है । परस्पर शत्रुग्रह की परस्पर दशा व अन्तर में अनिष्ट होता है ।। १६ ।।

(६) दशाधीश जिस भाव में हो वह यदि शुभफलद हो तो उस भाव सम्बन्धी शुभ फल को देता है । पापफलद होने से उस भाव का नाश करता है । शुभग्रह में शुभ, पाप में पाप फल होता है । शुभ-पाप योग से मिश्रित फल होता है ।। १८ ।।

(७) ग्रह जिस कार्य का कर्ताग्रह है अथवा जिस भाव का वह कारक है, जिस धातु का वह अधिपति है, ग्रह की शुभ दशा में तत्तद् सम्बन्धी शुभफल देता है, पापी होने से हानि होती है ।। १९।२०।२१ ।।

(८) षष्ठेश, अष्टमेश अस्तग्रह, राशिसंधिगत ग्रह, किसी भी राशि के ३० अंशगत ग्रह, नीचस्थ ग्रह, नीचस्थ ग्रहयुत ग्रह, राहुराशिपति ग्रह से युत ग्रह, अधिशत्रु ग्रह की राशि में स्थित ग्रह, बाधास्थान स्थित ग्रह वा बाधास्थानाधिपयुत ग्रह, परस्पर अष्टम षष्ठस्थान गत ग्रह, पीड़ित, दीन, खल ग्रह, अपनी दशा में अशुभ फल देते हैं । (श्लोक २५ से ३५) लग्नस्थ पापी ग्रह की दशा में पापी के अन्तर में अशुभ फल होता है ।। ४१ ।।

(९) शीर्षोदयराशिस्थ ग्रह का शुभाशुभ फल दशा के आरम्भ में; पृष्ठोदय

राशिस्थ ग्रह का शुभाशुभ फल दशा के अन्त में होता है तथा उभयोदय राशि में स्थित ग्रह की दशा का फल दशा भर बराबर होता रहता है।

शीर्षोदय राशि :—मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ।
पृष्ठोदय राशि :—मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर।
उभयोदय राशि :—मीन।

(१०) जातक का अल्पायुयोग हो तो उसके जन्मनक्षत्र से तृतीय नक्षत्र के स्वामी की दशा में, मध्यमायु वाले की पंचम नक्षत्र दशा में, पूर्णायु वाले की ८ वें नक्षत्र स्वामी की दशा में निधन होता है ॥ ३५ ॥

(११) दिन का जन्म हो तो सूर्यस्पष्ट + शनिस्पष्ट=जो राश्यादि स्पष्ट हो तत्तुल्य नक्षत्र के स्वामी की दशा और यदि रात्रि का जन्म हो तो चन्द्रस्पष्ट + राहुस्पष्ट=राश्यादि तुल्य नक्षत्र के अधिपति की दशा में निधन (अरिष्ट) होता है ॥ ३६ ॥

(१२) लग्नेश की दशा में शनि के अन्तर में धननाश, इष्ट बन्धु विरोध अवश्य होता है, इसी प्रकार जिस भाव के अधिपति (यदि पापी हो) उसमें पापी ग्रह के अन्तर में उस भाव का अनिष्ट करते हैं ॥४२॥

(१३) षष्ठेश अष्टमेश की परस्पर दशा अन्तर में पदच्युति होती है। यदि ये दोनों एक साथ बैठे हों तो परस्पर दशान्तर में निधन संभव है तथा जिस भाव में ये बैठे हों उस भाव का अनिष्ट करते हैं। आयु की दृष्टि से इनकी दशान्तर उत्तम नहीं हैं ॥ ५३ ॥

(१४) राहु की दशा में शुभ का अन्तर शुभ फलद, सूर्य को छोड़ अन्य पापान्तर पाप फलद होता है। कर्क, वृष, मेष में राहु हो तो लाभ, विद्याविनोद, राजमान, स्त्री-नौकर का सुख। कन्या, मीन, धनु राशि में स्थित राहु में स्त्री पुत्र का लाभ पर दशा के अंत में सब का नाश होता है। वृष, सिंह, कर्क, कन्या राशिस्थ राहु की दशा में राजा के सदृश सुख होता है। राहु की दशा में चन्द्रमा का अन्तर शुभ है पर ग्रंथान्तर में स्त्री लाभ के अतिरिक्त अन्य विषयों में अशुभ है (१०३–१०६)। राहु की दशा के आदि में दुःख, मध्य में सुख और अन्त में पिता का नाश और पदच्युति होती है।

विशेष—जातकपारिजात में जो ग्रहों का उपरोक्त फल कहा गया है वह साधारण उक्ति है। यहाँ सूर्य, मङ्गल, पापयुत बुध, क्षीण चन्द्रमा,

शनि, राहु, केतु ये पापी ग्रह हैं। चन्द्र, बुध, बृहस्पति शुक्र ये शुभ ग्रह हैं। यहाँ लघुपाराशरी के ग्रहों की शुभ, पापी संज्ञा लागू नहीं है।

विंशोत्तरीदशा भावकौतूहले

अष्टमर्क्षे तृतीयं च बुधैरायुरुदाहृतम्।
द्वितीयं सप्तमं स्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥ ७६ ॥

जन्मलग्न से अष्टम गृह तथा तृतीय गृह आयु स्थान हैं तथा जन्मलग्न से द्वितीय एवं सप्तम गृह मारक स्थान कहे जाते हैं।

मारकेशदशापाके मारकस्थस्य पापिनः।
पाके पापयुजां पाके सम्भवे निधनं दिशेत् ॥ ७७ ॥
असंभवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम्।
अभावे व्ययभावेशसम्बन्धग्रहभुक्तिषु ॥ ७५ ॥
तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः।
दुष्टतारापतेः पाके निर्वाणं कथितं बुधैः ॥ ७९ ॥

भावार्थ :—मारकेश की दशा आने पर वा मारक स्थान में बैठे पापी ग्रह की दशा में, वा मारकेश ग्रह के साथ बैठने वाले पापी ग्रह की दशा में जातक का निधन (मृत्यु) होता है। यदि ऐसी दशा न प्राप्त होती हो (अथवा ऐसी दशाओं में जातक की मृत्यु न हुई हो) तो जातक की मृत्यु व्ययाधीश की दशा में होती है। यदि ऐसे का अभाव हो तो व्ययाधीश से सम्बन्ध करने वाले ग्रह की दशा में, यदि उसका भी अभाव हो तो अष्टमेश की दशा में निधन होता है। बुद्धिमानों का कहना है कि दुष्टग्रह की दशा में भी निधन होता है।

उपर्युक्त श्लोकों में अभावे शब्द से तात्पर्य यह जान पड़ता है कि यदि किसी आयुखण्ड में उक्त मारक ग्रहों में से जिसकी भी दशा उसी आयुखण्ड में प्राप्त होती हो तो उस मारक ग्रह की दशा में मृत्यु होती है। पर इस सिद्धान्त से लेखक सहमत नहीं है। लघुपाराशरी में स्पष्ट लिखा है "कल्पनीयं बुधैर्नृणां मारकाणामदर्शने" कुण्डली में मारक ग्रह न प्राप्त होता हो तो मारक के सम्बन्धित ग्रह में निधन होता है। कर्क कुण्डली में द्वितीयेश सूर्य

तथा सप्तमेश शनि मारक नहीं है। वहाँ बुध मारक होगा, क्योंकि वह पापी है।

दूसरी स्थिति यह है कि किसी जातक के जन्म के पूर्व ही मारक दशा समाप्त हो चुकी होती है वहाँ दूसरा मारक देखना होता है। मेषलग्न में शुक्र दोहरा मारकेश है। किसी का जन्म कृत्तिका का हो तो वहाँ उसे शुक्र की दशा प्राप्त होगी ही नहीं। वहाँ बृहस्पति मारक होगा यदि वह अन्य पापी से संबंधित हो। यदि वही बृहस्पति नवम में सूर्य के साथ हो तो मारक नहीं होगा। वहाँ (मेष लग्न में) मंगल यदि अष्टमस्थ या लग्नस्थ हो और अन्य किसी पापी ग्रह से सम्बन्धित न हो तो वह भी मारक नहीं होगा। वहाँ बुध पापी है (षष्ठेश है) वह यदि शुक्र के साथ हो वा बृहस्पति शुक्र के साथ द्वितीय या सप्तम में हो तो बृहस्पति मारक हो सकता है। इसी प्रकार मारक निर्णय करने में अनेक परिस्थितियों (नियमों) पर विचार करना पड़ता है; अस्तु, जहाँ अलाभे, असंभवे शब्द का प्रयोग हुआ है, लेखक के मत से उसका यही भाव लेना चाहिए कि यदि किसी कुण्डली में कोई मारकेश संज्ञक ग्रह मारक गुण सम्पन्न न हो तो उसमें निधन न होकर दूसरे मारकेश में वा अष्टमेशादि में परिस्थितिवश निधन होता है, क्योंकि मारक स्थान वा द्वादश अष्टम स्थान का अधिपति होने मात्र से कोई भी ग्रह मारक नहीं बन जाता। अपि च कोई ग्रह मारक गुण युक्त हो तो भी उसकी दशा जन्म के पूर्व बीत जाने से उसे 'अलाभे' ही कहा जायगा। आयुबल होने पर संदिग्ध मारक ग्रह अरिष्टप्रद मात्र हो जाते हैं।

मन्दश्चेत्पापसंयुक्तो मारकग्रहयोगतः।
तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान् निहन्ता पापकृद्यदा ॥७३॥

शनि यदि पापग्रह से युक्त होकर किसी मारकेश से सम्बन्ध करे तो वह सभी ग्रहों को तिरस्कृत कर स्वयं मारने वाला हो जाता है।

यद्यद्भावगतो राहुः केतुश्च जनने नृणाम्।
यद्यद्भावेशसंयुक्तस्तत्फलं प्रदिशेदलम् ॥७२॥

राहु केतु जिस जिस भाव में बैठा हो, जिस जिस भावेश के साथ हो तदनुकूल फल देता है।

विंशोत्तरी मारक ग्रहों के सम्बन्ध में भावकौतूहल ग्रन्थ का मत।

अल्पमध्यमपूर्णायुः प्रमाणमिह योगजम्।
विज्ञाय प्रथमं पुसां ततो मारकचिन्तना ॥७४॥

मारकेशों का निर्णय करने के पूर्व अर्थात् किस मारकग्रह की दशा में जातक का निधन होगा—इसका निर्णय करने के पूर्व ज्योतिषी को जातक की कुण्डली के ग्रहों से उसके अल्प, मध्य तथा दीर्घायु योग जान लेना आवश्यक है क्योंकि आचार्यों का मत है कि आयुखण्ड (आयु कक्षा) के अन्दर ही जातक का निधन होता है। इस सिद्धांत से तीन प्रश्न उठते हैं—

(१) आयुनिर्णय सम्बन्धी रीतियों से यदि किसी जातक का आयुखण्ड अल्प हो और उस अल्प में कोई मारक ग्रह न पड़ता हो तो क्या उस खण्ड के भीतर शुभ ग्रह की भुक्ति में ही निधन हो जाएगा। लघुपाराशरी में एक जगह कहा भी है कि 'क्वचिद् शुभानां च दशा अष्टमेशदशासु च' यहाँ क्वचिद् शब्द का आशय है कि कभी कहीं ही (बहुत ही कम स्थिति में in rare cases) शुभ दशा में निधन होता है। अल्पायुखण्ड वाली कुण्डलियाँ ऐसी बहुत सी होंगी जिनके आयुखण्ड में मारकेश न पड़ता हो।

(२) यदि योगज अथवा अन्य आयुर्दाय रीति से किसी की आयु दीर्घायु आती हो और उसकी अल्पावस्था या मध्यावस्था में प्रबल मारकेश आ जाता हो तो क्या वह मारकेश अरिष्टप्रद मात्र होकर रह जायगा। उस जातक की मध्यावस्था के उपरान्त दीर्घखण्ड में कोई मारक न पड़ता हो तो क्या उसका निधन दीर्घखण्ड में पड़ने वाले शुभग्रह में होगा और पूर्व के सब मारक व्यर्थ हो जाएंगे।

(३) किसी की मध्यायु आँकी गई हो और उसकी अल्पावस्था या दीर्घावस्था में ही मारक पड़ते हों तो क्या स्थिति होगी?

लेखक के. अनुभव में ऐसा नहीं आया कि प्रबल मारक ग्रहों का मारक फल, आँके गए अल्प, मध्य, दीर्घायु खण्ड के ऊपर ही आश्रित हों। हाँ, यह देखा गया है कि दीर्घायु योग होने से मध्य के साधारण मारकेश अरिष्टप्रद मात्र हो जाते हैं पर यदि अल्पावस्था में कोई असंदिग्ध प्रबल मारक ग्रह आ गया तो उसकी दशा में मारक फल होता ही है। उदाहरणार्थ, मारकेशों के साथ का पापी शनि जब भी आवेगा उसकी दशा में निधन होगा ही चाहे

उसकी दशा जातक के अल्पभाग, मध्य या दीर्घ में पड़ती हो। जहाँ अकेला मारकेश होता है वहाँ आयुबल काम दे जाता है पर असदिग्ध प्रबल मारक में आयुबल कम काम देता है।

आयु की सीमा के विषय में आचार्यों के तीन मत हैं—(१) ३० वर्ष तक अल्पायु, ३० से ६० वर्ष तक मध्यमायु तथा ६० से ९० तक दीर्घायु, ९० से ऊपर अपरिमित आयु। (२) ३६ तक अल्प, ३६ से ७२ तक मध्यमायु, ७२ से १०८ वर्ष तक दीर्घायु, १०८ से ऊपर अपरिमित आयु। (३) ४० तक अल्पायु, ४० से ८० तक मध्यमायु, ८० से १२० तक दीर्घायु, १२० के ऊपर अपरिमित आयु। अधिकतर १०८ वर्ष की ही आयु सीमा मानी जाती है।

आयु के निर्णय करने को भी तीन प्रधान रीतियाँ हैं (१) ग्रहों का योगज-फल, (२) राशियों की परिस्थिति, (३) ग्रहों की उच्चादि अवस्था। आयु-निर्णय करने में ज्योतिषी लोग जैमिनीय की चर-स्थिर-द्विस्वभाव राशियों की स्थिति का उपयोग करते हैं। उस रीति से विचार करने के नियम में कई अपवाद (exceptions) हैं। ग्रहों के उच्च बल से भी विचार किया जाता है। इस ग्रन्थ में लेखक ने लग्नेश, अष्टमेश तथा चन्द्रमा के उच्चबल से आयु आँकने का अपना एक नियम लिखा है। उस आधार पर अनेक कुण्डलियों का आयुफल ठीक मिला, पर इसका यह दावा नहीं है कि उस रीति से निश्चित किया गया आयुफल इत्थंभूत ही है। उसमें भी कई अपवाद हैं, पर साधारण-तया वह रीति सरल तथा उपयोगी सिद्ध हुई है। ग्रहों की योगावली बहुत बड़ी हैं। ग्रन्थों में अल्पायु, मध्यमायु तथा दीर्घायु योगों की भरमार है, पर लेखक की दृष्टि में अधिकांश योग तो ऐसे हैं जो बिरले ही किसी कि कुण्डली में दिखाई पड़े हों भावकौतूहल ग्रन्थ में अल्पादि आयु निर्णय करने की एक सरल रीति दी है। वहाँ कहा है कि यदि लग्नेश सूर्य का मित्र हो तो जातक दीर्घायु होता है। इस कथन के अनुसार मेष, कर्क, वृश्चिक, धनु, मीन लग्न में जन्म लेनेवाले सभी जातक दीर्घायु होने चाहिए। यह बात तर्क तथा प्रत्यक्ष अनुभव के विरुद्ध होने से मान्य नहीं हो सकती। लेखक का ऐसा

अनुभव है कि फलित ज्योतिष में किसी एक बंधे नियम से आयुर्दाय का सही निर्णय करना एक भगीरथ प्रयत्न है। इसी प्रकार मारकेश व मारक पापी ग्रहों में से इत्थंभूत मारक का निर्णय करना भी बड़े ही अनुभव का काम है। कुछ कुण्डलियों में मारक स्पष्ट दीख पड़ते हैं और किसी में मारकों में ऐसी काट छाँट रहती है कि उनमें से कौन मार ही देगा—ऐसा निर्णय करना कठिन हो जाता है। लघुपाराशरी मनन के आधार पर विंशोत्तरी ग्रहों के मारक ग्रहों में जिसकी असंदिग्ध मारक दशा अल्पावस्था में ही आती हो और उसी समय कालचक्र में भी मारक राशि की दशा आती हो तो उसमें जातक की मृत्यु अवश्य होती है। ऐसा लेखक का अनुभव है, चाहे जातक की कुण्डली दीर्घ खण्ड या दीर्घ कक्षा की ही क्यों न हो। मारक प्रसंग में कुण्डली में कुछ ग्रह असंदिग्ध मारक हो जाते हैं और कुछ संदिग्ध। संदिग्ध के विषय में आयु-बल काम देता है। जिस प्रकार साध्य रोगी की बचत वैद्य द्वारा हो जाती है उसी प्रकार कुण्डली के संदिग्ध वा अकेले मारक (किसी से न सम्बन्ध करने वाले मारक) कुण्डली के दीर्घायु बल से मारक फल नहीं दे पाते। असाध्य-रोगी का वैद्य सिवा सुखपूर्वक अन्त करने के उसे जीवन प्रदान नहीं कर सकता, इसी प्रकार दीर्घायु कुण्डली में यदि कोई असंदिग्ध प्रबल मारक अल्प या मध्यकाल में पड़े तो दीर्घायु कुण्डली का बल जातक को जीवनीय शक्ति को बढ़ाने में असफल प्रयत्न करता रहता है। फिर दैववशात् प्रबल मारक में यदि कोई बच गया तो उसका निधन तब शुभ में होना मानना चाहिए। वहाँ 'क्वचित् शुभानां' मानना चाहिए।

कालचक्रदशा मारकप्रसंग में बड़ी उपयोगी दशा है। इस पर लेखक ने मनन किया और बहुत अंशों में सही पाया। उस दशा में सव्य नक्षत्रों की दशा का फल तो बहुत कुछ मिलता है पर अपसव्य में मतमतान्तर है। लेखक ने उस पर सविस्तर सोदाहरण टीका की है। वह ग्रंथ भी प्रकाशित होने जा रहा है। अरिष्ट तथा मारक निर्णय करने में विंशोत्तरी के साथ-साथ उस रीति का भी उपयोग करना चाहिए। दोनों रीतियों से लाए गए फल एक होने पर असंदिग्ध हो जाते हैं। लेखक ने पाठकों की सुविधा के लिए इस ग्रंथ में ही संक्षिप्त कालदशा का उल्लेख तथा फल दे दिया है। कालदशा का विस्तृत फल जानने के लिए लेखक की दूसरी पुस्तक देखनी चाहिए।

जन्म नक्षत्र संख्या में ३ अंक जोड़कर उसे ८ से भाग देने पर जो शेष हो वहाँ १ संख्या से ८ वा ० 'शून्य' तक क्रम से १=मंगला; २=पिंगला; ३=धान्या; ४ = भ्रामरी; ५ = भद्रिका; ६ = उल्का; ७ = सिद्धा; ८ = संकटा, इन आठ योगिनियों की दशा जन्म से आरंभ होती है। ऊपर चक्र में जन्म नक्षत्र के अनुसार जन्म समय जिस योगिनी दशा का आरंभ होता है वह दिया गया है और साथ में उस योगिनी के दशावर्ष एवं स्वामी ग्रह भी। उसके नीचे उसी योगिनी की अंतर्दशा के वर्षादि मान दिये गये हैं। उल्का, सिद्धा, संकटा की दशा तथा चन्द्र को छोड़कर शेष सभी के अंतर में योगिनियों के अंतरमान मास और दिवसों में ही है। जन्म नक्षत्र संबंधी योगिनी दशा की समाप्ति के उपरान्त उसके आगे की योगिनी दशा का आरम्भ होता है। यथा संकटा की दशा समाप्ति पर मंगला की दशा का आरम्भ होता है।

विंशोत्तरीवत् यहाँ भी जन्मनक्षत्र के भभोग भयात से जन्मकालिक योगिनी दशा का भुक्त भोग्य निकाला जाता है। यहाँ भी जन्मनक्षत्र की योगिनी के दशा॰ वर्ष X जन्मनक्षत्र भयात घटा भभोग=भुक्त-भभोग-भुक्त=जन्मकालिक भोग्य दशावर्षादि।

योगिनीदशा फलादेश का सार

(१) मंगला की दशा में जातक को शुभ फल की प्राप्ति होती है। धन, सुत, मान, आरोग्य आदि।

(२) पिंगला की दशा में जातक को वात, पित्त, कफ का रोग; मान की परम हानि, व्यग्रता, हित विवादादि।

(३) धान्या की दशा में जातक को परिवार में धन-धान्य की समृद्धि, राजद्वार में मान, स्वास्थ्य, स्त्री सुख, यशवृद्धि आदि।

(४) भ्रामरी की दशा में जातक को दूर-दूर भ्रमण, राजभय, सब प्रकार की परेशानी।

(५) भद्रिका की दशा में जातक को समुद्रपर्यन्त यश, ख्याति, शत्रुनाश, राजप्रीति, शुभ फल की प्राप्ति।

(६) उल्का की दशा में जातक को ज्वरादि प्रकोप, विवाद, स्त्री पुत्रादिको कष्ट, धन नष्ट, कलह आदि अशुभ फल।

(७) सिद्धा की दशा में जातक को उदार, सब प्रकार की सिद्धि, सब से सुख, शुभ फल की प्राप्ति।

(८) संकटा की दशा में जातक को परदेश वास, नृप तथा पशुओं से भय, शारीरिक रोग, स्वजनों से विवाद, अनेक संकट।

योगिनीदशा अन्तरदशा चक्र

नक्षत्र दशाधिप	मंगला		पिंगला		धान्या		भ्रामरी		भद्रिका		उल्का		सिद्धा		संकटा	
	दशा वर्ष १		दशा वर्ष २		दशा वर्ष ३		दशा वर्ष ४		दशा वर्ष ५		दशा वर्ष ६		दशा वर्ष ७		दशा वर्ष ७	
	चन्द्रमा		सूर्य		बृहस्पति		मङ्गल		बुध		शनि		शुक्र		केतु	
	६,१४,२२ आर्द्रा, चित्रा श्रवण		७ १५ पुनर्वसु, स्वाती २३ धनिष्ठा		८ १६ पुष्य, विशाखा २४ शतभिषा		१ ९ अश्विनी, आश्ले. १७ २५ अनु., पू. भाद्र		२ १० भरणी, मघा १८ २६ ज्येष्ठा, उ. भाद्र		३ ११ कृत्तिका, पू०फा० १९ २७ मूल, रेवती		४ १२ रोहणी, उ०फा० २० पू० षा०		५ १३ मृगशिरा, हस्त २१ उ० षा०	
	अन्तर	मा.दि.	अन्तर	मा.दि.	अन्तर	मा.दि.	अन्तर	मा. दि.	अन्तर	व.मा दि.	अन्तर	व.मा.दि.	अन्तर	व.मा.दि.	अन्तर	व.मा.दि.
	मं०	०.१०	पिं०	१.१०	धा०	३.००	भ्रा०	५. १०	भ०	८. १०	उ०	१. ० ०	सि०	१. ४.१०	सं०	१. ९.१०
	पिं०	०.२०	धा०	२.१०	भ्रा०	४.००	भ०	६. २०	उ०	१०. १०	सि०	१. २.०	सं०	१. ६.१०	मं०	०. २.२०
	धा०	१.००	भ्रा.	२.२०	भ०	५.००	उ०	८. ००	सि०	११. २०	सं०	१. ४.०	मं०	०. २.१०	पिं०	० ५ १०
	भ्रा०	१.१०	भ०	३.१०	उ०	६.००	सि०	९. ००	सं०	१३. १०	मं०	०. २.०	पिं०	० ४.२०	धा०	०. ८.००
	भ०	१.२०	उ०	४.००	सि०	७.००	सं०	१०. २०	मं०	१. २०	पिं०	०. ४.०	भ्रा०	*. ७.००	भ्रा०	०.१०.२०
	उ०	२.००	सि०	४.२०	सं०	८.००	मं०	१. १०	पिं०	३ १०	धा०	०. ६.०	भ्रा०	०. ९.१०	भ०	१. १ १०
	सिं०	०.१०	स०	५.१०	मं०	१.००	पिं०	२. २०	धा०	५. ००	भ्रा०	०. ८.०	भ०	०.११.२०	उ०	१. ३ ००
	सं०	२.२०	मं०	०.२०	पि०	२.००	धा०	४. ००	भ्रा०	६. २०	भ०	०. १०.०	उ०	१. २.००	सि०	१. ६.२०

जन्म नक्षत्र संख्या में ३ अंक जोड़कर उसे ८ से भाग देने पर जो शेष हो वहाँ १ संख्या से ८ वा ० 'शून्य' तक क्रम से १=मंगला, २=पिंगला; ३=धान्या; ४ = भ्रामरी; ५ = भद्रिका; ६ = उल्का; ७ = सिद्धा; ८ = संकटा इन आठ योगिनियों की दशा जन्म से आरम्भ होती है। ऊपर चक्र में जन्म नक्षत्र के अनुसार जन्म समय जिस योगिनी दशा का आरम्भ होता है वह दिया गया है और साथ में उस योगिनी के दशावर्ष एवं स्वामी ग्रह भी। उसके नीचे उसी योगिनी की अंतर्दशा के वर्षादि मान दिए गए हैं। उल्का, सिद्धा, संकटा की दशा तथा चन्द्र को छोड़कर शेष सभी के अंतर में योगिनियों के अंतरमान मास और दिवसों में ही हैं। जन्म नक्षत्र सम्बन्धी योगिनी दशा की समाप्ति के उपरान्त उसके आगे की योगिनी दशा का आरम्भ होता है। यथा संकटा की दशा समाप्ति पर मंगला की दशा का आरम्भ होता है।

विंशोत्तरीवत् यहाँ भी जन्मनक्षत्र के भभोग भयात से जन्मकालिक योगिनी दशा का भुक्त भोग्य निकाला जाता है। यहाँ भी जन्मनक्षत्र की योगिनी के दशावर्ष × जन्मनक्षत्र भयात बटा भभोग=भुक्त-भभोग-भुक्त=जन्म-कालिक भोग्य दशावर्षादि।

योगिनीदशा फलादेश का सार

(१) मंगला की दशा में जातक को शुभ फल की प्राप्ति होती है। धन, सुख मान, आरोग्य आदि।

(२) पिंगला की दशा में जातक को वात, पित्त, कफ का रोग; मान की परम हानि, व्यग्रता, हित विवादादि।

(३) धान्या की दशा में जातक को परिवार में धन-धान्य की समृद्धि, राज-द्वार में मान, स्वास्थ्य, स्त्री सुख, यशवृद्धि आदि।

(४) भ्रामरी की दशा में जातक को दूर-दूर भ्रमण, राजभय, सब प्रकार की परेशानी।

(५) भद्रिका की दशा में जातक को समुद्रपर्यन्त यश, ख्याति, शत्रुनाश, राजप्रीति, शुभ फल की प्राप्ति।

(६) उल्का की दशा में जातक को ज्वरादि प्रकोप, विवाद, स्त्री पुत्रादिको कष्ट, धन नष्ट, कलह आदि अशुभ फल।

(७) सिद्धा की दशा में जातक को उदार, सब प्रकार की सिद्धि, सब से सुख, शुभ फल की प्राप्ति।

(८) संकटा की दशा में जातक को परदेश वास, नृप तथा पशुओं से भय, शारीरिक रोग, स्वजनों से विवाद, अनेक संकट।

संक्षिप्त कालदशा चक्र

१० सव्य नक्षत्र (प्रथम वर्ग)	नक्षत्र चरण	परमायु वर्ष	देहराशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	जीवराशि दशा वर्ष
१ अश्विनी, ३ कृत्तिका, ७ पुनर्वसु,	१	१००	१ मेष ७	२ वृष १६	३ मिथुन ९	४ कर्क २१	५ सिंह ५	६ कन्या ९	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७	९ धनु १० वर्ष
१३ हस्त, १५ स्वाति, १९ मूल,	२	८५	१० मकर ४	११ कुंभ ४	१२ मीन १०	[८] वृश्चिक ७	७ तुला १६	६ कन्या ९	(४) कर्क २१	(५) सिंह ५	(३) मिथुन ९ वर्ष
१५ पूर्वाभाद्र २१ उ० षाढ़, ९ आश्लेषा	३	८३	२ वृष १६	१ मेष ७	१२ मीन १०	११ कुंभ ४	१० मकर ४	९ धनु १०	[१] मेष [illegible]	२ वृष १	३ मिथुन ९ वर्ष
७२ रेवती	४	८६	४ कर्क २१	५ सिंह ५	६ कन्या ९	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७	९ धनु १०	१० मकर ४	११ कुंभ ४	१२ मीन १० वर्ष

५ सव्यनक्षत्र (द्वितीयवर्ग) २ भरणी, ८ पुष्य, १४ चित्रा, २० पू० षाढ़, २६ उ० भा०	नक्षत्र चरण	परमायु वर्ष	देहराशि दशा वर्ष	शिरा दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	जीवराशि दशा वर्ष
	१	१००	[८] वृश्चिक ७	७ तुला १६	६ कन्या ९	(४) कर्क २१	'५' सिंह ५	(३) मिथुन ९	२ वृष १६	१ मेष ७	१२ मीन १०वर्ष
	२	८५	११ कुंभ १६	१० मकर ४	९ धनु १०	[१] मेष ७	२ वृष १६	३ मिथुन ९	४ कर्क २१	५ सिंह ५	६ कन्या ९वर्ष
	३	८३	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७	९ धनु १०	१० मकर ४	११ कुंभ ४	१२ मीन १०	[८] वृश्चिक ७	७ तुला १६	६ कन्या ९वर्ष
	४	८६	(४) कर्क २१	(५) सिंह ५	(३) मिथुन ९	२ वृष १६	१ मेष ७	१२ मीन १०	११ कुंभ ४	१० मकर ४	९ धनु ९वर्ष

	नक्षत्र चरण	परमायु वर्ष	जीवराशि दशावर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	देहराशि दशा वर्ष
४ अपसव्य नक्षत्र (तृतीयवर्ग) ४ रोहिणी, १० मघा, १६ विशाखा, २२ श्रवण	१	८६	९ धन १०	१० मकर ४	११ कुम्भ ४	१२ मीन १०	१ मेष ७	२ वृष १६	३ मिथुन ९	(५) सिंह ५	'४' कर्क २१
	२	८३	६ कन्या ९	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७	[१२] मीन १०	११ कुम्भ ४	१० मकर ४	९ धनु १०	८ वृश्चिक ७	७ तुला १६
	३	८५	६ कन्या ९	५ सिंह ५	४ कर्क २१	३ मिथुन ९	२ वृष १६	१ मेष ७	[९] धनु १०	१० मकर ४	११ कुम्भ ४
	४	१००	१२ मीन १०	१ मेष ७	२ वृष १६	३ मिथुन ९	(५) सिंह ५	'४' कर्क २१	(६) कन्या ९	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७

८ अपसव्य नक्षत्र (चतुर्थ वर्ग) ५ मृगशिरा, ६ आर्द्रा, ११ पू० फा०, १२ उ० फा०, १७ अनुराधा, १८ ज्येष्ठा, २३ धनिष्ठा, २४ शतभिषा	नक्षत्र चरण	परमायु वर्ष	जीवराशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	राशि दशा वर्ष	देहराशि दशा वर्ष
	१	८६	[१२] मीन १०	११ कुम्भ ४	१० मकर ४	९ धनु १०	८ वृश्चिक ७	७ तुला १६	६ कन्या ९	५ सिंह ५	४ कर्क २१
	२	८३	३ मिथुन ९	२ वृष १६	१ मेष ७	[९] धनु १०	१० मकर ४	११ कुम्भ ४	१२ मीन १०	१ मेष ७	२ वृष १६
	३	८५	३ मिथुन ९	(५) सिंह ५	४ कर्क २१	(६) कन्या ९	७ तुला १६	८ वृश्चिक ७	[१२] मीन १०	११ कुम्भ ४	१० मकर ४
	४	१००	९ धनु १०	८ वृश्चिक ७	७ तुला १६	६ कन्या ९	५ सिंह ५	४ कर्क २१	३ मिथुन ९	२ वृष १६	१ मेष ७

राशियो तथा राशीशों के दशावर्ष	राशि	मेष वृश्चिक	वृष तुला	मिथुन कन्या	कर्क	सिंह	धनु मीन	मकर कुम्भ
	राशीश दशा वर्ष	मंगल ७	शुक्र १६	बुध ९	चंद्रमा २१	सूर्य ५	बृह० १०	शनि ४
समस्त सव्य नक्षत्रों के महादशा वर्ष		महादशावर्ष	चरण १ १००	चरण २ ८५	चरण ३ ८३	चरण ४ ८६		
समस्त अपसव्य नक्षत्रों के दशा वर्ष	अपसव्य नक्षत्र	महादशावर्ष	१ ८६	२ ८३	३ ८५	४ १००		

(१) कालचक्रदशा नक्षत्रों के चरणों की दशा होती है। एक नक्षत्र चरण में नौ राशियों की दशा चलती है। किसी नक्षत्र चरण में जिन नौ राशियों की दशा होती है उनकी दशा का योग उस नक्षत्र चरण की महादशा वर्ष है जिसे परमायु कहते हैं।

(२) कालचक्रदशा नक्षत्रों के उपरोक्त चार वर्गों में विभक्त है। प्रथम तथा द्वितीय वर्ग के नक्षत्र सव्य नक्षत्र कहे जाते हैं। तृतीय तथा चतुर्थ वर्ग के नक्षत्र अपसव्य नक्षत्र कहे जाते हैं।

(३) प्रथम वर्ग (सव्य नक्षत्रों) के नक्षत्र चरण के महादशा में जिस राशि से दशा का आरंभ होता है उसे देहराशि कहते हैं और द्वितीय वर्ग के अपसव्य नक्षत्रों के चरण के महादशाचक्र में जिस राशि से दशा का आरम्भ होता है उसे जीवराशि कहते हैं। प्रथम वर्ग सव्य नक्षत्र चरण की महादशा जिस राशि में समाप्त होती है उसे जीवराशि कहते हैं। द्वितीय वर्ग अपसव्य नक्षत्र चरण की महादशा जिस राशि में समाप्त होती है उसे देहराशि कहते हैं।

(४) एक नक्षत्र चरण के महादशाचक्र (नौ राशियों की दशा) की समाप्ति पर उससे द्वितीय चरण की दशा का आरम्भ होता है। जब वर्तमान जन्म नक्षत्र चरण की महादशा में भोग्य राशियों की दशा समाप्त होती है तो यदि जन्म नक्षत्र का चरण चतुर्थ हुआ तो उससे आगे वाले नक्षत्र के प्रथम चरण की महादशा का आरम्भ होता है। जब दूसरे चक्र का आरम्भ होता है तो वह पहली महादशा की देह और जीवराशि

बदल जाती है और तब दूसरे चक्र की आरम्भ व अंत वाली राशि, देह जीव या जीव देह राशियाँ हो जाती हैं।

(५) क—प्रथम वर्ग के सव्य नक्षत्रचरणों की महादशा में जब यहाँ मीन राशि के बाद ही वृश्चिक राशि की दशा चलने लगती है अथवा धनुराशि के बाद ही मेष की दशा आती है वहाँ वृश्चिक अथवा मेष की दशा को सिंहावलोक गति कहते हैं।

ख—द्वितीय वर्ग के अपसव्य नक्षत्रचरणों में जहाँ वृश्चिक के बाद ही मीन राशि अथवा मेष के बाद ही धनु राशि की दशा चल पड़ती है तो वहाँ मीन तथा धनुराशि की दशा को सिंहावलोक गति कहते हैं।

(६) क—प्रथम वर्ग (सव्य नक्षत्रों) चरणों की महादशा में जहाँ कन्या के बाद कर्कराशि तथा वहाँ सिंह के बाद मिथुन राशि की दशा लगती है वहाँ कर्क तथा मिथुन राशि को माण्डूकी गति कहते हैं और वहीं सिंह राशि को मर्कटी राशि कहते हैं।

ख—द्वितीय वर्ग अपसव्य नक्षत्रचरणों की महादशा क्रम में जहाँ मिथुन के बाद सिंह तथा कर्क के बाद कन्या राशि की दशा आती है वहाँ सिंह तथा कन्या राशि को दशाओं को माण्डूकी गति तथा कर्क की दशा को मर्कटी गति कहते हैं।

(७) उपरोक्त सारणी में सभी पदार्थ १ से ६ तक दे दिए गए हैं। (क) नक्षत्रों के नाम तथा उनकी अश्विनी से गिनती कर नक्षत्रसंख्या। (ख) नक्षत्र चरण। (ग) नक्षत्र चरण की महादशा वर्ष जिसे परमायु भी कहते हैं। (घ) तत्तद् नक्षत्र चरण की महादशा में क्रम से राशियों की संख्या, राशियों के नाम तथा उसी कोष्ठक में राशि के नीचे राशि के दशा वर्ष दे दिए गए हैं। वहाँ जिस राशि संख्या को [ ] कोष्ठक में दिखाया गया है वह सिंहावलोक राशि है, ( ) गोल घेरे वाली राशि मण्डूक गति संज्ञक राशि है, ' ' ब्रैकेट वाली राशि मर्कटी राशि है।

उदाहरण:—कृत्तिका (वा प्रथम वर्ग के किसी भी नक्षत्र) के द्वितीय चरण की काल दशा का विवरण यहाँ है—महादशा वर्ष ८५, देहराशि मकर, जीवराशि मिथुन तथा यहाँ वृश्चिक

सिंहावलोक, कर्क तथा मिथुन मण्डूकगति संज्ञक राशियाँ तथा सिंह मर्कटी राशि है। पर कृत्तिका या प्रथम वर्ग के किसी भी नक्षत्र के चतुर्थ चरण में कर्क, सिंह, वृश्चिक ये राशियाँ साधारण राशियाँ हैं। वहाँ वृश्चिक सिंहावलोक नहीं है और न कर्क माण्डूकी।

नक्षत्र भभोग, भयात, भोग्य से नक्षत्र चरण के भोग, भुक्त, भोग्य काल जानने की रीति

एक नक्षत्र में चार चरण होते हैं अर्थात् एक चरण नक्षत्र का चौथा हिस्सा है। इसलिए किसी भी नक्षत्र के भभोग (सर्वर्क्ष) को ४ से भाग देने से लब्धि उस नक्षत्र के चरण का भोगकाल होगा।

उदाहरण :—

कृत्तिका सर्वर्क्ष यदि घ० ६० प० ४० हो तो कृत्तिका के एक चरण का मान $\frac{६० | ४०}{४} = \frac{३६००}{४}$ = ९०० प० होगा। कृत्तिका भयात यदि घ. प. २०।२०=१२२० प. हो तो जातक का जन्म कृत्तिका के द्वितीय चरण का है। यहाँ कृत्तिका का प्रथम चरण मान ९०० द्वितीय का ९०० से १८०० पल तक, तृतीय का १८०० से २७०० पल तक तथा चतुर्थ चरण २७०० से ३६०० प. है। भयात् १२२० कृत्तिका के द्वितीय चरण के मान ९०० से १८०० के बीच में है। १२२०—९००=३२० पल, यह कृत्तिका के द्वितीय चरण का भुक्त हुआ तथा १८००—१२२०=५८० पल यह द्वितीय चरण का भोग्य काल है।

कालचक्रदशानयन—(नक्षत्र चरण के भोग भुक्त काल से प्रथम वर्ग के किसी भी नक्षत्र के द्वितीय चरण का भोग ९०० पल हो, भुक्त ३२० पल हो, तो (यहाँ द्वितीय चरण का महादशा वर्ष ८५ है)।

$$\frac{\text{नक्षत्र चरण महादशा वर्ष} \times \text{नक्षत्र चरण भुक्त पल}}{\text{नक्षत्र चरण भोग काल (पलों में)}} = \frac{\text{काल चक्र महादशा}}{\text{भुक्त काल}}$$

महादशा वर्ष—भुक्त=जन्म कालिक भोग्य दशा।

यहाँ $\frac{८५ \times ३२०}{९००}$ = ३४ वर्ष। यह ३४ वर्ष महादशा का भुक्त है।

८५ वर्ष−३४ वर्ष=५१ वर्ष भोग्य है। भोग्य को भोग्यायु कहते हैं। महादशा वर्ष को परमायु कहते हैं। यहाँ परमायु ८५ वर्ष में से जातक को ५१ वर्ष भोग्यायु प्राप्त हुई, ऐसा माना जाता है। भुक्त ३४ वर्ष है। कृत्तिका (प्रथम वर्ग) द्वितीय चरण का दशा क्रम इस प्रकार है :—

राशि− मकर, कुंभ, मीन, वृश्चिक, तुला, कन्या, कर्क, सिंह, मिथुन
दशावर्ष−४ ४ १० ७ १६ ९ २१ ५ ९ =योग ८५ वर्ष

कृत्तिका द्वितीय चरण की महादशा ३४ वर्ष जन्म के पूर्व बीत गई। इस मान से मकर ४, कुंभ ४, मीन १०, वृश्चिक ७, तुला के ९ वर्ष व्यतीत हो चुके, वर्तमान कन्या के ७ वर्ष भोगने को हैं। अस्तु, यहाँ जन्मकालिक दशा का आरंभ तुला के ७ भोग्य वर्ष से होगा। दशा-चक्र लिखने की रीति विंशोत्तरीदशावत् निम्न प्रकार है—जन्म संवत् यदि २०२० सू १।२ हो तो।

७ तुला ७	६ कन्या ९	४ कर्क २१	५ सिंह ५	३ मिथुन ९	
२०२० १ २	२०२७ १ २	२०३६ १ २	२०५७ १ २	२०६२ १ २	२०७१ १ २

इसके उपरान्त कृत्तिका के तृतीय चरण की दशा चलेगी। वहाँ तृतीय चरण की देह जीव राशि बदल जाएगी।

उपर्युक्त चक्र में कर्क, मिथुन मण्डूक राशि है, सिंह मर्कटी राशि है, मिथुन जीवराशि भी है तथा मकर देह राशि है। देह राशि की दशा यहाँ जन्म के पूर्व ही समाप्त हो चुकी, इसी प्रकार यहाँ वृश्चिक (सिंहावलोक) राशि की भी दशा अप्राप्य है।

अन्तर का ध्रुवा:− $\frac{\text{राशि दशावर्ष} \times \text{अन्तर राशि के दशावर्षादि}}{\text{परमायु}}$ =अंतर वर्षादि।

उदाहरण—परमायु यदि १०० वर्ष हो, धनु की दशा में मिथुन का अन्तर निकालना हो।

$$\frac{\text{धनु १० वर्ष} \times \text{मिथुन ९ वर्ष}}{\text{परमायु १०० वर्ष}} = \text{० वर्ष, १०मा० २४ दि०}$$

प्रत्येक राशि की दशा में अन्तर प्रथमतः उसी राशि का होता है और क्रम वैसे ही नौराशियों का अन्तर विंशोत्तरी दशान्तर लिखने की रीति से ही चलता है।

चन्द्रस्पष्ट से कालचक्रदशा बनाने की रीति

चन्द्रस्पष्ट को कला में परिणत करके उसे २००′ कला से भाग देना चाहिए। लब्धि गत नक्षत्र चरणों की संख्या होगी और शेष कलाएँ वर्तमान नक्षत्र की भुक्त कला होगी। वर्तमान जन्म नक्षत्र की जो अंशराशि हो उसके परमायु वर्ष को भुक्त कलाओं से गुणाकर उसमें १००′ कला का भाग देने पर जो उपलब्ध हो वह जन्म नक्षत्र के भुक्त वर्षादि काल होंगे। परमायु वर्ष में इस भुक्त वर्षादि को घटाने से दशा का भोग्य वर्षादि काल अर्थात् जन्म से भोग्य वर्षादि काल होगा।

उदाहरण—चन्द्र स्पष्ट ३।०६।५० पर काल चक्रदशा बनानी है।

३।०६।५०=५८१०′ कला। $\frac{५८१०'}{२००'}$ = लब्धि २९′ तथा शेष १०′ होते हैं।

अर्थात् जन्म समय में नक्षत्रों के २९ चरण व्यतीत हो चुके, वर्तमान तीसवें नक्षत्र-चरण का जन्म है। तीसवें चरण में १०′ भी बीत चुकी है। तीसवाँ चरण आठवें नक्षत्र का दूसरा चरण है, अस्तु. चन्द्रस्पष्ट ३।०६।५० पर जातक का जन्म पुष्य नक्षत्र के द्वितीय चरण के १०′ भुक्त होने पर हुआ है और उसे पुष्य नक्षत्र के द्वितीय चरण के १९०′ कला भोगने को है। पुष्य नक्षत्र के द्वितीय चरण की अंशराशि कन्या राशि है। कन्या की परमायु ८५ वर्ष है। अब अनुपात लगाया तो

जब २००′ में परमायु ८५ वर्ष

तो भुक्त १०′ में $\frac{८५ \times १०}{२००}$ = ४ वर्ष ३ माह भुक्त होंगे। परमायु ८५ में ४ व०।३ माह घटाया तो भोग्य वर्षादि ८०।९ प्राप्त होंगे।

पुष्यनक्षत्र कालचक्रक्रम में सव्य क्रम है और उसके द्वितीय चरण की दशा का आरम्भ कुंभ राशि से होता है और उपरान्त व्युत्क्रम से मकर धनु की चलकर फिर क्रम से मेष से कन्या तक चलती है। चूँकि यहाँ पुष्य नक्षत्र के द्वितीय चरण के ४ वर्ष ३ माह व्यतीत हो चुके हैं। आरम्भ में कुंभ की ४ वर्ष दशा बीत गई तथा मकर की भी ३ वर्ष में ३ मास बीत गए, इसलिए ४ व०—३

माह=३ व० ९ माह मकर शेष रहे। जन्म से मकर की दशा का आरम्भ होगा जिसकी दशा ३ वर्ष ९ माह रहेगी। उपरान्त दशाक्रम यथावत् चलेगा।

इसे निम्न प्रकार से लिखना चाहिए। (जन्म सं० २०१९, सूर्य ३।२० चन्द्र ३।०६।५०) पुष्य द्वितीय चरण भुक्त १०' भोग्य १९०' कन्यांश परमायु ८५ भुक्त वर्षादि ४।३ भोग्य वर्षादि ८०।९ सव्यदशा क्रम। देहराशि कुंभ तदीशो शनिः, जीवराशि कन्या तदीशो बुधः। अन्ततः मकर भुक्त ०।३

	मकर	धनु	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	
	शनि	बृहस्पति	मंगल	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	बुध	
वर्ष ० मास ३	३ ०	१०	७	१६	९	२१	५	९	
संवत्	२०१९	२०२३	२०३३	२०४०	२०५६	२०६५	२०८६	२०९१	२१००
सूर्य राशि	३	००	००	००	००	००	००	००	००
अंश	२०	३०	२०	४०	३०	[illegible]	[illegible]	२०	१०

कन्या की समाप्ति पर पुष्य के तृतीय चरण की दशा चलेगी। तब यहाँ देह और जीवराशियाँ बदल जायेंगी।

उपर्युक्त दशाचक्र में कन्या जीवराशि है, धनु के उपरान्त मेष की दशा सिंहावलोक गति संज्ञक है।

विंशोत्तरीदशा से कालचक्रदशा बनाने की रीति

यदि किसी का जन्म राहु की महादशा भोग्य ३।५।२३ वर्षादि तथा भुक्त वर्षादि १४।६।७ हो और चन्द्रमा तुला राशि में हो तो राहु की महादशा १८ वर्ष की होती है। राहु आर्द्रा, स्वाती तथा शतभिषा नक्षत्रों का स्वामी है। चन्द्रमा तुला में है। तुला के अन्तर्गत स्वाती नक्षत्र है। अस्तु जन्म स्वाति नक्षत्र का हुआ। स्वाति का विंशोत्तरी मान १८ वर्ष, उसके एक चरण का मान ४ व० ६ माह है, द्वितीय का ९ वर्ष, तृतीय का १३ व० ६ माह तथा चतुर्थ का १३ व० ६ माह से १८ व० तक है। यहाँ राहु भुक्त १४।६।७ है जो चतुर्थ चरण के अन्तर्गत है, अस्तु, जन्म स्वाति के चतुर्थ चरण का है। १४ व० ६ माह ७ दि० में से १३ व० ६ माह घटाया तो शेष १ वर्ष ० माह ७ दिन स्वाति के चतुर्थ चरण का राहु भुक्त हुआ।

कालाचक्र में स्वाति चतुर्थ चरण का परमायु वर्ष ८६ हैं।

४व०।६ माह (१६२० दिन) में ३६७ दिन (१।०।७) भुक्त

तो ८६ वर्ष (३०९६० दिनों) में—

$$\frac{३६७ \times ३०९६०}{१६२०} \text{दिवस} = \frac{११३६२३२०}{१६२०} = \text{दिवस} = १९ \text{ व० } ५ \text{ माह } २३ \text{ दि०}$$

४६ घटी = यह स्वाती नक्षत्र चतुर्थ चरण का भुक्तकाल हुआ। इसे ८६ में घटाने से वर्षादि ६६। ६। ६। १४ भोग्य होगा। इस पर से पूर्व रीति के अनुसार कालचक्रदशा बन जायगी।

नक्षत्रचरण की अंशराशि को जानने की गणना

जन्मकालिक गत नक्षत्र की संख्या को चार ४ से गुणाकर उसमें १२ का भाग देने पर जो लब्धि हो यदि वह लब्धि सम अङ्क हो तो भाजित अङ्क के शेष अक में वर्तमान नक्षत्र चरण की संख्या को जोड़ने पर जो संख्या हो वह उस जन्मनक्षत्र चरण की अंशराशि होगी। गत नक्षत्र को ४ से गुणाकर उसमें १२ का भाग देने पर यदि लब्धि विषम अंक हो तो शेष अंक ही जन्मकालिक नक्षत्र के प्रथम चरण की अंशराशि होगी।

उदाहरण—

(क) स्वाति नक्षत्र के द्वितीय चरण की कौन सी अंशराशि होगी ?

स्वाति नक्षत्र १५ वाँ नक्षत्र है। गत नक्षत्र १४ वाँ है। $\frac{१४ \times ४}{१२}$ =

लब्धि ४ शेष अंक ८ हुआ। लब्धि (अंक ४) सम है। इसलिए शेष अंक ८ में वर्तमान नक्षत्र के द्वितीय चरण में २ को जोड़ने पर फल ८+२=१० हुआ। १० मकर राशि है इसलिए स्वाति नक्षत्र के द्वितीय चरण की अंशराशि मकर है।

(ख) ज्येष्ठा नक्षत्र के तृतीय चरण की कौन सी अंशात्मक राशि होगी ?

ज्येष्ठा के गत नक्षत्र अनुराधा की संख्या १७ है। $\frac{१७ \times ४}{१२}$ लब्धि

५ शेष ८। यहाँ लब्धि ५ विषम संख्या है और शेष संख्या ८ में ज्येष्ठा के तृतीय चरण की संख्या (३ में १ कमकर) संख्या २ को जोड़ने से ८+२=१० मकर राशि ज्येष्ठा के तृतीय चरण की अंशराशि है।

अंश राशियों के परमायुवर्ष जानने की सारणी

अंशराशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क
अंशराशि	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
अंशराशि	धनु	मकर	कुंभ	मीन
परमायुवर्ष	१००	८५	८३	८६

प्रथम पंचम नवम अंशराशि के परमायु वर्ष १००
द्वितीय षष्ठ दशम ,, ,, ८५
तृतीय सप्तम एकादश,, ,, ८३
चतुर्थ अष्टम द्वादश ,, ,, ८६
होते हैं।

कालचक्रदशा में राशियों के दशावर्ष इस प्रकार होते हैं :—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	धनु	मकर
राशि	वृश्चिक	तुला	कन्या	×	×	मीन	कुंभ
राशि स्वामी ग्रह	मंगल	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	गुरु	शनि
दशवर्ष	७	१६	९	२१	५	१०	४

काल चक्र दशा में राहु केतु की दशा नहीं होती पर यदि किसी राशि में राहु या केतु बैठा हो तो उस राशि को पापाक्रांत कहा जाता है।

कालचक्रफलाध्याय

(देह तथा जीवराशि एवं इनके स्वामियों से अरिष्ट विचार)

प्रत्येक सव्य नक्षत्र के चरण की आरम्भ राशि देहराशि तथा उसके दशाक्रम की अन्तिम राशि जीवराशि कही जाती है। इससे उल्टे प्रत्येक अपसव्य नक्षत्र चरण की दशा की आरम्भ राशि जीव संज्ञक राशि है और अन्तिम राशि को देहराशि कहते हैं। देहराशि के स्वामी को देहपति या देहाधिपति तथा जीवराशि के स्वामी को जीवपति या जीवाधिपति शब्द से यहाँ सर्वत्र संबोधित किया गया है। यहाँ पापग्रह से तात्पर्य सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु से है और शुभ ग्रह चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र हैं। कालचक्र दशा में राहु या केतु की

दशा नहीं होती पर ये जिस राशि में बैठे हों वह राशि पापाक्रान्त कही जाती है और जिस ग्रह के साथ बैठें वे पापयुत कहे जाएँगे। देहाधिपति या जीवाधिपति अपने लिए न पापी हैं और न शुभ अर्थात् देहाधिपति यदि मंगल हो (अश्विन्यादि दश सव्य नक्षत्रों के प्रथम चरण में तथा पंच सव्य नक्षत्रों के प्रथम चरण में मंगल देहाधिपति है) तो वह स्वयं अपनी दशा में अर्थात् देहराशि की दशा में पापी नहीं माना जाएगा जबतक देहराशि या मंगल अन्य पापग्रह के साथ न हो। इसी प्रकार जीवाधिपति भी पापी ग्रह होने से अपने लिए पापी नहीं होता। पर ये अपनी राशि को छोड़ जिस राशि में बैठें वह राशि पापाक्रान्त हो जाएगी। इनका पापत्व दूसरों के लिए है अपने लिए नहीं।

१. (क) जिस किसी राशि में देहपति तथा जीवपति ये दोनों एक साथ किसी भी पापी ग्रह के साथ या पापी ग्रहों के साथ बैठ हों वह राशि निश्चय से मारक होती है। उसकी दशा प्राप्त होने पर जातक की मृत्यु हो जाती है। ऐसी स्थिति में यदि देहराशि या जीवराशि या ये दोनों पापाक्रांत हुई तो उक्त देहपति-जीवपतियुत राशि निश्चय से मारक होती है।

(ख) उपर्युक्त (क) की स्थिति होने पर यदि उक्त देहपति-जीवपति दोनों जिस राशि में हों उस राशि के दशा के पूर्व ही पापाक्रान्त देह या जीवराशि की दशा आती हो तो उस पापाक्रान्त देह या जीवराशि की दशा में ही जातक की मृत्यु संभव है।

(ग) उपरोक्त (क) की स्थिति होने पर यदि देहपति-जीवपतिस्थित राशि की दशा देह या जीव राशि के पूर्व पड़ती हो और किसी कारण विशेष से उसमें निधन न होता हो तो आगे आनेवाली पापाक्रान्त देह या जीवराशि में निधन होता है।

(घ) पापाक्रान्त देहपति व जीवपति दोनों जिस राशि में बैठे हों वह राशि यदि देहपति या जीवपति की स्वराशि हो या इनका उच्चस्थान हो अथवा वहाँ शुभ ग्रहों का बाहुल्य हो तो बलाबल से वहाँ जातक का निधन द्विविधाजनक हो जाता है।

२. (क) देहराशि यदि पापाक्रान्त हो तो उस राशि की दशा में रोग होता है।

(ख) देहराशि यदि पापाक्रान्त हो तथा देहपति भी पापाक्रान्त (पापयुत) हो तो देहराशि तथा देहपतिस्थित राशि में रोग होता है। इन दोनों

राशियों की परस्पर दशान्तर में रोग होता है। देहराशि (पापाक्रान्त) में शरीरसम्बन्धी सभी प्रकार के अरिष्ट होते हैं। वहाँ देहाधिपति जो ग्रह हो तदनुकूल रोग होता है। मंगल से विस्फोट ज्वर, चोट चपेट, दुर्घटना होती है।

(ग) देहराशि अग्रही हो अर्थात् उस राशि में कोई ग्रह न हो, देहपति पापाक्रान्त हो तो देहपतिस्थिति राशि में (अर्थात् जिस राशि में देहपति हो) अरिष्ट होता है, देहराशि में साधारण अरिष्ट होता है।

(घ) स्वगृही देहराशि शुभप्रद होती है। देहराशि में उच्चस्थ ग्रह बैठा हो और देहपतिस्थित राशि पापाक्रान्त हो तो देहपतिस्थित राशि में अरिष्ट होता है, देहराशि में नहीं।

(ङ) देहराशि में उच्चनीचस्थ दोनों ग्रह बैठे हों, देहपतिस्थित राशि पापाक्रान्त हो तो भी देहराशि समफलद होती है।

(च) देहराशि शुभ हो (अर्थात् उसमें शुभ ग्रह बैठा हो) देहाधिपति भी शुभ ग्रह के साथ हो, अथवा देहराशि अग्रही हो तथा देहाधिपति के साथ कोई ग्रह न हो तो ये दोनों राशियाँ अरिष्टप्रद नहीं होतीं। पर यदि देहाधिपति की अपनी दूसरी राशि पापाक्रान्त हो तो देहराशि की दशा साधारण अरिष्टप्रद होगी पर देहपतियुत राशि अरिष्टप्रद होगी। सूर्य चन्द्र को छोड़ अन्य ग्रहों की अपनी दो राशियाँ होती हैं इसलिए देहराशि के अधिपति की दूसरी राशि यदि पापाक्रान्त हो तो देहराशि को साधारण दोष लग जाता है। देहाधिपति की देहराशि के अतिरिक्त दूसरी राशि यदि पापाक्रान्त हो तो उस दूसरी राशि का फल ऐसा होगा जैसा किसी भी अन्य पापाक्रान्त राशि की दशा शुभ नहीं होती यदि उच्चस्थ, स्वस्वामियुत न हो।

(छ) देहपति यदि जीवराशि में पापाक्रान्त होकर बैठा हो तो देह और जीवराशियाँ दोनों पापफलद होती हैं। वहाँ देहराशि अरिष्टप्रद तथा जीवराशि मारक हो जाती है।

(ज) देहराशि में एक से अधिक पापग्रह हों और देहपति शुभ ग्रहयुत हो तो देहराशि की दशा में अरिष्ट होता है, देहपतिस्थित राशि में नहीं।

(झ) पापाक्रान्त देहपति के साथ कोई एक शुभ स्वगृही ग्रह हो तो देहपतिस्थित राशि अरिष्टप्रद न होकर उस एक शुभग्रह की दूसरी राशि अरिष्टप्रद हो जाती है।

(ञ) देहराशि तथा देहाधिपतिस्थित राशि, इन दोनों के तारतम्य से देहराशि तथा देहपतिस्थित राशियों का फल होता है।

३. (क) स्वस्वामियुत देहराशि तथा जिस राशि में स्वगृही देहाधिपति हो वह मारक नहीं होती।

(ख) देहपति यदि उच्चस्थ हो तो वह उच्चराशि भी मारक नहीं होती (पापाक्रान्त होने पर भी)।

(ग) देहराशि पापाक्रान्त न हो, देहाधिपति उच्चस्थ हो तो ये दोनों राशियाँ शुभ होती हैं।

(घ) देहराशि में यदि देहाधिपति किसी उच्चस्थ ग्रह के साथ हो तो देहराशि मारक नहीं होती चाहे उसमें कितने ही पापग्रह क्यों न बैठे हों।

(ङ) देहराशि में उच्चस्थ नीचस्थ दोनों ग्रह बैठे हों तो भी देहराशि मारक नहीं होती यदि वह अधिक पापाक्रान्त न हो।

(च) उच्चस्थ ग्रह यदि पापी ग्रह हो तो उच्चस्थ होने के नाते उसका पापत्व नष्ट हो जाता है। उच्चस्थ ग्रह यदि शुभ ग्रह हो तो वह अतिशुभ होता है।

(छ) देहाधिपति ग्रह मारक प्रसंग में स्वयं न पापी होता है और न शुभ। उदाहरणार्थ अश्विनी के प्रथम चरण में मेष देह राशि है और उसका अधिपति मंगल क्रूर ग्रह है। अब यदि वहाँ मेष में मंगल हो या मंगल कहीं भी अकेला हो या मेष राशि अग्रही हो अर्थात् मेष राशि में कोई ग्रह न हो तो मेषराशि तथा जिस राशि में मंगल हो वे पापी नहीं होंगी।

(ज) देहराशि शुभग्रहयुत हो, देहाधिपति भी शुभग्रह के साथ कहीं हो तो इन दोनों राशियों की दशा शुभ होगी। यहाँ देहराशि की दशा शरीर के लिए अत्यन्त सुखदायी तथा स्वास्थ्यप्रद होगी। देहराशि में केवल एक शुभ ग्रह हो, देहाधिपति पापयुत हो तो देहराशि में बैठे उस एक शुभ ग्रह की दोनों राशियाँ अरिष्टप्रद हो जाती हैं। यहाँ शुभ ग्रहों में चन्द्रमा सबसे बली होता है। देहराशि में अकेले चन्द्रमा हो और देहाधिपति पापाक्रान्त हो तो कर्कराशि की दशा अवश्य अरिष्टप्रद होती है। यदि वहाँ कर्कराशि पापाक्रान्त हुई तो कर्क मारक हो जाती है।

४. जिस प्रकार देहराशि तथा देहाधिपति, देहाधिपतिस्थित राशि का फल वाक्य (Para) संख्या २ और ३ में कहा गया है उसी प्रकार का फल जीवराशि, जीवाधिपति तथा जीवाधिपतिस्थित राशियों का भी होता है। अन्तर यह है कि देहराशि में शारीरिक कष्ट अधिक होता है और जीवराशि की दशा में जीवन को संशय में डालनेवाली घटना होती है। देहराशि का संबंध शरीर से और जीवराशि का अधिक सम्बन्ध जीव (प्राण) से है। पापाक्रान्त जीव-

राशि की दशा में मृत्यु का भय रहता है इसीलिए देहाधिपति तथा जीवाधिपति इन दोनों का एक साथ कहीं भी पापाक्रान्त होकर बैठना आयु की दृष्टि से अनिष्ट होता है विशेषतया यदि वे दोनों देह या जीवराशि में ही बैठें हों। वहाँ स्वस्वामियुत राशि का शुभत्व भी नष्ट हो जाता है। देहराशि से जीवराशि का अथवा जीवराशि से देहराशि का किसी भी प्रकार का पापयुक्त सबंध जातक की आयु के लिए अरिष्टप्रद ही होता है।

५. सव्य नक्षत्र चरणों की दशा की अन्तिम राशि जीवराशि होती है इसलिए यदि किसी जातक का जन्म सव्य नक्षत्र में हो और उपर्युक्त नियमानुसार वहाँ उसकी जीवराशि तथा जीवाधिपति पापाक्रान्त हो तो जातक के लिए उस नक्षत्र चरण के दशाचक्र को पार करना संभव नहीं होता। वहाँ अनुपात भोग्यायु ही जातक की आयु होती है। अगले नक्षत्र चरण की दशाएँ उसे प्राप्त नहीं हो सकतीं। अपसव्य नक्षत्र दशाक्रम में अन्तिम दशा देहराशि की होती है। देहराशि पापाक्रान्त होने से शारीरिक अरिष्ट तो अवश्य होता है पर जीवनसमाप्ति की वहाँ संभावना कम रहती है। पर यदि देहाधिपति का जीवाधिपति से किसी भी प्रकार का पाप संबंध हुआ हो तो वहाँ जातक के जीवन का अन्त ही समझना चाहिए। अपसव्य दशा में देहराशि शुभ होने से (जीव पापयुत होने पर भी) यदि दोनों का सम्बन्ध न हो तो जातक उस नक्षत्र चरण की अन्तिम दशा को भोगकर (अर्थात् भोग्यायु को भोगकर) अगले चरण की आयु भी यथाग्रह भोग सकता है। सव्यनक्षत्र दशाक्रम में यदि किसी जातक का जन्म चरणारंभ में हो और वहाँ देहराशि पापाक्रान्त तथा देहाधिपति भी पापाक्रान्त हो अथवा अपसव्य दशाक्रम में चरणारंभ में किसी का जन्म हो, आरम्भ की जीवराशि की दशा हो, जीवराशि पापाक्रान्त हो या न हो तो ऐसी परिस्थिति में जातक को अनुपात भोग्य आयु (८३ से १०० वर्ष तक) होते हुए भी जातक की मृत्यु उसकी आरम्भ राशि में ही हो जाती है और यदि वहाँ आरंभराशि में देहजीव अधिपति पापाक्रान्त होकर बैठे हों तो जातक की भोग्यायु लम्बी होने पर भी वह अल्पायु हो जाता है। वहाँ प्रथम राशि की दशा पर्यन्त ही उसका जीवन रहता है।

६. जातकपारिजात के मत से पापाक्रान्त देह-जीवराशियों के अतिरिक्त निम्नराशियाँ भी अरिष्टप्रद होती हैं। जन्मकुण्डली में यदि (क) बृहस्पति तृतीयभाव में हो (ख) मंगल यदि सप्तमस्थ हो (ग) शनि यदि लग्नस्थ हो (घ) राहु धनुराशि में हो (ङ) चन्द्रमा यदि अष्टमस्थ हो (च) सूर्य यदि

द्वादशस्थ हो (छ) बुध यदि सप्तमस्थ हो (ज) शुक्र यदि कर्क या सिंह राशि में हो तो इन भावों की राशियों में जातक को अरिष्ट होता है। पापाक्रान्त होने पर निधन हो सकता है। इन राशियों में से यदि कोई देह या जीव राशि हुई अथवा सिंहावलोक, मण्डूक, मर्कटी राशि हुई तो उस राशि में जातक की मृत्यु होती ही है। मारक राशियों में सिंहावलोक वा मण्डूक राशि प्रबल मारक हैं।

उदाहरण: (१) मेष लग्न कुंडली में यदि मंगल के साथ वा अन्य किसी पाप ग्रह के साथ शुक्र चतुर्थ गृह में हो तो चतुर्थ गृह की कर्क राशि अरिष्टप्रद होगी। अब यदि उस जातक का जन्म प्रथमवर्ग के दश सव्यनक्षत्रों में से किसी नक्षत्र के द्वितीय चरण का हो तो वहाँ कर्क राशि मण्डूक राशि होगी। कर्क में शुक्र होने से तथा वहाँ पापाक्रान्त कर्क मण्डूक राशि भी होने से दोहरी पापी हो जायगी। ऐसी स्थिति में कर्कराशि मारक राशि हो जाएगी। अब यदि वहाँ कर्क में चन्द्रमा भी हो तो स्वस्वामियुत कर्कराशि का मारकत्व दोष बहुत कम हो जाएगा और वह राशि द्विविधाजनक मारक होगी।

(२) जातक का जन्म मीन लग्न का हो, सप्तम में बुध किसी पापी ग्रह के साथ हो तो वहाँ की कन्या राशि अरिष्टप्रदमात्र होगी, मारक नहीं, क्योंकि वहाँ बुध उच्चस्थ है। वहाँ यदि बुध मंगल के साथ हो तो सप्तम में मंगल एवं बुध के दोहरे पापयोग होने से कन्या मारक हो सकती है या नहीं यह अन्य परिस्थितयों पर अवलंबित है। यहाँ बुध उच्चस्थ ही नहीं वरन् स्वगृही भी है इसलिए मारक होने में संदेह है पर अरिष्टप्रद होने में कोई संदेह नहीं।

सिंहावलोक, मण्डूक तथा मर्कटी राशियों से अरिष्ट विचार

(१) मण्डूकराशि यदि पापाक्रान्त हो तो उसकी दशा में जातक को महाव्याधि (भयंकर रोग) होती है। यदि मण्डूक राशि पापाक्रान्त हुई और उसका अधिपति नीचस्थ वा पापग्रह के साथ हो तो मण्डूक राशि की दशा में मरण तक हो सकता है। यदि मण्डूक राशि पापाक्रान्त न हो और मण्डूक राशि का अधिपति पापयुत हो तो जातक को रोग मात्र होता है। मण्डूक राशि अग्रही हो और उसका स्वामी भी अकेला कहीं बैठा हो तो उसकी दशा में

शारीरिक अरिष्ट तो होता ही है पर उग्र नहीं। सारांशतः मण्डूक राशि यदि शुभ ग्रहों से युत न हो तो उसकी दशा में शारीरिक अरिष्ट तो होता ही है। मण्डूक कर्क में मातृ बन्धु का विनाश भी होता है और माण्डूकी में पत्नी को अवश्य व्याधि होती है।

(२) मर्कटी की दशा में महद्भय (जीवन को संशय में डालने वाली घटना) होता है। मर्कटी राशि यदि शुभ ग्रहों अथवा उच्चग्रह से युत हो तो दुर्घटना (Accidents) से जातक को अधिक हानि नहीं होती या वह दुर्घटना से बच जाता है।

(३) सिंहावलोक राशि यदि पापाक्रांत हो और उसका अधिपति भी पापाक्रांत हो तो उसकी दशा में जातक का निधन होता है। सिंहावलोक राशि के पापाक्रांत होने और उसके स्वामी के शुभ युत होने पर मृत्युसमान कष्ट होता है, मृत्यु नहीं होती। सिंहावलोक दशा मण्डूकी तथा मर्कटी से अधिक अरिष्टप्रद है।

(४) जिन नक्षत्र चरण के दशाक्रम में सिंहावलोक तथा मण्डूक और मर्कटी राशियों की भी दशा हो तो सिंहावलोक की दशा में मण्डूक मर्कटी के अन्तर में, अथवा मण्डूक वा मर्कटी राशि की दशा में जब सिंहावलोक राशि का अन्तर आता है तो पापाक्रांत होने पर उसमें जातक का निधन होता है। अन्तरेश यदि पापाक्रांत न हुआ अथवा अन्तर राशि शुभयुत हुई तो मृत्यु संशयात्मक हो जाती है। यह सब दशा तथा अन्तर के बलाबल पर होता है।

(५) स्वस्वामियुत अथवा उच्चग्रहयुत सिंहावलोक, मण्डूक, मर्कटी राशि में निधन नहीं होता पर अन्य परिस्थिति अनुकूल न हो अर्थात् उनमें देहाधिपति या जीवाधिपति भी हों तो बलाबल से फल होता है।

(६) पापाक्रांत सिंहावलोक वा मण्डूकी राशि यदि जीव या देह राशि भी हो तो उसकी दशा में निधन अवश्य होता है।

(७) जन्म कुण्डली में यदि (क) तृतीय भाव में बृहस्पति हो (ख) लग्न में शनि हो (ग) द्वादश में सूर्य हो (घ) मंगल या बुध सप्तमस्थ हो (ङ) अष्टमस्थ चन्द्रमा हो (च) धनुराशि में राहु हो (च) कर्क या सिंह राशि में शुक्र हो और ये राशियाँ पापाक्रांत हों तो ये अरिष्टप्रद होती हैं और यदि इन स्थानों में से किसी में सिंहावलोक वृश्चिक या मेष राशि हो मण्डूक कर्क या मिथुन हो अथवा मर्कटी सिंह राशि हो तो यह योग मारक होगा।

साथ ही इनमें से कोई देह या जीव राशि भी हो तो उसकी मारक दशा को कौन लांघ सकता है।

(८) दशाक्रम में यदि कोई राशि उस नक्षत्र की नवांश राशि हो और वह पापाक्रांत हो तो उसमें भी अरिष्ट होता है।

(९) कोई भी राशि हो यदि वह पापाक्रांत हो उसका अधिपति भी पापाक्रांत हो तो वह राशि सांसारिक कामों में उन्नति की बाधक होगी।

(१०) पापाक्रांत षष्ठ, अष्टम, द्वादश गृह की राशियों की दशा भी उत्तम नहीं होती।

(११) जो राशि अनेक प्रकार से अरिष्टप्रद होती है उसमें अवश्य निधन होता है।

उदाहरण—(क) भरण्यादि पंच सव्य नक्षत्रों (द्वितीय वर्ग के नक्षत्रों) के प्रथम चरण में वृश्चिक राशि देह राशि है तथा वह सिंहावलोक राशि भी है। उसी दशाचक्र में कर्क और मिथुन मण्डूक तथा सिंह मर्कटी राशि है। इनमें से यदि वृश्चिक राशि पापाक्रांत हुई तथा कर्क मिथुन या सिंह में से जो पापाक्रांत हुई तो वृश्चिक में उन राशियों का अन्तर अत्यधिक अरिष्टप्रद होगा। इस दशाक्रम में, मिथुन राशि मण्डूक के अतिरिक्त जीव राशि भी है। यहाँ मिथुन पापाक्रांत हो तो वृश्चिक में मिथुन तथा मिथुन में वृश्चिक का अन्तर निश्चय स मारक होगा। उपरोक्त नियम ७ के अनुसार मंगल वा बुध सप्तमस्थ हो तो वहां की राशि मारक होती है। अब यदि यहाँ मंगल और बुध वृश्चिक कर्क सिंह या मिथुन में सप्तमस्थ हो तो कर्क की दशा में निश्चय से निधन होगा, वृश्चिक और मिथुन राशि होने से निधन संशयात्मक होगा, क्योंकि स्वस्वामियुत राशि में (पापाक्रांत होने पर भी) निधन सशयात्मक होगा, क्योंकि स्वस्वामियुत राशि में (पापाक्रांत होने पर भी) निधन संशयात्मक होता है। यदि सप्तम में कर्क राशि हो और चन्द्रमा अष्टमस्थ हो और सप्तम में बुध हो तो कर्क तथा सिंह ये दोनों राशियाँ विशेष अरिष्टप्रद होंगी।

(ख) भरण्यादि पंच नक्षत्रों के चतुर्थ चरण में कर्क राशि मण्डूकी तथा देह राशि है। वहाँ सिंह मर्कटी तथा मिथुन मण्डूकी राशि है। कर्क के पापाक्रांत होने पर कर्क राशि विशेष अरिष्टप्रद होगी।

(१२) यदि निम्नलिखित राशियाँ पापाक्रांत हों तो उनमें विशेष अरिष्ट होता है। इन्हें मारक राशि समझना चाहिए।

(क) अश्विन्यादि दस सव्य नक्षत्र प्रथम (वर्ग के नक्षत्र)

१	३	७	९	१३	के द्वितीय चरण
अश्विनी	कृत्तिका,	पुनर्वसु,	अश्लेषा,	हस्त	की दशा में वृश्चिक
२	१९	२१	२५	२७	कर्क, मिथुन, सिंह
भरणी,	मूल	उ० षाढ़,	पू० भाद्र,	रेवती	राशि की दशाएँ।

(ख) भरण्यादि पंच सव्य नक्षत्र (द्वितीय वर्ग के नक्षत्र)

					के प्रथम चरण की
२	८	१४	२०	२६	महादशा में वृश्चिक
भरणी,	पुष्य	चित्रा,	पू० षा,	उ० भाद्र	कर्क, मिथुन, सिंह
					राशि की दशाएँ।

(ग) भरण्यादि पंच सव्य नक्षत्र (द्वितीय वर्ग के नक्षत्र)

					के चतुर्थ चरण की
२	८	१४	२०	२६	दशाओं में कर्क,
भरणी,	पुष्य,	चित्रा,	पू० षा०,	उ० भाद्र,	मिथुन, सिंह
					राशि की दशाएँ।

(घ) रोहिण्यादि चार अपसव्य नक्षत्र (तृतीय वर्ग के नक्षत्र)

४	१०	१६	२२	के प्रथम चरण की दशाओं
रोहिणी,	मघा,	विशाखा,	श्रवण	में धनु, सिंह, कर्क की दशाएँ

(ङ) रोहिण्यादि चार नक्षत्र के चतुर्थ चरण में सिंह, कर्क, कन्या की दशाएँ।

(च) मृगशिरादि अष्ट नक्षत्र के तृतीय चरण में सिंह, कर्क, कन्या, मीन की दशाएँ।

(छ) मण्डूकी कर्क में यदि राहु हो अथवा उसका अधिपति राहु के साथ हो तो कर्क निश्चय से मारक होता है।

(१३) कालचक्र में कर्क राशि पर विशेष ध्यान देना चाहिए। पापाक्रान्त कर्कराशि यदि माण्डूकी या मर्कटी राशि हो और वही यदि देह या जीवराशि हो तो वह निश्चय से मारक होती है और यदि उसमें शुक्र बैठा हो तो उसके मारक होने में कोई संदेह नहीं है। लेखक ने पापाक्रान्त माण्डूकी या मर्कटी कर्क राशि में अनेक जातकों का निधन होना पाया है।

(१४) निम्नलिखित नक्षत्रों की दशाएँ प्रायः निरापद होती हैं।

(क) अश्विन्यादि दश नक्षत्रों के प्रथम चतुर्थ चरण में कोई विक्षेप नहीं है तृतीय चरण मे केवल मेष सिंहावलोक राशि है।

(ख) भरण्यादि पंच नक्षत्रों के द्वितीय चरण में मेष सिंहावलोक है और तृतीय चरण में वृश्चिक सिंहावलोक अरिष्टप्रद है। शेष निरापद है।

(ग) रोहिण्यादि चार नक्षत्रों के तृतीय चरण में मेष तथा द्वितीय चरण में वृश्चिक सिंहावलोक है। शेष निरापद हैं।

(घ) मृगशिरादि अष्ट नक्षत्रों के प्रथम चरण की दशाएँ विक्षेष विहीन हैं। चतुर्थ चरण में मेष, तृतीय में वृश्चिक तथा द्वितीय में मेष सिंहावलोक है, इनमें कोई माण्डूकी या मर्कटी राशि नहीं है।

(ङ) विना विक्षेप का अर्थ है कि जातक का जीवन बिना विक्षेप के चलता रहेगा और जातक दीर्घायु हो सकेगा अर्थात् अन्य कोई राशि अधिक पापाक्रांत न हुई तो जातक उस नक्षत्र की अपनी भोग्यायु पूर्ण भोगेगा।

(१५) जिन राशियों का अशुभफल ((अरिष्ट) ऊपर कहा गया है वह फल राशि के दशारम्भ में अथवा अरिष्टप्रद मण्डूक, देह, जीव वा सिंहावलोक राशि के अंतर में होता है।

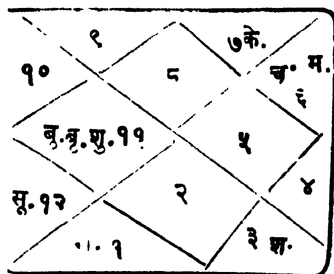
उदाहरण कुण्डलियाँ (मारक दशा)

निम्नलिखित जन्मकुण्डलियाँ गोलोकवासी (गत) व्यक्तियों की कुण्डलियाँ हैं। विंशोत्तरी दशानुसार जिन ग्रहों में जातक की मृत्यु हुई उसका उल्लेख कारणसहित कुण्डली के साथ दिया गया है। मारक ग्रह की महादशा (जिसमें मृत्यु हुई) के अतिरिक्त जन्म और मरण के बीच की दशाओं में भी अरिष्ट आए होंगे पर ऐसे अरिष्टों का इतिहास लेखक के पास नहीं है,

नोट—कालचक्र की विस्तृत विवेचना तथा कारक मारक तथा सांसारिक (स्त्री, पुत्र, धन आदि के विषय में) फल जानने के लिए लेखक की ज्योतिष सम्बन्धी दूसरी पुस्तक "फलित ज्योतिष में कालचक्र" देखना चाहिए जिसमें समस्त दशा अन्तरदशादि की सविस्तार, सोदाहरण विवेचना की गई है और तत्संबंधी अनेक सारणियाँ दी गई हैं।

केवल मरणकाल का समय मिल पाया है। ऐसा संभव है कि बीच में भी अल्प अरिष्ट आये हों और जातक को मरणतुल्य कष्ट देकर पार कर गए हों। यहाँ केवल उन्हीं मारक ग्रहों की विवेचना की गई है जिसमें उस कुण्डली के जातक की मृत्यु हुई है। विंशोत्तरी महादशा के साथ-साथ कालचक्र की राशिदशा का भी यहां उल्लेख कर दिया गया है।

सं. १९१२ चै. कृ. १ शनौ इष्ट ४३।४२ हस्त चतुर्थ चरण



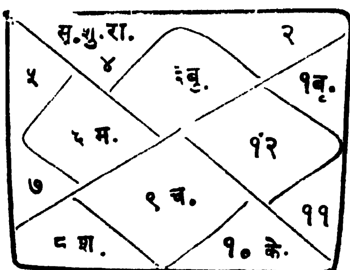
५८ वर्ष की आयु में विंशोत्तरी शनि की महादशा में निधन हुआ। शनि के पूर्व प्रबल मारकेश शुक्र की दशा थी। शनि तृतीयेश होकर पापी है। बृहस्पति शनि की राशि में है और शनि को बृहस्पति पूर्ण दृष्टि से देख रहा है इसलिए शनि का मारकेश से सम्बन्ध है।

मारकैस्सह सम्बन्धात् निहंता पापकृत् शनिः।
अतिक्रम्येतरान् सर्वान भवत्येव न संशयः॥

यहाँ शनि बृहस्पति की महादशा को लाँघ कर स्वयं मारक हो गया है।

कालचक्रांतरगत मण्डूकगतिसंज्ञक कर्क राशि में निधन हुआ। मण्डूक राशि वा उसका अधिपति यदि पापाक्रान्त हो तो उसमें निधन होता है।

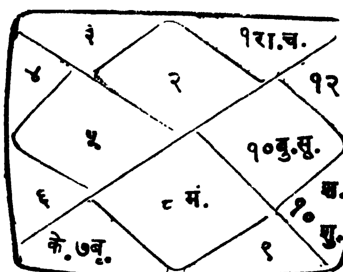
सं. १९२६ आ. शु. १३ पू. षा. ३ चरण



विंशोत्तरी राहु की महादशा शुक्र के अन्तर में ४६ से ५० वर्ष की अवस्था में निधन हुआ। तृतीयेश सूर्य के साथ होने से राहु पापी हो गया। द्वितीय में बैठने से वह मारकेश हो गया। उसके साथ द्वादशेश है इसलिए राहु-शुक्र का योग मारक योग है। द्वितीयेश द्वादशेश का योग मारक योग होता है यदि द्वितीयेश मारकेश हो तो।

कालचक्र दशा में कन्या राशि में निधन हुआ। कन्या यहाँ जातक की जीवराशि है। जीवराशि में पाप ग्रह होने से उसमें निधन होता है।

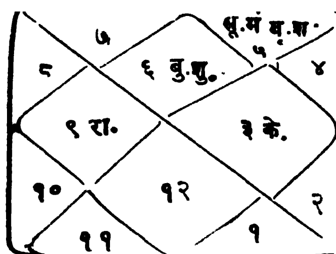
सं. १९२६ आ. शु. १३ पू. षा. ३ चरण



विंशोत्तरी राहु की महादशा में निधन हुआ। राहु तृतीयेश के साथ होने से पापी हुआ। राहु द्वादशस्थ होकर द्वादशेश है। बृहस्पति अत्यन्त पापी अष्टमेश है। वह षष्ठस्थ होकर पूर्ण दृष्टि से राहु को देख रहा है। द्वादशेश अष्टमेश का पापगत योग मारक योग है इसलिए जातक का राहु में बृहस्पति के अन्तर में निधन हुआ।

कालचक्र दशा में माण्डूकी कर्क राशि में निधन हुआ। कर्क का अधिपति चन्द्र राहु युत मे है, अस्तु यहाँ मण्डूक राशि में निधन हुआ।

सं. १९१८ भा. कृ. ९ इष्ट ६/५५



विंशोत्तरी शनि की महादशा में मृत्यु हुई। इस कुण्डली में शुक्र बृहस्पति दोनों कड़े मारकेश हैं। शनि षष्ठेश होकर पापी है। शुक्र तथा बृहस्पति उसका इन दोनों से स्थान सम्बन्ध है साथ ही अष्टमेश मंगल से भी सम्बन्ध है। वह द्वादशस्थ भी है इसलिए यहाँ पापी शनि मारकेशों के सम्बन्ध से सभी मारकेशों को लांघ कर स्वयं प्रबल मारक हो हो गया है। शनि के पूर्व की सूर्य, मगल, बृहस्पति की दशाएँ अमारक हो गई। सूर्य मंगल के साथ यदि शनि न होता तो य दशाएँ अरिष्टप्रद होती। बृहस्पति साथ न होता तो वह निश्चय से मारक होता मंगल सूर्य के सहयोग से।

कालचक्र में यहाँ मीन जीवराशि है। उसका स्वामी तीन पापग्रहों से युत है। इसलिए मीन राशि की दशा में मृत्यु हुई। पापी जीवराशि में मृत्यु होती है।

सं १९४१ ज्ये. कृ. ४ इष्ट १०/०

४ म. बृ.
सू. बु. श. २
५
३ शु.
१ के.
६
१२
७
रा.
९ चं.
११
८
१०

विंशोत्तरी मंगल की महादशा में ३३ वर्ष में निधन हुआ।

यहाँ मंगल षष्ठेश एकादशेश होकर तथा नीचस्थ होकर अत्यधिक पापी हो गया है। वह प्रबल मारकेश बृहस्पति के साथ है। बृहस्पति मारक स्थानस्थित होने से प्रबल मारक हो गया है। मंगल पर अष्टमेश शनि की भी दृष्टि है ऐसी दशा में मंगल अत्यन्त पापी हो गया। पापी षष्ठेश, सप्तमेश का योग मारक योग होता है (देखिए कपूर मध्य पाराशरी) इसलिए बृहस्पति के पूर्व ही मंगल में निधन हुआ। मंगल बृहस्पति का मित्र भी है। वह अपने नीचस्थान से २ राशि आगे, चन्द्रमा नीचे से एक राशि आगे, अष्टमेश शनि नीचस्थान से १ राशि आगे है। यह अल्पायु योग है (देखिए कपूर उच्चांशवश आयु)।

सं० १९२४ इष्ट ३/० उ. भा. सू. ३/०

२
१२ के. बु.
३
१ सू.
११ बृ. शु.
४ मं.
१०
५ चं.
७
९
६ रा.
८ श.

विंशोत्तरी बृहस्पति की महादशा बृहस्पति के अन्तर में निधन हुआ। सूर्य से मंगल तक की दशा बीत गई। बृहस्पति द्वादशेश होकर मारकेश शुक्र के साथ है।

'लग्नात् व्ययद्वितीयेशौ परेषां साहचर्यतः' के अनुसार बृहस्पति शुक्र के साहचर्य से स्वयं मारकेश हो गया है। शुक्र दोहरा मारकेश है। वह द्वितीयेश तथा सप्तमेश है। उसके साहचर्य से बृहस्पति भी मारक हो गया है। बृहस्पति की दशा के पूर्व और किसी मारक की दशा नहीं थी।

लग्नेश मङ्गल नीचस्थ है, अष्टमेश भी वही है। चन्द्रमा अपने उच्च नीच के बीच में है। इन तीनों ने मिलकर ४०, ४५ आयु दी।

(देखिए उच्चांशवश आयु प्रकरण)

सं. १८८९ पौष कृ. १ आर्द्रा १

सू. शु. ८
७
५
६ श
रा. ४
९ बु.
३ चं.
१० के
१२
२
११ बृ.
१ मं.

विंशोत्तरी शुक्र की महादशा में ८७ वर्ष की आयु में निधन हुआ। जन्म में राहु से केतु तक की दशा बीत गई। कुण्डली में शुक्र और बृहस्पति मारकेश हैं। सूर्य मंगल शनि पापी हैं। बृहस्पति मारकेश तो है पर उसका किसी पापी से या द्वादशेश से या अन्य मारकेश से सम्बन्ध नहीं है इसलिए वह (बृहस्पति) मारक नहीं हुआ (देखिए कपूर मध्य पाराशरी के मारक नियम) शुक्र मारकेश है और वह द्वादशेश सूर्य के साथ है और उसपर मंगल की दृष्टि ही नहीं वरन् मंगल (अष्टमेश) के गृह में भी है। षष्ठेश की उस पर दृष्टि भी है। वह मंगल अष्टमेश से सम्बन्धित भी है। अस्तु शुक्र ही मारकेश है। कपूर उच्चांशवश आयुर्दाय प्रबल है।

कालचक्र में माण्डूकी राशि कर्क में निधन हुआ। यहाँ कर्क माण्डूकी है और उसमें राहु बैठा है।

स. १९२६ आ. सु. १३ इष्ट ५८/०

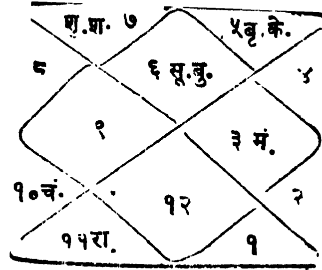
सू. शु. रा. ४
२
५
३ बु
१ बृ.
६ मं.
१२
७
९ चं.
११
८ श.
१० के.

विंशोत्तरी राहु की दशा शुक्र के अन्तर में निधन हुआ। जन्म में शुक्र, सूर्य, चन्द्र, मंगल की दशाएँ बीत गई। जन्मकाल में शुक्र में मारक का अन्तर बीत गया था। अन्य मारक नहीं है। राहु तृतीयेश सूर्य के साथ पापी है। द्वितीयस्थ होने से स्वयं मारकेश है। द्वादशेश शुक्र के साथ होने से राहु मारक हो गया है। राहु मारकेश है (देखिए कपूर मध्यपाराशरी के मारक नियम)।

कालचक्र दशा में यहाँ कर्क राशि देहराशि है और साथ में मण्डूक राशि भी है। कर्क राशि में दो पापग्रह भी हैं। कालचक्रानुसार यहाँ कर्क राशि प्रबल मारक है। इसकी दशा में निधन हुआ। उच्चांशवश आयु मध्यमायु है।

सं. १९५३ उ. षा. २ चरण

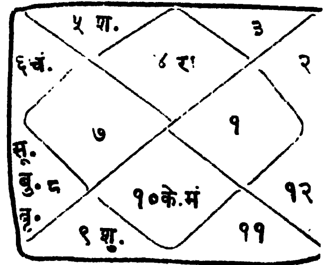
राहु की महादशा में राहु के ही अन्तर में निधन हुआ। षष्ठस्थ षष्ठेश पापी राहु पर मारकेश बृहस्पति की पूर्ण दृष्टि है। राहु मारकेश से सम्बन्ध कर रहा है। इसलिए राहु मारक हो गया है। राहु के पहले कोई मारक नहीं आया।



कालचक्रे सिंहावलोक गति में निधन हुआ।

सं. १९४५ माघ कृ. ११ चित्रा १

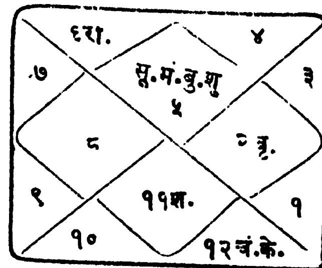
विंशोत्तरी बृहस्पति के अन्तर में निधन हुआ। मङ्गल राहु की दशा के बाद गुरु की दशा आई। कुण्डली में कोई मारकेश संज्ञक मारक नहीं है। बृहस्पति षष्ठेश है उसके साथ द्वितीयेश द्वादशेश हैं। इसलिए बृहस्पति मारक



हो गया है। द्वितीयेश, द्वादशेश षष्ठेश का योग अनिष्टकर है।

सं. १९०३ आ. कृ. २ इष्ट ५३/३२

विंशोत्तरी राहु में बुध के अन्तर में निधन। ८८ वर्ष की आयु में। जन्म में बुध बीत गया। शेष कोई मारक नहीं। द्वितीयस्थ राहु मारकेश है और उसका संबध द्वादशेश से है तथा अष्टमेश बृहस्पति की उस पर



पूर्ण दृष्टि है। अस्तु, राहु मारक हो गया है।

परिशिष्ट "ङ"

लग्न, भाव वा गृह की विवेचना । ग्रहों की दृष्टि ।

(AS CADENT, HOUSES AND PLANETARY ASPECTS)

लग्न भाव वा गृह की विवेचना

फलित ज्योतिष की प्रचलित परिपाटी के अनुसार जातक-लग्न वह राशि है जो जन्मकालिक-इष्ट पर जातक के पूर्वक्षितिज में स्पर्श कर रही हो। उस राशि का जितना अंश क्षितिज में स्पर्श कर रहा हो वह लग्न स्फुट होगा। समस्त राशियाँ पूर्वक्षितिज से ऊपर दृश्यगोल में उदित होते दीख पड़ती हैं जिस प्रकार सूर्य उदित दीख पड़ता है। इसलिए इष्टकाल में जिस किसी राशि का जितना अंश पूर्वक्षितिज से ऊपर जा चुका होता है वही उस समय का लग्नस्फुट होता है। सूर्य राशियों में गमन करता है और राशियों में ही रहता है,इसलिए सूर्योदय काल में सूर्य जिस राशि के जितने अंश पर होगा उस समय जातक का लग्नस्फुट सूर्यस्फुट तुल्य होगा। और उस समय की सूर्यराशि ही लग्नराशि होगी। राशियाँ वर्तुलाकार हैं। इसलिए उनके किसी भी अंग का किसी भी स्थान से समानान्तर समय पर क्षितिज पर आना सम्भव नहीं। समस्त बारहों राशियों का अंश ३६० होता है और २४ नाक्षत्रिक घण्टों में यह ३६० पूरा हो जाता है। इस गणना के अनुसार राशि का १० लगभग ४ मिनट का होता है और ३० अर्थात् एक राशि का २ घण्टा उदित काल होता है पर चूँकि राशियाँ (क्रांतिवृत्त) वर्तुलाकार हैं, इसलिए पृथ्वी के प्रत्येक स्थान से राशि का उदयमान भिन्न-भिन्न होता है। इस अन्तर को चरान्तर कहते हैं। पृथ्वी के प्रत्येक अक्षांश पर राशियों के उदयमान में अन्तर जानने के लिए स्वदेशीय पञ्चाङ्गों में चर सारणी तथा उसके उपयोग की रीति दी रहती है। काशी के पञ्चाङ्गों में चर शुद्ध किया गया काशी के राशियों का उदयमान दिया रहता है जिस पर से इष्टकाल के लग्नस्फुट का पता लग जाता है। पत्रों में सायन तथा निरयन लग्नसारिणी भी दी जाती है।

भाव या गृह खगोलीय परिभाषा है। जातक का लग्न-स्फुट स्थान जातक के पूर्वक्षितिज तथा क्रान्तिवृत्त का सम्पात है। इस सम्पात पर जो राशि होगी वह उस समय का जातक का लग्न होगा। लग्न-स्फुट स्थान से ऊपर

पश्चिम की ओर १८०° तक आकाश का दृश्य गोल है तथा उसके आगे १८०° अदृश्य गोल है तथा लग्नस्फुट से १५° ऊपर पश्चिम अर्थात् जातक के पूर्व-क्षितिज से १५° ऊपर दृश्य गोल में तथा १५° नीचे (क्षितिज से नीचे) अदृश्य गोलार्द्ध में जातक का प्रथम भाव है। इसका दूसरा अर्थ यह है कि लग्न-स्फुट में १५° घटाने तथा उसमें १५° जोड़ने से प्रथम भाव की सीमा हो जाती है। फिर उसमें ३० जोड़ते चले जाने से द्वितीय तृतीय भाव बनता जाता है। इस गणना के अनुसार लग्न की राशि तथा प्रथम भाव दोनों समान वस्तु नहीं रहते। लग्नबिन्दु पर यदि किसी राशि का भाग १५° हो तो वह राशि प्रथम भाव में पूरी अट जायगी अर्थात् ऐसी दशा में लग्नराशि तथा प्रथम भाव ये दोनों एक ही हो जाएँगे। लग्नस्फुट यदि १५° से कम हुआ तो वह जितने अंश कम होगा उतने अंश की उससे पश्चिम की राशि प्रथम भाव (दृश्य गोलार्द्ध) में आ जाएगी। यदि लग्नस्फुट १५° से अधिक हुआ तो प्रथम भाव में उससे पूर्व की राशि अदृश्य गोलार्द्ध में आ जाएगी और लग्न का १५° से अधिक वाला अंश दृश्य गोलार्द्ध में द्वादश भाव में चला जायेगा। इस तरह किसी राशि के १५° लग्नस्फुट के अतिरिक्त अन्य सभी दशाओं में भाव तथा राशिस्फुट एक नहीं रहता। प्रत्येक भाव में दो राशियों के हिस्से आ जाते हैं। फलादेश में भावों का अपना निज कोई स्वामी नहीं होता। उनका स्वामी वही होता है जो राशि उस भाव में हो चूंकि एक भाव में दो राशियों का भाग लगा रहता है इसलिए प्रत्येक भाव की दो राशियों के दो स्वामी होने चाहिए। पर फलित में ऐसा नहीं माना जाता है। लग्नस्फुट से तीस-तीस अंश पर जो राशिस्फुट हो उसे ही भावाधिपति मानते हैं चाहे वह स्फुट १° एक ही अंश का हो। किसी एक जातक का लग्नस्फुट १° मेष हो और दूसरे का २९° मेष तो भावों की गणना के अनुसार प्रथम जातक के प्रथम भाव में दृश्य गोलार्द्ध में क्षितिज से ऊपर मेष का १° तथा मीन का अन्तिम १४° लगा होगा तथा अदृश्य गोलार्द्ध में मेष का १४° चला गया होगा। जब कि दूसरे जातक के प्रथम भाव में मेष का अन्तिम १६° तथा वृष के आरम्भ का १४° रहेगा फिर भी दोनों जातकों के प्रथम भाव का स्वामी मेष राशि का ही स्वामी (मङ्गल) माना जाता है इस प्रकार की भावस्फुट की परिपाटी आर्ष नहीं है। जैमिनी ऋषि भावस्फुट को नहीं मानते। उनका समस्त फलादेश केवल राशिवश है। जन्मसमय जो राशि पूर्वक्षितिज में लगी हो वही जातक लग्न है। यहाँ लग्नस्फुट चाहे जितना अंशों का हो।

इसलिए जैमिनीय ऋषि की फलादेश परिपाटी अधिक वैज्ञानिक है। वह नक्षत्र मंडल से ही सम्बन्ध रखती है।

पाश्चात्य ज्योतिषी लग्नविन्दु से ३०° नीचे अदृश्य गोलार्द्ध मे प्रथम भाव की सीमा मानते हैं। यह ३०° विषुवांशी में होता है। इस परिपाटी के अनुसार प्रथम भाव का आरम्भ तथा षष्ठ भाव का अन्त जातक का पूरा अदृश्य गोलार्द्ध है तथा सप्तम भाव के आरम्भ-स्थान से लेकर द्वादश भाव के अन्त तक पूरा दृश्य गोलार्द्ध है। लग्नविन्दु से लेकर प्रत्येक ३०° विषुवांश तुल्य राशि से क्रम से प्रथम द्वितीय आदि भावों की गणना की जाती है भारतीय रीति से जातक का अदृश्य गोलार्द्ध प्रथम भाव के अर्द्ध भाग से आरम्भ होकर सप्तम भाव के अर्द्ध भाग तक तथा दृश्य गोलार्द्ध सप्तम भाव के अंतिम अर्द्धभाग से लेकर लग्न के प्रथम अर्द्ध भाग पर जाकर समाप्त होता है। इस प्रकार दो परिपाटियों की भाव (गृह) सीमा भिन्न-भिन्न है। पाश्चात्य परिपाटी में भी वही दोष है जो भारतीय में। वहाँ भी एक भाव में दो-दो राशियाँ आ जाती हैं। इसके अतिरिक्त यदि कोई दूसरी भावस्पष्ट की परिपाटी भी अपनाई जावे तो भी उपरोक्त दोष होगा ही क्योंकि भौगोलिक मिश्रित खगोलीय परिभाषा में नक्षत्रों की परिभाषा पूरी-पूरी अटाई नहीं जा सकती तथा नक्षत्रगोल तथा खगोल की परिस्थितियों फलादेश में समानान्तर नहीं की जा सकतीं। इसलिए लेखक का मत है कि भा (गृह) स्पष्ट की परिपाटी, ग्रहों को संधि में जाना आदि बातें आकाशीय दृष्टि से समीचीन नहीं। उसका मत है कि लग्नस्पष्ट की राशि ही प्रथम भाव है। लेखक के इस मत में तथ्य यह है कि सभी ग्रह पृथ्वी पर अपनी रश्मि (ओज) राशियों या नक्षत्रों के ओज के साथ देते रहते हैं।

फलित ज्योतिष में प्रत्येक भाव के साथ जातक के जीवन की विशिष्ट परिस्थितियों का सम्बन्ध भी जोड़ा गया है। प्रथम भाव से शरीर का, द्वितीय से पैतृक धन वा कुटुम्ब का, तृतीय से भाई तथा पराक्रम का, चतुर्थ से मातृ-सुख, भवन आदि का, पंचम से संतान, विद्या, बुद्धिबल आदि का विचार किया जाता है। इसका विचार जातकग्रन्थों में सविस्तार किया गया है। पर नक्षत्र दशापद्धति में उपरोक्त भावों के अधिपति से उपरोक्त भाव का विचार नहीं किया गया है उसमें केवल शुभ-अशुभ संज्ञा दी गई है। विंशोत्तरी दशापद्धति में एकादश स्थान का अधिपति पापी है इसका यह अर्थ नहीं कि एकादश स्थान का अधिपति आय का सर्वदा नाश करने वाला है जातक फलादेश में एकादश गृह में यदि कोई ग्रह उच्चस्थ हो वा उसका अधिपति उच्चस्थ वा

स्वगृही हो तो आय का योग करता है पर विंशोत्तरीदशा में उसका अधिपति यदि त्रिकोणपति से सम्बन्ध न करे तो वह अपनी दशा में अनिष्ट फल ही देता है चाहे वह स्वगृही वा उच्चस्थ ही हो। इसलिए जातकफलादेशपद्धति से जिस ग्रह का फल जिस भाव के फल के अनुसार होता है दशापद्धति में वह शुभ अशुभ होकर उसी भाव के अनुरूप ही फल को देगा ऐसा नहीं है। इसलिए जातकफलादेश परिपाटी में भावों का जो भाव तुल्य फल होता है, दशा परिपाटी में उसका फल दूसरे प्रकार का इष्ट वा अनिष्ट रीति से होता है। जातकफलादेश एक प्रकार से स्थायी फलादेश है और दशाफलादेश तात्कालिक शुभाशुभ फलादेश है। वह अनुकूल तथा विपरीत वातावरण का द्योतक मात्र है। इसलिए जातकपद्धति में भावों की संज्ञाओं के अनुसार भावों का फल होता है पर ऐसा दशापद्धति में नहीं है। इसलिए दशापद्धति में लग्न को प्रथम भाव, लग्न से दूसरी राशि को द्वितीय, इस रीति से मानना चाहिए। वहाँ सधि की कल्पना करना समीचीन नहीं। सारांश यह है कि लघुपाराशरी में जहाँ लग्न, द्वादश, पंचम आदि भावों की संज्ञा है उन्हें लग्नराशि को प्रथम, उससे दूसरी को द्वितीय आदि मानना चाहिए, प्रचलित भावस्फुट परिपाटी के अनुसार नहीं। उस ग्रन्थ में कहा भी गया है कि 'संज्ञां ब्रूमो विशेषतः' अर्थात् प्रसिद्ध प्रचलित परिपाटी से भिन्न इस ग्रन्थ की संज्ञाएँ हैं।

भावों की कल्पना ज्योतिष-फलादेश का अधार बन गई है। समस्त जातकफलादेशपद्धतियों में इसकी अनिवार्य मान्यता है इसलिए इसकी विशेष विवेचना आवश्यक है। आधुनिक भारतीय परिपाटी के अनुसार जातक प्रथम भाव की सीमा लग्नबिन्दु से ऊपर नीचे १५° तक है। अधःयाम्योत्तरवृत्त उसके चतुर्थ भाव का मध्य भाग तथा याम्योत्तरवृत्त या मध्याह्न रेखा उसके दशम भाव का मध्यभाग है।

पाश्चात्य भाव गणना के अनुसार प्रथम भाव पूर्वक्षितिज से नीचे ३०° तक, अधःयाम्योत्तर वा मध्यरात्रि रेखा उसके चतुर्थ पंचम भाव की सन्धि, याम्योत्तरवृत्त या मध्याह्न रेखा उसके दशम एकादश भाव की सन्धि तथा लग्नस्फुट स्थान वा पूर्वीय क्षितिज द्वादश तथा प्रथम भाव की संधि है। लेखक के मत से जो (जैमनीय मत है) जातक के पूर्वक्षितिज (गर्भ क्षितिज) तथा क्रांति संपात पर रहने वाली तात्कालिक राशि का ३०° का विस्तार ही प्रथम भाव है। अर्थात् किसी भी समय लग्नबिन्दु पर रहने वाली पूरी राशि उस समय का वह प्रथम भाव है, वह चाहे दृश्यगोल में लग्नबिन्दु से ऊपर

जितने भी अंश जाये वा अदृश्यगोल में उसका जहाँ तक फैलाव हो। इन तीनों गणनाओं में से उपरोक्त दो गणनाओं में भाव व गृह उसके जन्म कालिक पृथ्वीपरत्व से आकाशीय स्थिर स्थान है। अर्थात् नियत स्थान है पर राशि उसमें चर है। जैमनीय मतानुकूल स्थान (भाव) चल है उसमें राशि का स्थान अर्थात् नक्षत्रगोल का स्थान स्थिर है। जहाँ ग्रहों का खगोलीय स्थान (भाव) परत्व से ही फलादेश कहना या जानना हो वहाँ भावगणना के अनुसार तथा जहाँ ग्रहों का फल भावों के अधिपति के अनुसार जानना हो तो वहाँ राशि को ही भाव मानकर फल जानना चाहिए। दशापद्धति में ग्रहों का किसी विशिष्ट भाव में रहने मात्र ही का फल नहीं माना जाता, वहाँ राशियों के स्वामियों का विशेष विचार किया जाता है। इसलिए वहाँ राशि प्रधान है। भाव-सीमा प्रधान नहीं है।

ग्रह एक दूसरे से स्थान तथा दृष्टि सम्बन्ध से सम्बन्धित होते हैं। विंशोत्तरीदशापद्धति में जहाँ सप्तम, द्वादश, त्रिकोण, चतुरष्टमान कहा है उसका तात्पर्य विचाराधीन ग्रह से उससे सम्बन्ध करने वाले ग्रह की अंशात्मक दूरी से है। उसकी गणना इस प्रकार समझनी चाहिए।

सप्तम दृष्टि—ग्रहस्पष्ट से १८०° जोड़कर जो राश्यादि स्पष्ट हो उस राश्यादि स्पष्ट वाली राशिविशेष में जो ग्रह बैठा हो वह विचारणीय ग्रह से सप्तम कहा जाएगा। ऐसी स्थिति में वे परस्पर दृष्ट कहे जायेंगे।

तृतीय दृष्टि—विचारणीय ग्रह के स्फुट में ६०° जोड़ने पर जो राश्यादि स्पष्ट हो, उस राशि में जो कोई ग्रह बैठा हो वह विचारणीय ग्रह से तृतीयस्थ दृष्ट कहा जाएगा।

इसी प्रकार चतुः का अर्थ द्रष्टा ग्रह से ९०° दूर वाली राशि, पंचम=१२०°, नवम=२४०°, दशम=२७०°, अष्टम=२१०°, इसकी तालिका नीचे दी जाती है।

शनि स्पष्ट	+	६०	=	दृष्टराशि	: द्रष्टा से तृतीय :
,, ,,	+	२७०	=	,, ,,	: द्रष्टा से दशम :
मंगल द्रष्टा	+	९०	=	,, ,,	: द्रष्टा से चतुर्थ :
,, ,,	+	२१०	=	,, ,,	: द्रष्टा से अष्टम :
बृहस्पति द्रष्टा	+	१२०	=	,, ,,	: ,, से पंचम :
,, ,,	+	२४०	=	,, ,,	: ,, से नवम :
कोई ग्रह	+	१८०	=	,, ,,	: ,, से सप्तम :

दशा में ग्रहों के स्थान-सम्बन्ध राशि-सम्बन्ध हैं, प्रचलित भाव-सम्बन्ध नहीं। जो ग्रह एक ही राशि में होते हैं वे स्थान-सम्बन्धित होते हैं।

परिशिष्ट 'च'

द्वादश भाव स्पष्ट की रीति

श्रीपति, केशव और नीलकंठ आदि आधुनिक विद्वानों की पद्धति—

लग्न स्पष्ट ऋण-दशम स्पष्ट=शेष ÷ ६ प्रथम षष्ठांश इस षष्ठांश। को ३०° में घटाने से द्वितीय षष्ठांश बन जायगा। या दशम स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ स्पष्ट हो जाता है। फिर चतुर्थ स्पष्ट में लग्न स्पष्ट को घटाने पर जो शेष हो उसका षष्ठांश द्वितीय षष्ठांश होगा।

१. लग्न स्पष्ट + द्वितीय षष्ठांश=प्रथम भाव की संधि।
२. प्रथम भाव संधि में द्वितीय षष्ठांश जोड़ने से=द्वितीय भाव का मध्य।
३. द्वितीय भाव मध्य + द्वितीय षष्ठांशसे=द्वितीय भाव की संधि।
४. द्वितीय संधि + द्वितीय षष्ठांश=तृतीय भाव मध्य।
५. तृतीय भाव मध्य +,, ,, =तृतीय भाव की संधि।
६. तृतीय भाव संधि +,, ,, =चतुर्थ भाव मध्य।
७. चतुर्थ भाव मध्य + प्रथम षष्ठांश=चतुर्थ भाव की संधि।
८. चतुर्थ भावकी संधि + ,, ,, =पंचम भाव मध्य।
९. पंचम भाव मध्य + ,, ,, =पंचम भाव की संधि।
१०. पंचम भाव की संधि +,, ,, =षष्ठ भाव मध्य।
११. षष्ठ भाव मध्य + ,, ,, =षष्ठ भाव की संधि।
१२. षष्ठ भाव की संधि + ,, ,, =सप्तम भाव का मध्य।

लग्न से उपरोक्त षष्ठ भाव का मध्य व संधि में ६ राशि जोड़ते जाने से द्वादशभावपर्यंत, सब भाव व उनकी संधियों का स्पष्ट बन जायगा। फिर ऐसी भाव कुण्डली बनाकर जो ग्रह जिस भाव मध्य तक स्पष्ट हो वह उस भाव में रहेगा।· भाव से संधि स्पष्ट से उस भाव की संधि मे आ जाएगा। जातक फलादेश में इसका महत्व है। जो ग्रह भाव संधि में आ जाते हैं वे उस भाव का फल देने में बलहीन हो जाते हैं। विंशोत्तरी दशा में भी ग्रहों की दृष्टि, युति, योग, भाव कुण्डली से भी आँकना चाहिए। कभी-कभी कोई भावेश जन्म, कुण्डली के जिस किसी भाव में किसी मूल ग्रह के साथ रहता है भाव कुण्डली में दूसरे घर में चले जाने या संधि में आजाने से उसके साहचर्य क्षेत्र में बाधा पड़ जाती है।

परिशिष्ट 'छ'

'कपूर जातक' फलादेश 'अनुभूत योग'

ग्रहों का प्रभाव स्थान

(क) मंगल=मज्जा, शनि=स्नायु, बृहस्पति=वसा (चर्बी), सूर्य=अस्थि, शुक्र=वीर्य, चन्द्रमा=रक्त, बुध=चर्म के स्वामी कहे गए हैं। इनकी दशा में शरीर के तत्तद् धातुओं पर प्रभाव पड़ता है।

(ख) ग्रहों से निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जाता है।

(१) सूर्य से—पिता, आत्मा, प्रताप, आरोग्य, आसक्ति, लक्ष्मी। यह १, ९, १० गृह का कारक है।

(२) चन्द्रमा से—मन, बुद्धि, राजा की प्रसन्नता, माता और धन। यह ४ गृह का कारक है।

(३) मंगल से—पराक्रम, रोग, गुण, भाई, भूमि, शत्रु, जाति। यह ३, ६, गृह का कारक है।

(४) बुध से—विद्या, बंधु, विवेक, मामा, मित्र, बचन। यह ४, १० गृह का कारक है।

(५) बृहस्पति से—बुद्धि, शरीर पुष्टि, पुत्र, ज्ञान। यह २, ५, ९, १०, ११ गृह का कारक है।

(६) शुक्र से—स्त्री, वाहन, भूषण, कामदेव, व्यापार, सुख। यह ७ गृह का कारक है।

(७) शनि से—आयु, जीवन, मृत्युकारण, विपद्, सम्पत्। यह ६, ८, १०, १२ गृह का कारक है।

(८) राहु से—पितामह (दादा)।

(९) केतु से—मातामह (नाना)।

(ग) शुक्र सातवें, बुध चतुर्थ, बृहस्पति पाँचवें भाव मे हो तो जातक को अरिष्टप्रद होते हैं, शनि अष्टम भाव में होने से सर्वदा मनोरथ पूरा करता है।

ग्रहों की दशा में ग्रहों के उपर्युक्त विषयों पर प्रभाव पड़ता है। यथा मंगल की दशा यदि पापी तथा अशुभ हो तो उस दशा में भाई, भूमि, शत्रु

पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। शुभ होने से इनसे लाभ होगा। इसी प्रकार उस दशा में जातक के शरीर की मज्जा पर भी प्रभाव पड़ेगा। कारक ग्रह अकेले अपने कारक गृह में होने पर शुभ नहीं माना जाता।

(१) साधारणतया

(क) विवाह तथा कौटुम्बिक सुख का विचार–द्वितीय तथा सप्तम भाव, सप्तमेश तथा शुक्र से करना चाहिए।

(ख) संतान सुख का विचार—पंचम, पंचमेश तथा मंगल, बृहस्पति से।

(ग) धन का विचार— द्वितीय, एकादश, नवम तथा इन गृहों के स्वामियों से।

(घ) भ्राता, भूमि, पराक्रम (उद्योग)—मंगल से।

(ङ) व्यसन, कला—शुक्र से।

(च) यश, विद्या का विचार—बृहस्पति से।

(छ) आय के स्रोत का विचार—एकादश गृह तथा एकादशेश से।

(ज) नौकरी का विचार—शनि से।

(झ) राजकीय नौकरी का विचार—शनि तथा दशमेश, दोनों के समन्वय से।

विशेष : जिस किसी भाव में जिस किसी भावेश के साथ षष्ठेश या अष्टमेश वा ये दोनों एक साथ हों उस भाव का अनिष्ट अवश्य होता है। ये अष्टमेश षष्ठेश नीचस्थ होकर जिस किसी गृह में या जिस किसी ग्रह के साथ रहते हैं उस गृहसम्बन्धी विषय तथा उस ग्रहसम्बन्धी विषय में बाधा अवश्य उत्पन्न करते हैं।

(२) पैतृक धनप्राप्तियोग—

संकेत:—द्वि = द्वितीयेश. ल=लग्नेश, न=नवमेश आदि, दृष्टि। द्वि/न= द्वितीयेश पर नवमेश की पूर्ण दृष्टि, –वा, ៷ = अन्योन्याश्रित सम्बन्ध, ब्रैकेट में ( ) = वही ग्रह यदि उच्चस्थ हो, नए० नवमेश एकादशेश कहीं भी एक साथ बैठे हों।

(१) न ए = भाग्यवान कुल में जन्म।

(२) द्विन—द्वि/न, द्वि ៷ न = पैतृक धनप्राप्ति।

(३) २ में द्वि यदि वह एकादशेश न हो।

(४) २ में उच्चस्थ ग्रह।

(५) २ में अकेला केतु।

(६) २ में एनच।
(७) २ में ए।
(८) २ में ए तथा ९ द्वि = निज अर्जित धनप्राप्ति।
(९) द्वि ए—द्वि–ए। द्वि ७ ए = पैतृक धनप्राप्ति।
(१०) लद्वि, ल/द्वि, ल ७ द्वि = अनायास धनप्राप्ति।
(११) ११ द्वि = पैतृक धनप्राप्ति।
(१२) ५ द्वि न = गोद द्वारा नवमेश की दशा में प्रचुर धन।
(१३) १ द्वि तथा ९ ए = गोद द्वारा धन प्राप्त।
(१४) ९ द्वितीयेश उच्चस्थ = पैतृक धन।
(१५) ९ द्वि द्वा = धनप्राप्ति पर बाद में नष्ट।
(१६) ल द्वि, ल/द्वि, ल ७ द्वि = स्व अर्जित धनप्राप्ति योग या अनायास प्राप्ति योग।
(१७) द्विए, द्वि/ए, द्वि ७ ए = इसमें अन्य जिस किसी ग्रह का योग होगा उस ग्रह के गृह करके धन प्राप्ति होगी।
(१८) २ बु, २ च = यह योग धननाश योग है।

उपरोक्त योग संख्या ४, ५, ६, ७, पैतृक धनप्राप्ति योग है।

(३) विवाह तथा पारिवारिक सुख-दुःख का विचार।

(क) विंशोत्तरी महादशा में मारकेश बृहस्पति वा शुक्र यदि मारक स्थान में हों तो दशारंभ में स्त्री के गत हो जाने का भय रहता है, विशेषतया बृहस्पति शुक्र के परस्पर दशान्तर्दशा में।

(ख) उपर्युक्त दशारंभ के समय यदि गोचर में शनि की साढ़े साती रही तो पत्नी पर विशेष अरिष्ट आता है और साथ में विविध आपदाएँ भी।

(ग) निम्नलिखित पुनर्विवाह योग हैं।

(१) सप्तम में नीच ग्रह वा द्वितीय में नीच ग्रह,
(२) सप्तम में अष्टमेश वा द्वितीय में अष्टमेश,
(३) सप्तम या द्वितीय पर नीच ग्रह की दृष्टि,
(४) सप्तम या द्वितीय पर अष्टमेश की दृष्टि,
(५) सप्तमेश त्रिषडाय में पापी ग्रह के साथ हो तो पत्नी के लिए अरिष्टप्रद मात्र होता है, (यहाँ पापी से तात्पर्य ग्रन्थान्तरप्रसिद्ध पापी ग्रह है)।

(घ) १,४,७,८,१२ स्थान गत नीचस्थ मंगल स्त्री का नाश करता है, स्त्री की कुंडली में यदि इसका परिहार हुआ तो नहीं मारता ।

(ङ) षष्ठेश-सप्तमेश वा सप्तमेश-अष्टमेश के अन्योन्याश्रित योग से स्त्री का नाश होता है ।

(च) तुला में अष्टमेश बृहस्पति अनेक विवाह का संभावित योग करता है ।

(छ) केन्द्र में नवमेश-सप्तमेश का परस्पर अन्योन्याश्रित सम्बन्ध हो तो जातक प्रायः अविवाहित ही रहता है ।

(ज) सप्तम में शुक्र रहने से जातक कामी होता है, वहां शनि रहने से पत्नी अधिक उम्र वाली वा अनमेल या स्थूला होती है ।

(झ) सप्तम में मकर कुम्भ का सूर्य हो तो स्त्री का नाश वा परित्याग सम्भव है ।

(४) संतानाध्याय ।

लगभग १८ वर्ष से ५० वर्ष तक जातक की सन्तानोत्पत्ति सामर्थ्य रहती है, इसलिए इन वर्षों के बीच विंशोत्तरीदशा का संतानप्रसंग में विचार करना चाहिए । साधारणतया जातक कुंडली के निम्न ग्रहों की महादशा में संतान होती है । संतानोत्पत्ति प्रसंग में जातक की पत्नी की कुंडली पर विशेष ध्यान देना चाहिए, संतानोत्पत्ति के समय पत्नी पर विशेष अरिष्ट रहता है । पुरुष के संतानयोग के समय पत्नी की कुंडली में यदि उस पर कोई शारीरिक अरिष्ट योग हुआ तो उस समय संतान अवश्य होता है, अधिक अरिष्ट होने से संतान कष्टप्रद होती है, दोनों की कुंडली में एक ही समय में संतानयोग हो, अरिष्टप्रद नहीं, तो संतान का जन्म सुखपूर्वक होता है ।

(क) निम्नलिखित विंशोत्तरी की दशाओं में संतानयोग होता है

(१) पंचमेश को छोड़ अन्य द्वितीयेश वा द्वादशेश की दशा में ।

(२) लग्नेश वा अष्टमेश बृहस्पति, शुक्र, बुध, चन्द्र तथा मंगल की मूल दशाओं में । इन ग्रहों में मंगल से चन्द्र, चन्द्र से बुध, बुध से शुक्र तथा शुक्र से बृहस्पति संतानदातृत्व प्रसंग में क्रम से बली हैं, ये ग्रह यदि सप्तमेश, तृतीयेश वा एकादशेश भी हुए तो संतानदातृत्व योग और बली हो जाता है ।

(३) लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ स्थानगत राहु की महादशा में संतान होती है । इस राहु पर यदि लग्नेश वा अष्टमेश की पूर्ण दृष्टि हुई

तो राहु की दशा में संतान अवश्य होती है, राहु पर मंगल की दृष्टि हो तो भी राहु में।

(४) पंचमेश दशमेश एक साथ कहीं बैठे हों तो दशमेश की दशा में भी सतान सम्भव है।

(५) कभी-कभी षष्ठेश की दशा में भी संतान होती है।

(ख) निम्नलिखित विंशोत्तरी दशाओं में प्रायः संतान नहीं होती।

(१) नीचस्थ मंगल की दशा में,

(२) जन्म लग्न मिथुन हो, द्वितीय में मंगल हो तो न चन्द्र दशा में और न मंगल में संतान होती है।

(ग) निम्नलिखित योग संतानहीन योग हैं।

संकेत::—पं०=पंचमेश, नी.=नीचस्थग्रह./=दृष्टि यथा पं/अ = पंचमेश पर अष्टमेश की दृष्टि. १, २, ३ = प्रथम द्वितीय तृतीय आदि भाव, पं नी= पंचमेश नीचस्थ के साथ।

(१) पं नी, ५ मं (धनुका)
(२) पं नी तथा ५ मं कर्क राशि का,
(३) ५ नी तथा ७ नी
(४) पं ष एक साथ कहीं भी तथा बृ धनुका
(५) ५ नी|नी
(६) ५ रा, पं क्षेत्रे मं बृ
(७) ५ बृ मेषका, बु के साथ
(८) पं नी (अष्टमेश)
(९) ५ नी. पं अ
(१०) ५ बृ रा मेष मे, बृ/मं
(११) ५ पं (मं) बृ धनुमें.

साधारणतया

(१) पाप क्षेत्र में पंचमेश हो तो योग संतानदाता है।

(२) पंचमेश शुभ क्षेत्र अर्थात् ग्रंथान्तर प्रसिद्ध शुभ ग्रहों की राशि में हो तो यह योग संतानबाधक योग है।

(३) पंचम में पापी ग्रह होने से संतान होती है, अधिक पापी होने से होकर नष्ट हो जाती है।

(४) बृहस्पति को छोड़ पंचम में शुभ ग्रह हो तो यह कन्या-कारक योग है।

(५) पंचम में यदि अष्टमेश हो तो यह संताननिहंता योग है। कुण्डली में उपरोक्त संतानहीन योगों के साथ-साथ यदि उसमें संतानबाधक योग भी हो तो निश्चय से उस जातक को संतान नहीं होती।

अनेक संतान योग—

(१) पंचमेश शनि, शुक्र के साथ पापस्थान गत हो;

(२) अष्टम में पंचमेश हो,

(३) पंचमेश तृतीयेश एक साथ कहीं हों,

(४) पंचमेश तृतीयेश का अन्योन्याश्रित योग हो,

(५) पंचम स्थान में तृतीयेश हो,

(६) सप्तमेश तृतीयेश का अन्योन्याश्रित योग पुत्र शोक योग है।

काल-सर्प योग

यदि किसी जातक की कुण्डली में सभी ग्रह राहु तथा केतु के बीच में स्थित हों, या केतु और राहु के बीच में हों तो उसे काल-सर्प योग कहते है। ऐसी स्थिति में यदि कोई ग्रह राहु या केतु के साथ हो या राहु-केतु के स्पष्ट से आगे हो तो यह योग भंग हो जाता है। एक ग्रह भी इस दायरे से बाहर हुआ तो योग भंग।

ऐसी योग वाली कुण्डली में जब विंशोत्तरी की राहु की महादशा चल रही हो तो निश्चय से उस जातक का समस्त वैभव, धन, सुख सब नष्ट हो जाता है। ऐसी कुण्डली में यदि योगकारी ग्रह हो तो वह राहु की दशा के पूर्व बड़ा वैभवशाली रहता है। केतु से बने योग में केतु की दशा में फल होता है। उदाहरण—राहु लग्न में हो और सभी ग्रह षष्ठ भाव तक हों। राहु द्वितीयस्थ हो और सब ग्रह सप्तम गृह तक में हों इत्यादि। इसी प्रकार केतु से भी योग बनेगा पर केतु से बना योग निर्बल होगा, फल विनाश होता है। राहु की दशा न प्राप्त होने पर भी उसका बीच का अभीष्ट फल होता ही है।

परिशिष्ट "ज"

विंशोत्तरीदशाधीशग्रहों के शुभ अशुभ फल की परिमाणसंख्या जानने की विधि व सारणी।

लेखक ने विंशोत्तरीदशा सबंधी निम्नलिखित योजना ग्रहों के शुभत्व और पापत्व की मात्रा जानने के लिए बनाई है जिसका आधार लघुपाराशरी के संज्ञा (कारक-मारक) सम्बन्धी श्लोक हैं। इस योजना का प्रयोग इस भाष्य में शुभाशुभ योगजफल जानने के लिए पृष्ठ संख्या ३२ से ३८, ४६ से ५८ तक किया गया है।

१. लग्न से द्वितीय और द्वादश स्थान के स्वामी अपनी-अपनी दूसरी राशि तथा जिन ग्रहों का उनका साथ हो वदनुकूल फल देते हैं, इसलिए द्वितीय तथा द्वादश ग्रहों का अपना कोई निजी गुण न होने के कारण उनके गुण की सख्या शून्य नियत की जाती है।	द्वितीय=० द्वादश =०
२. ग्रंन्थान्तर में केन्द्र की संज्ञा शुभ है पर इस उडुदायप्रदीप ग्रंथ के अनुसार केन्द्र का अधिपति जब तक त्रिकोणाधीश भी न हो शुभ नहीं होता, साथ ही यह भी कहा गया है कि केन्द्र में लग्न से चतुर्थ, चतुर्थ से सप्तम तथा सप्तम से दशम स्थान बली है। इन दोनों पहलुओं का विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि केन्द्र का शुभत्व त्रिकोण के शुभत्व से न्यून है। इस दृष्टि से केन्द्र के शुभत्व की संख्या १ से ४ तक तथा त्रिकोण के शुभत्व की संख्या ५ से ७ तक नियत की जाती है।	लग्न=+१ चनुर्थ=+२ सप्तम=+३ दशम=+४ लग्न=+५ (त्रिकोण) पञ्चम=+६ नवम=+७
३. त्रिषडाय सदा पाप स्थान है। कोई भी ग्रह अकेला इसका स्वामी होकर शुभ नहीं रह सकता। इसलिए त्रिकोण में सबसे बली नवम स्थान की शुभ संख्या+७ के तुल्य तृतीय स्थान की पाप संख्या−७ नियत की जाती है। तथा षष्ठ	तृतीय=−७ षष्ठ=−८ आय=−९

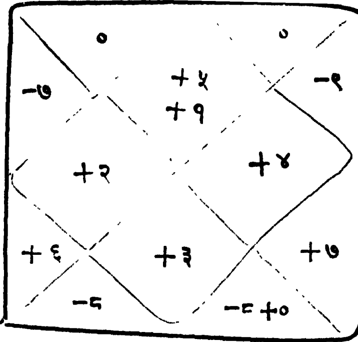
कि अशुभ पाप संख्या –८ एकादश की –९ नियत की जाती है।

४. अष्टमेश जहाँ कहीं भी बैठे उस गृह का अनिष्ट करता ही है यदि अष्टम में ही बैठे तो वह दोष दूर हो जाता है, इसलिए अष्टमस्थ अष्टमेश की संख्या ० नियत की जाती है। यदि वही अष्टमस्थ अष्टमेश त्रिकोणेश हुआ तो शुभ हो जायगा, त्रिषडायाधीश हुआ तो पापी हो जाएगा। अष्टमेश यदि अष्टम में न हो तो अष्टम स्थान की संख्या पाप–८ नियत की जाती है, ऐसी स्थिति में वह त्रिकोणेश होने पर भी शुभ नहीं होता।

अष्टम = ० (यदि उसमें अष्टमेश बैठा हो)
अष्टम = –८ (यदि उसमें अष्टमेश न हो)

शुभ–पाप गणना द्योतक कुण्डली

+०से+४ तक सम
+४ से +१३ तक शुभ। –१ से –१७ तक अशुभ
अष्टमेश अष्टमस्थ हो तो ०
अष्टमेश अष्टम में न हो तो –८



लग्न=१
चतुर्थ=२
सप्तम=३
दशम=४
} केन्द्र

लग्न=५
पञ्चम=६
नवम=७
} त्रिकोण

तृतीय=–७
षष्ठ=–८
एकादश=–९
} त्रिषडाय

अष्टम=–८
अष्टमेशस्थअष्टम=०

द्वितीय=०
द्वादश=०

कुण्डली में द्वितीय द्वादश, केन्द्र, त्रिकोण, त्रिषडाय तथा अष्टम ये सब पृथक-पृथक वर्ग हैं। अपने वर्ग में प्रथम स्थान से उत्तरोत्तर द्वितीय स्थान बली होता है, इसलिए यदि कोई केन्द्रेश चतुर्थ सप्तम दोनों का स्वामी हो तो शुभत्व गणना में उसकी संख्या +२+३=+५ नहीं होगी प्रत्युत उसका शुभत्व +३ ही रहेगा क्योंकि वह केन्द्रेश ही है और केन्द्र में चतुर्थ से बली सप्तम है। यदि वही चतुर्थेश पंचमेश हो जावे तो वह केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश दो पृथक वर्ग का स्वामी होगा और उसके शुभत्व की संख्या २+६=+८ हो जावेगी। इसी प्रकार तृतीयेश षष्ठेश हो तो वह तृषडायेश ही रहेगा और उसके पापत्व की गणना ७+(–८)=–१५ न होकर प्रत्युत–८ ही रहेगी क्योंकि पापत्व में

तृतीयेश से षष्ठेश स्वयं बली है। अष्टमस्थ न होकर अष्टमेश यदि एकादशेश हो तो उसकी पाप संख्या −८+−९=−१७ होगी क्योंकि अष्टम और एकादश ये दो पृथक-पृथक वर्ग हैं और चूंकि दोनों पाप स्थानों के पापत्व के (Nature) स्वभाव में अन्तर है, इसलिए इनकी पाप संख्या पृथक-पृथक मानी जाएगी।

मारकेशों के विषय में

द्वितीय सप्तम मारक स्थान हैं। इनके अधिपति चं,बु,शु,वृ आयु प्रसंग में मारकेश कहे जाते हैं। परिस्थितिवश इनकी महादशा में निधन होता है। इनमें से जो उपरोक्त योजनानुसार शुभ होंगे उनकी दशा में यदि मरण हो तो अच्छी रीति से निधन होगा यदि मरण न हो तो मारकेश की अपनी दशान्तर-दशा में अनिष्ट होने पर भी अंत अच्छा होता है अशुभ होने पर अंत बुरा होता है।

उदाहरण—वृश्चिक लग्न कुण्डली में मंगल षष्ठेश पापी है उसमें शुभ मारकेश बृहस्पति का अन्तर जातक को उसके विवाद में विजयी तो करता है पर बड़ा अनिष्ट करने के उपरान्त।

(असंबंधित) अकेले ग्रहों की शुभ(+)वा पाप(−)संख्या

लग्न			ग्रह							पाप पुण्य संख्या
मेष	ल अ	=	मंगल	=	१	−	८	=	−	७
	ल अ	=	मंगल	=	५	−	८	=	−	३
अष्टमस्थ	ल अ	=	मंगल	=	६	+	०	=	+	६
	द्वि स	=	शुक्र	=	०	+	३	=	+	३
	तृ ष	=	बुध	=		−	८	=	−	८
	पं पं	=	सूर्य	=	६			=	+	६
	न द्वि	=	गुरु	=	७	+	०	=	+	७
	द ए	=	शनि	=	४	−	९	=	−	५
	च	=	चन्द्र	=			२	=	+	२
वृष	ल ष	=	शुक्र	=	६	−	८	=	−	२
	द्वि पं	=	बुध	=	०	+	६	=	+	६
	तृ	=	चन्द्र	=		−	७	=	−	७
	च	=	सूर्य	=	२			=	+	२
	स द्वा	=	मंगल	=	३	+	०	=	+	३
	अ ए	=	बृहस्पतिः	=	८	−	९	=	−	१७
अष्टमस्थ	अ ए	=	बृहस्पतिः	=	०	−	९	=	−	९
	न द	=	शनिः	=	७	+	४	=	+	११

लग्न			ग्रह					पाप	पुण्य	संख्या
मिथुन	ल च	=	बुध	=	५	+	२	=	+	७
	द्वि	=	चन्द्र	=		+	०	=	+	०
	तृ	=	सूर्य	=		−	७	=	−	७
	पं द्वा	=	शुक्र	=	६	+	०	=	+	६
	ष ए	=	मंगल	=		−	९	=	−	९
	स द	=	बृहस्पति	=	४	=		=	+	४
	अ न	=	शनिः	−	८	+	७	=	−	१
अष्टमस्थ	अ न	=	शनिः	=	०	+	७	=	+	७
कर्क	ल	=	चन्द्र	=	५	+	१	=	+	६
	द्वि	=	सूर्य	=	०			=	+	०
	तृ द्वा	=	बुध	= −	७	+	०	=	−	७
	च ए	=	शुक्र	=	२	−	९	=	−	७
	पं द	=	मङ्गल	=	६	+	४	=	+	१०
	ष न	=	बृहस्पति	= −	८	+	७	=	−	१
	स अ	=	शनि	=	३	—	८	=	−	५
अष्टमस्थ	स अ	=	शनि	=	३	+	०	=	+	३
सिंह	ल	=	सूर्य	=	१	+	५	=	+	६
	द्वि ए	=	बुध	=	०	—	९	=	−	९
	तृ द	=	शुक्र	= −	७	+	४	=	−	३
	च न	=	मंगल	=	२	+	७	=	+	९
	पं अ	=	बृहस्पति	=	६	—	८	=	−	२
अष्टमस्थ	पं अ	=	,,	=	६	+	०	=	+	६
	ष स	=	शनि	= −	८	+	३	=	−	५
	द्वा	=	चन्द्रमा	=		+	०	=		०
कन्या	ल द	=	बुध	=	द ४ } ल ५ }			=	+	९
	द्वि न	=	शुक्र	=	०	+	७	=	+	७
	तृ अ	=	मंगल	= −	७	−	८	=	−	१५
	अष्टमस्थ	=	मंगल	= −	७	+	०	=	−	७
	च स	=	बृहस्पति	=	=	+	३	=	+	३
	पं ष	=	शनि	=	६	−	८	=	−	२
	ए		चन्द्रमा		=	−	९	=	−	९

लग्न			ग्रह						पाप पुण्य संख्या	
तुला	ल अ	=	शुक्र	=	६	−	८	=	−	२
	अष्टमस्थ		शुक्र	=	६	+	०	=	+	६
	द्वि स	=	मंगल	=	०	+	३	=	+	३
	तृ ष	=	गुरु	=	+	−	८	=	−	८
	न द्वा	=	बुध	=	७	+	०	=	+	७
	द	=	चन्द्र	=	४			=	+	४
	ए	=	सूर्य	=		−	९	=	−	९
	च पं	=	शनि	=	२	+	६	=	+	८
वृश्चिक	ल ष	=	मंगल	=	६	−	८	=	−	२
	द्वि पं	=	गुरु	=	०	+	६	=	+	६
	तृ च	=	शनि	=	−७	+	२	=	−	५
	स द्वा	=	शुक्र	=	३	+	०	=	+	३
	अ ए	=	बुध	=	−८	−	९	=	−	१७
	अष्टमस्थ	=	बुध	=	०	−	९	=	−	९
	न	=	चन्द्र	=	७			=	+	७
	द	=	सूर्य	=	४			=	+	४
धनु	ल च	=	गुरु	=	२	+	५	=	+	७
	द्वि तृ	=	शनि	=	०	−	७	=	−	७
	पं द्वा	=	मंगल	=	६	+	०	=	+	६
	ष ए	=	शुक्र	=		−	९	=	−	९
	स द	=	बुध	=	४			=	+	४
	अ	=	चन्द्र	=		−	८	=	−	८
	अष्टमस्थ	=	चन्द्र	=		+	०	=	+	०
	न	=	सूर्य	=	७			=	+	७
मकर	ल द्वि	=	शनि	=	६	+	०	=	+	६
	तृ द्वा	=	गुरु	=	−७	+	०	=	−	७
	च ए	=	मंगल	=	२	−	९	=	−	७
	पं द	=	शुक्र	=	६	+	४	=	+	१०
	ष न	=	बुध	=	−८	+	७	=	−	१
	स	=	चन्द्र	=	३			=	+	३
	अ	=	सूर्य	=	−८			=	−	८
	अष्टमस्थ	=	सूर्य	=		+	०	=	+	०

लग्न				ग्रह						पाप पुण्य संख्या
कुम्भ	ल द्वा	=	शनि	=	६	+	०	=	+	६
	द्वि ए	=	गुरु	=	०	−	९	=	−	९.
	तृ द	=	मंगल	= −७		+	४	=	−	३
	च न	=	शुक्र	=	२	+	७	=	+	९.
	पं अ	=	बुध	=	६	−	८	=	−	२
	अष्टमस्थ	=	बुध	=	६	−	०	=	+	६
	ष	=	चन्द्र	=		−	८	=	−	८
	स	=	सूर्य	=			३	=	+	३
मीन	ल द	=	गुरु	=	५	+	४	=	+	९
	द्वि न	=	मंगल	=	०	+	७	=	+	७
	तृ अ	=	शुक्र	= −०		−	८	=	−	१५
अष्टमस्थ			शुक्र	= −७		+	०	=	−	७
	च स	=	बुध	=	३			=	+	३
	पं	=	चन्द्र	=	६			=	+	६
	ष	=	सूर्य	=	−८			=	−	८
	स द्वा	=	शनि	=	−९	+	०	=	−	९

परस्पर योग करने वाले ग्रहों के योगजफल की पाप-पुण्य संख्या की सारणी

अर्थात् यदि निम्नलिखित दो ग्रह आपस में संबंध करें तो उसका फल (शुभ वा अशुभ) निम्नसंख्यक होगा ।

मेष लग्न

योगज फल

सूर्य=पंचमेश = + ६					चन्द्र = + २				
सू	चं	=	+	१०	चं	सू	=	+	१०
सू	मं	=	+	४	,,	मं	=	+	०
,,	बु	=	−	२	,,	बु	=	−	६
,,	बृ	=	+	१३	,,	बृ	=	+	११
,,	शु	=	+	९	,,	शु	=	+	५
,,	श	=	+	१	,,	श	=	−	३
,,	(मं)	=	+	१२					

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं, वे मारकेश हैं। कोष्ठक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

मंगल=लग्नेश, अष्टमेश=–२

(मं) अष्टमस्थ=+६

मं	सू	=	+ ४
(मं)	सू	=	+ १२
मं	चं	=	+ ०
मं	(चं)	=	+ ८
मं	बु	=	– १०
(मं)	बु	=	– २
मं	बृ	=	+ ५
(मं)	बृ	=	+ १३
मं	शु	=	+ १
(मं)	शु	=	+ ९
मं	श	=	– ७
(मं)	श	=	+ १

बुध=तृतीयेश, षष्ठेश=–८

बु	सू	=	— २
,,	चं	=	— ६
,,	मं	=	— १०
,,	(मं)	=	— २
,,	बृ	=	— १
,,	शु	=	— ५
,,	श	=	— १३
,,	बु	=	— ८

बृ = (द्वा न) + ७

बृ	सू	=	+ १३
,,	चं	=	+ ११
बृ	मं	=	+ ५
,,	(मं)	=	+ १३
बृ	बु	=	– ८
,,	शु	=	+ १०
बृ	श	=	+ २
,,	बृ	=	+ ७

शु = (द्वि स) + ३

शु	सू	=	+ ९
,,	चं	=	+ ५
,,	मं	=	+ १
,,	(मं)	=	+ ९
,,	बु	=	– ५
,,	बृ	=	+ १०
,,	श	=	– २
,,	शु	=	+ ३

शनि = (द ए)—५

श	सू	=	+ १
,,	चं	=	– ३
,,	मं	=	– ७
,,	(मं)	=	– १
,,	बु	=	– २०
,,	बृ	=	+ २
,,	शु	=	– ५

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं, वे मारकेश हैं। कोष्ठक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

वृष लग्न

योगज फल

सूर्य (च) + २

सू	चं	=	−	५
,,	मं	=	+	५
,,	बु	=	+	८
,,	बृ	=	−	१५
,,	(बृ)	=	−	७
,,	शु	=	+	०
,,	श	=	+	१३

चन्द्र (तृतीयेश) − ७

चं	सू	=	−	५
,,	मं	=	−	४
,,	बु	=	−	१
,,	बृ	=	−	२४
,,	(बृ)	=	−	१६
,,	शु	=	−	९
,,	श	=	−	४
,,	चं	=	−	७

मंगल (द्वा स) + ३

मं	सू	=	+	५
,,	चं	=	−	४
,,	बु	=	+	९
,,	बृ	=	−	१४
,,	(बृ)	=	−	६
,,	शु	=	+	१
,,	श	=	+	१४

बुध (द्वि पं) + ६

बु	सू	=	+	८
,,	चं	=	−	१
,,	मं	=	+	९
,,	बृ	=	−	११
,,	(बृ)	=	−	३
,,	शु	=	+	४
,,	श	=	+	१७

बृहस्पति (अ ए)−१७ अष्टमस्थ−९

बृ	सू	=	−	१५
(बृ)	सू	=	−	७
बृ	चं	=	−	२४
(बृ)	चं	=	−	१६
बृ	मं	=	−	१४
(बृ)	मं	=	−	६
बृ	बु	=	−	११
(बृ)	बु	=	−	३
बृ	श	=	−	१९
(बृ)	शु	=	−	११
बृ	श	=	−	६
(बृ)	श	=	+	२
बृ	बृ	=	−	१७ }
(बृ)	बृ	=	−	९ }

शुक्र (ल ब) − २ + ५=३

शु	सू	=	+	०
,,	चं	=	−	९
,,	मं	=	+	१
,,	बु	=	+	४
,,	बृ	=	−	१९
,,	(बृ)	=	−	११
,,	श	=	+	१४
,,	शु	=	−	२

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं, वे मारकेश हैं। कोष्ठक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

शनि (न द) + ११

श	सू	=	+	१३
,,	चं	=	+	४
,,	मं	=	+	१४
,,	बु	=	+	१७
,,	बृ	=	+	६
,,	(बृ)	=	+	२

मिथुन लग्न

योगज फल

सूर्य (तृ) = — ७

सू	चं	=	–	७
,,	मं	=	–	१६
,,	बु	=	–	०
,,	बृ	=	–	३
,,	शु	=	–	१
,,	श	=	–	८
,,	(श)	=	–	०

चन्द्र (द्वि) = — ०

चं	सू	=	–	७
,,	मं	=	–	९
,,	बु	=	+	७
,,	बृ	=	+	४
,,	शु	=	+	६
,,	श	=	–	१
,,	(श)	=	+	७

मंगल = ष ए = – ९

मं	सू	=	–	१६
,,	चं	=	–	९
,,	बु	=	–	७
,,	बृ	=	–	५
,,	शु	=	–	३
,,	श	=	–	१०
,,	(श)	=	–	२

बुध (ल च) = २ + ५] = ७

बु	सू	=	–	०
,,	चं	=	+	७
,,	मं	=	–	२
,,	बृ	=	+	११
,,	शु	=	+	१३
,,	श	=	+	६
,,	(श)	=	+	१४

बृहस्पति (स द) = + ४

बृ	सू	=	−	३
,,	चं	=	+	४
,,	मं	=	−	५
,,	बु	=	+	११
,,	शु	=	+	१०
,,	श	=	+	२
,,	(श)	=	+	११

शुक्र (द्वा प) + ६

शु	सू	=	−	१
,,	चं	=	+	६
,,	मं	=	−	३
,,	बु	=	+	१३
,,	बृ	=	+	१०
,,	श	=	+	५
,,	(श)	=	+	१३

शनि (अ न)= −१ अष्टमस्थ +७

श	सू	=	−	८
श	चं	=	−	१
श	मं	=	−	१०
श	बु	=	+	१
श	बृ	=	+	३
श	शु	=	+	५
श	सू	=	+	०
(श)	चं	=	+	७
(श)	म	=	+	१
(श)	बु	=	+	८
(श)	बृ	=	+	११
(श)	शु	=	+	१३

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे मारकेश हैं। कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

कर्क लग्न

योगज फल

सू (द्वि) ०

सू	च	=	+	६
सू	मं	=	+	१०
सू	बु	=	−	७
सू	बृ	=	−	१
सू	शु	=	−	७
सू	श	=	−	५
सू	(श)	=	+	३
सू		=		०

चं (ल) + ६

चं	सू	=	+	६
चं	मं	=	+	१६
चं	बु	=	−	१
चं	बृ	=	+	५
चं	शु	=	−	१
च	श	=	+	१
चं	(श)	=	+	९
च	चं	=	+	६

मं (सं श्ले) + १०

मं	सू	=	+	१०
मं	चं	=	+	१६
मं	बु	=	+	३
मं	बृ	=	+	९
मं	शु	=	+	३
मं	श	=	+	५
मं	(श)	=	+	४
मं	मं	=	+	१०

बृ (ष न) — १

बृ	सू	=	—	१
बृ	चं	=	+	५
बृ	मं	=	+	९
बृ	बु	=	—	८
बृ	शु	=	—	८
बृ	श	=	—	६
बृ	(श)	=	+	२

श (स अ)—५ अष्टमस्थ + ३

श	सू	=	—	५
(श)	सू	=	+	३
श	चं	=	+	१
(श)	चं	=	+	९
श	मं	=	+	५
(श)	मं	=	+	१३
श	बु	=	—	१२
(श)	बु	=	—	४
श	बृ	=	—	६
(श)	बृ	=	+	२
श	शु	=	—	१२
(श)	शु	=	—	४

बु (द्वा तृ) — ७

बु	सू	=	—	७
बु	चं	=	—	१
बु	मं	=	+	३
बु	बृ	=	—	८
बु	शु	=	—	१४
बु	श	=	—	१२
बु	(श)	=	—	४
बु	बु	=	—	७

शु (च ए) — ७

शु	सू	=	—	७
शु	चं	=	—	१
शु	मं	=	+	३
शु	बु	=	—	१४
शु	बृ	=	—	८
शु	श	=	—	१२
शु	(श)	=	—	४

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे मारकेश हैं तथा कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

सिंह लग्न

सू (ल) + ६				चं (द्वा) + ०			
सू	चं	= +	६	चं	सू	= +	६
सू	मं	= +	१५	चं	मं	= +	९
सु	बु	= —	३	चं	बु	= —	९
सू	बृ	= +	४	चं	बृ	= —	२
सू	शु	= +	३	चं	शु	= —	३
सू	(बृ)	= +	१२	च	श	= —	५
सू	श	= +	१	चं	(बृ)	= +	६

मं (च न) + ९				बु = (द्वि ए) — ९			
मं	सू	= +	१५	बु	सू	= —	३
मं	चं	= +	९	बु	चं	= —	९
मं	बु	=	०	बु	मं	= +	०
मं	बृ	= +	७	बु	बृ	= —	११
मं	(बृ)	= +	१५	बु	शु	= —	३
मं	शु	= +	६	बु	शु	= —	१२
म	श	= +	४	बु	श	= —	१४

बृ = (पं अ) - अष्टमस्थ + ६				शु = (तृ द) — ३			
बृ	सू	= +	४	शु	सू	= +	३
(बृ)	सू	= +	१२	शु	चं	= —	३
बृ	चं	= —	२	शु	मं	= +	६
(बृ)	च	= +	६	शु	बु	= —	१२
बृ	मं	= +	७	शु	बृ	= —	५
(बृ)	मं	= +	१५	शु	(बृ)	= +	३
बृ	बु	= —	११	शु	श	= —	८
(बृ)	बु	= —	३				
बृ	शु	= —	५				
बृ	श	= —	७				
(बृ)	श	= +	१				
(बृ)	शु	= +	३				

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे मारकेश हैं तथा कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

श (ध स) — ५

श	सू	=	+	१
श	चं	=	—	५
श	मं	=	+	४
श	बु	=	—	१४
श	बृ	=	—	७
(श)	बृ	=	+	१
श	शु	=	—	८

कन्या लग्न

योगज फल

सू (द्वा) ०

सू	चं	=	—	९
,,	मं	=	—	१५
,,	(म)	=	—	७
,,	बु	=	+	९
,,	बृ	=	+	३
,,	शु	=	+	७
,,	श	=	+	२

चं (ए) — ९

च	सू	=	—	९
,,	मं	=	—	२४
,,	(मं)	=	—	१६
,,	बु	=		०
,,	बृ	=	—	६
,,	शु	=	—	२
,,	श	=	—	१९

मं (तृ अ) – १५ अष्टमस्थ—७

मं	सू	=	—	१५
,,	चं	=	—	२४
(मं)	चं	=	—	१६
,,	बु	=	—	६
(मं)	बु	=	+	२
,,	बृ	=	—	१२
(म)	बृ	=	—	४
,,	शु	=	—	८
(मं)	शु	=		०
,,	श	=	—	१७
(मं)	श	=	—	९
,,	सू	=	—	७

बु (ल द) + ९

बु	सू	=	+	९
,,	चं	=		०
,,	मं	=	—	६
,,	(मं)	=	+	२
,,	बृ	=	+	१२
,,	शु	=	+	१६
,,	श	=	+	७

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप मे हैं वे मारकेश हैं तथा कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

बृ (ब स) + ३

बृ	सू	=	+	३
,,	चं	=	—	६
,,	मं	=	—	१२
,,	(मं)	=	—	४
,,	बु	=	+	१२
,,	शु	=	+	१०
,,	श	=	+	१

श (पं स)—२

श	सू	=	—	२
,,	चं	=	—	११
,,	मं	=	—	१७
,,	(मं)	=	—	९
,,	बु	=	+	७
,,	बृ	=	+	१
,,	शु	=	+	५

शु (द्वि न) + ७

शु	सू	=	+	७
,,	चं	=	—	२
,,	मं	=	—	८
,,	(मं)	=	+	०
,,	बु	=	+	१६
,,	श	=	+	५
,,	बृ	=	+	१०

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे मारकेश हैं तथा कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

तुला लग्न

योगज फल

सू (ए)—९

सू	चं	=	—	५
,,	मं	=	—	६
,,	बु	=	—	२
,,	बृ	=	—	१७
,,	शु	=	—	११
,,	(शु)	=	—	३
,,	श	=	—	१

च (द) + ४

चं	सू	=	—	५
,,	मं	=	+	७
,,	मं	=	+	११
,,	बृ	=	+	४
,,	शु	=	+	२
,,	(शु)	=	+	१०
,,	श	=	+	१२

म (हि स) + ३

मं	सू	=	—	६
,,	चं	=	+	७
,,	बु	=	+	१०
,,	बृ	=	—	५
,,	शु	=	—	२
,,	(शु)	=	+	१०
,,	श	=	+	११

बु (हा न) + ७

बु	सू	=	—	२
,,	चं	=	+	११
,,	मं	=	+	१०
,,	बृ	=	—	१
,,	शु	=	+	५
,,	(शु)	=	+	१३
,,	श	=	+	१५

बृ (तु ब)—८

बृ	सू	=	—	१३
,,	चं	=	—	४
,,	मं	=	—	५
,,	बु	=	—	१
,,	शु	=	—	१०
,,	(शु)	=	—	२
,,	श	=	—	०

शु (ल अ)—२

शु	सू	=	—	११
(शु)	सू	=	—	३
,,	चं	=	+	२
(शु)	च	=	+	१०
,,	मं	=	+	१
(शु)	मं	=	+	९
,,	बु	=	+	५
(शु)	बु	=	+	१३
,,	बृ	=	—	१०
(शु)	बृ	=	—	२
,,	श	=	+	६
(शु)	श	=	+	१४

श (चपं) + ८

श	सू	=	—	१
,,	चं	=	+	१२
,,	मं	=	+	११
,,	बु	=	+	१५
,,	बृ	=	—	०
,,	शु	=	+	६
,,	(शु)	=	+	१४

वृश्चिक लग्न

योगज फल

सू (व) + ४

सू	चं	=	+	११
,,	मं	=	+	२
,,	बु	=	−	१३
,,	(बृ)	=	−	५
,,	बृ	=	+	१०
,,	शु	=	+	७
,,	श	=	−	१

मं (ल ब) — २

मं	सू	=	+	२
मं	चं	=	+	५
मं	बु	=	−	१९
मं	(बु)	=	−	११
मं	बृ	=	+	४
मं	शु	=	+	१
मं	श	=	−	७

चं (न) + ७

चं	सू	=	+	११
,	मं	=	+	५
,,	बु	=	−	१०
,,	(बृ)	=	−	२
,,	बृ	=	+	१३
,,	शु	=	+	१०
,,	श	=	+	२

बु (अ ए) − १ − ९

बृ	सू	=	−	१३
बु	चं	=	−	१०
बु	मं	=	−	१९
बु	बृ	=	−	९१
बु	शु	=	−	१४
बु	श	=	−	२२
(बु)	सू	=	−	५
(बु)	चं	=	−	२
(बु)	म	=	−	११
(बु)	बृ	=	−	३
(बु)	शु	=	−	६
(बु)	श	=	−	१४

बृ (द्वि पं) + ६

बृ	सू	=	+	१०
बृ	चं	=	+	१३
बृ	मं	=	+	४
बृ	बु	=	−	११
बृ	(बु)	=	−	३
बृ	शु	=	+	९
बृ	श	=	+	१

शु (द्वा स) + ३

शु	सू	=	+	७
शु	चं	=	+	१०
शु	मं	=	+	१
शु	बु	=	−	१४
शु	(बु)	=	−	६
शु	बृ	=	+	९
शु	श	=	—	२

श (तृ ष) — ५

श	सू	=	—	१
श	चं	=	+	७
श	म	=	—	७
श	बु	=	—	२२
श	(बु)	=	—	१४
श	बृ	=	+	१
श	शु	=	—	२

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में है वे मारकेश हैं तथा कोष्टक वाले ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश है।

धनु लग्न

योगज फल

सू (न) + ७

सू	चं	=	—	१
सू	(चं)	=	+	७
सू	मं	=	+	१३
सू	बु	=	+	११
सू	बृ	=	+	१४
सू	शु	=	—	२
सू	श	=	—	०

चं (अ) — ८ ल ०

चं	सू	=	—	१
च	मं	=	—	२
(चं)	मं	=	+	६
चं	बु	=	—	४
(चं)	बु	=	+	४
च	बृ	=	—	१
(चं)	बृ	=	+	७
चं	शु	=	—	१७
(चं)	श	=	—	९
चं	श	=	—	१५
(चं)	श	=	—	७

मं (पं द्वा) + ६

म	सू	=	+	१३
मं	चं	=	—	२
मं	(चं)	=	+	६
मं	बु	=	+	१०
मं	बृ	=	+	१३
मं	शु	=	—	३
मं	श	=	—	१

बु (स द) + ४

बु	सू	=	+	११
बु	चं	=	—	४
बु	(चं)	=	+	४
बु	मं	=	+	१०
बु	बृ	=	+	११
बु	शु	=	—	५
बु	श	=	—	३

बृ (ल ब) + ७

बृ	सू	= +	१४
बृ	चं	= —	१
बृ	(चं)	= +	७
बृ	म	= +	१३
बृ	बु	= +	११
बृ	शु	= —	२
बृ	श	=	०

श (द्वि तृ) — ७

श	सू	= —	०
श	चं	= —	१५
श	(चं)	= —	७
श	मं	= —	१
श	बु	= —	३
श	बृ	=	०
श	शु	= —	१६

शु (ब ए) —९

शु	सू	= —	२
शु	चं	= —	१७
शु	(चं)	= —	९
शु	मं	= —	३
शु	बु	= —	५
शु	बृ	= —	२
शु	श	= —	१६

मकर लग्न

योगज फल

सू (अ) —८, + ०

सू	चं	= —	५
(सू)	चं	= +	३
सू	मं	= —	१५
(सू)	मं	= —	७
सू	बु	= —	९
(सू)	बु	= —	१
सू	बृ	= —	१५
(सू)	बृ	= —	७
सू	शु	= +	२
(स)	शु	= +	१०
सू	श	= —	२
(सू)	श	= +	६

चं (स) + ३

चं	सू	= —	५
,,	मं	= —	४
,,	बु	= +	२
,,	बृ	= —	४
,,	शु	= +	१३
,,	श	= +	९
,,	(सू)	= +	३

मं (च ए)—७

मं	सू	=	—	१५
मं	(सू)	=	—	७
मं	चं	=	—	४
मं	बु	=	—	८
मं	बृ	=	—	१४
मं	शु	=	+	३
मं	श	=	—	१

बृ (द तृ)—७

बृ	सू	=	—	१५
बृ	(सू)	=	—	७
बृ	चं	=	—	४
बृ	मं	=	—	१४
बृ	बु	=	—	८
बृ	शु	=	+	३
बृ	श	=	—	१

श (ल हि) + ६

श	सू	=	—	२
श	(सू)	=	+	६
श	चं	=	+	९
श	मं	=	—	१
श	मं	=	+	५
श	बृ	=	—	१
श	शु	=	+	१६

बु (ख न)—१

बु	सू	=	—	८
बु	(सू)	=	—	१
बु	चं	=	+	२
बु	मं	=	—	८
बु	बृ	=	—	८
बु	शु	=	+	९
बु	श	=	+	५

शु (पं द) + १०

शु	सू	=	+	२
शु	(सू)	=	+	१०
शु	चं	=	+	१३
शु	मं	=	+	३
शु	बु	=	+	९
शु	बृ	=	+	३
शु	श	=	+	१६

नोट—जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे मारकेश हैं तथा कोष्टक में ग्रह अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

कुम्भ लग्न

योगज फल

सू (स) + ३

सू	चं	=	—	५
,,	मं	=	+	०
,,	बु	=	+	१
,,	(बु)	=	+	९
,,	बृ	=	—	६
,,	शु	=	+	१२
,,	श	=	+	९

चं (ष) —७

चं	सू	=	—	५
,,	मं	=	—	११
,,	बु	=	—	१०
,,	बृ	=	—	१७
,,	(बु)	=-	—	२
,,	शु	=	+	१
,,	श	=	—	२

मं (तृ द)—३

मं	सू	=	—	०
मं	चं	=	—	११
मं	बु	=	—	५
मं	(बु)	=	+	३
मं	बृ	=	—	१२
मं	शु	=	+	६
म	श	=	+	३

बु (पं अ)—२+६

बु	सू	=	+	१
बु	चं	=	—	१०
बु	मं	=	—	५
बु	बृ	=	—	११
बु	शु	=	+	७
बु	श	=	+	४
(बु)	सू	=	+	९
(बु)	चं	=	—	२
(बु)	मं	=	+	३
(बु)	बृ	=	—	३
(बु)	शु	=	+	१५
बु	श	=	+	१२

बृहस्पति (द्वि ए)—९

बृ	सू	=	—	६
बृ	चं	=	—	१७
बृ	मं	=	—	१२
बृ	बु	=	—	११
बृ	(बु)	=	—	३
बृ	शु	=	—	०
बृ	श	=	—	३

शुक्र (च न)+९

शु	सू	=	+	१२
शु	चं	=	+	१
शु	मं	=	+	६
शु	बु	=	+	७
शु	(बु)	=	+	१५
शु	बृ	=	+	०
शु	श	=	+	१५

श (ल द्वा)+६

श	सू	=	+	९
श	चं	=	—	२
श	म	=	+	३
श	बु	=	+	४
श	(बु)	=	+	१२
श	बृ	=	+	३
श	शु	=	+	१५

नोट—जो ग्रह बड़े टाइप में हैं वे मारकेश हैं कोष्टक वाले ग्रह अष्मस्थ अष्टमेश हैं।

मीन लग्न

योगज फल

सू (ष)—८

सू	चं	=	—	२
सू	मं	=	—	१
सू	बु	=	—	५
सू	बृ	=	+	१
सू	शु	=	—	२३
सू	(शु)	=	—	१५
सू	श	=	—	१७

चं (पं)+६

चं	सू	=	—	२
चं	मं	=	+	१३
चं	बु	=	+	९
चं	बृ	=	+	१५
चं	शु	=	+	९
चं	(शु)	=	—	१
चं	श	=	—	३

मं (द्वि न)+७

मं	सू	=	—	१
मं	चं	=	—	१३
मं	बु	=	+	१०
मं	बृ	=	+	१६
मं	शु	=	—	८
मं	(शु)	=	+	०
म	श	=	—	२

बृ (ल द)+९

बृ	सू	=	+	१
बृ	चं	=	+	१५
बृ	मं	=	+	१६
बृ	बु	=	+	१२
बृ	शु	=	—	६
बृ	(शु)	=	+	२
बृ	श	=	—	०

श=(ए द्वा)—९

श	सू	=	—	१७
श	चं	=	—	३
श	मं	=	—	२
श	बु	=	—	६
श	बृ	=	—	६
श	शु	=	—	२४
श	(शु)	=	—	१६

बु=(च स)+३

बु	सू	=	—	५
बु	चं	=	+	९
बु	मं	=	+	१०
बु	बृ	=	+	१२
बु	शु	=	—	१२
बु	(शु)	=	—	४
बु	श	=	—	६

शु=(तृ अ)—१५,—७

शु	सू	=	—	२३
(शु)	सू	=	—	१५
शु	चं	=	—	९
शु	मं	=	—	८
शु	बु	=	—	१२
शु	बृ	=	—	६
शु	श	=	—	२४
(शु)	च	=	—	१
शु	मं	=	—	०
(शु)	बु	=	—	४
(शु)	बृ	=	+	२
(श)	श	=	—	१६

(१) जो ग्रह कोष्टक में हैं वे अष्टमस्थ अष्टमेश हैं।

(२) जो ग्रह मोटे टाइप में हैं वे द्वितीयेश या सप्तमेश (मारकेश) हैं।

० से + ४ तक सम, + ५ से १७ तक शुभ,—१ से २४ तक पाप फल समझना चाहिए योगज फल में जहाँ केन्द्रेश-केन्द्रेश का सम्बन्ध हो वहाँ ० से + ८ तक सम, + ८ से १७ तक शुभ,—१ से २४ तक पाप फल की चरमसीमा समझनी चाहिए।

परिशिष्ट 'झ'

कारक योगों की सारणी

मेष लग्न

<table>
<tr><th>सम्बन्ध</th><th>प्रथम श्रेणी</th><th>द्वितीय श्रेणी</th><th>तृतीय श्रेणी</th></tr>
<tr><td>सू चं + १०
(पं + च)</td><td>सू चं
४ ५</td><td>सू चं
४
५</td><td>सू चं
४ | १०
११ | ५</td></tr>
<tr><td>सू शु + ९
(पं + स द्वि)</td><td>सू | शु
७ | ५
=</td><td>सू शु
७—५</td><td>सू | शु
७ | १
११ | ५</td></tr>
<tr><td>सू मं + ४
(पं + ल अ)</td><td>सू | मं
१ | ५</td><td>स मं
१—५</td><td>१ सू म = + १२
५ मं | ११ सू
१ सू | ७ मं
१ सू | ६ मं
१ सू | १० मं</td></tr>
<tr><td>सू बृ + १३
(पं + न द्वा)</td><td>सू | बृ
९ | ५</td><td>सू बृ
९—५</td><td>सू | बृ
९ | १
९ | ३
११ | ५</td></tr>
<tr><td>सू श + १
(पं + द ए)</td><td>सू | श
१० | ५</td><td>सू श
१०—५</td><td>सू | श
१० | ४
१० | ८
१० | १
६१ ⋮ ५</td></tr>
</table>

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
मं बृ × ५	मं | बृ	मं बृ	मं | बृ
(ल अ × न द्वा)	९ | १	९—१	९ | ३
			९ | ५
			९ | १
		१ मं बृ=+१३	७ | १
			१० | १
			६ | १
मं शु + १	मं | शु	मं शु	मं | शु
(ल अ+स द्वि)	७ | १	७—१	१० | १
		=	
		१ मं शु =+९	६ | १
बृ श + २	बृ | श	बृ श	बृ | श
(न द्वा + द ए)	१० | ९	१०—९	१० | ८
			१० | ४
			१० | १
			३ | ९
			५ | ९
			१ | ९
बृ शु + १०	बृ | शु	बृ शु	बृ | श
(न द्वा + सद्वि)	७ | ९	७—९	७ | १
		=	३ | ३
			५ | ९
			१ | ९
बृ चं + ११	बृ | चं	बृ चं	बृ | चं
(न द्वा + च)	७ | ९	४—९	४ | १०
			३ | ९
			५ | ९
			१ | ९

<table>
<tr><th>सम्बन्ध</th><th>प्रथम श्रेणी</th><th>द्वितीय श्रेणी</th><th></th><th>तृतीय श्रेणी</th></tr>
<tr><td>मं चं + ० + ८
(ल अ + च)</td><td>×</td><td>मं चं
१—८=+८</td><td></td><td>×
=+८</td></tr>
<tr><td>मं श
(ल अ + द ए)</td><td>×</td><td>मं श
(१—७)=+१</td><td></td><td>×</td></tr>
<tr><td colspan="5">वृष लग्न</td></tr>
<tr><td>शु+श
(ल ष+न ह)
+ १४</td><td>शु | श
९ | १
१० | १</td><td>शु श
९—१०
—१</td><td>शु | श
९ | ७
९ | १२
७ | १
१० | ४</td><td>शु | श
१० | ८
१० | १
९ | ३</td></tr>
<tr><td>शु + बु
(ल ष + पं द्वि)
+ ४</td><td>शु | बु
५ | १</td><td>शु बु
५—१</td><td></td><td>शु | बु
५ | ११
७ | १</td></tr>
<tr><td>शु + मं
(ल ष + स द्वा)</td><td>शु | मं
७ | १</td><td>शु मं
७—१</td><td></td><td>शु | मं
७ | १
७ | १२
७ | ४</td></tr>
<tr><td>शु + सू
(ल ष + च)
+ ०</td><td>×</td><td></td><td></td><td>×</td></tr>
<tr><td>श + बु
(न ह + प द्वि)
+ १९</td><td>श | बु
५ | ९
५ | १०</td><td>श बु
५—९
—१०</td><td></td><td>श | बु
५ | ११
३ | ९
७ | ९
१२ | ९
४ | १०
८ | १०
१ | १०</td></tr>
</table>

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
श + मं	श | मं	श मं	श | मं
(न द + स द्वा)	७ | ९	७–९	७ | १
+ १४			७ | ४
			७ | १२
श + सू	श | सू	श सू	श | सू
(न द + च)	४ | ९	७–९	४ | १०
+ १३			३ | ९
			७ | ९
			१[illegible] | ९
बु + मं	बु | मं	बु मं	बु | मं
(पं द्वि + स द्वा)	७ | ५	७–५	७ | १
+ ९			७ | ४
			७ | १२
			११ | ५
बु + सू	बु | सू	बु सू	बु | सू
(पं द्वि + च)	४ | ५	४–५	४ | १०
+ ८			११ | ५
ल ष + द न	शु | श	शु श	शु | श
शु + श	१० | १	१०–१	१० | १
+ ९			१० | ८
			१० | ९
			७ | १

न + द

शनि अकेला

+ ११ नवम या दशम में

१७

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
पं द्वि + न द	बु | श	बु श	बु | श
बु + श	९ | ५	९–५	९ | ३
+ १७			९ | ७
			९ | १२
			११ | ५
पं द्वि + द न	बु | श	बु श बु | श	बु | श
बु + श	१० | ५	१०–५ १० | ४	१० | १
+ १७		११ | ८	११ | ५

मिथुन लग्न

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
बु + श	बु | श	बु श	बु | श
(ल च + न अ)	९ | १	९–१	९ | ३
+ ६			९ | ७
			७ | १
			९ | १२
बु + बृ	बु | बृ	बु बृ	बु | बृ
(ल च+व स)	१० | १	१—१०	१० | ४
± ११			१० | ६
			१० | २
			७|१(ल × स)
बु + शु	बु | शु	बु शु	बु | शु
(ल च + पं द्वा)	५ | १	१—५	५ | ११
+ १३			७ | १
बु + बु	बु	बु	बु (अकेला)
(ल च) +		१—४	
+ ७		७—१०	

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
श + बृ	श | बृ	श बृ	श | बृ
(न अ + द स)	१० | ९	१०—९	१० | ६
± ३			१० | ४
			१० | २
			३ | ९
			७ | ९
			१२ | ९
श + बृ	श | बृ	श | बृ	श | बृ
न अ + स द	७ | ९	७—९	७ | १
± ३			७ | ३
			७ | ११
श + बु	श | बु	श बु	श | बु
न अ + च ल	४ | ९	४—९	४ | ९
± १			३ | ९
			७ | ९
			१२ | ९
शु + श	शु | श	शु श	शु | श
पं हा + न अ	९ | ५	९—५	९ | ३
+ ५			९ | ७
			९ | १२
			११ | ५
शु + बृ	शु | बृ	शु बृ	शु | बृ
पं हा + स द	७ | ५	७—५	७ | १
± १०			७ | ३
			७ | ११
			११ | ५

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
शु + बृ	शु | बृ	शु बृ	शु | बृ
पं द्वा + स द	१० | ५	१०—५	१० | ४
± १०			१० | ६
			१० | २
			११ | ५
शु + बु	शु | बु	शु बु	शु | बु+१३
पं द्वा + ल च	१ | ५	१—५	१ | ७
+ १३			११ | ५
बु + बृ	बु | बृ	बु बृ	बु | बृ
ल अ + स द	७ | १	७—१	७ | ३
± ११			७ | ११

कर्क लग्न

ल + न ष	चं | बृ	चं बृ	चं | बृ
चं + बृ	९ | १	९—१	९ | ३
+ ५			९ | ५
			९ | १
			७ | १
ल + द पं	चं | मं	चं मं	चं | मं
चं + मं	१० | १	१०—१	१० | ४
+ १६			१० | ७
			१० | ३
			७ | १
ल + पं द	चं | मं	च म	चं | मं
चं + मं	५ | १	५—१	५ | ११
+ १६			५ | २
			५ | १०
			७ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	
ल + स अ	चं	श	चं श	चं	श
चं + श	७	१	७—१	७	१
+ १				७	५
				७	१०
ल + ब ए	चं	शु	चं शु	चं	शु
चं + शु	४	१	४—१	४	१०
—१				४	१
न ब + द पं	बृ	मं	बृ मं	बृ	मं
बृ + मं	१०	९	१०—९	१०	४
+ ९				१०	७
				१०	३
				३	९
				५	९
				१	९
न ब + द पं	बृ	श	बृ श	बृ	श
बृ + श	७	९	७—९	७	१
— ६	८ बृ श=+२			७	५
				७	१०
				३	९
				५	९
				१	९
न ब + पं द	बृ	मं	बृ मं	बृ	मं
बृ + मं	५	९	५—९	५	११
+ ९				५	२
				५	१०
				३	९
				५	९
				१	९

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
नव + चए बृ + शु — ८	बृ शु ४ ९	बृ शु ४—९	बृ शु ४ १० ३ ९ ५ ९ १ ९
ं + द मं + १०	मं ५–१०	×	×
पं द + सअ मं + श + ५	मं श ७ ५	श ७—५	मं श ७ १ ७ ५ १० १ ११ ५ २ ५ १० ५
पं द + चए मं + शु + ३	मं शु ४ ५	म शु ४—५	मं शु ४ १० २ ५ ११ ५ १० ५
ं द + ल मं + चं + १६	मं चं १ ५	मं चं १—५	मं चं १ ७ ११ ५ २ ५ १० ४

सिंह लग्न

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल + न च सू + मं + १५	सू | मं ९ | १	सू मं ९—१	सू | मं ९ | ३ ९ | ४ ९ | २ ७ | १
ल + द तृ सू + शु + ३	सू | शु १० | १	सू शु १—१०	सू | शु १० | ४ ७ | १
ल + पं अ सू + बु १२	सू | बु ५ | १	सू बु १—५	सू | बु ५ | ११ ५ | १ ४ | ९ ७ | १
ल + स ष सू + श + १	सू | श ७ | १	सू श ७—१	सू | श ७ | ५ ७ | १०
ल + च न सू + मं + १५	सू | मं ४ | १	सूमं ४—१	सू | मं ४ | १० ४ | ९ ४ | १ ७ | १

<table>
<tr><th>सम्बन्ध</th><th>प्रथम श्रेणी</th><th>द्वितीय श्रेणी</th><th>तृतीय श्रेणी</th></tr>
<tr><td>न च + द तृ
मं + शु
+ ६</td><td>मं | शु
१० | ९</td><td>मंशु
१०—९</td><td>मं | शु
१० | ४
३ | ९
६ | ९
२ | ९</td></tr>
<tr><td>न च + स ष
मं + श
+ ४</td><td>मं | श
७ | ९</td><td>मं श
७—९</td><td>मं | श
७ | १
७ | १०
७ | ५
३ | ९
६ | ९
२ | ९</td></tr>
<tr><td>न च + च
मं + ९</td><td></td><td>मं
९–४</td><td></td></tr>
<tr><td>न च + प अ
मं + बृ
+ ७</td><td>मं | बृ
५ | ९</td><td>मंबृ
५—९</td><td>मं | बृ
५ | ११
५ | १
५ | ९
३ | ९
२ | ९
६ | ९</td></tr>
<tr><td>पं अ + द तृ
बृ + शु
—५</td><td>बृ | शु
१० | ५</td><td>बृशु
१०–५</td><td>बृ | शु
१० | ४
११ | ५
१ | ५
९ | ५</td></tr>
</table>

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	
पं अ+स ष			बृश	बृ	श
बृ+श	७		७—५	७	१
—७				७	
(+१)				७	१०
				११	५
				१	५
				९	५
पं अ+च न	बृ	मं	बमं	बृ	मं
बृ+मं	४	५	४—५	४	१०
+७				४	९
				४	१
				१९	५
				१	५
				९	५

कन्या लग्न

पं ष+ध च	श	बृ	शबृ	श	बृ
श+बृ	७	५	७—५	७	१
+१				७	३
				७	१०
				११	५
				३	५
				८	५
पं ष+च स	श	बृ	शबृ	श	बृ
श+बृ	४	५	४—५	४	१०
+१				४	१२
				४	८
				११	५
				३	५
				८	५

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द + न द्वि बु + शु ÷ १६	बु | शु ९ | १	बु शु ९–१	बु | शु ९ | ३ ७ | १
ल द + द बु + १	बुध १–१०		
ल द + पं ष बु + श + ७	बु | श ५ | १	बु श ५–१	बु | श ५ | ११ ५ | ३ ५ | ८ ७ | १
ल द + स च बु + बृ + १२	बु | बृ ७ | १	बुबृ ७–१	बु | बृ ७ | १ ७ | ३ ७ | ११
ल द + च स बु + बृ ± १२	बु | बृ ४ | १	बु बृ ४—१	बु | बृ ४ | १० ४ | १२ ४ | ८ ७ | १
न द्वि + द ल शु + बु + १६	शु | बु १० | १	शु बु १०–९	शु | बु १० | ४ ३ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
न द्वि + स च शु + बृ +१० —१०	शु | बृ ७ | ९	शु बृ ७—९	शु | बृ ७ | १ ७ | ३ ७ | ११ ३ | ९
न द्वि + च स शु + बृ +१७	शु | बृ ४ | ९	शुबृ ४–९	शु | बृ ४ | १० ४ | १२ ४ | ८ ३ | ९
न द्वि + पं ष शु + श ± ५	शु | श ५ | ९	शु श ५–९	शु | श ५ | ११ ५ | ३ ५ | ८ ३ | ९
पं ष + द ल श + बु +७	श | बु ११ | ५	श बु १०–५	श | बु १० | ४ ३ | ५ श | बु ११ | ५ ८ | ५

तुला लग्न

ल अ + न द्वा शु + बु +५	शु | बु ९ | १	शु बु ९–१	शु | बु ९ | ३ ७ | १

१ शु बु = १३

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल अ + द शु + चं + २	शु | चं १० | १ १ शु चं = + १०	शु च १०–१	शु | चं १० | ४ ७ | १
ल अ + पं च शु + श + ६	शु | श ५ | १ १ शु श = + १४	शु श ५–१	शु | श ५ | ११ ५ | ३ ५ | ८
ब + स द्वि शु + मं + १	शु | मं ७ | १ १ शु मं = + ९	शु मं ७–१	शु | मं ७ | १ ७ | ४ ७ | १०
ल अ + च पं शु + श + ६	शु | श ४ | १ १ शु श = + १४	शु श ४–१	शु | श ४ | १० ४ | २ ४ | ७
न द्वा + द बु + चं + ११	बु | चं १० | ९	बु चं ९–१०	बु | चं १० | ४ ३ | ९
न द्वा + पं च बु + श + १५	बु | श ५ | ९	बु श ५–९	बु | श ३ | ९ ५ | ११ ५ | ८ ५ | ३

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी			तृतीय श्रेणी	
न द्वा + म द्वि	बु	मं	बु मं	बु	मं	बु	मं
बु + मं	७	९	७–९	७	१	३	९
+ १०				७	४		
				७	१२		
न द्वा + च पं	बु	श	बु श			बु	श
बु + श	४	९	४–९			४	१०
+ १५						४	२
						४	७
						३	९
पं च + द	श	चं	श चं			श	चं
श + चं	१०	५	१०–५			१०	४
+ १२						११	५
						३	५
						८	५
पं च + स द्वि	श	मं	श मं			श	मं
श + मं	७	५	७–५			७	१
+ ११						७	५
						७	१२
						३	५
						११	५
						८	५
पं च + ष			शनि				
श + ८			४–५				

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	

वृश्चिक लग्न

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	
ल ष + न	मं	चं	मंचं	मं	चं
मं + चं	९	१	९–१	९	३
+ ५				७	१
				१०	१
				६	१
ल ष + द	मं	सू	मंसू	मं	सू
मं + सू	१०	१	१०–१	१०	४
+ २				७	१
				१०	१
				६	१
ल ष + पं द्वि	मं	बु	मंबु	मं	बु
मं + बु	५	१	५–१	५	११
± ४				५	१
				५	९
				६	१
				७	१
				१०	१
ल ष + स द्वा	मं	शु	मंशु	मं	शु
मं + शु	७	१	७–१	७	१
± १				१०	१
				६	१

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	
ल ष + च तृ	मं	श	मंश	मं	श
मं + श	४	१	४–१	४	१०
—७				४	२
				४	७
				१०	१
				७	१
				६	१
न + द	चं	सू	चंसू	चं	सू
चं + सू	१०	९	१०–९	१०	४
+११				३	९
न + पं द्वि	चं	बृ	चंबृ	चं	बृ
चं + बृ	५	९	५–९	५	११
±१३				५	१
				५	९
				३	९
न + स द्वा	चं	शु	चंशु	चं	शु
चं + शु	७	९	७–०	७	१
±२				३	९
न + च तृ	चं	श	चंश	चं	श
चं + श	७	९	४–९	४	१०
+२				४	२
				४	७
पं + द	बृ	सू	बृसू	बृ	सू
बृ + सू	१०	५	१०–५	१०	४
±१०				११	५
				१	५
				९	५

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
पं द्वि + स द्वा	बृ | शु	बृशु	बृ | शु
बृ + शु	७ | ५	७—५	७ | १
+ ९			११ | ५
—९			१ | ५
	७ शु बृ (महाअनिष्ट)		९ | ५

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
पं द्वि + च तृ	बृ | श	बृश	बृ | श
बृ + श	४ | ५	४–५	४ | १०
±१			४ | २
			४ | ७
			१ | ५
			११ | ५
			९ | ५

धनु लग्न

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल च + न	बृ | सू	बृसू	बृ | सू
बृ + सू	९ | १	९–१	९ | ३
+ १४			७ | १
			९ | १
			५ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल च + द स	बृ | बु	बृबु	बृ | बु
बृ + बु	१० | १	९—१	१० | ४
±११			७ | १
			९ | १
			५ | १

<table>
<tr><th>सम्बन्ध</th><th>प्रथम श्रेणी</th><th>द्वितीय श्रेणी</th><th>तृतीय श्रेणी</th></tr>
<tr><td>ल च + पं द्वा
बृ + मं
+ १३</td><td>बृ मं
५ १</td><td>बृमं
५–१</td><td>बृ मं
५ ११
५ २
५ १०
७ १
५ १
९ १</td></tr>
<tr><td>ल च + स द
बृ + बु
± ११</td><td>बृ बु
७ १</td><td>बृबु
७–१</td><td>बृ बु
७ १
९ १
५ १</td></tr>
<tr><td>ल च + च
+ ७</td><td colspan="3">१—४
बृ अकेला बृ लग्न या चतुर्थ में</td></tr>
<tr><td>न + द स
सू + बु
± ११</td><td>सू बु
१० ९</td><td>सूबु
१०–९</td><td>सू बु
१० ४
११ ९</td></tr>
<tr><td>न + स द
सू + बु
± ११</td><td>सू बु
७ ९</td><td>सूबु
७–९</td><td>सू बु
७ १
११ ९</td></tr>
<tr><td>न + पं द्वा
सू + मं
+ १३</td><td>सू मं
५ ९</td><td>सूमं
५–९</td><td>सू मं
५ ११
५ २
५ १०
११ ९</td></tr>
</table>

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
न + च ल	सू | बृ	सूबृ	सू | बृ
सू + बृ	४ | ९	४–९	४ | १०
+ १४			४ | १२
			४ | ८
			३ | ९
पं द्वा + द स	मं | बु	मंबु	मं | बु
मं + बु	१० | ५	१०–५	१० | ४
± १०			२ | ५
			११ | ५
			१० | ५
पं द्वा + स द	मं | बु	मंबु	मं | बु
मं + बु	७ | ५	७–५	७ | १
± १०			११ | ५
			२ | ५
			१० | ५
पं द्वा + च ल	मं | बृ	मंबृ	मं | बृ
मं + बृ	४ | ५	४–५	४ | १०
+ १३			४ | १२
			४ | ७
			२ | ५
			११ | ५
			१० | ५

मकर लग्न

ल द्वि + द पं	श | शु	शशु	श | बु
श + शु	१० | १	१०–१	१० | ४
+ १६			७ | १
			११ | १
			४ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द्वि+न ष श+बु +५	श | बु ९ | १	शबु ९–१	श | बु ९ | ३ ७ | १ ११ | १ ४ | १
ल द्वि+स श+चं ±९	श | चं ७ | १	शचं ७–१	श | चं ७ | १ ११ | १ ४ | १
ल द्वि+पं द श+शु +१६	श | शु ५ | १	शशु ५–१	श | शु ५ | ११ ७ | १ ११ | १ ४ | १
ल द्वि+च ए श+मं —१	श | मं ४ | १	शमं ४–१	श | मं ४ | १० ४ | १ ९ | १ ११ | १ ७ | १ ४ | १
न ष+द पं बु+शु +९	बु | शु १० | ९	बुशु १०–९	बु | शु १० | ४ ३ | ९
न ष+स बु+चं ±२	बु | चं ७ | ९	बुचं ७–९	बु | चं ७ | १ ३ | ९

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी	
न ष + पं द	बु	शु	बुशु	बु	शु
बु + शु	५	९	५—९	५	११
+ ९				३	९
न ष + च ए	बु	मं	बुमं	बु	मं
बु + मं	४	९	४—९	४	१०
—८				४	१
				४	७
				३	९
पं द + द					
शु + १०	५—१०शु (अकेला)				
पं द + स	शु	चं	शुचं	शु	चं
शु + चं	७	५	७—५	७	१
± १२				११	५
पं द + च ए	शु	मं	शुमं	शु	मं
शु + मं	४	५	४—५	४	१०
+ ३				४	१
				४	९
				११	५

कुम्भ लग्न

ल द्वा + द तृ	श	मं	शमं		मं	श मं
श + मं	१०	१	१०—१	१०	४	९
+ ३				१०	७	५
				१०	३	७
					१	४
				११	१	
					१	

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी		द्वितीय श्रेणी			तृतीय श्रेणी
ल द्वा + न म	श	सू	शसू	श	सू	श शु
श + शु	९	१	९—१	९	३	५
+ १५				११	१	१०
				७	१	७
				४	१	४
ल द्वा + स	श	सू	शसू	श	सू	श सू
श + सू	७	७	७—९	७	१	९
+ ९				११	१	५
				४	१	१०
						४
ल द्वा + पं अ	श	बु	शबु	श	बु	श बु
श + बु	५	१	५—१	५	११	९
+ ४				७	१	१०
				११	१	७
				४	१	४
ल द्वा + ष न	श	शु	शशु	श	शु	श शु
श + शु	४	१	४—१	४	१०	१
+ १५				७	१	५
				११	१	१०
				४	१	७
न व + द तृ	शु	मं	शुमं	शु	मं	शु मं
शु + म	१०	९	१०—९	१०	४	५
+ ६				१०	७	१
				१०	३	७
						४

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी		तृतीय श्रेणी
न च + स	शु सू	शुसू	शु सू	१
शु + सू	७ ९	७—९	७ १	५
+ १			३ ९	१०
				४
न च + पं अ	शु बु	शुबु	श बु	शु बु
शु + बु	५ ९	५—९	११	१
+ १५			३ ९	१०
				७
				४
च च + च				१
शु	९–४ शुक्र अकेला			५
+ ९				१०
				७
पं अ + द तृ		बुमं	बु मं	बु मं
बु + मं	१०	१०—५	१० ४	१
—१			११ ५	९
			१० ७	७
			१० १	४
पं अ + स	बु सू	बुसू	बु सू	बु सू
बु + सू	७ ५	७—५	७ १	१
+ १			११ ५	९
				१०
				७

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
पं अ+धन	बु | शु	बुशु	बु | शु बु शु
बु+शु	४ | ५	४—५	४ | १० १
+१५			११ | ५ ९
			१०
			७

मीन लग्न

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द+द ल	१–१० बृ (अकेला)		
बृ+९			

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द+न द्वि	बृ | मं	बृमं	बृ | मं
बृ+मं	९ | १	९—१	९ | ३
+१६			९ | ६
			९ | २
			७ | १
			९ | १
			५ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द+स च	बृ | चं	बृबु	बृ | बु
बृ+बु	७ | १	७—१	७ | १
±१२			५ | १
			९ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द+पं	बृ | चं	बृचं	बृ | चं
बृ+चं	५ | १	५—१	५ | ११
+१५			५ | १
			९ | १
			७ | १

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
ल द + च स बृ + बु ±१२	बृ बु ४	बृबु ४–१	बृ १० ७ १ ५ १ ९ १
न द्वि + द ल मं + बृ +१६	मं बृ १० ९	मंबृ १०–९	मं बृ १० ४ १० ६ १०
न द्वि + स च मं + बु ±१०	मं बु ७ ९	मंबु ७–९	मं बु ७ १ ३ ९ ६ ९ २ ९
न द्वि + पं मं + चं +१३	मं चं ५ ९	मंचं ९–५	मं चं ५ ११ ६ ९ ३ ९ २ ९
न द्वि + च स मं + बु ±१०	मं बु ४ ९	मंबु ४–९	मं बु ४ १० ३ ९ ६ ९ २ ९

सम्बन्ध	प्रथम श्रेणी	द्वितीय श्रेणी	तृतीय श्रेणी
पं + द ल चं + बृ + १५	चं | बृ १० | ५	चंबृ १०–५	चं | बृ १० | ४ १० | ६ १० | २ ११ | ५
पं + स च बु + चं ±१	चं | बु ७ | ५	बुचं ७–५	चं | बु ७ | १ ११ | ५
पं + च स चं + बु ±१	चं | बु ४ | ५	चबु ४–५	चं | बु ४ | १० ११ | ५

संकेत:—

ल = लग्नेश

द्वि = द्वितीयेश

तृ = तृतीयेश

च = चतुर्थेश

पं = पंचमेश

ष = षष्ठेश

स = सप्तमेश

अ = अष्टमेश

न = नवमेश

द = दशमेश

ए = एकादशेश

द्वा = द्वादशेश

१ = लग्न में
२ = द्वितीय गृह में
३ = तृतीय गृह में
४ = चतुर्थ गृह में
५ = पंचम गृह में
६ = षष्ठ गृह में
७ = सप्तम गृह में
८ = अष्टम गृह में
९ = नवम गृह में
१० = दशम गृह में
११ = एकादश गृह में
१२ = द्वादश गृह में

उदाहरण:—मीन लग्न कुण्डली में यदि मंगल दशम गृह में तथा

मं | बृ १० | ९	बृहस्पति नवम में हो तो मं बृ का अन्योन्याश्रित कारक योग हुआ।
मं बृ १०–९	मंगल तथा बृहस्पति ये दोनों यदि दशम गृह में वा नवम गृह में हों तो कारक योग हुआ, यह स्थान-सम्बन्ध है।
मं | बृ १० | ४	मंगल यदि दशम गृह में तथा बृहस्पति चतुर्थ गृह में हो तो यह भी मङ्गल बृहस्पति का कारक योग होगा।

इसी प्रकार सभी लग्न कुण्डली के योग पृथक् पृथक् तत्तद् सारणी (Heading) के नीचे लिखे गए हैं।

इन सारणियों में परस्पर दृष्ट (सप्तम दृष्ट) योग को कारक योग की श्रेणी में नहीं लिया गया, पर प्रायः सभी ज्योतिषी परस्पर दृष्ट योग को भी कारक योग मानते हैं।

परिशिष्ट "ञ"

बृहद् पाराशर होरा शास्त्र में विंशोत्तरी दशाधीश के विषय में

नोट—निम्नलिखित सारणी में दिए गए शुभ अशुभ ग्रह विंशोत्तरी दशा के साधारण शुभ अशुभ ग्रह हैं पर लघुपाराशरी की विवेचना के अनुसार कुण्डली के ग्रहों के योगज फल में अंतर आजाता है : उपरोक्त सारणी के अनुसार कुण्डली में क्रूर द्वितीयेश सप्तमेश को भी मारक ग्रह माना गया है जब कि लघुपाराशरी के अनुसार क्रूर ग्रह मारक नहीं होते। लघुपाराशरी ग्रन्थकर्ता ने अपने ग्रन्थ में लिखा है कि उन्होंने पाराशर होरा शास्त्र का अनुसरण करके अपने ग्रंथ की रचना की है इसलिए विंशोत्तरीदशा प्रसंग में उपरोक्त सारणी को भी ध्यान में रखना चाहिए।

संक्षेप से जो संज्ञा तथा उनका फल दिया है वह इस प्रकार है:—

लग्न	ग्रह	फल	ग्रह	फल	ग्रहों का योग	फल	मारकेश	फल
मेष	श.शु.चं.	पापी	बृ. चं.	शुभ	श + बृ	अशुभ	शु.	निहंता
वृष	बृ.शु.चं.	पापी	सू.शु.बु.	शुभ	श.	राजयोगकर्ता	+	×
मिथुन	मं.बृ.सू.	पापी	शु.	शुभ	श + बृ	राजयोगकर्ता शुभ	चं.	निहंता
कर्क	शु. बु.	पापी	मं बृ.	शुभ	म. मं + बृ	योगकर्ता शुभ	श.	निहंता
सिंह	बु. शु.	पापी	मं. बृ.	शुभ	बृ + बु	अशुभ		
कन्या	मं.बृ.चं.	पापी	शु	शुभ	शु + बु	योगकारक शुभ	शु.	निहंता
तुला	बृ.श.मं.	पापी	श. बु.	शुभ	चं + बु	योगकारक शुभ	मं.बृ	निहंता
वृश्चिक	बु.मं.शु.	पापी	बृ. चं.	शुभ	सू + चं	योगकारक शुभ	बृ.शु.	निहंता
धनु	शु.	पापी	बु चं बृ.	शुभ	सू + बु	योगकारक शुभ	श.	निहंता
मकर	मं.बृ.चं.	पापी	शु. बु.	शुभ	शु. बु + श	स्वयंकारक शुभ		×
कुम्भ	बृ.चं मं.	पापी	शु.	शुभ	मं + शु	योगकर्ता शुभ	बृ.	निहंता
मीन	श शु.सू.	पापी	बु मं चं.	शुभ	मं + बृ	योगकर्ता शुभ	मं बु.	निहंता

उपरोक्त सारणी में कोष्टक ४ में ग्रहों के मूलत्रिकोण की राशि अंश तथा कोष्ठक ५ से ग्रहों की अपनी निजी राशि के अंश जिसके वे स्वामी हैं, दिए गए हैं। सिवाय चन्द्रमा के सभी ग्रहों के मूल त्रिकोण की राशि तथा उनके निजी क्षेत्र की राशि एक ही है अन्तर राशि में अंशों का है। कोष्ठक २ से १० तक मे जितने अंक दिए गए हैं वे राशियों के द्योतक हैं तथा कोष्ठक १२ से १५ तक के अंक गृह या भाव के द्योतक हैं राशियों के नहीं।

ग्रहों का उच्च में, मूलत्रिकोण स्वक्षेत्र में, मित्रग्रह की राशि में रहना शुभ माना गया है। इसके विपरीत नीच, शत्रुग्रह की राशि में रहना अशुभ माना गया है। जो ग्रह जिस भाव में रह कर शुभ या अशुभ होता है उसका उल्लेख कोष्ठक ११ से १५ में है।

लेख के मत से सभी ग्रहों की उच्चराशि उस राशि के परमोच्चांश तक ही होती है, उसके उपरान्त वह राशि उस ग्रह के मूल त्रिकोण की अथवा राशीश की होती है। अस्तु कोष्ठक २ तथा ३ में ग्रहों की जो उच्च नीच राशि अंकित है उसको तत्तद अंश तक ही समझना चाहिए।

उदाहरण—सूर्य मेष के १०° तक ही अपने उच्च में रहता है- इसके बाद ११° से ३०° तक राशि सूर्य की उच्चराशि नहीं है वरन् वह सूर्य के मित्र ग्रह मंगल की राशि हैं। चन्द्रमा वृष के ३° तक उच्चस्थ है, वृष के ३° से ३०° तक वह अपने मूल त्रिकोण राशि में तथा अपने समग्रह शुक्र की राशि में रहता है। इसी प्रकार उपरोक्त सारणी में ग्रहों के उच्च, नीच, मूलत्रिकोण, क्षत्र की राशियों की अंशात्मक सीमा समझनी चाहिए।

राहु की शुभ राशियाँ—वृष

जातक फल सारणी संख्या ४

स्थान सम्बन्धी शुभ अशुभ संख्या द्योतक सारणी

+ १ से + ८ तक उत्तरोत्तर शुभ

+ ० से — ० तक सम

— ० से — ८ तक उत्तरोत्तर अशुभ

सूर्य

	सूर्य	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
स्थानमें भाव	लग्न—गृह	मेष	वृष	मि.	कर्क	सिंह	क०	तुला	वृ०	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
प्रथम	१	+६	−१	०	+४	+४	−१	−५	+३	+३	−२	+१	+३
द्वितीय	२	−२	०	+२	+३	−१	−५	+२	+२	−२	−२	+२	+५
तृतीय	३	−१	+१	+२	−२	−६	०	०	−३	−३	+२	+४	−३
चतुर्थ	४	+३	+३	−१	−४	+२	+२	−२	−२	+४	+५	−२	०
पञ्चम	५	+५	+१	−५	+४	+४	−२	−२	+४	+५	−२	+२	+२
षष्ठ	६	−३	−७	०	०	−४	−४	−१	+३	−४	−२	०	+१
सप्तम	७	−३	+२	+२	−१	−२	+३	+५	−२	+१	+२	+३	−१
अष्टम	८	०	−३	−५	−५	०	+२	−८	−३	−१	०	−४	−८
नवम	९	+६	+१	−२	+५	+८	−२	०	+५	+५	−१	−२	०
दशम	१०	०	−२	−३	+५	+१	−२	+२	+३	−१	−५	+२	+२
एक.दश	११	−५	−२	+२	−५	−३	−१	०	−४	−८	−१	−१	५
द्वादश	१२	−१	+५	−२	०	+२	+३	−१	−५	+२	+२	−२	−५

चन्द्र

स्थानमें भाव	चन्द्र लग्न—गृह	१ मेष	२ वृष	३ मि	४ कर्क	५ सिंह	६ क०	७ तुला	८ वृ०	९ धनु	१० मकर	११ कुंभ	१२ मीन
प्रथम	१	+२	+३	+२	+३	+२	+२	०	—२	०	+१	०	+१
द्वितीय	२	+३	+२	+३	+२	+२	−१	३	०	०	०	०	+१
तृतीय	३	+१	+२	+१	+१	−२	−३	−१	−१	−१	−१	०	+२
चतुर्थ	४	+४	+२	+२	०	−३	०	०	१	०	+१	+३	+३
पञ्चम	५	+४	+२	−१	−१	०	०	+२	०	+१	+५	+२	+३
षष्ठ	६	०	−३	−५	−:	−२	−२	−२	−१	+१	०	+१	०
सप्तम	७	−१	−३	०	+१	०	०	+१	+४	+२	+३	+२	+३
अष्टम	८	−६	−३	−३	−३	−३	−२	+०	−१	०	−१	−१	−४
नवम	९	+३	०	०	+३	+१	+३	+५	+५	+२	+५	−१	−१
दशम	१०	+१	०	०	+२	+३	+२	+३	+२	+२	−१	−३	०
एकादश	११	−३	−३	−२	०	०	०	−१	−१	−४	−६	−३	−३
द्वादश	१२	−३	+४	+३	+२	+३	+२	+२	−१	−३	०	०	०

मंगल

स्थान में भाव	मंगल लग्न—गृह	१ मेष	२ वृष	३ मि	४ कर्क	५ सिंह	६ क०	७ तुला	८ वृ०	९ धनु	१० मकर	११ कुंभ	१२ मीन
प्रथम	१	+३	+९	-३	०	+४	०	+१	+३	+४	+४	+१	+३
द्वितीय	२	०	-३	-३	+२	-२	०	+३	+३	+३	०	+२	+३
तृतीय	३	-४	-१	+१	-३	-१	+२	+३	+२	-१	+१	+२	-१
चतुर्थ	४	०	+२	-२	+१	+४	+३	+३	०	+३	+३	०	-२
पंचम	५	+४	०	०	+५	+५	+३	+२	+४	०	+२	-१	-१
षष्ठ	६	-४	-२	+१	+१	+१	-२	+२	+१	-२	-१	-३	०
सप्तम	७	०	+३	+३	+४	+१	+२	+३	०	-२	-१	+२	-१
अष्टम	८	०	०	०	-३	-१	०	+०	-६	-४	-१	-५	-३
नवम	९	+६	+६	०	+५	+६	०	०	+२	+२	+१	+३	+३
दशम	०	+५	०	+२	+५	+२	-१	-१	+१	०	०	+३	+५
एकादश	११	-३	-१	०	-३	-६	+२	+२	-५	-३	०	०	०
द्वादश	१२	+२	+२	०	-१	-१	+२	+२	०	०	+३	+३	०

बुध

स्थानमें भाव	बुध लग्न—गृह	१ मेष	२ वृष	३ मि	४ कर्क	५ सिंह	६ क०	७ तुला	८ वृ०	९ धनु	१० मकर	११ कुम्भ	१२ मीन
प्रथम	१	०	+१	+४	-२	+३	+७	+३	०	+१	०	०	-२
द्वितीय	२	+२	+३	-२	+३	+६	+२	०	०	०	-१	-३	०
तृतीय	३	+२	-३	+२	+५	+१	-१	-१	-१	-२	-४	-१	+१
चतुर्थ	४	-२	+४	+६	+२	०	+१	+१	०	-३	०	+३	+३
पंचम	५	+३	+६	+४	०	०	+२	-१	०	+२	+२	+३	०
षष्ठ	६	+१	०	-२	-२	-१	-३	-५	+२	०	-२	-४	+१
सप्तम	७	+२	+१	०	०	-१	-२	+१	+२	०	-२	+४	+६
अष्टम	८	-३	-३	-४	-४	-६	-२	+१	-१	-१	०	+३	-१
नवम	९	०	०	०	-३	०	+५	+३	-५	+६	+६	+२	+३
दशम	१०	०	+१	०	०	+२	+४	०	+३	+६	+२	-२	०
एकादश	११	-४	-६	-३	-१	०	-५	०	+३	-१	-३	-३	-३
द्वादश	१२	०	०	+२	+३	-२	+३	+६	+२	०	०	०	[illegible]

बृहस्पति

स्थान में भाव	बृहस्पति लग्न — गृह	१ मेष	वृष	मि	४ कर्क	५ सिंह	क	७ तुला	८ वृ०	९ धनु	१० मकर	११ कुंभ	१२ मीन
प्रथम	१	+३	-२		+६	+३	-१	-२	+३	+३	-३	०	+३
द्वितीय	२	-२	-१	+५	+२	-२	०	+२	+२	-३	०	+३	+२
तृतीय	३	-२	+४	+१	-३	-३	+१	+१	-४	-१	+२	+१	-३
चतुर्थ	४	+७	+२	-२	-१	+३	+२	-३	+१	+५	+२	-२	-१
पञ्चम	५	-४	-२	०	+२	+२	-१	०	+३	+२	-२	-१	+५
षष्ठ	६	०	-४	०	+१	-५	-२	+१	०	-४	+१	+३	०
सप्तम	७	-१	+२	+२	-२	+१	+३	+२	-१	-०	+४	+२	-२
अष्टम	८	+२	-१	-३	-३	०	-१	-५	-४	+२	-१	-५	-५
नवम	९	-१	-३	+३	+३	+४	+३	-१	+५	+५	-२	-२	+२
दशम	१०	-३	०	+३	+१	-२	-१	+५	+४	-१	-२	+२	+२
एकादश	११	+३	०	-१	-५	-४	+२	+१	-५	-२	-१	-१	-६
द्वादश	१२		+२	-२	-१	+५	+२	-२	-२	-२	+२	-३	०

शुक्र

	शुक्र	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
स्थानमें भाव	लग्न—गृह	मेष	वृष	मि.	कर्क	सिंह	क०	तुला	वृ०	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
प्रथम	१	+१	+४	+३	−१	−२	+१	+३	+१	०	+३	+२	+३
द्वितीय	२	+३	+२	−२	−३	−१	+३	०	०	+२	+३	+३	०
तृतीय	३	+१	−२	−४	−२	+२	−१	−१	१	+२	+३	−१	+२
चतुर्थ	४	−२	−२	०	+३	०	+१	+२	+३	+३	+१	+३	+२
पञ्चम	५	−१	−१	+३	+२	+२	+२	+५	+५	०	−५	+२	−२
षष्ठ	६	−३	+०	−२	−२	+०	+१	+१	−२	+१	+[illegible]	−४	−५
सप्तम	७	+३	+१	+२	+२	+३	+४	०	+३	+२	−४	−३	−१
अष्टम	८	−३	−३	−१	०	०	−३	०	−१	−५	−२	−४	०
नवम	९	+३	+५	+३	+६	+३	+३	+५	+१	−३	+७	+३	०
दशम	१०	+२	+२	+५	०	+०	+४	−२	−३	−१	−३	०	०
एकादश	११	०	+३	−३	०	+२	−५	−६	−४	०	०	−३	−१
द्वादश	१२	श. +३	०		+२	−२	+३	−१	+३	०	०	+२	+

शनि

स्थान में भाव	शनि लग्न—गृह	१ मेष	२ वृष	३ मि.	४ कर्क	५ सिंह	६ क०	७ तुला	८ वृ०	९ धनु	१० मकर	११ कुम्भ	१२ मीन
प्रथम	१	−४	+४	+३	−१	+१	+४	×६	−२	०	+३	+३	−३
द्वितीय	२	०	−२	−२	−२	+३	+५	−२	०	+३	+३	−१	−२
तृतीय	३	+१	−३	−३	+२	+४	−२	−१	+२	+२	−१	−६	+१
चतुर्थ	४	−२	−१	+४	+५	−२	०	+४	+२	−१	५	+२	+२
पंचम	५	०	+५	+५	०	+२	+३	+५	−५	−५	+४	+४	−२
षष्ठ	६	+१	+३	−४	−२	+१	−१	−३	−२	०	+२	−४	−४
सप्तम	७	+३	०	+२	+३	+२	−१	−४	+२	+२	−२	−२	+३
अष्टम	८	−५	−३	०	०	−४	−८	−१	−१	−५	−२	०	+२
नवम	९	+३	+६	+३	+१	−२	+२	+५	−२	−२	+६	+८	−२
दशम	१०	+३	+५	+१	−५	+२	+२	०	−२	+३	+५	−२	०
एकादश	११	०	−४	−८	−१	−१	−५	−५	०	+२	−२	−३	०
द्वादश	१२	−१	−५	+२	+२	−२	−२	+३	+५	−२	०	+३	+०

चन्द्रस्पष्ट तुल्य विंशोत्तरी ग्रह महादशा के भुक्तभोग्य वर्षादि जानने की सारणी संख्या १

नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
१अश्विनी	१	०	००	००	१०मघा	१	४	००	००	१९ मू०	१	८	००	००	केतु	०	००	००	७	००	००
,,		०	०१	००	,,		४	०१	००	,,		८	०१	००	,,	०	०६	०९	६	०५	२१
,,		०	०२	००	,,		४	०२	००	,,		८	०२	००	,,	१	००	१८	५	११	१२
,,		०	०३	००	,,		४	०३	००	,,		८	०३	००	,,	१	०६	२७	५	०५	०३
,,	२	०	०३	००	,,	२	४	०३	२०	,,	२	८	०३	२०	,,	१	०९	००	५	०३	००
,,		०	०४	००	,,		४	०४	००	,,		८	०४	००	,,	२	०१	०६	४	१०	२४
,,		०	०५	००	,,		४	०५	००	,,		८	०५	००	,,	२	०७	१५	४	०४	१५
,,		०	०६	००	,,		४	०६	००	,,		८	०६	००	,,	३	०१	२४	३	१०	०६
,,	३	०	०६	४०	,,	३	४	०६	४०	,,	३	८	०६	४०	,,	३	०६	००	३	०६	००
,,		०	०७	००	,,		४	०७	००	,,		८	०७	००	,,	३	०८	०३	३	०३	२७
,,		०	०८	००	,,		४	०८	००	,,		८	०८	००	,,	४	०२	१२	२	०९	१८
,,		०	०९	००	,,		४	०९	००	,,		८	०९	००	,,	४	०८	२१	२	०३	०९

नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा	दि.
१ अश्विनी	४	०	१०	००	१० मघा	४	४	१०	००	१९ मूल	४	८	१०	००	केतु	५	०३	००	१	०९	००
,,		०	११	००	,,		४	११	००	,,		८	११	००	,,	५	०९	०९	१	०२	२१
,,		०	१२	००	,,		४	१२	००	,,		८	१२	००	,,	६	०३	१८	०	०८	१२
,,		०	१३	२०	,,		४	१३	००	,,		८	१३	००	,,	६	०९	२८	०	०२	०२
,,		०	१३	२०	,,		४	१३	२०	,,		८	१३	२०	,,	७	००	००	०	००	००
२ भरणी	१	०	१३	००	११ पू.फा	१	४	१३	२०	२० पू.षाढ	१	८	१३	२०	शुक्र	०	००	००	२०	००	००
,,		०	१४	००	,,		४	१४	००	,,		८	१४	००	,,	१	००	००	१९	००	००
,,		०	१५	००	,,		४	१५	००	,,		८	१५	००	,,	२	०६	००	१६	०६	००
,,		०	१६	४०	,,		४	१६	००	,,		८	१६	४०	,,	४	००	००	१६	००	००
,,	२	०	१६	००	,,	२	४	१६	४०	,,	२	८	१६	००	,,	५	००	००	१५	००	००
,,		०	१७	००	,,		४	१७	००	,,		८	१७	००	,,	५	०६	००	१४	०६	००
,,		०	१८	००	,,		४	१८	००	,,		८	१८	००	,,	७	००	००	१३	००	००
,,		०	१९	००	,,		४	१९	००	,,		८	१९	००	,,	८	०६	००	११	०६	००
,,	३	०	२०	००	,,	३	४	२०	००	,,	३	८	२०	००	,,	१०	००	००	१०	००	००
,,		०	२१	००	,,		४	२१	००	,,		८	२१	००	,,	११	०६	००	८	०६	००
,,		०	२२	००	,,		४	२२	००	,,		८	२२	००	,,	१३	००	००	७	००	००

नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट गा.	अं.	क.	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च. आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	मुक्तदशा व.	मा.	दि	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
२ भरणी	३	०	२३	००	१०पू.फा.	३	४	२३	००	२०पू.षाढ़	३	८	२३	००	शुक्र	१४	०६	००	५	०६	००
,,	४	०	२३	२०	,,	४	४	२३	२०	,,	४	८	२३	२०	,,	१५	००	००	५	००	००
,,		०	२४	००	,,		४	२४	००	,,		८	२४	००	,,	१६	००	००	४	००	००
,,		०	२५	००	,,		४	२५	००	,,		८	२५	००	,,	१७	०६	००	३	०६	००
,,		०	२६	००	,,		४	६	००	,,		८	२६	०८	,,	१९	००	००	१	००	००
,,		०	२६	४०	,,		४	२६	४०	,,		८	२६	४०	,,	२०	००	००	०	००	००
३ कृत्तिका	१	०	२६	४८	१२उ.फा.	१	४	२६	४८	२१उ.षाढ़	१	८	२६	४०	सूर्य	०	००	००	६	००	००
,,		०	२७	०८	,,		४	२७	००	,,		८	२७	००	,,	०	०१	२४	५	१०	०६
,,		०	२८	००	,,		४	२८	००	,,		८	२८	०८	,,	०	०७	०६	५	०४	२४
,,		०	२९	०८	,,		४	२९	०८	,,		८	२९	०८	,,	१	००	१८	४	११	१२
,,	२	१	००	०८	,,	२	५	००	०८	,,	२	९	००	००	,,	१	०६	००	४	०६	००
,,		१	०१	००	,,		५	०१	०८	,,		९	०१	००	,,	१	११	१२	४	००	१८
,,		१	०२	००	,,		५	०२	००	,,		९	०२	००	,,	२	०४	२४	३	०७	०८
,,		१	०३	००	,,		५	०३	००	,,		९	०३	००	,,	२	१०	०६	३	०१	२४
,,	३	१	०३	२०	,,	३	५	०३	२०	,,	३	९	०३	२०	,,	२	००	००	३	००	००

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्त दशा व	मा.	दि.	भोग्य दशा व.	मा.	दि
३ कृत्तिका	३	१	०४	००	१२ उ.फा.	३	५	०४	००	२१ उ षा.	३	९	०४	००	सूर्य	३	०३	१८	२	०८	१२
,,		१	०५	००	,,		५	०५	००	,,		९	०५	००	,,	३	०९	००	२	०३	००
,,		१	०६	००	,,		५	०६	००	,,		९	०६	००	,,	४	०२	१२	१	०९	१८
,,	४	१	०६	४०	,,	४	५	०६	२०	,,	४	९	०६	०४	,,	४	०६	००	१	०६	००
,,		१	०७	००	,,		५	०७	००	,,		९	०७	००	,,	४	०७	२४	१	०४	०६
,,		१	०८	००	,,		५	०८	००	,,		९	०८	००	,,	५	०१	०६	०	१०	२४
,,		१	०९	००	,,		५	०९	००	,,		९	०९	००	,,	५	०६	१८	०	०५	१२
,,		१	१०	००	,,		५	१०	००	,,		९	१०	००	,,	६	००	००	०	००	००
४ रोहिणी	१	१	१०	००	१३ हस्त	१	५	१०	००	२२ श्रवण	१	९	१०	००	चंद्र	०	००	००	१०	००	००
,,		१	११	००	,,		५	११	००	,,		९	११	००	,,	०	०९	००	९	०३	००
,,		१	१२	००	,,		५	१२	००	,,		९	१२	००	,,	१	०६	००	८	०६	००
,,		१	१३	००	,,		५	१३	००	,,		९	१३	००	,,	२	०३	००	७	०९	००
,,	२	१	१३	२०	,,	२	५	१३	२०	,,	२	९	१३	२०	,,	२	०६	००	७	०६	००
,,		१	१४	००	,,		५	१४	००	,,		९	१४	००	,,	३	००	००	७	००	००
,,		१	१५	००	,,		५	१५	००	,,		९	१५	००	,,	३	०९	००	६	०३	००
,,		१	१६	००	,,		५	१६	००	,,		९	१६	००	,,	४	०६	००	५	०६	००

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
४ रोहिणी	३	१	१६	४०	१३ हस्त	३	५	१६	४०	२२ श्रवण	३	९	१६	४०	चंद्र	५	००	००	५	००	००
,,		१	१७	००	,,		५	१७	००	,,		९	१७	००	,,	५	०३	००	४	०९	००
,,		१	१८	००	,,		५	१८	००	,,		९	१८	००	,,	६	००	००	४	००	००
,,		१	१९	००	,,		५	१९	००	,,	४	९	१९	००	,,	६	०९	००	३	०३	००
,,	४	१	२०	००	,,	४	५	२०	००	,,		९	२०	००	,,	७	०६	००	२	०६	००
,,		१	२१	००	,,		५	२१	००	,,		९	२१	००	,,	८	०३	००	१	०९	००
,,		१	२२	००	,,		५	२२	००	,,		९	२२	००	,,	९	००	००	१	००	००
,,		१	२३	००	,,		५	२३	००	,,	१	९	२३	००	,,	९	०९	००	०	०३	००
,,		१	२३	२०	,,		५	२३	२०	,,		९	२३	२०	,,	१०	००	००	०	००	००
५ मृगशिरा	१	१	२३	२०	१४ चित्रा	१	५	२३	२०	२३ घनिष्ठा		९	२३	२०	मं०	०	००	००	७	००	००
,,		१	२४	००	,,		५	२४	००	,,	२	९	२४	००	,,	०	०४	०६	६	०७	२४
,,		१	२५	००	,,		५	२५	००	,,		९	२५	००	,,	०	१०	१५	६	०१	१५
,,		१	२६	००	,,		५	२६	००	,,		९	२६	००	,,	१	०४	२४	५	०७	०६
,,		१	२६	४०	,,	२	५	२६	४०	,,		९	२६	४०	,,	१	०९	००	५	०३	००
,,		१	२७	००	,,		५	२७	००	,,		९	२७	००	,,	१	११	०३	५	००	२७
,,		१	२८	००	,,		५	२८	००	,,		९	२८	००	,,	२	०५	१२	४	०६	१८

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	योग्यदशा व.	मा.	दि.
५ मृग.	२	१	२९	००	१४ चित्रा	२	५	२९	००	२३ धनि०	२	१०	२९	००	मं०	२	११	२१	४	००	०९
,,	३	२	००	००	,,	३	६	००	००	,,	३	१०	००	००	,,	३	०६	००	३	०६	००
,,		२	०१	००	,,		६	०१	००	,,		१०	०१	००	,,	४	००	०९	२	११	२१
,,		२	०२	००	,,		६	०२	३९	,,		१०	०२	००	,,	४	०६	१८	२	०५	१२
,,		२	०३	००	,,		६	०३	००	,,		१०	०३	००	,,	५	००	२७	१	११	०३
,,	४	१	०३	२०	,,	४	६	०३	००	,,	४	१०	०३	२०	,,	५	०३	००	१	९	००
,,		२	०४	००	,,		६	०४	२०	,,		१०	०४	००	,,	५	०७	०६	१	४	२४
,,		२	०५	००	,,		६	०५	००	,,		१०	०५	००	,,	६	०१	१५	०	१०	१५
,,		२	०६	००	,,		६	०६	४०	,,		१०	०६	००	,,	६	०७	२४	०	०४	०६
,,		२	०६	४०	,,		६	०६	४०	,,		१०	०६	४०	,,	७	००	००	०	००	००
६ आर्द्रा	१	२	०६	४०	१५ स्वाती	१	६	०६	००	२४ शत०	१	१०	०६	४०	राहू	०	००	००	१८	००	००
,,		२	०७	००	,,		६	०७	००	,,		१०	०७	००	,,	०	०५	१२	१७	०६	१८
,,		२	०८	००	,,		६	०८	००	,,		१०	०८	००	,,	१	०९	१८	१६	०२	१२
,,		२	०९	००	,,		६	०९	००	,,		१०	०९	००	,,	३	०१	२४	१४	१०	०६
,,	२	२	१०	००	,,	२	६	१०	००	,,	२	१०	१०	००	,,	४	०६	००	१३	०६	००
,,		२	११	००	,,		६	११	००	,,		१०	११	००	,,	५	१०	०६	१२	०१	२४

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
६ आर्द्रा	२	२	१२	००	१५ स्वाती	२	६	१२	००	२४ शत०	२	१०	१२	००	राहु	७	०२	१२	१०	०९	१८
,,		२	१३	००	,,		६	१३	००	,,		१०	१३	००	,,	८	०६	१८	९	०५	१२
,,	३	२	१३	२०	,,	३	६	१३	२०	,,	३	१०	१३	२०	,,	९	००	००	९	००	००
,,		२	१४	००	,,		६	१४	००	,,		१०	१४	००	,,	९	१०	२४	८	०१	०६
,,		२	१५	००	,,		६	१५	००	,,		१०	१५	००	,,	११	०३	००	६	०९	००
,,		२	१६	००	,,		६	१६	४०	,,		१०	१६	००	,,	१२	०७	०६	५	०४	२४
,,	४	२	१६	४०	,,	४	६	१६	००	,,	४	१०	१६	४०	,,	१३	०६	००	४	०६	००
,,		२	१७	००	,,		६	१७	००	,,		१०	१७	००	,,	१३	११	१२	४	००	१८
,,		२	१८	००	,,		६	१८	००	,,		१०	१८	००	,,	१५	०३	१८	२	०८	१२
,,		२	१९	००	,,		६	१९	००	,,		१०	१९	००	,,	१६	०७	२४	१	०४	०६
,,		२	२०	००	,,		६	२०	००	,,		१०	२०	००	,,	१८	००	००	०	००	००
७ पुनर्वसु	१	२	२०	००	१६ विशा०	१	६	२०	००	२५ पू.भाद्र	१	१०	२०	००	,,	०	००	००	१६	००	००
,,		२	२१	००	,,		६	२१	००	,,		१०	२१	००	,,	१	०२	१२	१४	०९	१८
,,		२	२२	००	,,		६	२२	००	,,		१०	२२	००	,,	२	०४	२४	१३	०७	०६
,,		२	२३	००	,,		६	२३	००	,,		१०	२३	००	,,	३	०७	०६	१२	०४	२४

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षंत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा	दि.
७पुनर्वसु	२	२	२३	२०	१६विशा०	२	६	२३	२०	२५पू भाद्र	२	१०	२३	२०	गुरु	४	००	००	१२	००	००
,,		२	२४	००	,,		६	२४	००	,,		१०	२४	००	,,	४	०९	१८	११	०२	१२
,,		२	२५	००	,,		६	२५	००	,,		१०	२५	००	,,	६	००	००	१०	००	००
,,		२	२६	००	,,		६	२६	००	,,		१०	२६	००	,,	७	०२	१२	८	०९	१८
,,	३	२	२६	४०	,,	३	६	२६	४०	,,	३	१०	२६	४०	,,	८	००	००	८	००	००
,,		२	२७	००	,,		६	२७	००	,,		१०	२७	००	,,	८	०४	२४	७	०७	०६
,,		२	२८	००	,,		६	२८	००	,,		१०	२८	००	,,	९	०७	०६	६	०४	२४
,,		२	२९	००	,,		६	२९	००	,,		१०	२९	००	,,	१०	०९	१८	५	०२	१२
,,	४	३	००	०	,,	४	७	००	००	,,	४	११	००	००	,,	१२	००	००	४	००	००
,,		३	०१	००	,,		७	०१	००	,,		११	०१	००	,,	१३	०२	१२	२	०९	१८
,,		३	०१	००	,,		७	०२	००	,,		११	०२	००	,,	१४	०४	२४	१	०७	०६
,,		३	०३	००	,,		७	०३	००	,,		११	०३	००	,,	१५	०७	०६	०	०४	२४
,,		३	०३	२०	,,		७	०३	२०	,,		११	०३	२०	,,	१६	००	००	०	००	००
८ पुष्य	१	३	०३	२०	१७अनु०	१	७	०३	००	२६उ.भाद्र	१	११	०३	२०	श०	०	००	००	१९	००	००
,,		३	०४	००	,,		७	०४	००	,,		११	०४	००	,,	०	११	१२	१८	००	१८
,,		३	०५	००	,,		७	०५	००	,,		११	०५	००	,,	२	०४	१५	१६	००	१५

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
८ पुष्य	१	३	०६	००	१७ अनु०	[illegible]	७	०६	००	२६ उ.भाद्र	१	११	०६	००	शु०	३	०९	१८	१५	०२	१२
,,	२	३	०६	४०	,,	२	७	०६	४०	,,	२	११	०६	४०	,,	४	०९	००	१४	०३	००
,,		३	०७	००	,,		७	०७	००	,,		११	०७	००	,,	५	०२	२१	१३	०९	०९
,,		३	०८	००	,,		७	०८	००	,,		११	०८	००	,,	६	०७	२४	१२	०४	०६
,,		३	०९	००	,,		७	०९	००	,,		११	०९	००	,,	८	००	२७	१०	००	०३
,,	३	३	१०	००	,,	३	७	१०	००	,,	३	११	१०	००	,,	९	०६	००	९	०६	००
,,		३	११	००	,,		७	११	००	,,		११	११	००	,,	१०	११	०३	८	००	२७
,,		३	१२	००	,,		७	१२	००	,,		११	१२	००	,,	१२	०४	०६	६	०७	२४
,,		३	१३	००	,,		७	१३	००	,,		११	१३	००	,,	१३	०९	०९	५	०२	२१
,,	४	३	१३	२०	,,	४	७	१३	२०	,,	४	११	१३	२०	,,	१४	०३	००	४	०९	००
,,		३	१४	००	,,		७	१४	००	,,		११	१४	००	,,	१५	०२	१२	३	०९	१८
,,		३	१५	००	,,		७	१५	००	,,		११	१५	००	,,	१६	०७	१५	२	०४	१५
,,		३	१६	००	,,		७	१६	००	,,		११	१६	००	,,	१८	००	१८	०	११	१२
,,		३	१६	४०	,,		७	१६	४०	,,		११	१६	४०	,,	१९	००	००	०	००	००
९ आश्लेषा	१	३	१६	४०	१८ ज्येष्ट।	१	७	१६	४०	२७ रेवती	१	११	१६	४०	बुध	०	००	००	१७	००	००
,,		३	१७	००	,,		७	१७	००	,,		११	१७	००	,,	०	०५	०३	१६	०६	२०

नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा.	अं.	क.	नक्षत्र	च.आ.	चन्द्र स्पष्ट रा,	अ.	क.	स्वामी	भुक्तदशा व.	मा.	दि.	भोग्यदशा व.	मा.	दि.
९ आश्लेषा	१	३	१८	००	१८ ज्येष्ठा	१	७	१८	००	२७ रेवती	१	११	१८	००	बुध	१	०८	१२	१५	०३	१८
,,		३	१९	००	,,		७	१९	००	,,		११	१९	००	,,	२	११	२१	१४	००	०९
,,	२	३	२०	००	,,	२	७	२०	००	,,	२	११	२०	००	,,	४	०३	००	१२	०९	००
,,		३	२१	००	,,		७	२१	००	,,		११	२१	००	,,	५	०६	०९	११	०५	२१
,,		३	२२	००	,,		७	२२	००	,,		११	२२	००	,,	६	०९	१८	१०	०२	१२
,,		३	२३	००	,,		७	२३	००	,,		११	२३	००	,,	८	००	२७	८	११	०३
,,	३	३	२३	२०	,,	३	७	२३	२०	,,	३	११	२३	२०	,,	८	०६	००	८	०६	००
,,		३	२४	००	,,		७	२४	००	,,		११	२४	००	,,	९	०४	०६	७	०७	२४
,,		३	२५	००	,,		७	२५	००	,,		११	२५	००	,,	१०	०७	१५	६	०४	१५
,,		३	२६	००	,,		७	२६	००	,,		११	२६	००	,,	११	१०	२४	५	०१	०६
,,	४	३	२६	४०	,,	४	७	२६	४०	,,	४	११	२६	००	,,	१२	०९	००	४	०३	००
,,		३	२७	००	,,		७	२७	००	,,		११	२७	४०	,,	१३	०२	०३	३	०९	२७
,,		३	२८	००	,,		७	२८	००	,,		११	२८	००	,,	१४	०५	१२	२	०६	१८
,,		३	२९	००	,,		७	२९	००	,,		११	२९	००	,,	१५	०८	२१	१	०३	०९
,,		४	००	००	,,		८	००	००	,,		००	००	००	,,	१७	००	००	०	००	००

चन्द्र स्पष्ट की कला, विकला तुल्य विंशोत्तरी के भुक्तकाल जानने की सारणी संख्या २

कला विकला	केतु मंगल	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	राहु	बृहस्पति	शनि	बुध
	मा. दि. घ.	मा. दि. घ.	मा. दि. घ.	मा दि. घ.	मा. दि. घ.	मा. दि. घ.	मा. दि. घ.	मा. दि. घ.
क. १	०.०३.०९	०.०९.८०	०.०२.४२	०.०४.३०	०.०८.०६	०.०७,१२	०,०८.३३	०,०७.३९
वि. १	० ००.०३	०.००.०९	०.००.०२	०.०० ०४	०.००.०६	०.००,०७	०.००.०८	०.००.०७
२	०.०६.१८	०.१८.००	०.०५.२४	०.०९.००	०.१६.१२	०.१४.२४	०.२७.०६	०.१५.१८
	०.००.०६	०.००.१८	०.००.०५	०.००.०९	०.००.१६	०.०० १४	०:००.२७	०.००.१५
३	०.०९ २१	०.२७.००	०.०८.०६	०.२३.३०	०.२४.१८	०.२१.३६	०.२५.३९	० २२.५७
	*.००.०९	०.००.२७	०.००.०८	०.००.२३	०.००.२४	०.००.२१	०.००.२५	०.०० २३
४	०.१२.३६	१. ६.००	०.१०.४८	०.१८.००	१.०२,२४	०.२८.४८	१.०४:१२	१ ००.३६
	०.००.१२	०.००.३६	०.००.११	०.००.१८	०.००.३२	०.००.२८	०.००.३४	०.००.३०
५	०.१५,४५	१.१५.००	०.१३.३०	० २२.३०	१.१०.३०	१.०६,००	१.१२.४५	१.०८.२५
	०.००,१५	०.००.४	०.००.१३	०.००.२२	०.००.४०	०.००,३६	०.०० ४२	०.००.३८
६	० १८.५४	१.२४.००	०.१६.१२	० २७.००	६.१८.३६	१.१४.१८	२,२१.१८	१.१५ ५४
	०.००.१९	०.००.५४	०.०० १६	०.००.२७	०.००.४८	०.००.४३	०.००.५१	०.००.४६
७	०.२२.०३	२.०३.००	०.१८ ५४	१.०१.३०	१ २६.४२	२,२०,२४	२.२९ ५१	१.२३,३३
	०.००.२३	०.०१,०३	० ००.१९	० ००.३१	०.००.५६	०.०० ५०	०.०१,००	०.००.५३
८	०.२५.१२	२.१२.००	०.२१.३७	१ ०६.००	२.०४.४८	२.२७ ३६	२,०८.२४	२.०१.१२
	०.००.२५	०.०१.१२	० ००.२१	० ०० ३६	०.०१.४८	०.००.५७	०.०१.०८	०.०१.०१
९	०.२८.११	२.२१.००	०.२४.१८	१.१०.३०	२.१२.५४	२।०४.४८	२.१६.५७	२.०८.५१
	०.००.२८	०.०१ २१	०.००.२४	०.००.४०	०.०१.१३	०.०१.०४	०.०१.२७	०.०१.०९

कला विकला	कतु मंगल मा. दि. घ.	शुक्र मा. दि. घ.	सूर्य मा. दि. घ.	चन्द्र मा. दि. घ.	राहु मा. दि. घ.	बृहस्पति मा. दि. घ.	शनि मा. दि. घ.	बुध मा. दि. घ
१०	१.०१.३०	३.००.००	०.२७.००	१.१५.००	२.२१.००	२.१२.००	२.२५.३०	२.१६.३०
	०.००.३१	०.०१.३०	०.००.२७	०.००.४५	०.०१.२१	०.०१.१२	०.०१.२५	०.०१.१६
११	१.०४.३९	३.०९.००	०.२९.४२	१.१९.३०	२.२९.०	२.१९.१२	३.०४.०३	२, ४.०९
	०.००.३४	०.०१.३९	०.००.२९	०.००.४९	०.०१.२९	०.०२.१९	०.०१.३४	०.०१.२४
१२	१.०७.४८	३.१८.००	१.०२.२४	१.२४.००	३.०७.१२	२.३६.२४	३.१२.३६	३.०१ ४८
	०.००.३९	०.०१.४८	०.००.३२	०.००.५४	०.०२.३७	०.०१.३६	०.०१.४१	०.०१.३१
१३	१.१०.५७	३.२७.००	१.०५.०६	१.२८.३०	३.१५.१८	३.०३.३६	३.२१.०९	३.०९.२७
	०.००.४६	१.०१.५७	०.००.३५	०.००.५८	०.०१.४५	०.०१.३३	०.०१.५१	०.०१.३९
१४	१.१४.०६	४.०६.००	१.०७.४८	२.०३.००	३.२३.२४	३.१०.४८	३.२९.४२	३.१७.०६
	०.००.४४	०.०२.०६	०.००.३७	०.१०.०३	०.०१.५३	०.०१.४१	०.०२.००	०.०१.४७
१५	१.१७.१५	४.१५.००	१.१०.३०	२.०७.३०	४.०१.३०	३.१८.००	४.०८.१५	३.२४ ४५
	०.००.४७	०.०२.१५	०.००.४०	०.०१.०७	०.०२.०१	०.०१.४८	०.०२.०८	०.०१.५१
१६	१.००.२४	४.२४.००	१.१३.१४	२.१२.००	४.०९.३६	३.२५.१२	४.१६.४८	४.०२.२४
	०.००.५०	०.०२.२४	०.००.४३	०.०१.१२	०.०२.०९	०.०१.२५	०.०२.१६	०.०२.०२
१७	१.२३.३३	५.०३.००	१.१५.५४	२.१६.३०	४.१७.४२	४.०२.२४	४.२४.२१	४.१०.०३
	०.०१.५३	०.०२.३३	०.००.४६	०.०१.१६	०.०२.१७	०.०२.६२	०.०२.२५	०.०२.१०
१८	१.२६.४२	५.१२.००	१.१८.३६	२.२१.००	४.२५.४८	४.०९.३६	५.०३.५४	४.१७ ४२
	०.००.५७	०.०२.५८	०.००.४८	०.०१.२१	०.०२.२६	०.०१.०९	०.०२.३३	०.०२.१७
१९	०.२९.५१	५.२१.००	१.२१.१८	२.२५.३०	५.०३.५४	४.१ .४८	५.१२.२७	४.२५ ८२
	०.०१.००	०.०३.५१	०.००.५१	०.०१.२५	०.०२.३४	०.०७.२७	०.०२.४२	०.०२.२५
२०	२.०३.००	६.००.००	१.२४.००	३.००.००	५.१२.००	३.२४.००	५.२१.००	५.०३.००
	०.०१.०३	०.०३.००	०.००.५४	०.०१.३०	०.०२.४२	०. २.२८	०.०२.५१	०.२०.३२

कला विकला	केतु मंगल मा. दि. घ.	शुक्र मा. दि. घ.	सूर्य मा. दि. घ.	चन्द्र मा. दि. घ.	राहु मा. दि. घ.	बृहस्पति मा. दि. घ.	शनि मां. दि. घ.	बुध मा. दि. घ.
२१	२.०६.०९	६.०९.००	१.२६.४८	३.०४.३०	५.२०.०६	५.०१.१२	५.२९.३३	५.१०.३९
	०.०१.०६	०.०३.०९	०.००.५६	०.०१.३४	०.०२.५८	०.०२.३१	०.०२.५९	०.०२.४०
२२	२.०९.१८	६.१८.००	१.२९.२४	३.०९.००	५.२८.१२	५.०८.२४	६.०८.०६	५.१८.१८
	०.०१.०९	०.०३.१८	०.००.५९	०.०१.३९	०.०२.५८	०.०२.३८	०.०३.०८	०.०२.४८
२३	२.१२.२७	६.२७.००	२.०२.०६	३.१३.३०	६.०६.१८	५.१५.३६	६.१६.३९	५.२५.५७
	०.०१.१२	०.०३.८७	०.०१.०२	०.०१.४३	०.०३.०६	०.०२.४५	०.०३.१६	०.०२.५५
२४	२.१५.३६	७.०६.००	२.०४.४८	३.१८.००	६.१४.२४	५.२२.४८	६.२५.१२	६.०३.३६
	०.०१.१५	०.०३.३६	०.०१.०५	०.०१.४८	०.०३.१४	०.०२.५२	०.०३.२५	०.०३.०३
२५	२.१८.४५	७.१५.००	२.०७.३०	३.२२.३०	६.२२.३०	६.००.००	७.०३.४५	६.११.१५
	०.०१.१९	०.०३.४७	०.०१.०७	०.१०.५२	०.०३.२२	०.०३.००	०.०३.३३	०.०३.११
२६	२.२१.५४	७.२४.००	२.१०.१२	३.२७.००	७.००.३६	६.०७.१२	७.१२.१८	६.१८.५४
	०.०१.२२	०.०३.५४	०.०१.१०	०.०१.५७	०.०३.३०	०.०३.०७	०.०३.४२	०.०३.१८
२७	२.२५.३०	८.०३.००	२.१२.५४	४.०१.३०	७.०८.४२	६.१४.२४	७.२०.५१	६.२६.३३
	०.०१.२५	०.०४.०३	०.०१.१३	०.०२.०१	०.०३.३८	०.०३.१४	०.०३.५१	०.०३.२६
२८	२.२८.१२	८.१२.००	२.१५.३६	४.०६.००	७.१६.४८	६.२१.३६	७.२९.२४	७.०४.१२
	०.०१.१८	०.०४.१२	०.०१.१५	०.०२.०६	०.०३.४६	०.०३.२१	०.०३.५९	०.०३.३४
२९	३.०१.२१	८.२१.००	२.१८.१८	४.१०.३०	७.२४.५४	६.२८.४८	८.०७.५७	७.११ ५१
	०.०१.३१	०.०४.२१	०.०१.१८	०.०२.१०	०.०३.५५	०.०३.२८	०.०४.०७	०.०३.४९
३०	३.०४.३०	९.००.००	२.२१.००	४.१५.००	८.०३.००	७.०६.००	८.१६ ३०	७.१९ ३०
	०.०१.३४	०.०४.३०	०.०१.२१	०.०२.१५	०.०४.०३	०.०३.३६	०.०४.१६	०.०३.४९
३१	३.०९.३९	९.०९.००	२.२३.४२	४.१९.३०	८.११.०६	७.१३.१२	८.२५.०३	७.२७.०९
	०.०१.३७	०.०४.३९	०.०१.२३	०.०२.१९	०.०४.११	०.०३.४३	०.०४.२५	०.०३.५७

कला विकला	केतु मंगल मा. दि. घ.	शुक्र मा. दि. घ.	सूर्य मा. दि. घ.	चन्द्र मा दि. घ.	राहु मा. दि. घ.	बृहस्पति मा. दि. घ.	शनि मा. दि. घ.	बुध मा. दि. घ.
३२	३.१०.४८	९.१८.००	२.२६.२४	४.२४.००	०.१९.१२	७.२०.२४	९.०३.३६	८ ०४.४८
	०.०१.४०	०.०४.४८	०.०१.२६	०.०२.२४	०.०४.१९	०.०३ ५०	०.०४.३३	०.०४.०४
३३	३.१३.५७	९ २७.००	२.२९.०६	४.२८.३०	८.२७.१८	७.२७,३६	९.१२.०९	८.१२.२७
	० ०१.४४	०.०४.५३	०.०१.२९	०.०२.२८	०.०४.२७	०.०३,५७	०.०४.४२	०.०४.१२
३४	३.१७.०६	१०.०६.००	३.०१.४८	५.०३.००	९.०५.२४	८.०४.४८	९.२०.४२	८.२०.५
	०.०१.४७	०.०५.०६	०.०१.३१	०.०२.३३	०.०४.३५	०.०४ ०४	०:०४.५०	०.०४.२७
३५	३.२० १५	१०.१५.००	३.०४.३०	५.०७.३०	९.१३.३०	८.१२.००	९.२९.१५	८.२७.४५
	०.०१.५०	०.०५.१५	०.०१.३४	०.०२.३७	०.०४.४३	०.०४.१२	०.०४.५९	०.०४.२७
३६	३.२३.२४	१०.२४.००	३.०७.१२	५.१२.००	९.२१.३६	८.१९.१२	१०.०७.४८	९ ०५.२४
	०.०१.५३	०.०५.२४	०.०१.३७	०.०२.४२	०.०४.५१	०.०४.१९	०.०५.०७	०.०४.३५
३७	३.२६ ३३	११.०३.००	३.०९.५४	५ १६.३०	९ २९.४२	८.२६,२४	१०.१६:२१	९.१३.०३
	०.०१.५६	०.०५.३३	०.०१.३९	०.०२.४६	०.०५.००	०.०४ २६	०.०५.१६	०.०४.४३
३८	३.२९.४२	११.१२.००	३.१२.३६	५.२१.००	१० ०७.४८	९.०३,३६	१०.२४.५४	९.२०.४२
	०.०२.००	०.०५.४२	०.०१ ४२	०.०२.५१	०.०५.०७	०.०४.३३	०.०५.२५	०.०४.५०
३९	४.०२.५१	११.२१.००	३.१५ १८	५ २५.३०	१०.१५.५४	९.१०.४८	११.०३.२७	९.२८.२१
	०.०२.०३	०.०५.५१	०.०१.४५	०.०२.५५	०.०५.१५	०,०४,४०	०.०५,३३	०.०४.५८
४०	४.०६.००	१२.००.००	३.१८.००	६ ००.००	१०.२४.००	९.१८ ००	११.१२.००	१०.०६.००
	०.०२. ६	०.०६.००	०.०१.४८	०.०३ ००	०.०५.२४	०.०४.४८	०.०५.४२	०.०५.०६
४१	४.०९.०९	१२.०९.००	३.२०.४२	६.०४.३०	११.०२.०६	९.२५.१२	११.२०.३३	१०.१३.३९
	०.०२.०९	०.०६.०९	०.०१.५०	०.०३.०४	०.०५.३२	०.०४.५५	०.०५.५०	०.०५.१३

कला विकला	केतु मगल मा. दि घ.	शुक्र मा. दि. घ.	सूर्य मा. दि. घ.	चन्द्र मा. दि. घ.	राहु मा. दि. घ.	वृहस्पति मा. दि घ.	शनि मा. दि. घ	बुध मा. दि. घ.
४२	४.१२.४८	१२.१८ ००	३.२३.२४	६.०१.००	११.१०.१२	१०.०२.२४	११.२९.०६	१०.२१.१८
	०.०२.१२	०.०६ १८	०.०१ ५३	०.०३.०९	०.०५.४०	०.०५.०२	०.०५.५९	०.०५.२१
४३	४.१५ २७	१२.२७.००	३.२६ ०६	६.१३.३०	११.१८.१८	१०.०९.३६	१२.०७.३९	१०.२८.५७
	०.०२.१५	०.०६.२७	०.०१ ५६	०.०३.१३	०.०५.४८	०.०५.०९	०.०६.०७	०.०५.२९
४४	४.१८ ३६	१३.०६.००	३.२७.४८	६.१८.००	११.२६.२४	१०.१६.४८	१२.१६.१२	११.०६.३६
	०.०२ १८	०.०६ ३६	०.०१ ५८	०.०३.१८	०.०५.५६	०.०५.१६	०.०६.१६	०.०५.३६
४५	४.२१.४५	१३.१५.००	४ ०१.३०	६.२८.३०	१२.०४.३०	१०.२४.००	१२.२४.४२	११.१४.१५
	० ०२.३१	०.०६ ४५	०.०२.०१	०.०३.२२	०.०६.०४	०.०५.२४	०.०६.२४	०.०५.४४
४६	४.२४ ५४	१३.२४.००	४.०४.१२	६.२७.००	१२.१२.३६	११.०१.१२	१३.०३.१८	११.२१.५४
	०.०२.२४	०.०६.५४	०.०२.०४	०.०३.२७	०.०६.१२	०.०५.३१	०.०६.३३	०.०५.५२
४७	४.२८.०३	१४.०३.००	४.०६.५४	७.०१.३०	१२.२०.४२	११.०८.२४	१३.११.५१	११.२९.३३
	०.०२.२८	० ०७ ०३	०.०२.०७	०.०३.३१	०.०६.२०	०.०५.३८	०.०६.४२	०.०५.५९
४८	५.०१.१२	१४.१२.००	४.०९.३६	७.०६.००	१२.२८.४८	११.१५.३६	१३.२०.२४	१२.०७.२२
	०.०२.३१	०.०७.१२	०.०२.०९	०.०३.३६	०.०६.२८	०.०५.४५	०.०६.५०	०.०६.०७
४९	५.०४.२१	१४.२१.००	४.१२.१८	७.१०.३०	१३.०६.५४	११.२२.४८	१३.२८.५७	१२.१४.५१
	०.०२.३४	०.०३.२१	०.०२.१२	०.०३.४०	०.०६.३६	०.०५.५३	०.०६.५९	०.०६.१५
५०	५.०७.३०	१५.००.००	४.१५.००	७.१५.००	१३.१५.००	१२.०१.००	१४.०७.३०	१२.२२.३०
	०.०२ ३७	०.०७.३०	०.०२.१५	०.०३.४५	०.०६.४५	०.०६.००	०.०७.०७	०.०६.२२
५१	५.१०.३९	१५ ०९.००	४.१७.४२	७.१९.३०	१३.२३.०६	१२.०७.१२	१४.१६.०३	३.००.०९
	०.०२.४०	०.०७.३९	०.०२.१७	०.०३.४९	०.०६.५३	०.०६.०७	०.०७.१६	०.०६.३०
५२	५.१३.४८	१५.१८.००	४.२०.२४	७.२४.००	१४.०१.१२	१२.१४.२४	१४.२४.३६	१३.०७.४८
	०.०२.४३	०.०७ ४८	०.०२.२०	०.०३.५४	०.०७.०१	०.०६.१४	०.०७.२४	०.०६.३७

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल	
भभोगः—	५४		२०		५८		२४		५४		२८		५४		३२		५४		२६	
भयात घ०	०	'	"	"'	०	'	"	"'	०	'	"	"'	०	'	"	"'	०	'	"	"'
प०	'	"	"'	""	'	"	"'	""	'	"	"	""	'	"	"'	""	'	"	"'	""
१	०	१४	४३	२६	०	१४	४२	२१	०	१४	४१	१६	०	१४	४०	११	०	१४	३९	०८
२	०	२९	२६	५२	०	२९	२४	४२	०	२९	२२	३२	०	२९	२०	२२	०	२९	१७	१६
३	०	४४	१०	१८	०	४४	०७	०३	०	४४	०३	४८	०	४४	००	३५	०	४३	५७	२४
४	०	५८	५३	४४	०	५८	४९	२४	०	५८	४५	०४	०	५८	४०	४४	०	५८	३६	३२
५	१	१३	३७	११	१	१३	३१	४५	१	३३	२६	२२	१	१३	२०	५८	१	१३	१५	४०
१०	२	२७	१४	२९	२	२७	०३	३०	२	२६	५२	४४	२	२६	४१	५७	२	२६	३०	२०
१५	३	४०	५१	३२	३	४०	३५	१५	३	४०	१९	०६	३	४०	०२	५६	३	३९	४६	००
२०	४	५४	२८	४२	४	५४	०७	००	४	५३	४५	२८	४	५३	२३	५४	४	५३	००	४०
२५	६	०८	०५	५३	६	०७	३८	४१	६	०७	११	५०	६	०६	४४	५३	६	०६	१६	२०
३०	७	२१	४३	०४	७	२१	१०	३०	७	२०	३८	१२	७	२०	०५	५२	७	१९	३२	००
३५	८	३५	२०	१४	८	३४	४२	१५	८	३४	०४	३४	८	३३	२६	५०	८	३२	४६	४०
४०	९	४८	५७	२५	९	४८	१४	००	९	४७	३०	५६	९	४६	४७	४९	९	४६	०१	२०
४५	११	०२	३४	३५	११	०१	४५	४५	११	००	५७	१८	११	१०	०८	४८	१०	५९	१७	००
५०	१२	१६	११	४७	१२	१५	१७	३०	१२	१४	२३	४०	१२	१३	२९	४६	१२	१२	३२	४०
५४	१३	१५	०५	३१	१३	१४	०६	५४	१३	१३	०८	४४	१३	१२	१०	३१	१३	११	०८	१२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५४ पल ४०	घटी ५४ पल ४४	घटी ५४ पल ४८	घटी ५४ पल ५२	घटी ५४ पल ५१
भयात घ०	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''
प०	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''
१	० । १४ । ३८ । ०४	० । १४ । ३७ । ०४	० । १४ । ३६ । ०३	० । १४ । ३४ । ५९	० । १४ । ३३ । ५५
२	० । २९ । १६ । ०८	० । २९ । १४ । ०८	० । २९ । १२ । ०६	० । २९ । ०० । ५८	० । २९ । ०७ । ५१
३	० । ४३ । ५४ । १२	० । ४३ । ५१ । १२	० । ४३ । ४८ । ०९	० । ४३ । ४४ । ५७	० । ४३ । ४१ । ४७
४	० । ५८ । ३२ । १६	० । ५८ । २८ । १६	० । ५८ । २४ । १२	० । ५८ । १९ । ५६	० । ५९ । १५ । ४३
५	१ । १३ । १० । २०	१ । १३ । ०५ । २०	१ । १३ । ०० । १५	१ । १३ । ५४ । ५५	१ । १२ । ४९ । ३९
१०	२ । २६ । २० । ४०	२ । २६ । १० । ४०	२ । २६ । ०० । ३०	२ । २५ । ४९ । ५०	२ । २५ । ३९ । १९
१५	३ । २० । ३१ । ००	३ । ३९ । १६ । ००	३ । ३९ । ०० । ४५	३ । ३८ । ४४ । ४५	३ । ३८ । २८ । ५८
२०	४ । ५२ । ४१ । २०	४ । ५२ । २१ । २०	४ । ५२ । ०१ । ००	४ । ५१ । ३९ । ४०	४ । ५१ । १८ । ३८
२५	६ । ०५ । ५१ । ४०	६ । ०५ । २६ । ४०	६ । ०५ । ०१ । १५	६ । ०४ । ३४ । ३५	६ । ०४ । ०८ । १८
३०	७ । १९ । ०२ । ००	७ । १८ । ३२ । ००	७ । १८ । ०१ । ३०	७ । १७ । २९ । ३०	७ । १६ । ५७ । ५६
३५	८ । ३२ । १२ । २०	८ । ३१ । ३७ । २०	८ । ३१ । ०१ । ४५	८ । ३० । २४ । २५	८ । २९ । ४७ । ३६
४०	९ । ४५ । २२ । ४०	९ । ४४ । ४२ । ४०	९ । ४४ । ०२ । ००	९ । ४३ । १९ । २०	९ । ४२ । ३७ । १६
४५	१० । ५८ । ३३ । ००	१० । ५७ । ४८ । ००	१० । ५७ । ०२ । १५	१० । ५६ । १४ । १५	१० । ५५ । २६ । ५६
५०	१२ । १२ । ४३ । २०	१२ । १० । ५३ । २०	१२ । १० । ०२ । ३०	१२ । ०९ । ०९ । १०	१२ । ०८ । १६ । २६
५४	१३ । १० । १५ । ३६	१३ । ०९ । २१ । ३६	१३ । ०८ । २६ । ४२	१३ । ०७ । २९ । ०६	१३ । ०६ । ३[illegible] । १९

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल	
भभोग:—	५५		०		५५		४		५५		८		५५		१२		५५		१६	
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१४	३२	४३	०	१४	३१	३३	०	१४	३०	२७	०	१४	२९	३४	०	१४	२८	३१
२	०	२९	०५	२७	०	२९	०३	०६	०	२९	०१	१४	०	२८	५९	०८	०	२८	५८	०२
३	०	४३	३८	१०	०	४३	३४	३९	०	४३	३१	५१	०	४३	२८	४२	०	४३	२५	३३
४	०	५८	१०	५३	०	५८	०६	१२	०	५८	०२	२८	०	५७	५८	१६	०	५०	५४	०४
५	१	१२	४३	३७	१	१२	३७	४५	१	१२	३३	०५	१	१२	२७	४९	१	१२	२२	३५
१०	२	२५	२७	१३	२	२५	१५	३०	२	२५	०६	१०	२	२४	५५	३८	२	२४	४५	१०
१५	३	३८	१०	५०	३	३७	५३	१५	३	३७	३९	१५	३	३७	२३	२७	३	३७	०७	४५
२०	४	५०	५४	२६	४	५०	३१	००	४	५०	१२	२०	४	४९	५१	१६	४	४९	३०	२०
२५	६	०३	३८	२३	६	०३	०८	४५	६	०२	४५	२५	६	०२	१९	०५	६	०१	५२	५५
३०	७	१६	२२	००	७	१५	४६	३०	७	१५	१८	३०	७	१४	४६	५४	७	१४	१५	३०
३५	८	२९	०५	३७	८	२८	२४	१५	८	२७	५१	३५	८	२७	१४	४३	८	२६	३८	०५
४०	९	४१	४९	१४	९	४१	०२	००	९	४०	२४	४०	९	३९	४२	३२	९	३९	००	४०
४५	१०	५४	३२	५०	१०	५३	३९	४५	१०	५२	५७	४५	१०	५२	१०	२१	१०	५१	२३	१५
५०	१२	०७	१६	२७	१२	०६	१७	३०	१२	०५	३०	५०	१२	०४	३८	१०	१२	०३	४५	५०
५५	१३	२०	००		१३	१९	५५	१५	१३	१८	०३	५५	१३	१७	०५	५९	१३	१६	०८	२४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ५५ पल २०	घटी ५५ पल २४	घटी ५५ पल २८	घटी ५५ पल ३२	घटी ५५ पल ३६	घटी ५५ पल ४०
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' २ '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १४। २७। २८	०। १४। २६। २६	०। १४। २५। २३	०। १७। २४। २०	०। १४। २३। १९	०। १४। २२। १६
२	०। २८। ५४। ५६	०। २८। ५२। ५२	०। २८। ५०। ४६	०। २८। ४८। ४१	०। २८। ४६। ३८	०। २८। ४४। ३२
३	०। ४३। २२। २४	०। ४३। १९। १८	०। ४३। १६। ०९	०। ४३। १३। ०२	०। ४३। ०९। ५७	०। ४३। ०६। ४८
४	०। ५७। ४९। ५२	०। ५७। ४५। ४४	०। ५७। ३९। ३२	०। ५७। ३७। २३	०। ५७। ३३। १६	०। ५७। २९। ०५
५	१। १२। १७। २१	१। १२। १२। १०	१। १२। ०६। ५५	१। १२। ०१। ४३	१। ११ ५६। ३५	१। ११। ५१ २१
१०	२। २४। ३४। ४२	२। २४। २४। २०	२। २४। १३। ५०	२। २४। ०३। २७	२। २३। ५३। १०	२। २३। ४२। ४३
१५	३। ३६। ५२। ०३	३। ३६। ३६। ३०	३। ३६। २०। ४५	३। ३६। ०५। ११	३। ३५। ४९। ४५	३। ३५। ३४। ०४
२०	४। ४९। ०९। २४	४। ४८। ४८। ४०	४। ४८। २७। ४०	४। ४८। ०६। ५५	४। ४७। ४६। २०	४। ४७। २५। २६
२५	६। ०१। २६। ४५	६। ०१। ००। ५०	६। ००। ३४। ३५	६। ००। ०८। ३८	५। ५९। ४२। ५५	५। ५९। १६। ४८
३०	७। १३। ४४: ०६	७। १३। १३। ००	७। १२। ४१। ३०	७। १२। १०। २२	७। ११। ३९। ३०	७। ११। ०८। ०९
३५	८। २६। ०१। २७	८। २५। २५। १०	८। २४। ४८। २५	८। २४। १२। ०६	८। २३। ३६। ०५	८। २२। ५९। ३०
४०	९। ३८। १८। ४८	९। ३७। ३७। २०	९। ३६। ५५। २०	९। ३६। १३। ५०	९। ३५। ३२। ४०	९। ३४। ५०। ५२
४५	१०। ५०। ३६। ०९	१०। ४९। ४९। ३०	१०। ४९। ०२। १५	१०। ४८। १५। ३३	१०। ४७। २९। १५	१०: ४६। ४२। १४
५०	१२। ०२। ५३। ३०	१२। ०२। ०१। ४०	१२। ०१। ०९। १०	१२। ००। १७। १७	११। ५९। २५। ५०	११। ५८। ३३। ३६
५५	१३। १५। १०। ५१	१३। १४। १३। ५१	१३। १३। १६। ०५	१३। १२। १९। ०१	१३। ११। २२। २५	१३। १०। २४। ५७

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ५५ पल ४४	घटी ५५ पल ४८	घटी ५५ पल ५२	घटी ५६ पल ५५	घटी ५६ पल ०	घटी ५६ पल ४
भयात घ०	° ′ ″ ‴	° ′ ″ ‴	° ′ ″ ‴	° ′ ″ ‴	° ′ ″ ‴	° ′ ″ ‴
′	′ ″ ‴ ⁗	′ ″ ‴ ⁗	′ ″ ‴ ⁗	′ ″ ‴ ⁗	′ ″ ‴ ⁗	′ ″ ‴ ⁗
१	०। १४। २१। १५	०। १४। २०। १३	०। १४। १९। ११	०। १४। १८। १०	०। १४। १७। ०८	०। १४। १६। ०८
२	०। २८। ४२। ३०	०। २८। ४०। २६	०। २८। ३८। २२	०। ०३। ३६। २०	०। २८। ३६। १७	०। २८। ३२। १४
३	०। ४३। ०३। ४५	०। ४३। ००। ३९	०। ४२। ५७। ३३	०। ४२। ५४। ३०	०। ४२। ५१। २५	०। ४३। ४८। २४
४	०। ५७। २५। ००	०। ५७। २०। ५२	०। ५७। १६। ४४	०। ५७। १२। ४०	०। ५:। ०८। ३४	०। ५७। ०४। ३२
५	१। ११। ४६। १५	१। ११। ४१। ०५	१। ११। ३५। ५५	१। ११। ३०। ५०	१। ११। २५। ४२	१। ११। २०। ४०
१०	२। २३। ३२। ३०	२। २३। २२। १०	२। २३। ११। ५०	२। २३। ०१। ४०	२। २२। ५१। २५	२। २२। ४१। २०
१५	३। :५। १८। ४५	३। ३५। ०३। १५	३। ३४। ४७। ४५	३। ३४। ३२। ३०	३। ३४। १७। ०८	३। ३४। ०२। ००
२०	४। ४७। ०५। ००	४। ४६, ४४। २०	४। ४६। २:। ४०	४। ४६। ०३। २०	४। ४५। ४२। ५१	४। ४५। २२। ४०
२५	५। ५८। ५१। १५	५। ५८। २५। २५	५। ५७। ५९। ३५	५। ५७। ३४। १०	५। ५७। ०८। ३४	५। ५६। ४३। २०
३०	७। १०। ३७। ३०	७। १०। ०६। ३०	७। ०९। ३५। ३०	७। ०९। ०५। ००	७। ०८। ३ ′ १७	७। ०८। ०४। ००
३५	८। २२। २३। ४५	८। २१। ४७। ३५	८। २१। ११। २५	८। २०। ३ ′। ५०	८। २०। ००। ००	८। १९। २४। ४०
४०	९। ३४। १०। ००	९। ३३। २८। ४०	९। ३२। ४७। २०	९। ३२। ०६। ४०	९। ३१। २५। ४२	९। ३०। ४५। २०
४५	१०। ४५। ५६। १५	१०। ४५। ०९। ४५	१०। ४४। २३। १५	१०। ४३। ३७। ३०	१०। ४२। ५१। २५	१०। ४२। ०६। ००
५०	११। ५७। ४२। ३०	११। ५६। ५०। ५०	११। ५५। ५९। १०	११। ५५। ०८। २०	११। ५:। १७। ०८	११। ५३। २६। ४०
५५	१३। ०९। २८। ४५	१३। ०८। ३१। ५५	१३। ०७। ३५। ०५	१३। ०६। ३९। १०	१३। ०५। ४२। ५१	१३। ०४। ४७। २०
५६					१३। २०। ००। ००	१३। १९। ०३। २८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी [संख्या ३]

नक्षत्र भभोगः—	घटी ५६ पल ८	घटी ५६ पल १२	घटी ५६ पल १६	घटी ५६ पल २०	घटी ५६ पल २०	घटी ५६ पल २८
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ! '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १४। १५। ०८	०। १४। १६। ०६	०। १४। १३। ०५	०। १४। १२। ०४	०। १४। ११। ०४	०। १४। १०। ०३
२	०। २८। ३०। १६	०। २८। २८। ११	०। २८। २६। ०९	०। २८। २४। ०८	०। २८। २२। ०८	०। २८। २०। ०७
३	०। ४२। ४५। २४	०। ४२। ४२। १७	०। ४२। ३९। १४	०। ४२। ३६। १२	०। ४२। ३३। १२	०। ४२। ३०। १०
४	०। ५७। ००। ३२	०। ५६। ५६। २२	०। ५६। ५२। १९	०। ५६। ४८। १७	०। ५६। ४४। १६	०। ५६। ४०। १४
५	१। ११। १५। ४०	१। ११। १२। २८	१। ११। ०५। २४	१। ११। ००। २१	१। १०। ५५। १९	१। १०। ५०। १८
१०	२। २२। ३१। २०	२। २२। २७। ५८	२। २२। १०। ४८	२। २२। ००। ४२	२। २१। ५०। ३८	२। २१। ४०। ३६
१५	३। ३३। ४७। ०४	३। ३३। ३९। २४	३। ३३। १६। ११	३। ३३। ०१। ०४	३। ३२। ४५। ५७	३। ३२। ३०। ५४
२०	४। ४५। ०२। ४०	४। ४४। ४९। ५२	४। ४४। २१। ३५	४। ४४। ०१। २५	४। ४३। ४१। १६	४। ४३। २१। १२
२५	५। ५६। १८। २०	५। ५ । ५२। २०	५। ५५। २६। ५९	५। ५५। ०१। ४८	५। ५४। ३६। ३५	५। ५४। ११। ३०
३०	७। ०७। ३४। ००	७। ०७। ०२। ४८	७। ०६। ३२। २३	७। ०६। ०२। ०८	७। ०५। ३१। ५४	। ०५। ०१। ४८
३५	८। १८। ४९। ४०	८। १८। १२। १६	८। १७। ३७। ४६	८। १७। ०२। २५	८। १६। २७। १३	८। १५। ५२। ०९
४०	९। ३०। ०५। २०	९। २९। २३। ४४	९। २८। ४३। १०	९। २८। ०२। ५१	९। २७। २२। ३२	९। २६। ४२। २४
४५	१०। ४१। २१। ००	१०। ४०। ३४। १२	१०। ३९। ४८। ३४	१०। ३९। ०३। १२	१०। ३८। १७। ५१	१०। ३७। ३२। ४२
५०	११। ५२। ३ । ४०	११। ५१। ४४। ४०	११। ५०। ५३। ५८	११। ५०। ०३। ३३	११। ४९। १३। १०	११। ४८। २३। ००
५५	१३। ०३। ५२। २०	१३। ०२। ५५। ०८	१३। ०१। ५९। २२	१३। ०१। ०३। ५५	१३। ००। ००। २९	१२। ५९। १३। १८
५६	१३। १८। ०७। २८	१३। १७। ०९। १४	१३। १६। १२। २७	१३। १५। १५। ५९	१३। १४। १९। ३३	१३। १३। २३। २१

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी [संख्या ३]

नक्षत्र भभोगः —	घटी ५७ पल ३२	घटी ५६ पल ३६	घटी ५६ पल ४०	घटी ५६ पल ४४	घटी ५६ पल ४८	घटी ५६ पल ५२
भयात घटी	° ' '' '''	° ' '' '''	° ' '' '''	° ' '' '''	° ' '' '''	° ' '' '''
पल	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १४। ०९। ०३	०। १४। ०८। ०३	०। १४। ०७। ०३	०। १४। ०६। ०१	०। १४। ०५। ०४	०। १४। ४०। ०४
२	०। २८। १८। ०६	०। २८। १६। ०६	०। २८। १४। ०७	०। २८। १२। ०२	०। २८। १०। ५६	०। २८। ०८। ०९
३	०। ४२। २७। १०	०। ४२। २४। १०	०। ४२। २१। १०	०। ४२। १८। ०३	०। ४२। १५। १२	०। ४२। १२। १४
४	०। ५६। ३६। १३	०। ५६। ३२। १३	०। ५६। २८। १४	०। ५६। २४। ०४	०। ५६। २०। १६	०। ५६। १६। १८
५	१। १०। ४५। १७	१। १०। ४०। १७	१। १०। ३५। २८	१। १०। ३०। ०५	१। १०। २५। २०	१। १०। २०। २३
१०	२। २१। ३०। ३४	२। २१। २०। ३४	२। २१। १०। ३५	२। २१। ००। १०	२। २०। ५०। ४०	२। २०। ४०। ४६
१५	३। ३२। २५। ५०	३। ३२। ००। ५१	३। ३१। ४५। ५३	३। ३१। ३०। १५	३। ३१। १६। ००	३। ३१। ००। ०९
२०	४। ४३। ०१। ०८	४। ४२। ४२। ०८	४। ४२। २१। ११	४। ४२। ००। २०	४। ४१। ४१। २०	४। ४१। २१। ३२
२५	५। ५३। ५६। २५	५। ५३। २१। २५	५। ५२। ५६। २८	५। ५२। ३०। २५	५। ५२। ०६। ४०	५। ५१। ४१। ५५
३०	७। ०४। ५१। ४२	७। ०४। ०१। ४२	६। ०३। ३१। ४६	७। ०३। ००। ३०	७। ०२। ३२। ००	७। ०२। ०२। १८
३५	८। १५। २६। ५९	८। १४। ४१। ५९	८। १४। ०७। ०४	८। १३। ३०। ३५	८। १२। ५७। २०	८। १ । २२। ४१
४०	९। २६। ०२। १६	९। २५। २२। १६	९। २४। ४२। २१	९। २४। ००। ४०	९। २३। २२। ४०	९। २२। ४३। ०४
४५	१०। ३६। ५७। ३३	१०। ३६। ०२। ३३	१०। ३५। १७। ३९	१०। ३४। ३०। ४५	१०। ३३। ४८। ००	१०। ३३। ०३। २७
५०	११। ४७। ५२। ५०	११। ४६। ४२ ५०	११। ४५। ५२। ५६	११। ४५। ००। ५०	११। ४४। १३। २०	११। ४३। ०३। २७
५५	१२। ५८। ४८। ०७	१२। ५७। २३। ०७	१२। ५६। २८। १४	१२। ५५। ३०। ५५	१२। ५४। ३८। ४०	१२। ५३। ४४। १३
५६	१३। १२। ५७। १०	१३। ११। ३१। १०	१३। १०। ३५। १८	१३। ०९। ३६। ५६	१३। ०८। ४३। ४४	१३। ०७। ४८। १८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट गति जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५६ पल ५६	घटी ५७ प्रल ०	घटी ५७ पल ४	घटी ५७ पल ८	घटी ५७ पल १२	घटी ५७ पल १६
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' ' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १४। ०३। ०५	०। १४। ०२। ०६	०। १४। ०१। ०७	०। १४। ००। ०८	०। १३। ५९। ०९	०। १३। ५८। ११
२	०। २८। ०६। १०	०। २८। ०४। १२	०। २८। ०२। १५	०। २८। ००। १६	०। २७। ५८। १९	०। २७। ५६। २२
३	०। ४२। ०९। १६	०। ४२। ०६। १९	०। ४२। ०३। २२	०। ४२। ००। २५	०। ४१। ५७। २८	०। ४१। ५४। ३३
४	०। ५६। १२। २१	०। ५६। ०८। २५	०। ५६। ०४। ३०	०। ५६। ००। ३३	०। ५५। ५५। ४४	०। ५५। ५२। ४४
५	१। १०। १५। २७	१। १०। १०। ३१	१। १०। ०५। ३७	१। १०। ००। ४२	१। ०९। ५५। ४८	१। ०९। ५०। ५५
१०	२। २०। ३०। ५४	२। २०। २१। ०२	२। २०। ११। १५	२। २०। ०१। २४	२। १९। ५१। ३६	२। १९। ४१। ५०
१५	३। ३०। ४६। २१	३। ३०। ३१। ३३	३। ३०। १६। ५२	३। ३०। ०२। ०६	३। २९। ४७। २४	३। २९। ३२। ४५
२०	४। ४१। ०१। ४९	४। ४०। ४२। ०५	४। ४०। २२। ३०	४। ४०। ०२। ४८	४। ३९। ४३। १२	४। ३९। २३। ४०
२५	५। ५१। १७। १६	५। ५०। ५२। ३५	५। ५०। २८। ०७	५। ५०। ०३। ३०	५। ४९। ३९। ००	५। ४९। १४। ३५
३०	७। ०१। ३२। ४३	७। ०१। ०३। ०७	७। ००। ३३। ४५	७। ००। ०४। १२	६। ५९। ३४। ४८	६। ५९। ०५। ३०
३५	८। ११। ४८। ११	८। ११। १३। ३८	८। १०। ३९। २२	८। १०। ०४। ५४	८। ०९। ३०। ३६	८। ०८। ५६। २५
४०	९। २२। ०३। ३८	९। २१। २४। १०	९। २०। ४५। ००	९। २०। ०५। ३६	९। १९। २६। २४	९। १८। ४७। २०
४५	१०। ३२। १९। ०५	१०। ३१। ३४। ४०	१०। ३०। ५०। ३७	१०। ३०। ०६। १८	१०। २९। २२। १२	१०। २८। ३८। १५
५०	११। ४२। ३४। ३२	११। ४१। ४५। १०	११। ४०। ५६। १५	११। ४०। ०७। ००	११। ३९। १८। ००	११। ३८, २९। १०
५५	१२। ५२। ४९। ५९	१२। ५१। ५५। ४३	१२। ५१। ०१। ५२	१२। ५०। ०७। ४२	१२। ४९। १३। ४८	१२। ४८। २०। ०५
५६	१३। ०६। ५३। ०५	१३। ०५। ५७। ४९	१३। ०५। ०३। ००	१३। ०४। ०७। ५०	१३। ०३। १२। ५०	१३: ०२। १८। १६
५७		१३। १०। ५९। ५५	१३। १९। ०५। ०७	१३। १८। ०७। ५८	१३। १७। १२। ०७	१३। १६। १६। २२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५७ पल २०	घटी ५७ पल २४	घटी ५७ पल २८	घटी ५७ पल ३२	घटी ५७ पल ३६	घटी ५७ पल ४०
भयात घ०	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''	० ' " '''
प०	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''	' " ''' ''''
१	०। १३। ५७। १२	०। १३। ५६। १३	०। १३। ५५। १५	०। १३। ५४। १७	०। १३। ५३। २०	०। १३। ५२। २२
२	०। २७। ५४। २४	०। २७। ५२। २६	०। २७। ५०। ३१	०। २७। ४८। ३४	०। २७। ४६। ४०	०। २७। ४४। ४४
३	०। ४१। ५१। ३७	०। ४१। ४८। ४०	०। ४१ ४५। ४७	०। ४१। ४२। ५२	०। ४१। ४०। ००	०। ४१। ३७ ०६
४	०। ५५। ४८। ४९	०। ५५। ४४। ५३	०। ५५। ४१ ०३	०। ५५। ३७। ०९	०। ५५। ३३। २०	०। ५५। २९। २८
५	१। ०९। ४६। ०२	१। ०९। ४१। ०७	१। ०९। ३६। १९	१। ०९। ३१। २७	१। ०९। २६। ४०	१। ०९। २१। ५०
१०	२। १९। ३२। ०४	२। १९ २२। १४	२। १९। १२। ३७	२। १९। ०२। ५४	२। १८। ५३। २०	२। १८। ४३। ४१
१५	३। २९। १८। ०६	३। २९। ०३। २१	३। २८। ४८। ५६	३। २८। ३४। २१	३। २८। २०। ००	३। २८। ०५। ३२
२०	४। ३९। ०४। ०८	४। ३८। ४४। २८	४। ३८। २५। १४	४। ३८। ०५। ४८	४। ३७। ४६। ४०	४। ३७। २७। २३
२५	५ ४८। ५०। १०	५। ४८। २५। ३५	५। ४८। ०१। ३३	५। ४७। ३७। १५	५। ४७। १३। २०	५। ४६। ४९। १४
३०	६। ५८। ३६। १२	६। ५८। ०६। ४२	६। ५७। ३७। ५२	६। ५७। ०८। ४२	६। ५६। ४०। ००	६। ५६ ११। ०५
३५	८। ०८। २२। १४	८। ०७। ४७। ४९	८। ०७। १४ १०	८। ०६। ४०। ०९	८। ०६। ०६। ४०	८। ०५। ३२। ५६
४०	९। १८। ०८। १६	९। १७। २८। ५६	९। १६। ५०। २९	९। १६। ११। ३६	९। १५। ३३। २०	९। १४। ५४। ४६
४५	१०। २७। ५४। १८	१०। २७। १०। ०३	१०। २६। २६। ४८	१०। २५। ४३। ०३	१०। २५। ००। ००	१०। २४। १६। ३७
५०	११। ३७। ४०। २०	११। ३६। ५१। १०	११। ३६। ०३। ०६	११। ३५। १४। ३०	११। ३४। २६। ४०	११। ३३। ३८। २८
५५	१२। ४७। २६। २२	१२। ४६। ३२। १७	१२। ४५। ३९। २५	१२। ४४। ४५। ५७	१२। ४३। ५३। २०	१२। ४३। ००। १९
५७	१३। १५। २१। ४७	१३। १४। २४। ४३	१३। १३। २९। ५७	१३। १२। ३४। ३१	१३। ११। ४०। ००	१३। १०। ४५। ०३

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या २)

नक्षत्र भभोग —	घटी ५७ पल ४४	घटी ५७ पल ४८	घटी ५७ पल ५२	घटी ५७ पल ५६	घटी ५९ पल ०	घटी ५८ पल ४
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १३। ५१। २४	०। १३। ५०। २६	०। १३। ४९। २९	०। १३। ४८। ३२	०। १३। ४७। ३५	०। १३। ४६। ३८
२	०। २७। ४२। ४९	०। २७। ४०। ५३	०। २७। ३८। ५८	०। २७। ३७। ०४	०। २७। ३५। १०	०। २७। ३३। १६
३	०। ४१। ३४। १३	०। ४१। ३१। १९	०। ४१। २८। २७	०। ४१। २५। ३६	०। ४१। २२। ४५	०। ४१। १९। ५४
४	०। ५५। २५। ३८	०। ५५। २१। ४६	०। ५५। १७। ५६	०। ५५। १४। ०८	०। ५५। १०। २०	०। ५५। ०६। ३२
५	१। ०९। १७। ०२	१। ०९। १२। १३	१। ०९। ०७। २५	१। ९। ०२। ४०	१। ०८। ५७। ५६	१। ०८। ५३। १०
१०	२। १८। ३४। ०५	२। १८। २४। २६	२। १८। १४। ५०	२। १८। ०५। २०	२। १७। ५५। ५१	२। १७। ४६। २१
१५	३। २७। ५१। ०७	३। २७। ३६। ३९	३। २७। २१। १६	३। २७। ०८। ००	३। २६। ५३। ४७	३। २६। ३९। ३२
२०	४। ३७। ०८। १०	४। ३६। ४८। ५२	४। ३६। २९। ४१	४। ३६। १०। ४१	४। ३५। ५१। ४३	४। ३५। ३२। ४३
२५	५। ४६। २५। १३	५। ४६। ०१। ०५	५। ४५। ३७। ०६	५। ४५। १३। २१	५। ४४। ४९। ३९	५। ४४। २५। ५३
३०	६। ५५। ४२। १५	६। ५५। १३। १९	६। ५४। ४४। ३२	६। ५४। १६। ००	६। ५३। ४७। ३५	६। ५३। १९। ०४
३५	८। ०४। ५९। १७	८। ०४। २५। ३१	८। ०३। ५१। ५७	८। ०३। १८। ४१	८। ०२। ४५। ३१	८। ०२। १२। १८
४०	९। १४। १६। २०	९। १३। ३७। ४४	९। १२। ५९। २२	९। १२। २१। १२	९। ११। ४३। २७	९। ११। ०५। २६
४५	१०। २३। ३३। २३	१०। २२। ४९। ५७	१०। २२। ०६। ४७	१०। २१। २४। ०२	१०। २०। ४१। २२	१०। १९। ५८। ३६
५०	११। ३२। ५०। २६	११। ३२। ०२। १०	११। ३१। १४। १२	११। ३०। २६। ४२	११। २९। ३९। १८	११। २८। ५१। ४७
५५	१२। ४२। ०७। २२	१२। ४१। १४। २४	१२। ४०। २१। ३८	१२। ३९। २९। २१	१२। ३८। ३७। १४	१२। ३७। ४४। ५८
५७	१३। ०९। ५०। १७	१३। ०८। ५५। १७	१३। ०८। ००। ३६	१३। ०७। ०६। २५	१३। २०। ००। ००	१३। १९। ०४। ५२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५८ पल ८	घटी ५८ पल १२	घटी ५८ पल १६	घटी ५८ पल २०	घटी ५८ पल २४	घटी ५८ पल २८
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	० १३ ४५ ४१	० १३ ४४ ४४	० १३ ४३ ४८	० १३ ४२ ५१	० १३ ४१ ५५	० १३ ४० ५८
२	० २७ ३१ २३	० २७ २९ २९	० २७ २७ ३६	० २७ २५ ४२	० २७ २३ ५०	० २७ २१ ५७
३	० ४१ १७ ०४	० ४१ १४ १३	० ४१ ११ २४	० ४१ ०८ ३४	० ४१ ०५ ४५	० ४१ ०२ ५५
४	० ५५ ०२ ४६	० ५४ ५८ ५८	० ५४ ५५ १२	० ५४ ५१ २५	० ५४ ४७ ४०	० ५४ ४३ ५४
५	१ ०८ ४८ २८	१ ०८ ४३ ४२	१ ०८ ३९ ००	१ ०८ ३४ १७	१ ०८ २९ ३५	१ ०८ २४ ५३
१०	२ १७ ३६ ५६	२ १७ २७ २५	२ १७ १८ ००	२ १७ ०८ ३४	२ १६ ५९ १०	२ १६ ४९ ४६
१५	३ २६ २५ २४	३ २६ ११ ०७	३ २५ ५७ ००	३ २५ ४२ ५१	३ २५ २८ ४५	३ २५ १४ ३९
२०	४ ३५ १३ ५२	४ ३४ ५४ ५०	४ ३४ ३६ ००	४ ३४ १७ ०८	४ ३३ ५८ २०	४ ३३ ३९ ३२
२५	५ ४४ ०२ २०	५ ४३ ३८ ३३	५ ४३ १५ ००	५ ४२ ५१ २५	५ ४२ २७ ५५	५ ४२ ०४ २५
३०	६ ५२ ५० ४८	६ ५२ २२ १५	६ ५१ ५४ ००	६ ५१ २५ ४२	६ ५० ५७ ३०	६ ५० २९ १८
३५	८ ०१ ३९ १६	८ ०१ ०५ ५८	८ ०० ३३ ००	७ ५९ ५९ ५९	७ ५९ २७ ०५	७ ५८ ५४ ११
४०	९ १० २७ ४४	९ ०९ ४९ ४०	९ ०९ १२ ००	९ ०८ ३४ १६	९ ०७ ५६ ४०	९ ०७ १९ ०४
४५	१० १९ १६ १२	१० १८ ३३ २३	१० १७ ५१ ००	१० १७ ०८ ३३	१० १६ २६ १५	१० १५ ४३ ५७
५०	११ २८ ०४ ४०	११ २७ १७ ०६	११ २६ ३० ००	११ २५ ४२ ५१	११ २४ ५५ ५०	११ २४ ०८ ५०
५५	१२ ३६ ५३ ०८	१२ ३६ ०० ४८	१२ ३५ ०९ ००	१२ ३४ १७ ०७	१२ ३३ २५ २५	१२ ३२ ३३ ४३
५८	१३ १८ १० १२	१३ १७ १५ ०२	१३ १६ २० २४	१३ १५ २५ ४२	१३ १४ ३१ १०	१३ १३ ३६ ३८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल	
भभोग:—	५८		३२		५८		३६		५८		४०		५८		४४		५८		४८		५८		५२	
भयात घ०	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१३	४०	०२	०	१३	३९	०६	०	१३	३८	१०	०	१३	३७	१५	०	१३	३६	१९	०	१३	३५	२३
२	०	२७	२०	०५	०	२७	१८	१३	०	२७	१६	२१	०	२७	१४	३०	०	२७	१२	३८	०	२७	१०	४६
३	०	४१	००	०७	०	४०	५७	१९	०	४०	५४	३२	०	४०	५१	४५	०	४०	४८	५७	०	४०	४६	०९
४	०	५४	४०	१०	०	५४	३६	२६	०	५४	२६	४३	०	५४	२९	००	०	५४	२५	१६	०	५४	२१	३२
५	१	०८	२०	१३	१	०८	१५	३३	१	०८	१०	५४	१	०८	०६	१५	१	०८	०१	३५	१	०७	५६	५५
१०	२	१६	४०	२६	२	१६	३१	०६	२	१६	२१	४९	२	१६	१२	३०	२	१६	०७	१०	२	१५	५३	५०
१५	३	२५	००	३९	३	२४	४६	३९	३	२४	३२	४३	३	२४	१८	४५	३	२४	०३	४५	३	२३	५०	४५
२०	४	३३	२०	५२	४	३३	०२	१२	४	३२	४३	३८	४	३२	२५	००	४	३२	०४	२०	४	३१	४७	४०
२५	५	४१	४१	०५	५	४१	१७	४५	५	४०	५४	३२	५	४०	३१	१५	५	४०	०५	५५	५	३९	४४	३५
३०	६	५०	०१	१८	६	४९	३३	१८	६	४९	०५	२७	६	४८	३७	३०	६	४८	०७	३०	६	४७	४१	३०
३५	७	५८	३१	३१	७	५७	४८	५१	७	५७	१६	२१	७	५६	४३	४५	७	५६	०८	०५	७	५५	३८	२५
४०	९	०६	४१	४४	९	०६	०४	२४	९	०५	२७	१६	९	०४	५०	००	९	०४	०८	४०	९	०३	३५	२०
४५	१०	१५	०१	५७	१०	१४	१९	५७	१०	१३	३८	१०	१०	१२	५६	१५	१०	१२	१०	१५	१०	११	३२	१५
५०	११	२३	२२	१०	११	२२	३५	३०	११	२१	४९	०५	११	२१	०२	३०	११	२०	११	५०	११	१९	२९	१०
५५	१२	३१	४२	२३	१२	३०	५१	०३	१२	२९	५९	५९	१२	२९	०८	४५	१२	२८	१३	२५	१२	२७	२६	०५
५८	१३	१२	४२	३१	१३	११	४८	२३	१३	१०	५४	३२	१३	१०	००	३०	१३	०९	०२	२२	१३	०८	१२	१४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट (गति) जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५८ पल ५६	घटी ५९ पल ०	घटी ५९ पल ४	घटी ५९ पल ८	घटी ५९ पल १२	घटी ५९ पल १६
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १३। ३४। २७	०। १३। ३३। ३६	०। १३। ३२। ३८	०। १३। ३१। ४३	०। १३। ३०। ४८	०। १३। २९। ५४
२	०। २७। ०८। ५४	०। २७। ०७। ०७	०। २७। ०५। १७	०। २७। ०३। २७	०। २७। ०१। ३६	०। २६। ५९। ४८
३	०। ४०। ४३। २१	०। ४०। ४०। ४०	०। ४०। ३७। ५५	०। ४०। ३५। १०	०। ४०। ३२। २५	०। ४०। २९। ४२
४	०। ५४। १७। ४८	०। ५४। १४। १४	०। ५४। १०। ३४	०। ५४। ०६। ५४	०। ५४। ०३। १३	०। ५३। ५९। ३६
५	१। ०७। ५२। १५	१। ०७। ४७। ४७	१। ०७। ४३। १३	१। ०७। ३८। ३७	१। ०७। ३४। ०२	१। ०७। २९। ३०
१०	२। १५। ४४। ३०	२। १५। ३५। ३५	२। १५। २६। २६	२। १५। १७। १५	२। १५। ०८। ०४	२। १४। ५९। ००
१५	३। २३। ३६। ४५	३। २३। २३। २३	३। २३। ०९। ३९	३। २२। ५५। ५२	३। २२। ४२। ०६	३। २२। २८। ३०
२०	४। ३१। २८। ००	४। ३१। ११। ११	४। ३०। ५२। ५२	४। ३०। ३४। ३०	४। ३०। १६। ०८	४। २९। ५८। ००
२५	५। ३९। २१। १५	५। ३८। ५८। ५८	५। ३८। ३६। ०५	५। ३८। १३। ०७	५। ३७। ५०। १०	५। ३७। २७। ३०
३०	६। ४७। १३। ३०	६। ४६। ४६। ४६	६। ४६। १९। १८	६। ४५। ५१। ४५	६। ४५। २४। १२	६। ४४। ५७। ००
३५	७। ५५। ०४। ४५	७। ५४। ३४। ३४	७। ५४। ०२। ३१	७। ५३। २९। २२	७। ५२। ५८। १४	७। ५२। २६। ३०
४०	९। ०२। ५६। ००	९। ०२। २२। २२	९। ०१। ४५। ४४	९। ०१। ०९। ००	९। ००। ३२। १६	८। ५९। ५६। ००
४५	१०। १०। ४९। १५	१०। १०। १०। १०	१०। ०९। २८। ५७	१०। ०८। ४७। ३७	१०। ०८। ०६। १८	१०। ०७। २५। ३०
५०	११। १८। ४२। ३०	११। १७। ५७। ५७	११। १७। १२। १०	११। १६। २६। १५	११। १५। ४०। २०	११। १४। ५५। ००
५५	१२। २६। ३४। ४५	१२। २५। ४५। ४५	१२। २४। ५५। २३	१२। २४। ०४। ५२	१२। २३। १४। २२	१२। २२। २४। ३०
५८	१३। ०७। १७। ०६	१३। २०। ००। ००	१३। १९। ०५। ५७	१३। ०४। ४०। ०२	१३। ०३। ४६। ४७	१३। ०२। ५४। १२
५९				१३। १८। ११। ४६	१३। १७। १७। २५	१३। १६। २४। ०६

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी [संख्या ३]

नक्षत्र भभोग:—	घटी ५९ पल २०	घटी ५९ पल २४	घटी ५९ पल २८	घटी ५९ पल ३२	घटी ५९ पल ३६	घटी ५९ पल ४०
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १३। २९। ०६	०। १३। २८। ०५	०। १३। २७। १०	०। १३। २६। १६	०। १३। २५। २२	०। १३। २४। २८
२	०। २६। ५८। १३	०। २६। ५६। १०	०। २६। ५४। २०	०। २६। ५२। ३२	०। २६। ५०। ४४	०। २६। ४८। ५६
३	०। ४०। २७। २०	०। ४०। २४। १५	०। ४०। २१। ३१	०। ४०। १८। ४८	०। ४०। १६। ०६	०। ४०। १३। २४
४	०। ५३। ५६। २७	०। ५३। ५२। २०	०। ५३। ४८। ४१	०। ५३। ४५। ०५	०। ५३। ४१। २८	०। ५३। ३७। ५२
५	१। ०७। २५। ३३	१। ०७। २०। २५	१। ०७। १५। ५१	१। ०७। ११। २१	१। ०७। ०६। ५०	१। ०७। ०२। २०
१०	२। १४। ५१। ०७	२। १४। ४०। ५०	२। १४। ३१। ४३	२। १४। २२। ४२	२। १४। १३। ४१	२। १४। ०४। ४१
१५	३। २२। १६। ४१	३। २२। ०१। १५	३। २१। ४७। ३५	३। २१। ३४। ०४	३। २१। २०। ३२	३। २१। ०७। ०२
२०	४। २९। ४२। १४	४। २९। २१। ४०	४। २९। ०३। २६	४। २८। ४५। २५	४। २८। २७। २३	४। २८। ०९। २३
२५	५। ३७। ०७। ४८	५। ३६। ४२। ०५	५। ३६। १९। १८	५। ३५। ५६। ४६	५। ३५। ४। १३	५। ३५। ११। ४४
३०	६। ४४। ३३। २२	६। ४४। ०२। ३०	६। ४३। ३५। १०	६। ४३। ०८। ०८	६। ४२। ४१। ०४	६। ४२। १४। ०५
३५	७। ५१। ५८। ५५	७। ५१। २२। ५५	७। ५०। ५१। ०१	७। ५०। १९। २९	७। ४९। ४७। ५५	७। ४९। १६। २५
४०	८। ५९। २४। २९	८। ५८। ४३। २०	८। ५८। ०६। ५२	८। ५७। ३०। ५०	८। ५६। ५४। ४६	८। ५६। १८। ४६
४५	१०। ०६। ५०। ०३	१०। ०६। ०३। ४५	१०। ०५। २२। ४५	१०। ०४। ४२। १२	१०। ०४। ०१। ३६	१०। ०३। १। ०८
५०	११। १४। १५। ३६	११। १३। २४ १०	११। १२। ३८। ३६	११। ११। ५३। ३३	११। ११। ०८। २७	११। १०। ३। २९
५५	१२। २२। ४१। १०	१२। २०। ४४। ३५	१२। १९। ५४। २८	१२। १९। ०४। ५४	१२। १८। १५। १८	१ । १७। ५। ५०
५९	१३। १६। ३७। ३७	१३। १४। ३६। ५५	१३। १३। ४३। १०	१३। १२। ५०। ००	१३। ११। ५६। ४७	१३। ११। ०३। ४२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ५९ पल ४४				घटी ५९ पल ४८				घटी ५९ पल ५२				घटी ५९ पल ५६				घटी ६० पल ०				घटी ६० पल ४			
	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''
भयात घ०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
प०	०	१३	२३	३४	०	१३	२२	४०	०	१३	२१	४७	०	१३	२०	५३	०	१३	२०		०	१३	१९	०६
१	०	२६	४७	०८	०	२६	४५	२१	०	२६	४३	३४	०	२६	४१	४६	०	२६	४०		०	२६	३८	१३
२	०	४०	१०	४२	०	४०	०८	०१	०	४०	०५	२१	०	४०	०२	४०	०	४०	००		०	३९	५७	२०
३	०	५३	३४	१७	०	५३	३०	४२	०	५३	२७	०८	०	५३	२३	३३	०	५३	२०		०	५३	१६	२७
४	१	०६	५७	५१	१	०६	५३	२२	१	०६	४८	५५	१	०६	४४	२७	१	०६	४०		१	०६	३५	३३
५	२	१३	५५	४२	२	१३	४६	४५	२	१३	३७	५०	२	१३	२८	५४	२	१३	२०		२	१३	११	०७
१०	३	२०	५३	३४	३	२०	४०	०८	३	२०	२६	४५	३	२०	१३	२१	३	२०	००		३	१९	४६	४०
१५	४	२७	५१	२५	४	२७	३३	३०	४	२७	१५	४०	४	२६	५७	४८	४	२६	४०		४	२६	२२	१४
२०	५	३४	४९	१७	५	३४	२६	५३	५	३४	०४	३५	५	३३	४२	१५	५	३३	२०		५	३२	५७	४७
२५	६	४१	४७	०८	६	४१	२०	१६	६	४०	५३	३०	६	४०	२६	४२	६	४०	००		६	३९	३३	२०
३०	७	४८	४५	००	७	४८	१३	३८	७	४७	४२	२५	७	४७	११	०९	७	४६	४०		७	४६	०८	५४
३५	८	५५	४२	५१	८	५५	०७	०१	८	५४	३१	२०	८	५३	५५	३६	८	५३	२०		८	५२	४४	२८
४०	१०	०२	४०	४३	१०	०२	००	२४	१०	०१	२०	१५	१०	००	४०	०३	१०	००	००		१०	५९	२०	०१
४५	११	०९	३८	३४	११	०८	५३	४६	११	०८	०९	१०	११	०७	२४	३०	११	०६	४०		११	०५	५५	३४
५०	१२	१६	३६	२५	१२	१५	४७	०९	१२	१४	५८	०५	१२	१४	०८	५७	१२	१३	२०		१२	१२	३१	०७
५५	१३	१०	१०	४३	१३	०९	१७	५१	१३	०८	२५	१३	१३	०७	३२	२९	१३	०६	४०		१३	०५	४७	३४
६०																	१३	२०	००		१३	१९	०६	४०

*किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या २)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६० पल ८	घटी ६० पल १२	घटी ६० पल १६	घटी ६० पल २०	घटी ६० पल २४	घटी ६० पल २८
भयात् घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	०। १३। १८। १३	०। १३। १७। २०	०। १३। १६। २७	०। १३। १५। ३४	०। १३। १४। ४२	०। १३। १३। ४९
२	०। २६। ३६। २६	०। २६। ३४। ४१	०। २६। ३२। ५५	०। २६। ३१। ०९	०। २६। २९। २४	०। २६। २७। ३९
३	०। ३९। ५४। ४०	०। ३९। ५२। ०१	०। ३९। ४९। २२	०। ३९। ४६। ४४	०। ३९। ४४। ०६	०। ३९। ४१। २८
४	०। ५३। १२। ५३	०। ५३। ०९। २२	०। ५३। ०५। ५०	०। ५३। ०२। १९	०। ५२। ५८। ४८	०। ५२। ५५। १८
५	१। ०६। ३१। ०७	१। ०६। २६। ४२	१। ०६। २२। १८	१। ६। १७। ५४	१। ०६। १३। ३०	१। ०६। ०९। ०८
१०	२। १३। ०२। १४	२। १२। ५३। २५	२। १२। ४४। ३६	२। १२। ३५। ४८	२। १२। २७। ०१	२। १२। १८। १६
१५	३। १९। ३३। २१	३। १९। २०। ०७	३। १९। ०६। ५४	३। १८। ५३। ४२	३। १८। ४०। ३२	३। १८। २७। २४
२०	४। २६। ०४। २८	४। २५। ४६। ५०	४। २५। २९। १२	४। २५। ११। ३६	४। २४। ५४। ०३	४। २४। ३६। ३२
२५	५। ३२। ३५। ३५	५। ३२। १३। ३२	५। ३१। ५१। ३०	५। ३१। २९। ३०	५। ३१। ०७। ३३	५। ३०। ४५। ४०
३०	६। ३९। ०६। ४२	६। ३८। ४०। १४	६। ३८। १३। ४८	६। ३७। ४७। २४	६। ३७। २१। ०४	६। ३६। ५४। ४८
३५	७। ४५। ३७। ४९	७। ४५। ०६। ५७	७। ४४। ३६। ०६	७। ४४। ०५। १८	७। ४३। ३४। ३५	७। ४३। ०३। ५७
४०	८। ५२। ०८। ५६	८। ५१। ३३। ४०	८। ५०। ५८। २४	८। ५०। २३। १२	८। ४९। ४८। ०६	८। ४९। १३। ०५
४५	९। ५८। ४०। ०३	९। ५८। ००। २२	९। ५७। २०। ४२	९। ५६। ४१। ३६	९। ५६। ०१। ३६	९। ५५। २२। १३
५०	११। ०५। ११। १०	११। ०४। २७। ०४	११। ०३। ४३। ०१	११। ०२। ५९। ००	११। ०२। १५। ०७	११। ०१। ३१। २१
५५	१२। ११। ४२। १७	१२। १०। ५३। ४६	१२। १०। ०५। १९	१२। ०९। १६। ५४	१२। ०८। २८। ३८	१२। ०७। ४०। २९
६०	१३। १८। १३। ३४	१३। १७। २०। २८	१३। १६। २७। ३६	१३। १५। ३४। ४८	१३। १४। ४२। ०८	१३। १३। ४९। ३८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटी पल	घटी पल	घटी पल	घटी पल	घटी पल
भभोग:—	६० ३८	६० ३६	६० ४०	६० ४४	६० ४८
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' '' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	० । १३ । १२ । ५७	० । १३ । १२ । ०४	० । १३ । ११ । १२	० । १३ । १० । २०	० । १३ । ०९ । २८
२	० । २६ । २५ । ५४	० । २६ । २४ । ०९	० । २६ । २२ । २५	० । २६ । २० । ४०	० । २६ । १८ । ५६
३	० । ३९ । ३८ । ५१	० । ३९ । ३६ । १४	० । ३९ । ३३ । ३७	० । ३९ । ३१ । ०१	० । ३९ । २८ । २५
४	० । ५२ । ५१ । ४८	० । ५२ । ४८ । १९	० । ५२ । ४४ । ५०	० । ५२ । ४१ । २१	० । ५२ । ३७ । ५३
५	१ । ०६ । ०४ । ४५	१ । ०६ । ०० । २३	१ । ०५ । ५६ । ०२	१ । ०५ । ५१ । ४२	१ । ०५ । ४७ । २१
१०	२ । १२ । ०९ । ३०	२ । १२ । ०० । ५७	२ । ११ । ५२ । ५०	२ । ११ । ४३ । २४	२ । ११ । ३४ । ४३
१५	३ । १८ । १४ । १६	३ । १८ । ०१ । ११	३ । १७ । ४८ । ०७	३ । १७ । ३५ । ०६	३ । १७ । २२ । ०५
२०	४ । २४ । १९ । ०१	४ । २४ । ०१ । ३५	४ । २३ । ४४ । १०	४ । २३ । २६ । ४८	४ । २३ । ०९ । २७
२५	५ । ३० । २३ । ४७	५ । ३० । ०१ । ५८	५ । २९ । ४० । १३	५ । २९ । १८ । ३०	५ । २८ । ५६ । ४९
३०	६ । ३६ । २८ । ३२	६ । ३६ । ०२ । २२	६ । ३५ । ३६ । १५	६ । ३५ । १० । १२	६ । ३४ । ४४ । १०
३५	७ । ४२ । ३३ । १८	७ । ४२ । ०२ । ४६	७ । ४१ । ३२ । १८	७ । ४१ । ०१ । ५४	७ । ४० । ३१ । ३२
४०	८ । ४८ । ३८ । ०३	८ । ४८ । ०३ । १०	८ । ४७ । २८ । २०	८ । ४६ । ५३ । ३६	८ । ४६ । १८ । ५४
४५	९ । ५४ । ४२ । ४८	९ । ५४ । ०३ । ३३	९ । ५३ । २४ । २३	९ । ५२ । ४५ । १८	९ । ५२ । ०६ । १६
५०	११ । ०२ । ४७ । ३४	११ । ०० । ०३ । ५७	१० । ५९ । २० । २६	१० । ५९ । ३७ । ००	१० । ५७ । ५३ । ३८
५५	१२ । ०६ । ५२ । १९	१२ । ०६ । ०४ । २१	१२ । ०५ । १६ । २८	१२ । ०४ । २८ । ४२	१२ । ०३ । ४० । ४९
६०	१३ । १२ । ५७ । ०५	१३ । १२ । ०४ । ४५	१३ । ११ । १२ । ३०	१३ । १० । २० । २५	१३ । ०६ । २८ । २१

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:	घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल		घटी		पल	
	६०		५२		६०		५६		६१		०		६१		४		६१		८	
त घ० प०	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''	°	'	''	'''
१	०	१३	८	३६	०	१३	७	४४	०	१३	६	५३	०	१३	०६	०१	०	१३	०५	१०
२	०	२६	१७	१३	०	२६	१५	२९	०	२६	१३	४६	०	२६	१२	३	०	२६	१०	२०
३	०	३९	२५	४९	०	३९	२३	१४	०	३९	२०	३९	०	३९	१८	०४	०	३९	१५	३०
४	०	५२	३४	२६	०	५२	३०	५९	०	५२	२७	३२	०	५२	२४	०६	०	५२	२०	४०
५	१	०५	४३	०३	१	०५	३८	४४	१	०५	३४	२५	१	०५	३०	०८	१	०५	२५	५०
१०	२	११	२६	०६	२	११	१७	२८	२	११	०८	५१	२	११	००	१६	२	१०	५१	४१
१५	३	१७	०९	०९	३	१६	५६	१२	३	१६	४३	१६	३	१६	३०	२४	३	१६	१७	३२
२०	४	२२	५२	१२	४	२२	३४	५६	४	२२	१७	४२	४	२२	००	३२	४	२१	४३	२२
२५	५	२८	३५	१५	५	२८	१३	४०	५	२७	५२	०७	५	२७	३०	४०	५	२७	०९	१३
३०	६	३४	१८	१८	६	३३	५२	२४	६	३३	२६	३३	६	३३	००	४८	६	३२	३५	०४
३५	७	४०	०१	२१	७	३९	३१	८	७	३९	००	५८	७	३८	३०	५६	७	३७	००	५४
४०	८	४५	४४	२४	८	४५	९	५२	८	४४	३५	२४	८	४४	०१	०४	८	४३	२६	४४
४५	९	५१	२७	२७	९	५०	४८	३६	९	५०	०९	४९	९	४९	३१	१२	९	४७	५२	३५
५०	१०	५७	१०	३०	०	५६	२७	२०	०	५६	४४	१५	१०	६५	०१	२०	१०	५४	१८	६
५५	१२	०२	५३	३३	२	०२	०६	०४	२	०१	१८	४०	१२	००	३१	२८	११	५९	४४	७
६०		०८	३६	६	३	०७	४४	४८	३	०६	५३	०६	१३	०६	०१	३६	१३	०५	१०	८
६१									३	२०	००	००	१३	१९	०७	३७	१३	८	[illegible]	८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट (गति) जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६१		पल १२		घटी ६१		पल १६		घटी ६१		पल २०		घटी ६१		पल २४		घटी ६१		पल २८	
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१३	०४	१८	०	१३	०३	२७	०	१३	०२	३६	०	१३	०१	४५	०	१३	००	५४
२	०	२६	०८	३७	०	२६	०६	५५	०	२६	०५	१३	०	२६	०२	३१	०	२६	०१	४९
३	०	३९	१२	५६	०	३९	१०	२२	०	३९	०७	४९	०	३९	०४	१६	०	३९	०२	४४
४	०	५२	१७	१५	०	५२	१३	५०	०	५२	१०	२६	०	५२	०५	०२	०	५२	०३	३८
५	१	०५	२१	३४	१	०५	१७	१८	१	०५	१३	०२	१	०५	०६	४७	१	०५	०४	३३
१०	२	१०	४३	०८	२	१०	३४	३६	२	१०	२६	०५	२	१०	१३	३५	२	१०	०९	०६
१५	३	१६	०४	४२	३	१५	५१	५४	३	१५	३९	०७	३	१५	२०	२२	३	१५	१३	४०
२०	४	२१	२६	१६	४	२६	०९	१२	४	२०	५२	१०	४	२०	२६	१०	४	२०	१८	१३
२५	५	२६	४७	५०	५	२६	२६	३०	५	२६	०५	१२	५	२५	३३	५७	५	२५	२२	४६
३०	६	३२	०९	२४	६	३१	४३	४८	६	३१	१८	१५	६	३०	४०	४५	६	३०	२७	२०
३५	७	३७	३०	५८	७	३७	०१	०६	७	३६	३१	१८	७	३५	४६	३२	७	३५	३१	५३
४०	८	४२	५२	३२	८	४२	१८	२४	८	४१	४४	२०	८	४०	५२	२०	८	४०	३६	२६
४५	९	४८	१४	०७	९	४७	३५	४२	९	४६	५०	२३	९	४६	००	०७	९	४५	४१	००
५०	१०	५३	३५	४१	१०	५२	५३	००	१०	५२	१०	२५	१०	५१	०७	५५	१०	५०	४५	३३
५५	११	३८	५७	१५	११	५८	१०	१९	११	५७	२३	२८	११	५६	१४	४२	११	५५	५०	०६
६०	१३	०४	१८	४९	१३	०३	२७	३७	१३	०२	३६	३१	१३	०१	२१	३०	१३	००	५४	४०
६१	१३	१७	२३	०७	१३	१६	३१	०४	१३	१५	३९	०७	१३	१४	२३	१५	१३	१३	५५	३४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६१ पल ३२	घटी ६१ पल ३६	घटी ६१ पल ४०	घटी ६१ पल ४४	घटी ६१ पल ४८
भयात घ०	० । ′ । ″ । ‴	० । ′ । ″ । ‴	० । ′ । ″ । ‴	० । ′ । ″ । ‴	० । ′ । ″ । ‴
प०	′ । ″ । ‴ । ⁗	′ । ″ । ‴ । ⁗	′ । ″ । ‴ । ⁗	′ । ″ । ‴ । ⁗	′ । ″ । ‴ । ⁗
१	० । १३ । ०० । ०३	० । १२ । ५९ । १३	० । १२ । ५८ । २३	० । १२ । ५७ । ३३	० । १२ । ५९ । ४२
२	० । २६ । ०० । ०७	० । २५ । ५८ । २६	० । २५ । ५६ । ४६	० । २५ । ५५ । ०६	० । २५ । ५३ । २४
३	० । ३९ । ०० । ११	० । ३८ । ५७ । ३९	० । ३८ । ५५ । ०९	० । ३८ । ५२ । ३९	० । ३८ । ५० । ०६
४	० । ५२ । ०० । १५	० । ५१ । ५६ । ५२	० । ५१ । ५३ । ३२	० । ५१ । ५० । १२	० । ५१ । ४६ । ४८
५	१ । ०५ । ०० । १९	१ । ०४ । ५६ । ०६	१ । ०४ । ५१ । ५५	१ । ०४ । ४७ । ४५	१ । ०४ । ४३ । ३०
१०	२ । १० । ०० । ३९	२ । ०९ । ५२ । १२	२ । ०९ । ४३ । ५०	२ । ०९ । ३५ । ३०	२ । ०९ । २७ । ००
१५	३ । १५ । ०० । ५८	३ । १४ । ४८ । १८	३ । १४ । ३५ । ४५	३ । १४ । २३ । १५	३ । १४ । १० । ३०
२०	४ । २० । ०१ । १८	४ । १९ । ४४ । २४	४ । १९ । २७ । ४०	४ । १९ । ११ । ००	४ । १८ । ५४ । ००
२५	५ । २५ । ०१ । ३७	५ । २४ । ४० । ३०	५ । २४ । १९ । ३५	५ । २३ । ५८ । ४५	५ । २३ । ३७ । ३०
३०	६ । ३० । ०१ । ५७	६ । २९ । ३६ । ३७	६ । २९ । ११ । ३०	६ । २८ । ४६ । ३०	६ । २८ । २१ । ००
३५	७ । ३५ । ०२ । १७	७ । ३४ । ३२ । ४३	७ । ३४ । ०३ । २५	७ । ३३ । ३४ । १५	७ । ३३ । ०४ । ३०
४०	८ । ४० । ०२ । ३६	८ । ३९ । २८ । ४९	८ । ३८ । ५५ । २०	८ । ३८ । २२ । ००	८ । ३७ । ४८ । ००
४५	९ । ४५ । ०२ । ५६	९ । ४४ । २४ । २५	९ । ४३ । ४७ । १५	९ । ४३ । ०९ । ४५	९ । ४२ । ३१ । ३०
५०	१० । ५० । ०३ । १५	१० । ४९ । २१ । ०१	१० । ४८ । ३९ । १०	१० । ४७ । ५७ । ३०	१० । ४७ । १५ । ००
५५	११ । ५५ । ०३ । ३५	११ । ५४ । १७ । ०८	११ । ५३ । ३१ । ०५	११ । ५२ । ४५ । १५	११ । ५१ । ५८ । ३०
६०	१३ । ०० । ०३ । ५५	१२ । ५९ । १३ । १४	१२ । ५८ । २२ । ००	१२ । ५७ । ३३ । ००	१२ । ५६ । ४२ । ००
६१	१३ । १३ । ०३ । ५८	१३ । १२ । १२ । २७	१३ । ११ । २० । २३	१३ । १० । ३० । ३३	१३ । ०९ । ३८ । ४२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६१ पल ५२	घटी ६१ पल ५६	घटी ६२ पल ०	घटी ६२ पल ४	घटी ६२ पल ८
	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
भयात घ०	' '' '' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' '' ''''
१	० । १२ । ५५ । ५२	० । १२ । ५५ । ०१	० । १२ । ५४ । ११	० । १२ । ५३ । २१	० । १२ । ५२ । ३२
२	० । २५ । ५१ । ४४	० । २५ । ५० । ०३	० । २५ । ४८ । २३	० । २५ । ४६ । ४३	० । २५ । ४५ । ०५
३	० । ३८ । ४७ । ३६	० । ३८ । ४५ । ०५	० । ३८ । ४२ । ३४	० । ३८ । ४० । ०५	० । ३८ । ३७ । ३७
४	० । ५१ । ४३ । २८	० । ५१ । ४० । ०६	० । ५१ । ३६ । ४६	० । ५१ । ३३ । २६	० । ५१ । ३० । १०
५	१ । ०४ । ३९ । २०	१ । ०४ । ३५ । ०८	१ । ०४ । ३० । ५८	१ । ०४ । २६ । ४८	१ । ०४ । २२ । ४३
१०	२ । ०९ । १८ । ४०	२ । ०९ । १० । १६	२ । ०९ । ०१ । ५६	२ । ०८ । ५३ । ३७	२ । ०९ । ४५ । २६
१५	३ । १३ । ५८ । ००	३ । १३ । ४५ । २४	३ । १३ । ३२ । ५४	३ । १३ । २० । २५	३ । १३ । ०८ । ०९
२०	४ । १८ । ३७ । २०	४ । १८ , २० । ३२	४ । १८ । ०३ । ५२	४ । १७ । ४७ । १४	४ । १७ । ३० । ५२
२५	५ । २३ । १६ । ४०	५ । २२ । ५५ । ४०	५ । २२ । ३४ । ५०	५ । २२ । १४ । ०२	५ । २१ । ५३ । ३५
३०	६ । २७ । ५६ । ००	६ । २७ । ३० । ४८	६ । २७ । ०५ । ४८	६ । २६ । ४० । ५१	६ । २६ । १६ । १८
३५	७ । ३२ । ३५ । २०	७ । ३२ । ०५ । ५६	७ । ३१ । ३६ । ४६	७ । ३१ । ०७ । ३९	७ । ३० । ३९ । ०१
४०	८ । ३७ । १४ । ४०	८ । ३६ । ४१ । ०४	८ । ३६ । ०७ । ४४	८ । ३५ । ३४ । २८	८ । ३५ । ०१ । ४४
४५	९ । ४१ । ५४ । ००	९ । ४१ । १६ । १२	९ । ४० । ३८ । ४२	९ । ४० । ०१ । १६	९ । ३८ । २४ । २७
५०	१० । ४६ । ३३ । २०	१० । ४५ । ५१ । २०	१० । ४५ । ०९ । ४०	१० । ४४ । २८ । ०५	१० । ४३ । ४७ । १०
५५	११ । ५१ । १२ । ४०	११ । ५० । २६ । २८	११ । ४९ । ४० । ३८	११ । ४८ । ५४ । ५३	११ । ४८ । ०९ । ५३
६०	१२ । ५५ । ५२ । ००	१२ । ५५ । ०१ । ३६	१२ । ५५ । ११ । ३६	१२ । ५३ । २१ । ४२	१२ । ५२ । ३२ । ३६
६१	१३ । ०८ । ४७ । ५२	१३ । ०७ । ५६ । ३७	१३ । ०७ । ०५ । ४७	१३ । ०६ । १५ । ०३	१३ । ०५ । ३५ । ०८
६२			१३ । २० । ०० । ००	१३ । १९ । ०८ । २४	१३ । १८ । १७ । ४०

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी [संख्या ३]

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६२ पल १२	घटी ६२ पल १६	घटी ६२ पल २०	घटी ६२ पल २४	घटी ६२ पल २८
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
प०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	० । १२ । ५१ । ४२	० । १२ । ५० । ५२	० । १२ । ५० । ०३	० । १२ । ४९ । १४	० । १२ । ४८ । २५
२	० । २५ । ४३ । २४	० । २५ । ४१ । ४४	० । २५ । ४० । ०६	० । २५ । ३८ । २८	० । २५ । ३६ । ५०
३	० । ३८ । ३५ । ०६	० । ३८ । ३२ । ३६	० । ३८ । ३० । ९	० । ३८ । २७ । ४२	० । ३८ । २५ । १५
४	० । ५१ । २६ । ४८	० । ५१ । २३ । २८	० । ५१ । २० । १३	० । ५१ । १६ । ५६	० । ५१ । १३ । ४०
५	१ । ०४ । १८ । ३०	१ । ०४ । १४ । २०	१ । ०४ । ११ । १५	१ । ०४ । ०६ । १०	१ । ०४ । ०२ । ०५
१०	२ । ०८ । ३७ । ००	२ । ०८ । २८ । ४०	२ । ०८ । २२ । ३०	२ । ०८ । १२ । २०	२ । ०८ । ०४ । १०
१५	३ । १२ । ५५ । ३०	३ । १२ । ४३ । ००	३ । १२ । ३३ । ४५	३ । १२ । १८ । ३०	३ । १२ । ०६ । १५
२०	४ । १७ । १४ । ००	४ । १६ । ५७ । २०	४ । १६ । ४५ । ००	४ । १६ । २४ । ४०	४ । १६ । ०८ । २०
२५	५ । २१ । ३२ । ३०	५ । २१ । ११ । ४०	५ । २० । ५६ । १५	५ । २० । ३७ । ५०	५ । २० । १० । २५
३०	६ । २३ । ५१ । ००	६ । २५ । २६ । ००	६ । २५ । ०७ । ३०	६ । २४ । ३६ । ००	६ । २४ । १२ । ३०
३५	७ । ३० । ०९ । ३०	७ । २९ । ४० । २०	७ । २९ । १८ । ४५	७ । २८ । ४३ । १०	७ । २८ । १४ । ३५
४०	८ । ३४ । २६ । ००	८ । ३३ । ५४ । ४०	८ । ३३ । ३० । ००	८ । ३२ । ४९ । २०	८ । ३२ । १६ । ४०
४५	९ । ३८ । ४६ । ३०	९ । ३८ । ०९ । ००	९ । ३७ । ४१ । १५	९ । ३६ । ५५ । ३०	९ । ३६ । १८ । ४५
५०	१० । ४३ । ०५ । ००	१० । ४२ । २३ । २०	१० । ४१ । ५२ । ३०	१० । ४१ । ०१ । ४०	१० । ४० । २० । ५०
५५	११ । ४७ । २३ । ३०	११ । ४६ । ३७ । ४०	११ । ४६ । ०३ । ४५	११ । ४५ । ०६ । ५०	११ । ४४ । २२ । २५
६०	१२ । ५१ । ४२ । ००	१२ । ५० । ५७ । ००	१२ । ५० । १५ । ००	१२ । ४९ । १२ । ००	१२ । ४८ । २४ । ००
६२	१३ । १७ । २५ । २४	१३ । १६ । ३३ । ४४	१३ । १५ । ५५ । ०६	१३ । १४ । ५० । २८	१३ । १४ । ०० । ५०

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६२		पल ३२		घटी ६२		पल ३६		घटी ६२		पल ४०		घटी ६२		पल ४४		घटी ६२		पल ४८	
भयात घ०	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''
प०	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''
१	०	१२	४७	३५	०	१२	४६	४६	०	१२	४५	५७	०	१२	४५	०८	०	१२	४४	१९
२	०	२५	३५	१०	०	२५	३३	३२	०	२५	३१	५४	०	२५	३०	१६	०	२५	२८	३८
३	०	३८	२२	४५	०	३८	२०	१८	०	३८	१७	५१	०	३८	१५	२४	०	३८	१२	५७
४	०	५१	१०	२०	०	५१	०७	०४	०	५१	०३	४८	०	५१	००	३२	०	५०	५७	१६
५	१	०३	५७	५५	१	०३	५३	५२	१	०३	४९	४५	१	०३	४५	४०	१	०३	४१	३५
१०	२	०७	५५	५०	२	०७	४७	४४	२	०७	३९	३०	२	०७	३१	२०	२	०७	२३	१०
१५	३	११	५३	४५	३	११	४१	३६	३	११	२९	१५	३	११	१७	००	३	११	०४	४५
२०	४	१५	५१	४०	४	१५	३५	२८	४	१५	१९	००	४	१५	०२	४०	४	१४	४६	२०
२५	५	१९	४९	३५	५	१९	२९	२०	५	१९	०८	४५	५	१८	४८	२०	५	१८	२७	५५
३०	६	२३	४७	३०	६	२३	२३	१३	६	२२	५८	३०	६	२२	३४	००	६	२२	०९	३०
३५	७	२७	४५	२५	७	२७	१७	०४	७	२६	४८	१५	७	२६	१९	४०	७	२५	५१	०५
४०	८	३१	४३	२०	८	३१	१०	५६	८	३०	३८	००	८	३०	०५	२०	८	२९	३२	४०
४५	९	३५	४१	१५	९	३५	०४	४८	९	३४	२७	४५	९	३३	५१	००	९	३३	१४	१५
५०	१०	३९	३९	१०	१०	३८	५८	४०	१०	३८	१७	३०	१०	३७	३६	४०	१०	३६	५५	५०
५५	११	४३	३७	०५	११	४२	५२	३२	११	४२	०७	१५	११	४१	२२	२०	११	४०	३७	२५
६०	१२	४७	३५	००	१२	४६	४६	२४	१२	४५	५७	००	१२	४५	०८	००	१२	४४	१९	००
६२	१३	१३	१०	१०	१३	१२	१९	५६	१३	११	२८	५४	१३	१०	३८	१६	१३	०९	४७	३८

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट (गति) जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटां			पल	घटां			पल	घटां			पल	घटां			पल	घटां			पल
भभोग:—	६२			५२	६२			५६	६३			०	६३			४	६३			८
भयात घ०	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''	०	'	"	'''
प०	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''	'	"	'''	''''
१	०	१२	४३	३०	०	१२	४२	४२	०	१२	४१	५४	०	१२	४१	०५	०	१२	४०	१७
२	०	२५	२७	००	०	२५	२५	२४	०	२५	२३	४८	०	२५	२२	१०	०	२५	२०	३४
३	०	३८	१०	३०	०	३८	०८	०६	०	३८	०५	४२	०	३८	०३	१५	०	३८	००	४१
४	०	५०	५४	००	०	५०	५०	४८	०	५०	४७	३६	०	५०	४४	२०	०	५०	४१	०८
५	१	०३	३७	३०	१	०३	३३	३०	१	०३	२९	३०	१	०३	२५	२५	१	०३	२१	२५
१०	२	०७	१५	००	२	०७	०७	००	२	०६	५९	२	२	०६	५०	५०	२	०६	४२	५०
१५	३	१०	५२	३०	३	१०	४०	३०	३	१०	२८	३२	३	१०	१६	१५	३	१०	०४	१५
२०	४	१४	३०	००	४	१४	१४	००	४	१३	५८	०४	४	१३	४०	४२	४	१३	२५	४०
२५	५	१८	०७	३०	५	१७	४७	३०	५	१७	२७	३४	५	१६	०६	०५	५	१६	४७	०५
३०	६	२१	४५	००	६	२१	२१	००	६	२०	५७	०४	६	२०	३२	३०	६	२०	०८	३०
३५	७	२५	२२	३०	७	२४	५४	३०	७	२४	२६	३६	७	२३	५७	५५	७	२३	२९	५५
४०	८	२९	००	००	८	२८	२८	००	८	२७	५६	०८	८	२७	२२	२०	८	२६	५१	२०
४५	९	३२	३७	३०	९	३२	०१	३०	९	३१	२५	३८	९	३०	४७	४५	९	३०	१२	४५
५०	१०	३६	१५	००	१०	३५	३५	००	१०	३४	५५	०८	१०	३३	१२	१०	१०	३३	३४	१०
५५	११	३९	५२	३०	११	३९	०८	३०	११	३८	२४	३८	११	३७	३८	३५	११	३६	५५	३५
६०	१२	४३	३०	००	१२	४२	४२	००	१२	४१	५४	०९	१२	४१	०४	००	१२	४०	१७	००
६२	१३	०८	५७	००	१३	०८	०७	२४	१३	०७	१७	५८	१३	०७	२६	१०	१३	०५	३७	३४
६३									१३	२०	००	००	१३	१९	०७	१५	१३	१८	१७	४१

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति) जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६३			पल १२	घटी ६३			पल १६	घटी ६३			पल २०	घटी ६३			पल २४	घटी ६३			पल २८
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
घ०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१२	२९	३०	०	१२	३८	४२	०	१२	३७	५४	०	१२	३७	६	०	१२	३६	१८
२	०	२५	१९	००	०	२५	१७	२४	०	२५	१५	४८	०	२५	१४	१२	०	२५	१२	३६
३	०	३७	५८	३०	०	३७	५६	०६	०	३७	५३	४२	०	३७	५१	१८	०	३७	४८	५४
४	०	५०	३८	००	०	५०	३४	४८	०	५०	३१	३६	०	५०	२८	२४	०	५०	२५	१२
५	१	०३	१७	३०	१	०३	१३	३०	१	०३	०९	३०	१	०३	०५	३०	१	०३	०१	३०
१०	२	०६	३५	००	२	०६	२७	००	२	०६	१९	००	२	०६	११	००	२	०६	०३	००
१५	३	०९	५२	३०	३	०९	४०	३०	३	०९	२८	३०	३	०९	१६	३०	३	०९	०४	३०
२१	४	१३	१०	००	४	१२	५४	००	४	१२	३८	००	४	१२	२२	००	४	१२	००	००
२५	५	१६	२७	३०	५	१६	०७	३०	५	१५	४७	३०	५	१५	२७	३०	५	१५	०७	३०
३०	६	१९	४५	००	६	१९	२१	००	६	१८	५७	००	६	१८	३३	००	६	१८	०९	००
३५	७	२३	०२	३०	७	२२	३४	३०	७	२२	०६	३०	७	२१	३८	३०	७	२१	१०	३०
४०	८	२६	२०	००	८	२५	४८	००	८	२५	१६	००	८	२४	४४	००	८	२४	१२	००
४५	९	२९	३७	३०	९	२९	०१	३०	९	२८	२५	३०	९	२७	४९	३०	९	२७	१३	३०
५०	१०	३२	५५	००	१०	३२	१५	००	१०	३१	३५	००	१०	३०	५५	००	१०	३०	१५	००
५५	११	३६	१२	३०	११	३५	२८	३०	११	३४	४४	३०	११	३४	००	३०	११	३३	१६	३०
६०	१२	३९	३०	००	१२	३८	४२	००	१२	३७	५४	००	१२	३७	०६	००	१२	३६	१८	००
६३	१३	१७	२८	३०	१३	१६	३८	०६	१३	१५	४९	४२	१३	१४	५७	१८	१३	१४	०६	५४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६३			पल ३२	घटी ६३			पल ३६	घटी ६३			पल ४०	घटी ६३			पल ४४	घटी ६३			पल ४८
भयात घ०	०	′	″	‴	०	′	″	‴	०	′	″	‴	०	′	″	‴	०	′	″	‴
प०	′	″	‴	⁗	′	″	‴	⁗	′	″	‴	⁗	′	″	‴	⁗	′	″	‴	⁗
१	०	१२	३५	३०	०	१२	३४	४२	०	१२	३३	५५	०	१२	३३	०७	०	१२	३२	२०
२	०	२५	११	००	०	२५	०९	२४	०	२५	०७	५०	०	२५	०६	१४	०	२५	०४	४०
३	०	३७	४६	३०	०	३७	४४	०६	०	३७	४१	४५	०	३७	३९	२१	०	३७	३७	००
४	०	०५	३२	००	०	५०	१८	४८	०	५०	१५	४०	०	५०	१२	२८	०	५०	०९	२०
५	१	०२	५७	३०	१	०२	५३	३०	१	०२	४९	३५	१	०२	४५	३५	१	०२	४१	४०
१०	२	०५	५५	००	२	०५	४७	००	२	०५	३९	१०	२	०५	३१	१०	२	०५	२३	२०
१५	३	०८	५२	३०	३	०८	४०	३०	३	०८	२८	४५	३	०८	१६	४५	३	०८	०५	००
२०	४	११	५०	००	४	११	३४	००	४	११	१८	२०	४	११	०२	२०	४	१०	४६	४०
२५	५	१४	४७	३०	५	१४	२७	३०	५	१४	०७	५५	५	१३	४७	५५	५	१३	२८	२०
३०	६	१७	४५	००	६	१७	२१	००	६	१६	५७	३०	६	१६	३३	३०	६	१६	१०	००
३५	७	२०	४२	३०	७	२०	१४	३०	७	१९	४७	०५	७	१९	१९	०५	७	१८	५१	४०
४०	८	२३	४०	००	८	२३	०८	००	८	२२	३६	४०	८	२२	०४	४०	८	२१	३३	२०
४५	९	२६	३७	३०	९	२६	०१	३०	९	२५	२६	१५	९	२४	५०	१५	९	२४	१५	००
५०	१०	२९	३५	००	१०	२८	५५	००	१०	२८	१५	५०	१०	२७	३५	५०	१०	२६	५६	४०
५५	११	३२	३२	३०	११	३१	४८	३०	११	३१	०५	२५	११	३०	२१	२५	११	२९	३८	२०
६०	१२	३५	३०	००	१२	३४	४२	००	१२	३३	५५	००	१२	३३	०७	००	१२	३२	२०	००
६३	१३	१३	१६	३०	१३	१२	२६	०६	१३	११	३६	४५	१३	१०	४६	२१	१३	०९	५७	००

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६३			पल ५२	घटी ६३			पल ५६	घटी ६४			पल ०	घटी ६४			पल ४	घटी ६४			पल ८
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१२	३१	३३	०	१२	३०	४७	०	१२	३०	००	०	१२	२९	१३	०	१२	२८	२६
२	०	२५	०३	०६	०	२५	०१	३४	०	२५	००	००	०	२४	५८	२६	०	२४	५६	५२
३	०	३७	३४	३९	०	३७	३२	२१	०	३७	३०	००	०	३७	२७	३९	०	३७	२५	१८
४	०	५०	०६	१२	०	५०	०३	०८	०	५०	००	००	०	४९	५६	५२	०	४९	५३	४४
५	१	०२	३७	४५	१	०२	३३	५५	१	०२	३०	००	१	०२	२६	०५	१	०२	२२	१०
१०	२	०५	१५	३०	२	०५	०७	५०	२	०५	००	००	२	०४	५२	१०	२	०४	४४	२०
१५	३	०७	५३	१५	३	०७	४१	४५	३	०७	३०	००	३	०७	१८	१५	३	०७	०६	३०
२०	४	१०	३१	००	४	१०	१५	४०	४	१०	००	००	४	०९	४४	२०	४	०९	२८	४०
२५	५	१३	०८	४५	५	१२	४९	३५	५	१२	००	००	५	१२	१०	२५	५	११	५०	५०
३०	६	१५	४६	३०	६	१५	२३	३०	६	१५	००	००	६	१४	३६	३०	६	१४	१३	००
३५	७	१८	२४	१५	७	१७	५७	२५	७	१७	३०	००	७	१७	०२	३५	७	१६	३५	१०
४०	८	२१	०२	००	८	२०	३१	२०	८	२०	००	००	८	१९	२८	४०	८	१८	५७	२०
४५	९	२३	३९	४५	९	२३	०५	१५	९	२२	००	००	९	२१	५४	४५	९	२१	१९	३०
५०	१०	२६	१७	३०	१०	२५	३९	१०	१०	२४	००	००	१०	२४	२०	५०	१०	२३	४१	४०
५५	११	२८	५५	१५	११	२८	१३	०५	११	२७	००	००	११	२६	४६	५५	११	२६	०३	५०
६०	१२	३१	३३	००	१२	३०	४७	००	१२	३०	००	००	१२	२९	१३	००	१२	२८	२६	००
६३	१३	०९	०७	३९	१३	०८	१९	२१	१३	००	३०	००	१३	०६	४०	३९	१३	०५	५१	१८
६४									१३	२०	००	००	१३	१९	०९	५२	१३	१८	१३	४४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६४			पल १२	घटी ६४			पल १६	घटी ६४			पल २०	घटी ६४			पल २४	घटी ६४			पल २८
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१२	२७	२१	०	१२	२६	५३	०	१२	२६	०७	०	१२	२५	२०	०	१२	२४	३४
२	०	२४	५४	४२	०	२४	५३	४६	०	२४	५२	१४	०	२४	५०	४०	०	२४	४८	०८
३	०	३७	२२	०३	०	३७	२०	४९	०	३७	१८	२१	०	३७	१६	००	०	३७	१२	४२
४	०	४९	४९	२४	०	४९	४७	३२	०	४९	४४	२८	०	४९	४१	२०	०	४९	३६	१६
५	१	०२	१६	४५	१	०२	१४	३५	१	०२	१०	३५	१	०२	०६	४०	१	०२	००	५०
१०	२	०४	३३	३०	२	०४	२९	१०	२	०४	२१	१०	२	०४	१३	२०	२	०४	०१	४०
१५	३	०६	५०	१५	३	०६	४३	४५	३	०६	३१	४५	३	०६	२०	००	३	०६	०२	३०
२०	४	०९	०७	००	४	०८	५८	२०	४	०८	४२	२०	४	०८	२६	४०	४	०८	०३	२०
२५	५	११	२३	४५	५	११	१२	५५	५	१०	५२	५५	५	१०	३३	२०	५	१०	०४	१०
३०	६	१३	४०	३०	६	१३	२७	३०	६	१३	०३	३०	६	१२	४०	००	६	१२	०५	००
३५	७	१५	५७	१५	७	१५	४२	०५	७	१५	१४	०५	७	१४	४६	४०	७	१४	०५	५०
४०	८	१८	१४	००	८	१७	५६	४०	८	१७	२४	४०	८	१६	५३	२०	८	१६	०६	४०
४५	९	२०	३०	४५	९	२०	११	१५	९	१९	३५	१५	९	१९	००	००	९	१८	०७	३०
५०	१०	२२	४७	३०	१०	२२	२५	५०	१०	२१	४५	५०	१०	२१	०६	४०	१०	२०	०८	२०
५५	११	२५	०४	१५	११	२४	४०	२५	११	२३	५६	२५	११	२३	१३	२०	११	२२	०९	१०
६०	१२	२७	२१	००	१२	२६	५५	००	१२	२६	०७	००	१२	२५	२०	००	१२	२४	१०	००
६४	१३	१७	१०	२४	१३	१६	४२	३२	१३	१५	५१	२८	१३	१५	०१	२०	१३	१३	४६	१६

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति) जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६४			पल ३२	घटी ६४			पल ३६	घटी ६४			पल ४०	घटी ६४			पल ४४
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
घ०	'	''	'''	''''	'	''	'''	'''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१२	२३	४८	०	१२	२३	०२	०	१२	२२	१५	०	१२	२१	२९
२	०	२४	४७	३६	०	२४	४६	०४	०	२४	४४	३०	०	२४	४२	५८
३	०	३७	११	२४	०	३७	०९	०६	०	३७	०६	४५	०	३७	०४	२७
४	०	४९	३५	१२	०	४९	३२	०८	०	४९	२९	००	०	४९	२५	५६
५	१	०१	५९	००	१	०१	५५	१०	१	०१	५१	१५	१	०१	४७	२५
१०	२	०३	५८	००	२	०३	५०	२०	२	०३	४२	३०	२	०३	३४	५०
१५	३	०५	५७	००	३	०५	४५	३०	३	०५	३३	४५	३	०५	२२	१५
२०	४	०७	५६	००	४	०७	४०	४०	४	०७	२५	००	४	०७	०९	४०
२५	५	०९	५५	००	५	०९	३५	५०	५	०९	१६	१५	५	०८	५७	०५
३०	६	११	५४	००	६	११	३१	००	६	११	०७	३०	६	१०	४४	३०
३५	७	१३	५३	००	७	१३	२६	१०	७	१२	५८	४५	७	१२	३१	५५
४०	८	१५	५२	००	८	१५	२१	२०	८	१४	५०	००	८	१४	१९	२०
४५	९	१७	५१	००	९	१७	१६	३०	९	१६	४१	१५	९	१६	१६	४५
५०	१०	१९	५०	००	१०	१९	११	४०	१०	१८	३२	३०	१०	१७	५४	१०
५५	११	२१	४९	००	११	२१	०६	५०	११	२०	२३	४५	११	१९	४१	३५
६०	१२	२३	४८	००	१२	२३	०२	००	१२	२२	१५	००	१२	२१	२९	००
६४	१३	१३	२३	१२	१३	१२	३४	०८	१३	११	४४	००	१३	१०	५४	५६

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी [संख्या ३]

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६४		पल ४८		घटी ६४		पल ५२		घटी ६४		पल ५६		घटी ६५		पल ०		घटी ६५		पल ४	
भयात घ० | प०	° / '	' / ''	'' / '''	''' / ''''	° / '	' / ''	'' / '''	''' / ''''	° / '	' / ''	'' / '''	''' / ''''	° / '	' / ''	'' / '''	''' / ''''	° / '	' / ''	'' / '''	''' / ''''
१	०	१२	२०	४४	०	१२	१९	५९	०	१२	१९	१३	०	१२	१८	२८	०	१२	१७	४३
२	०	२४	४१	२८	०	२४	३९	५८	०	२४	३८	२६	०	२४	३६	५६	०	२४	३५	२६
३	०	३७	०२	१२	०	३६	५९	५७	०	३६	५७	३९	०	३६	५५	२४	०	३६	५३	०९
४	०	४९	२२	५६	०	४९	१९	५६	०	४९	१६	५२	०	४९	१३	५२	०	४९	१०	५२
५	१	०१	४३	४०	१	०१	३९	५५	१	०१	३६	०५	१	०१	३२	२०	१	०१	२८	३५
१०	२	०३	२७	२०	२	०३	१९	५०	२	०३	१२	१०	[illegible]	०३	०४	४०	२	०२	५७	१०
१५	३	०५	११	००	३	०४	५९	४५	३	०४	४८	१५	३	०४	३७	००	३	०४	२५	४५
२०	४	०६	५४	४०	४	०६	३९	४०	४	०६	२४	२०	४	०६	०९	२०	४	०५	५४	२०
२५	५	०८	३८	२०	५	०८	१९	३५	५	०८	००	२५	५	०७	४१	४०	५	०७	२२	५५
३०	६	१०	२२	००	६	०९	५९	३०	६	०९	३६	३०	६	०९	१४	००	६	०८	५१	३०
३५	७	१२	०५	४०	७	११	३९	२५	७	११	१२	३५	७	१०	४६	२०	७	१०	२०	०५
४०	८	१३	४९	२०	८	१३	१९	२०	८	१२	४८	४०	८	१२	१८	४०	८	११	४८	४०
४५	९	१५	३३	००	९	१४	५९	१५	९	१४	२४	४५	९	१३	५१	००	९	१३	१७	१५
५०	१०	१७	१६	४०	१०	१६	३९	१०	१०	१६	००	५०	१०	१५	२३	२०	१०	१४	४५	५०
५५	११	१९	००	२०	११	१८	१९	०५	११	१७	३६	५५	११	१६	५५	४०	११	१६	१४	२५
६०	१२	२०	४४	००	१२	१९	५९	००	१२	१९	१३	००	१२	१८	२८	००	१२	१७	४३	००
६४	१३	१०	०६	५६	१३	०९	१८	५६	१३	०८	२९	५२	१३	०७	४१	५२	१३	०६	५	५२

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र भभोग:—	घटी ६५			पल ८	घटा ६५			पल १२	घटी ६५			पल १६	घटी ६५			पल २०
भयात घ०	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''	०	'	''	'''
प०	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''	'	''	'''	''''
१	०	१२	१६	५७	०	१२	१६	१२	०	१२	१५	२६	०	१२	१४	४१
२	०	२४	३३	५४	०	२४	३२	२४	०	२४	३०	५३	०	२४	२९	२३
३	०	३६	५०	५१	०	३६	४८	३५	०	३६	४६	१९	०	३६	४४	०४
४	०	४९	०७	४८	०	४९	०४	४७	०	४९	०१	४६	०	४८	५८	४६
५	१	०१	२४	४५	१	०१	२०	५९	१	०१	१७	१३	१	०१	१३	२८
१०	२	०२	४९	३०	२	०२	४१	५८	२	०२	३४	२६	२	०२	२६	५६
१५	३	०४	१४	१५	३	०४	०२	५७	३	०३	५१	३९	३	०३	४०	२४
२०	४	०५	३९	००	४	०५	२३	५६	४	०५	०८	५२	४	०४	५३	५२
२५	५	०७	०३	४५	५	०६	४४	५५	५	०६	२६	०५	५	०६	०७	२०
३०	६	०८	२८	३०	६	०८	०५	५४	६	०७	४३	१८	६	०७	२०	४८
३५	७	०९	५३	१५	७	०९	२६	५३	७	०९	००	३१	७	०८	३४	१६
४०	८	११	१८	००	८	१०	४७	५२	८	१०	१७	४४	८	०९	४७	४४
४५	९	१२	४२	४५	९	१२	०८	५१	९	११	३४	५७	९	११	०१	१२
५०	१०	१४	०७	३०	१०	१३	२९	५०	१०	१२	५२	१०	१०	१२	१४	४०
५५	११	१५	३२	१५	११	१४	५०	४९	११	१४	०९	२३	११	१३	२८	०८
६०	१२	१६	५७	००	१२	१६	११	४८	१२	१५	२६	३६	१२	१४	४१	३६
६५	१३	१८	२१	४५	१३	१७	३२	४७	१३	१६	४३	४९	१३	१५	५५	०४

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट (गति) जानने का सारणी (संख्या २)

नक्षत्र भभोगः—	घटी ६५ पल २४	घटी ६५ पल २८	घटी ६५ पल ३२	घटी ६५ पल ३६	घटी ६५ पल ४०
भयात घ०	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''	० ' '' '''
घ०	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''	' '' ''' ''''
१	० । १२ । १३ । ५६	० । १२ । १३ । ११	० । १२ । १२ । २७	० । १२ । ११ । ४२	० । १२ । १० । ५७
२	० । २४ । २७ । ५३	० । २४ । २६ । २३	० । २४ । २४ । ५४	० । २४ । २३ । २४	० । २४ । २१ । ५४
३	० । ३६ । ४१ । ४९	० । ३६ । ३९ । ३४	० । ३६ । ३७ । २१	० । ३६ । ३५ । ०६	० । ३६ । ३२ । ५१
४	० । ४८ । ५५ । ४६	० । ४८ । ५२ । ४६	० । ४८ । ४९ । ४८	० । ४८ । ४६ । ४८	० । ४८ । ४३ । ४८
५	१ । ०१ । ०९ । ४३	१ । ०१ । ०५ । ५८	१ । ०१ । ०२ । १५	१ । ०० । ५८ । ३०	१ । ०० । ५४ । ४५
१०	२ । ०२ । १९ । २६	२ । ०२ । ११ । ५६	२ । ०२ । ०४ । ३०	२ । ०१ । ५७ । ००	२ । ०१ । ४९ । ३०
१५	३ । ०३ । २९ । ०९	३ । ०३ । १७ । ५४	३ । ०३ । ०६ । ४५	३ । ०२ । ५५ । ३०	३ । ०२ । ४४ । १५
२०	४ । ०४ । ३८ । ५२	४ । ०४ । २३ । ५२	४ । ०४ । ०९ । ००	४ । ०३ । ५४ । ००	४ । ०३ । ३९ । ००
२५	५ । ०५ । ४८ । ३५	५ । ०५ । २९ । ५०	५ । ०५ । ११ । १६	५ । ०४ । ५२ । ३०	५ । ०४ । ३३ । ४५
३०	६ । ०६ । ५८ । १८	६ । ०६ । ३५ । ४८	६ । ०६ । १३ । ३१	६ । ०५ । ५१ । ००	६ । ०५ । २८ । ३०
३५	७ । ०८ । ०८ । ०१	७ । ०७ । ४१ । ४६	७ । ०७ । १५ । ४६	७ । ०६ । ४९ । ३०	७ । ०६ । २३ । १५
४०	८ । ०९ । १७ । ४४	८ । ०८ । ४७ । ४४	८ । ०८ । १८ । ०१	८ । ०७ । ४८ । ००	८ । ०७ । १८ । ००
४५	९ । १० । २७ । २७	९ । ०९ । ५३ । ४२	९ । ०९ । २० । १६	९ । ०८ । ४६ । ३०	९ । ०८ । १२ । ४५
५०	१० । ११ । ३७ । १०	१० । १० । ५९ । ४०	१० । १० । २२ । ३१	१० । ०९ । ४५ । ००	१० । ०९ । ०७ । ३०
५५	११ । १२ । ४६ । ५३	११ । १२ । ०५ । ३८	११ । ११ । २४ । ४६	११ । १० । ४३ । ३०	११ । १० । ०२ । १५
६०	१२ । १३ । ५६ । ३६	१२ । १३ । ११ । ३६	१२ । १२ । २७ । ०२	१२ । ११ । ४२ । ००	१२ । १० । ५७ । ००
६५	१३ । १५ । ०६ । १९	१३ । १४ । १७ । ३४	१३ । १३ । २९ । १७	१३ । १२ । ४० । ३०	१३ । ११ । ५१ । ४५

किसी भी नक्षत्र के भभोग भयात से चन्द्रमा के अंशादिक स्पष्ट [गति] जानने की सारणी (संख्या ३)

नक्षत्र	घटी			पल	घटी			पल	घटी			पल	घटी			पल
भभोगः—	६५			४४	६५			४८	६५			५२	६५			५६
भयात घ०	०	′	″	‴	०	′	″	‴	०	′	″	‴	०	′	″	‴
	′	″	″	′′′′	′	″	‴	′′′′	′	″	‴	′′′′	′	″	‴	′′′′
१	०	१२	१०	१३	०	१२	०९	२९	०	१२	०८	४४	०	१२	८	००
२	०	२४	२०	२६	०	२४	१८	५८	०	२४	१७	२८	०	२४	१६	००
३	०	३६	३०	३९	०	३६	२८	२७	०	३६	२६	१२	०	३६	२४	०१
४	०	४८	४०	५२	०	४८	३७	५६	०	४८	३४	५६	०	४८	३२	०१
५	१	००	५१	०५	१	००	४७	२५	१	००	४३	४१	१	००	४०	०२
१०	२	०१	४२	१०	२	०१	३४	५०	२	०१	२७	२२	२	०१	२०	०४
१५	३	०२	३३	१५	३	०२	२२	१५	३	०२	०८	०३	३	०२	००	०६
२०	४	०३	२४	२०	४	०३	०९	४०	४	०२	५४	४४	४	०२	४०	०८
२५	५	०४	१५	२५	५	०३	५७	०५	५	०३	३५	२५	५	०३	२०	१०
३०	६	०५	६७	३०	६	०४	४४	३०	६	०४	१६	०६	६	०४	००	१२
३५	७	०५	५७	३५	७	०५	३१	५५	७	०५	०२	४७	७	०४	४०	१४
४०	८	०६	४८	४०	८	०६	१९	२०	८	०५	४९	२८	८	०५	२०	१६
४५	९	०७	३९	४५	९	०७	०६	४५	९	०६	३०	०९	९	०६	००	१८
५०	१०	०८	३०	५०	१०	०७	५४	१०	१०	०७	१०	५०	१०	०६	०४	२०
५५	११	०९	२१	५५	११	०८	४१	३५	११	०७	५१	३१	११	०७	२०	२२
६०	१२	१०	१३	००	१२	०९	२९	००	१२	०८	३२	१२	१२	०८	००	२४
६५	१३	११	०४	०५	१३	१०	१६	२५	१३	०९	१५	५३	१३	०८	४०	२६

दशाफल प्रकरण

विंशोत्तरी प्रकरण में ग्रहोंका भावस्थ व नैसर्गिक गुणानुसार फल

इस लघु पाराशरी ग्रन्थ में ग्रहों की महादशा, अन्तर्दशा का फल उनके भावस्थ होने तथा उनकी विशेष संज्ञानुसार आंका गया है। ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ के आरम्भ में ही स्पष्ट कह दिया है कि 'संज्ञां ब्रूमो विशेषतः'। इसका अर्थ यह है कि उन्होंने जातक प्रकरण को दशा में महत्ता नहीं दी है। कई जगह तो जातक ग्रन्थों में वर्णित ग्रहों की महादशा का फल इससे विपरीत ही है। उदाहरणार्थ—द्वितीयेश बृहस्पति यदि द्वितीयस्थ वा सप्तमेश (केन्द्रेश) बृहस्पति सप्तमस्थ हो तो वह प्रबल मारकेश हो जाता है। द्वितीय में यदि धनुराशि हो तो मीन राशि चतुर्थस्थ (केन्द्रस्थ) होगी।

इस ग्रन्थ के अनुसार 'तयोर्मारक संस्थितिः' 'केन्द्राधिपत्य दोषस्तु बलवान् गुरुशुक्रयोः', बृहस्पति बजाय शुभ होने के प्रबल मारकेश हो गया। जातक प्रकरण के अनुसार ऐसी स्थिति में बृहस्पति स्वगृही है तथा केन्द्रपति भी है। शुभ है। इसी प्रकार सप्तमेश सप्तमस्थ वृहस्पति केन्द्रस्थ है तथा केन्द्रेश भी है। 'किं कुर्वन्ति ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः'। 'भाग्यव्ययाधिपत्येन रंध्रेशो न शुभप्रदः। स एव शुभसंधाता लग्नाधीशोपि चेत् स्वयम्' अर्थात् अष्टमेश यदि लग्नेश या अष्टम स्थान में हो तो वह किसी हालत में शुभ नहीं होता। वहां या कहीं भी ग्रहों के उच्चस्थ नीचस्थ या मूल त्रिकोणादि का विचार नहीं किया गया हैं। केन्द्रेश त्रिकोणेश का योग शुभ माना गया हैं। भले ही दोनों सामान्य शास्त्र के अनुसार शत्रुगृही वा नीचस्थ हों। हाँ जहाँ दृष्टि का सम्बन्ध माना गया है वहाँ एक ग्रह का स्वगृही होना आवश्यक है। कहने का तात्पर्य यह है कि लघु पाराशरी के फलादेश का आधार भावाधिपति से है। इसके अतिरिक्त अन्य सभी जातक ग्रन्थों में विंशोत्तरी दशाध्याय में ग्रहों के भावस्थ राशिस्थ व उनके नैसर्गिक स्वभाव वश से फलादेश कहा गया है जो सामान्यतः सभी ग्रन्थों में एक सा है। उच्चस्थ ग्रहों का सर्वश्रेष्ठ, स्वगृही, ग्रहों का श्रेष्ठ, मूल त्रिकोणस्थ ग्रहों का शुभ फल, अनेक शुभ वाक्यों व श्लोकों में वर्णित है तथा नीचस्थ शत्रुगृही ग्रहों का अनिष्टप्रद फल कहा गया है। जिस समय ये ग्रन्थ लिखे गये उन दिनों साम्राज्यवाद, राजाओं का राज था। अस्तु उच्चस्थ तथा राजयोगप्रद ग्रहों के प्रसंग में सवारी प्रसंग में हाथी, घोड़ा

ऊँट की चर्चा है, अब उसे मोटर समझना चाहिए। समस्त फलादेशों का संग्रह वाग्जाल से भरा हुआ है। यानि जहाँ शुभ फल हैं वहाँ सभी प्रकार के सम्भावित सुख सामग्री व प्रभुत्व का विभिन्न वाक्यों से वर्णन है। अस्तु यदि इन ग्रन्थों का यहाँ महादशा, दशा, अन्तर, प्रत्यन्तर, सूक्ष्म और प्राण दशाओं का फलादेश संकलितकर दिया जाये तो ग्रन्थ का आकार काफी बड़ा हो जायेगा और पाठकों को अधिक मूल्य देना पड़ेगा। इसके लिए पाठकों को अन्य ग्रन्थ देखना चाहिए। पर हमने अपने इस ग्रन्थ में जातक प्रकरण के शुभाशुभ ग्रहों की एक अलग से सारणी दे दी है। जिसमें प्रत्येक लग्न कुण्डली के प्रत्येक ग्रह का शुभत्व व पापत्व आँकड़ों में अंकित है। इन आँकड़ों का आधार ग्रहों के उच्च स्वगृही नीच शत्रु गृही, मित्र गृही स्थिति पर आंका गया है। लघु पाराशरी मत के इतर, इस सारणी का भी उपयोग किया जा सकता है जो सामान्य शास्त्र से मेल खाएगा। विंशोतरी दशा में प्रधान लघु पाराशरी सूत्र है तथा गौण रूप से हमारी यह सारणी फल आंकने में सहायक होगी। हमारे मित्र ज्योतिर्विद गणितकेसरी श्री जगजीवन दास गुप्त ने प्रायः सभी ख्यात ज्योतिष पुस्तकों में वर्णित दशा प्रसंग में फलादेश का संग्रह अपनी पुस्तक दशा फल विचार में किया है, प्रकाशक हैं श्री मोतीलाल बनारसीदास मूल्य १०)। यह पुस्तक संग्रहणीय तथा अपने विषय की अद्वितीय है। राहु के विषय में लघु पाराशरी में उनका कोई स्थान (गृह) निश्चित नहीं किया गया है। वे जिस स्थान में बैठते हैं उस स्थान या उस स्थान में बैठे अन्य ग्रहों के अनुरूप फल देते हैं। पर जातक ग्रन्थों में राहु केतु का स्थान नियत किया गया है पर इसमें मतमतान्तर है। हम नीचे विविध ग्रन्थों के मतों की सारणी दे रहे हैं।

फल दीपिका में वर्णित महायोग

ग्रहों का अन्योन्याश्रित योग

(१) लग्नेश द्वितीय में, द्वितीयेश लग्न में।

(२) लग्नेश चतुर्थ में, चतुर्थेश लग्न में।

(३) लग्नेश पंचम में, पंचमेश लग्न में।

(४) लग्नेश सप्तम में, सप्तमेश लग्न में।

(५) लग्नेश नवम में, नवमेश लग्न में।

(६) लग्नेश एकादश में, एकादशेश लग्न में।

(७) द्वितीयेश चतुर्थ में, चतुर्थेश द्वितीय में ।
(८) द्वितीयेश पंचम में, पंचमेश द्वितीय में ।
(९) द्वितीयेश सप्तम में, सप्तमेश द्वितीय में ।
(१०) द्वितीयेश नवम में, नवमेश द्वितीय में ।
(११) द्वितीयेश दशम में, दशमेश द्वितीय में ।
(१२) द्वितीयेश एकादश में, एकादशेश द्वितीय में ।
(१३) चतुर्थेश पंचम में, पंचमेश चतुर्थ में ।
(१४) चतुर्थेश सप्तम में, सप्तमेश चतुर्थ में ।
(१५) चतुर्थेश नवम में, नवमेश चतुर्थ में ।
(१६) चतुर्थेश दशम में, दशमेश चतुर्थ में ।
(१७) चतुर्थेश एकादश में, एकादशेश चतुर्थ में ।
(१८) पंचमेश सप्तम में, सप्तमेश पंचम में ।
(१९) पंचमेश नवम में नवमेश पचम में।
(२०) पंचमेश दशम में, दशमेश पंचम में ।
(२१) पंचमेश एकादश में, एकादशेश पंचम में ।
(२२) सप्तमेश नवम में, नवमेश सप्तम में ।
(२३) सप्तमेश दशम में, दशमेश सप्तम में ।
(२४) सप्तमेश एकादश में, एकादशेश सप्तम में ।
(२५) नवमेश दशम में, दशमेश नवम में ।
(२६) नवमेश एकादश में, एकादशेश नवम में ।
(२७) दशमेश एकादश में, एकादशेश दशम में ।

कुण्डली में उपरोक्त अन्योन्याश्रित योगों में सबसे प्रबल (२५) नवमेश दशमेश का योग है । लघु पाराशरी के मत से एकादश के योग राजयोग नहीं हैं । इसी प्रकार द्वितीयेश को उपरोक्त योगों में ग्रहों की बराबर दशा अन्तर में शुभ फल की प्राप्ति होती है ।

अनिष्टकारी अन्योन्याश्रित योग

(१) द्वादशेश लग्न में, लग्नेश द्वादश में
(२) व्ययेश द्वितीय में, द्वितीयेश व्यय में
(३) व्ययेश तृतीय में, तृतीयेश व्यय में
(४) व्ययेश (द्वादशेश) चतुर्थ में, चतुर्थेश व्यय में

(५) व्ययेश पंचम में, पंचमेश व्यय में
(६) व्ययेश षष्ठ में, षष्ठेश व्यय में
(७) व्ययेश सप्तम में, सप्तमेश व्यय में
(८) व्ययेश अष्टम में. अष्टमेश व्यय में
(९) व्ययेश नवम में, नवमेश व्यय में
(१०) व्ययेश दशम में, दशमेश व्यय में
(११) व्ययेश एकादश में, एकादशेश व्यय में
(१२) अष्टमेश लग्न में, लग्नेश अष्टम में
(१३) अष्टमेश द्वितीय में, द्वितीयेश अष्टम में
(१४) अष्टमेश तृतीय में तृतीयेश अष्टम में
(१५) अष्टमेश चतुर्थ में, चतुर्थेश अष्टम में
(१६) अष्टमेश पंचम में, पंचमेश अष्टम में
(१७) अष्टमेश षष्ठ में, षष्ठेश अष्टम में
(१८) अष्टमेश सप्तम में, सप्तमेश अष्टम में
(१९) अष्टमेश नवम में, नवमेश अष्टम में
(२०) अष्टमेश दशम में, दशमेश अष्टम में
(२१) अष्टमेश एकादश में, एकादशेश अष्टम में
(२२) षष्ठेश लग्न में, लग्नेश षष्ठ में
(२३) षष्ठेश द्वितीय में, द्वितीयेश षष्ठ में
(२४) षष्ठेश तृतीय में, और तृतीयेश षष्ठ में
(२५) षष्ठेश चतुर्थ में और चतुर्थेश षष्ठ में
(२६) षष्ठेश पंचम में, पंचमेश षष्ठ में
(२७) षष्ठेश सप्तम में, सप्तमेश षष्ठ में
(२८) षष्ठेश नवम में, नवमेश षष्ठ में
(२९) षष्ठेश दशम में, दशमेश षष्ठ में
(३०) षष्ठेश एकादश में, एकादशेश षष्ठ में

इनकी परस्पर दशा अन्तर में अनिष्ट फल होता है।

अष्टमेश जिस भाव में बैठता है उस भाव सम्बन्धी विषय को नष्ट करता है। उसका जिस भावाधिपति से अन्योन्याश्रित होता है उसकी परस्पर दशा अन्तर में जिससे अष्टमेश सम्बन्ध करता है उस भाव का नाश करता है।

इससे न्यून षष्ठेश का योग है। इससे न्यून द्वादशेश का योग है। उदाहरणार्थ– यदि सप्तमेश अष्टम में और अष्टमेश सप्तम में हो तो इनकी परस्पर दशा अन्तर में पति की मृत्यु या घोर अनिष्ट होता ही है।

निम्नलिखित आठ योग खल योग हैं—

(१) लग्नेश तृतीय में, तृतीयेश लग्न में
(२) द्वितीयेश तृतीय में, तृतीयेश द्वितीय में
(३) तृतीयेश चतुर्थ में, चतुर्थेश तृतीय में
(४) तृतीयेश पंचम में, पंचमेश तृतीय में
(५) तृतीयेश सप्तम में, सप्तमेश तृतीय में
(६) तृतीयेश भाग्य में, भाग्येश तृतीय में
(७) तृतीयेश दशम में, दशमेश तृतीय में
(८) तृतीयेश लग्न में, लग्नेश तृतीय में

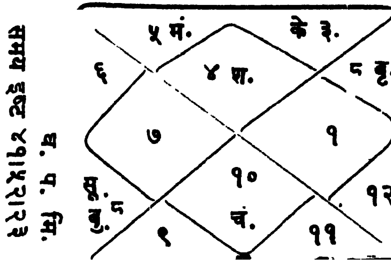
इस योग से जातक को कभी अच्छा कभी बुरा मिश्रित फल होता है, पर औसतन बुरा ही फल होता है। ये योग परस्पर स्थान परिवर्तन योग हैं। परस्पर दशा अन्तर में फल होता है।

पर इसी के आगे फलदीपिका के रचयिता ज्योतिर्विद श्री यज्ञेश्वर का कहना है कि छठे घर का स्वामी यदि दुःस्थान में पड़े तो हर्ष योग, अष्टमेश यदि दुःस्थान में पड़े तो विकल योग होता है जो शुभ है पर ऊपर इनका योग अनिष्टकर माना है। इसमें हेतु अन्योन्याश्रित योग का है, एकाकी ग्रह स्थिति का नहीं।

पर उत्तर कालामृत ग्रन्थ में छठे, आठवें, बारहवें गृह के स्वामियों के परस्पर स्थान परिवर्तन योग को उत्तम गोग कहा है जो सर्वथा फलदीपिका के योग से उल्टा है।

लघु पाराशरी मत से छठें, आठवें, तृतीय, एकादश इन भावों के स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध अच्छा नहीं माना है बशर्ते वे दोनों केन्द्र-त्रिकोणपति न हों। फिर भी अष्टमेश के योग से तो सभी योग निर्बल या भंग हो जाते हैं।

भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की कुण्डली (निरयन) १९ नवम्बर १९१७ ई० प्रयाग



लग्न—३ । २७ । १३
सूर्य—७ । ४ । ८
चंद्र—९ । ५ । ३७
मंगल—४ । १६ । ३३
बुध—७ । १३ । १५
बृह—१ । १५ । (वक्री)
शुक्र—८ । २१ । ०
शनि—३ । २१ । ४७
राहु—८ । १० । ३३

इस कुण्डली में लग्नेश सप्तमेश तथा द्वितीयेश पंचमेश का अन्योन्याश्रित शुभ योग है (महायोग)

साथ ही षष्ठ एकादशेश का भी स्थान परिवर्तन योग (अशुभ है)

चन्द्र स्पष्टानुसार विंशोत्तरी

	व	मा	दि
सूर्य की भोग्यदशा	१	११	२०

ता. मा. सन्

९. ११. १९१९ तक सूर्य दशा
९. ११. १९२९— चन्द्र दशा
९. ११. १९३६— मंगल दशा
९. ११. ९९५४— राहु दशा
९. ११. १९७०— बृहस्पति
९. ११. १९८९— शनि
९. ११. २००६— बुध

वर्तमान में

सप्तमेश (शनि) में लग्नेश (चन्द्र) की अन्तर।

ता. १२. १०. १९८१ से
 १२. ५. १९८३ तक हैं
२१. ६. ८४ तक शनि में मंगल
२७. ४. ८७ तक शनि में राहु
९. ११. ८९ तक शनि में बृहस्पति

श्री ज्योतिष रत्नाकर का मत

अरिष्टप्रद दशा व अन्तर

(१) कर्क, वृश्चिक, मीन के अन्तिम भाग को ऋक्ष सन्धि कहते हैं। यदि कोई ग्रह ऋक्ष सन्धि में पड़ता हो तो जातक उस दशा में रोगी अवश्य होता है। अन्तिम अंश में मृत्यु भी सम्भव है।

(२) यदि जन्म मघा, मूल अथवा अश्विनी का हो अर्थात् केतु की महादशा हो तो उस जातक के लिए मंगल की दशा अनिष्टप्रद या मृत्युकारी होती है।

(३) यदि जन्म पू० फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ अथवा भरणी का हो अर्थात् शुक्र की जन्म कालिक महादशा हो तो उस जातक की बृहस्पति की महादशा अनिष्टकारी या मृत्युप्रद हो सकती है।

(४) यदि जन्म मृगशिरा, चित्रा या धनिष्ठा का हो अर्थात् जन्मारम्भ दशा मंगल की हो तो उस जातक की शनि की महादशा अनिष्टप्रद अथवा मृत्युप्रद हो सकती है।

(५) यदि जन्म नक्षत्र आश्लेषा, ज्येष्ठा वा रेवती का हो अर्थात् जन्मारम्भ की दशा बुध की हो तो राहु की दशा अरिष्टप्रद या मृत्युकारी हो सकती है।

(६) जन्मकालिक महादशा से तृतीय, पंचम या सप्तम दशा (यदि ग्रह नीचस्थ या शत्रु क्षेत्री आदि का है) अरिष्टप्रद या मृत्युकारक भी हो सकती है।

(७) द्वादशेश की महादशा में द्वितीयेश का अन्तर अथवा द्वितीयेश की दशा में द्वादशेश का अन्तर।

(८) अष्टमेश की दशा में षष्ठेश या षष्ठेश में अष्टमेश का अन्तर।

(९) यदि अष्टमेश षष्ठ, अष्ठम या द्वादशस्थ हो तो (क) अष्टमेश की दशा तथा उसी के अन्तर में (ख) शनि जिस राशि में हो उस राशि के स्वामी की महादशा में जब अष्टमेश का अन्तर हो, (ग) अष्टमेश की महादशा में जब उस दशेश के बाद वाले ग्रह की अन्तर दशा हो।

(१०) यदि लग्नेश षष्ठ, अष्टम या द्वादशस्थ हो और उसके साथ राहु हो या केतु हो (क) लग्नेश के साथ वाले ग्रह की महादशा, (ख) अष्टमेश के साथ वाले ग्रह की महादशा, (ग) यदि लग्नेश और अष्टमेश के साथ कोई ग्रह न हो तो लग्नेश की महादशा में, (घ) अष्टमेश की महादशा में राहु का अन्तर, (ङ) अष्टमेश या लग्नेश के साथ यदि कोई ग्रह न हो तो लग्नेश वा अष्टमेश में।

(११) अष्टमेश अष्टम में हो तो अष्टमेश की दशा में बीमारी। यदि लग्नेश लग्न में बैठा हो तो लग्नेश की दशा अन्तर में बीमारी।

(१२) (क) यदि जन्म लग्न शीर्षोदय राशि (३, ५, ६, ७, ८, ११) हो और यदि लग्न चर राशि का हो अर्थात् १, ४, ७, १० राशि हो तो

द्वितीयेश की दशा अन्तरदशा में यदि लग्न स्थिर राशि अर्थात् २, ५, ८, ११ राशि का हो तो लग्नेश की दशा व उसी के अन्तर में, यदि लग्न द्वि स्वभाव राशि ३,६,९, १० का हो तो राहु की दशा अन्तर में।

(ख) जन्म लग्न पृष्ठोदय राशि (१, २, ४, ९, १०) हो तो और लग्न यदि चर राशि (१, ४, ९, १०) का हो तो लग्न के द्रेष्काण की दशा अन्तर में, यदि लग्न स्थिर राशि का हो (८, ५, ७, ११) तो लग्न द्रेष्काणेश की दृष्टि जिस ग्रह पर पड़ती हो तो उस ग्रह की दशा अन्तर में।

(ग) यदि लग्न द्विस्वभाव राशि (३, ६, ९, १२) का हो तो लग्न द्रेष्काण के साथ जो ग्रह हो उसकी दशा अन्तर में : अरिष्ट होता है, अधिक पापी हो तो मृत्यु सम्भव है।

दशा का अशुभ फल (साधारण फल)
जातक ग्रहोक्त फल का सार

(१) मांदि जिस स्थान में हो उसके स्वामी की दशा।
(२) जो ग्रह मांदि के साथ बैठा हो उस ग्रह की दशा।
(३) जो ग्रह शत्रु क्षेत्री, नीचस्थ या अस्त या वक्री हो।
(४) जो भाव सन्धि में हो।
(५) जो ग्रह ऋक्ष (राशि) संधि में हो,तीसवें अंश पर हो तो मृत्यु संभव
(६) परस्पर शत्रु ग्रहों की परस्पर दशा अन्तर में।
(७) यदि नीचस्थ ग्रह राहु के साथ हो।
(८) केन्द्र स्थित ग्रह की दशा अन्तर में, परदेश यात्रा सम्भव।
(९) यदि लग्न चर राशि में हो तो लग्न से एकादश स्थान का स्वामी (बाधा स्थान) यदि लग्न स्थिर राशि का हो तो लग्न से नवम (बाधा स्थान) का स्वामी। यदि लग्न द्विस्वभाव राशि का हो तो लग्न से सप्तम (बाधक स्थान) का स्वामी।

इनकी महादशा में रोग, शोक, दुःख आदि अनिष्ट फल होता है। उपरोक्त बाधा से केन्द्रगत ग्रह की दशा में विदेशाटन होता है।

शुभ फलदायक दशा (साधारण फल)

(१) जो ग्रह उच्चस्थ, उच्चाभिलाषी, स्वगृही, मूल त्रिकोणस्थ, वर्गोत्तम, मित्र गृही हो, उसकी दशा शुभ फलप्रद होती है।
(२) लग्न, दशम, एकादश स्वगृह की दशा भी शुभ होती है।

(३) जो ग्रह लग्न से उपक्रम (३, ६, १०, ११) स्थान गत हो, जिस ग्रह पर मित्र ग्रह की दृष्टि हो. जिसके साथ शुभ ग्रह बैठा हो, लग्नेश वा लग्न के होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश द्वादशांश या त्रिशांश शुभ है।

नोट—ऊपर लिखे आधार पर जातक ग्रन्थों में ग्रहों की महादशा व अन्तर का शुभाशुभ फल अनेक शुभ अशुभ सूचक शब्दावलियों से भरा पडा है। उसका यहाँ उल्लेख में विस्तार मात्र होगा।

सूर्य की महादशा में—कभी परदेशवास, राजा व पिता पर प्रभाव, शुभ होने से शुभ, अशुभ से अशुभ।

चन्द्र की महादशा में—यश, अपयश, कन्याओं का जन्म, मानसिक वृत्ति पर प्रभाव, निद्रालुता, बात कफ का प्रकोप।

भौम की महादशा में--भूमि तथा भ्राता पर प्रभाव, औषधि, क्रूर कर्म या पराक्रम, पित्तजनित रुधिर प्रकोप तथा ज्वर।

राहु की महादशा—सांसारिक स्थिति, शुभ अशुभ, धर्म, अधर्म।

वृहस्पति की महादशा—राजा के मन्त्री से सम्पर्क, देवार्चन, मेधा शक्ति, कभी गले में दाह।

शनि की महादशा—निम्न वर्ग से सम्बन्ध, उन पर शासन या उनसे हानियां, आलस्य, कफ, वात, पित्त।

बुध की महादशा—दूत का काम, कारीगरी, कुसंगति से प्रेम, बन्धु-बान्धवों से सम्पर्क, शुभ अशुभ।

केतु की महादशा—वाहन से गिरने का योग, हास्य विनोद, स्त्री सन्तान पर प्रभाव।

शुक्र की महादशा—स्त्री सन्तान, काम चेष्टा, मनोरंजन वस्तु, स्त्री प्रसाधन वस्तु का व्यापार सम्भव।

जो ग्रह जिस भाव या वस्तु या सम्बन्धी का कारक है अपनी दशा व अन्तर में तत्सम्बन्धी फलादेश है। शुभ होने से शुभ, अशुभ होने से अशुभ।

(१३) शनि की राशि में चन्द्रमा हो तो उसकी महादशा में, सप्तमेश की अन्तर दशा में महान कष्ट।

(१४) शनि की दशा में चन्द्रमा के अन्तर में शारीरिक और आर्थिक कष्ट।

(१५) वृहस्पति में शनि और शनि में वृहस्पति सर्व प्रकार से अनिष्टकर।

(१६) शनि में मंगल तथा मंगल में शनि रोगकारक है।

(१७) शनि में सूर्य तथा सूर्य में शनि गुरुजनों तथा अपने लिए चिंताकारक है
(१८) राहु में केतु तथा केतु में राहु अनिष्टकर रहता है ।
(१९) राहु मांदि ३, ६, ११ भाव में हो तो उसकी दशा अच्छी रहती है ।
(२०) महादशाधीश से षष्ठस्थ, अष्टमस्थ तथा द्वादशस्थ ग्रह की अन्तर दशा प्रायः शुभ नहीं होती ।

ग्रहों की महादशा का साधारण फल

लग्नेश—शारीरिक स्थिति, स्त्री को कष्ट संभव

द्वितीयेश—द्वितीयस्थ पाप ग्रह संयुक्त हो तो मृत्यु हो सकती है । इसमें बृ. शु. बली है । शुभ ग्रह से आर्थिक सुख

तृतीयेश—कष्टदायक

चतुर्थेश—वाहन भूमि का सुख माता पिता को सुख

लग्नेश तथा चतुर्थेश दशम या चतुर्थ में हों तो बड़ा कारोबार पर पिता को कष्ट । बड़ी डिग्री

पंचमेश: विद्या सम्भव तथा माता को अरिष्ट पुरुष ग्रह हो तो पुत्र स्त्री ग्रह हो तो कन्या का योग होता है ।

षष्ठेश: शत्रुभय रोग ।

सप्तमेश: पदावनति, शारीरिक कष्ट पाप ग्रह हो तो स्त्री को कष्ट

अष्टमेश: अशुभ, मृत्यु तुल्य कष्ट । पति को अरिष्ट यदि पाप ग्रह के द्वितीय में हो तो अवश्य मृत्यु ।

नवमेश: भाग्योदय । धार्मिक प्रवृति, राजकीय पक्ष से लाभ

दशमेश: उच्चाधिकार तथा धन । राजाश्रय से लाभ पर माता पिता के लिए अरिष्ट प्रद

लाभेश: लाभ देने वाली. ख्याति, व्यापार में प्रचुर लाभ । पिता की मृत्यु संभव ।

द्वादशेश: आर्थिक कष्ट; व्यय आकस्मिक हानि, कुटुम्ब जन को कष्ट ।

१, ४, ५, ९, १० स्थानों में शुभ ग्रह का रहना अच्छा है ३, ६, ११, में पाप ग्रहों का रहना अच्छा है ।

६, ८, १२ गृह में कोई ग्रह न रहे तो अच्छा है । बृहस्पति छठे में शत्रुनाशक, शनि आठवें में आयु कारक, मंगल दसम भाग्यकारक, गुरु अकेला द्वितीय में धन नाशक गुरु अकेला पंचम में पुत्र के लिए अनिष्ट, गुरु अकेला सप्तम में स्त्री के लिए अनिष्ट प्रद ।

अंतरेश का फल

पापग्रह की दशा में पापग्रह का अन्तर अशुभ, महादशा से ६, ८ स्थान स्थित ग्रह का अन्तर भयानक

रोग मृत्यु तुल्य कष्टदायी ।

पापग्रह में शुभ ग्रह का अन्तर पहला आधा भाग कष्टदायक अन्तिम भाग सुखदायक ।

शुभ ग्रह की दशा में पापग्रह का अन्तर पूर्वार्द्ध सुखदायक उत्तरार्द्ध कष्ट दायक

पापग्रह की दशा में शत्रु ग्रह के अन्तर में विपतिकारक शनि की राशि में चन्द्रमा हो, शनि की दशा में सप्तमेश का अंतर कष्टदायक होता है ।

शनि में चन्द्रमा, चन्द्रमा में शनि नाना प्रकार के कष्ट, बृहस्पति में शनि और शनि में बृहस्पति अनिष्ट प्रद

मंगल में शनि और शनि में मंगल रोग कारक ।

शनि में सूर्य और सूर्य में शनि बड़ों के लिए अनिष्ट, कष्ट ।

राहु में केतु, केतु में राहु अनिष्ट कर ।

३,६, ११ भाव स्थित राहुकेतु की महादशा अच्छी रहती है यों उसका विशेषफल उस के साथी ग्रह के अनुकूल होता है ।

दशाधीश से ६, ८, १२वें स्थित ग्रह का अन्तर प्रायः शुभ नहीं होता ।

दशाधीश सूर्य

अंतरेश

सूर्यः मन अशांत, परदेश भ्रमण, द्वारा धन ।

चन्द्रः कुटुम्ब जन व मित्रों से लाभ, विजय, पांडु रोग सम्भव ।

मंगलः कुल जन विरोध, राजप्रतिष्ठा पित्त, जनित रोग । गृह में मंगलकार्य ।

राहुः पदच्युति, कुटुम्बजन विरोध, मन दुखी ।

बृहस्पतिः गार्हस्थ्य सुख, धनधान्य समृद्धि, पुत्र से लाभ ।

शनिः शत्रुता, नीच वृत्ति, कंडू रोग ।

बुधः मन अशांत अधिक व्यय रुधिर दूषित रोग ।

केतुः अकाल मृत्यु का भय, कौटुम्बिक विग्रह पदच्युति, कंडु (खुजली का रोग) ।

शुक्रः समुद्री वस्तु से लाभ, विदेश यात्रा गृह कलह, प्रबल ज्वर, मस्तक कान पीड़ा शूल ।

दशाधीश चन्द्र

अंतरेश

चन्द्रः सब प्रकार से शुभ । आरोग्यता बात रोग ।

मंगलः संचित धन का नाश, स्थान त्याग, पारिवारिक मित्रों को क्लेश, रुधिर व पित्त प्रकोप

राहुः धन व्यय, रोग, बंधु विरोध । भोजन विकार से ज्वर ।

बृहस्पतिः पुत्रोत्सव, धनधान्य समृद्धि
शनिः माता को पीड़ा, अनेक व्यसन वाणी में कठोरता, भाई को पीड़ा।
बुधः मातृ पक्ष से धन की प्राप्ति, भूमि प्राप्ति सम्भावना ख्याति।
केतुः स्त्री कुटुम्ब धन की हानि, पेट का रोग।
शुक्र, स्त्री द्वारा धन प्राप्ति, जलज पदार्थ से सुख माता रोग से पीड़ित।
सूर्यः राजद्वार से सम्मानित, धन प्राप्ति निरोग शुभ फल।

दशाधीश मंगल

अन्तरेश

मंगलः बंधुओं से विरोध राजभय शारीरिक उष्णता, उष्णता जनित रोग।
राहुः नाना प्रकार की आपत्ति, अनुचित कार्य।
बृहस्पतिः आरोग्यता बंधुओं से सुख तीर्थ में रुचि जनता से आदर, श्लेष्मा रोग।
शनिः मरण तुल्य कष्ट, स्वजनों की बाधा धन हानि आदि।
बुधः किसी महिला से धन, पारिवारिक वियोग।
केतुः बंधुओं से कष्ट, शत्रुता, शल्य से पीड़ा पेट के रोग से पीड़ा।
शुक्रः बंधुजन से प्राप्ति. धन का अधिक व्यय महिलाओं से घृणा
सूर्यः धन लाभ राजसम्मान, पितृकुल से वैर भाव, सज्जनों से दुःख।
चन्द्रः उच्च पद, धन, मित्र समागम, कष्ट रोग।

दशाधीश राहु

अंतरेश

राहुः स्त्री को रोग झगड़ा, धन, क्षय, दुष्टों से कष्ट।
बृहस्पतिः शत्रु नाश पुत्रोत्सव, धन धार्मिक प्रवृत्ति
शनिः दूर देश निवास पदच्युति, मित्रजन से दु.ख पित्त प्रकोप।
बुधः धनागम, राजमान बंधु प्रीति।
केतुः नाना प्रकार के उपद्रव, कलह व्रण।
शुक्रः सम्पत्ति वाहन प्राप्ति, विदेश से लाभ, स्त्रीलाभ पर कुटुम्ब जन से विरोध। रोग।
सूर्यः धार्मिक वृत्ति, शत्रुओं से व्यथा छूआ छूत की बीमारी।
चन्द्रः धन धान्य समृद्धि पर कौटुम्बिक विरोध जल से भय।
मंगलः स्मरण शक्ति का ह्रास, नाना प्रकार के उपद्रव।

दशाधीश बृहस्पति

अंतरेश

बृहस्पतिः विद्या, ज्ञान शारीरिक शांति राजमान।
शनिः संतान द्वारा धन अपव्यय, कार्यों का नाश :

बुध: धन समृद्धि, धार्मिक, विदेश यात्रा, शरीर पीड़ा, उन्माद का भय।

केतु: तीर्थ यात्रा, धन प्राप्ति, राजनेता से क्लेश, व्यथा।

शुक्र: स्त्री जनता मित्रों से विरोध, व्यसन प्रवृत्ति।

सूर्य: राजद्वार से मान (पदवी) धन, आरोग्यता।

चन्द्र: उत्तम विद्या राजानुग्रह, सुख

मंगल: संग्राम में विजय, यश, शत्रुओं से भय गुदा रोग।

राहु: सब प्रकार से अनिष्ट।

दशाधीश शनि

अंतरेश

शनि: रोग क्लेश, ईर्ष्या, शोक अशुभ फल

बुध: सत्कर्म, यश, वाणिज्य, राज्य प्रतिष्ठा कफ रोग।

केतु: निम्न वर्ग तथा कौटुम्बिक कलह वातपित्त जनित रोग।

शुक्र: बंधुजन पुत्रादि से सुख, यश।

सूर्य: धन हानि, शत्रुभय, मन उद्विग्न जठराग्नि व नेत्र रोग

चन्द्र: निरंतर कौटुम्बिक क्लेश, स्त्री की मृत्यु संभव, बातरोग। परन्तु धनागम।

मंगल: अनेक प्रकार के कष्ट, कठिन रोग, बंधु वियोग, प्रतिष्ठा की हानि।

राहु: कलह चर्म रोग आदि। यदि राहु शुभ हो तो पूर्वार्द्ध में सुख उत्तरार्ध में क्लेश।

बृहस्पति: शुभ होने से धन धान्य समृद्धि।

दशाधीश बुध

अंतरेश

बुध: बंधुवर्ग से प्राप्ति, कार्य सिद्धि गृह प्राप्ति

केतु: सुख हानि, बंधुजन से पीड़ा, कार्यों में विघ्न।

शुक्र: धार्मिक, अतिथि सत्कार, सिर के रोग से दुःखी।

सूर्य: धार्मिक, वाहन, स्थान परिवर्तन नेत्र रोग।

चन्द्र: रोग हानि, मृत संतान का जन्म, अनेक विवाद, पित्त प्रकोप खुजली।

मंगल: यश वृद्धि, राजानुग्रह, अधिक व्यय, स्त्री पुत्र निष्ठुर हो जाते हैं, गुदा नेत्र रोग।

राहु: धन की प्राप्ति सौभाग्य, राजानुग्रह, जल से भय, कभी धन हानि।

बृहस्पति: धन संतान वृद्धि, बंधुजन माता पिता से क्लेश, राज मंत्रित्व, उत्तम कार्य में प्रवृत्ति।

शनि: सत्कार्य वृद्धि, कृषि में हानि प्रतापी कोमल स्वभाव वातव्याधि।

दशाधीश केतु

अंतरेश

केतु: कौटुम्बिक अरिष्ट, धनहानि, शत्रुवृद्धि

शुक्र: कौटुम्बिक कलह (स्त्री पुरुष से) कन्या का जन्म ज्वर अतिसार।

सूर्य: किसी बड़े की मृत्यु, विदेशगमन स्वजन विरोध, जटिल रोग।

चन्द्र: धनहानि, मन संताप, पुत्र शोक

मंगल: परिवार जन से विरोध। राजभय।

राहु: सब प्रकार से अनिष्ट।

बृहस्पति: स्वास्थ्य, राजा से मान, धार्मिक वृत्ति।

शनि: धन हानि, पदच्युति, बंधुजन विरोध, अंगभंग होने का भय।

बुध: विद्या सुख, धन प्राप्ति।

दशाधीश शुक्र

अंतरेश

शुक्र: यश वृद्धि, पारिवारिक सुख

सूर्य: राजभय, बंधु विरोध धनक्षति

चन्द्र: धार्मिक कार्य, संग्राम विजय संग्रहणी जननेन्द्रीय रोग संभव।

मंगल: भूमि प्राप्ति,धनागम,पित्तरोग।

राहु: मित्र बंधुओं से क्षति, काले पदार्थ से लाभ।

बृहस्पति: स्त्री संतान को रोग, धर्माचार, कार्य सिद्धि, धन प्राप्ति।

शनि: शत्रुनाश, धनभूमि की प्राप्ति ग्रामाधिपति।

बुध: राजानुग्रह, धन लाभ, पारिवारिक सुख, भूमिलाभ।

केतु: मन अशांत, विवाद, बंधुविद्रोह धन हानि।

भावगत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	प्रथम भाव	द्वितीय भाव	तृतीय भाव
सूर्य	राज कोप धन हानि नेत्र रोग	अनिष्ट फल	राज सम्मान, पराक्रम
चन्द्र	पुत्र लाभ धनमान पर बन्धुओ से विरोध ।	सब प्रकार से सौख्य	सब प्रकार से सुख वित्तोपार्जन भाइयों का सुख दृढ़ संकल्प
मंगल	विषमय, शत्रुता, देशान्तर	कुल में धन वृद्धि प्रशासन से वञ्चित	धनधान्य समृद्धि राजा से लाभ
बुध	धन धान्य समृद्धि, वाहन प्रसिद्धि, अधिकार	विद्या की प्राप्ति, राज्य द्वारा प्रधानता, कीर्ति	आलस्य भाइयों का अरिष्ट, प्लीहा व मंदाग्नि रोग
बृहस्पति	राजा से, स्त्री व परिवारजन से सुख जनता में मान	राज सम्मान,धन प्राप्ति भाई या किसी स्त्री द्वारा धन प्राप्ति । राजा से धन	भाई से धन
शुक्र	राज नेताओ से लाभ, उपकार वृत्ति उत्साह	धन अन्न वस्त्रादि का उपयोग, मधुर वाणी	भाईयों से बहुत लाभ वाहन प्राप्ति
शनि	परिवार व बन्धुओ से कलह	प्रवास, सिर की बीमारी मातृ पक्ष को अरिष्ट स्थानच्युत राजभय	धन प्राप्ति, उत्साह
राहु	बुद्धि नाश पराजय व दुःख	धन की विशेष हानि राजभय, मन उद्विग्न	पारिवारिक सुख: राज सम्मान, विदेश गमन
केतु	निष्फल,विपत्तियाँ सताप,धन का नाश ज्वर अतिसार जननेन्द्रिय रोग	सिर में दर्द, धनक्षय वाणी कठोर	सुख परन्तु भ्राताओं से मतभेद, मन विकल

भावगत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	चतुर्थ भाव	पंचम भाव	षष्ठ भाव
सूर्य	पारिवारिक हानि, शस्त्र से भय	उद्विग्न मन, अव्यवस्थित पिता के लिए अरिष्ट	हानि दुःख, जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग
चन्द्र	माता को अरिष्ट मृत्यु संभव भूमि वाहन प्राप्ति स्व पुस्तक प्रकाशन	शुभ पर बन्धुओं से विरोध	दुःख, कलह, वियोग आदि अशुभ फल
मंगल	स्थानच्युति, बधु विरोध राज कोप आदि	पुत्र अरिष्ट या उसका मरण, जड़ता पर कीर्ति, तथा कलह	स्त्रियों से विरोध, शोक, पदच्युति, हानि
बुध	सतान, नौकरी, व्यापार मे हानि, स्थान परिवर्तन मातृ पक्ष को अरिष्ट	नीच कर्म व वृत्ति धनार्जन में कठिनाई	अनेक रोग बात पित्त श्लेष्मा जनित रोग शरीर दुर्बल
वृहस्पति	अनेक वाहन योग, राज योग	पुत्र संतति, तन्त्र मन्त्र में रुचि, राज मान	आरम्भ मे स्वस्थ उपरान्त अन्त मे रोग
शुक्र	अभ्युदय, कीर्ति, महा सुख, वाहनादि प्राप्त	संन्तति ख्याति राज सम्मान	अशुभ फल पारिवारिक अरिष्ट
शनि	पदच्युति, चोर भय, जातक भ्रमण शील	पारिवारिक अरिष्ट स्त्री से मतभेद	रोग, गृह नाश, चोर भय
राहु	माता या स्वयं की मृत्यु सभव । मानसिक क्लेश अशुभ फल	बुद्धि भ्रम, उन्माद, मुकदमे बाजी, संतान को अरिष्ठ	नाना प्रकार के रोग
केतु	सुख की हानि पर भूमि या गृह की प्राप्ति	सन्तान हानि, राजा से धन हानि	ऋण ग्रस्त, चोर अग्नि से भय

भावगत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	सप्तम भाव	अष्टम भाव	नवम भाव
सूर्य	स्त्री को रोग, भोजन में असुविधा	परवश गमन, शारीरिक अस्वस्थता, नेत्र संग्रहणी रोग	पिता को आरिष्ट अपमान बुद्धि भ्रम आदि अशुभ फल
चन्द्र	पारिवारिक सुख प्रमेह, मूत्र कृच्छादि रोग	शरीर दुर्बल, जल से भय विदेश यात्रा माता या मातृ को पक्ष अरिष्ट	शुभ पर बंधुओं से विरोध
मंगल	स्त्री की मृत्यु, गुदा रोग	दुख, महाभय, विदेश यात्रा विस्फोट रोग	पद में परिवर्तन, गुरु जन को कष्ट
बुध	विद्या स्त्री पुत्र का सुख	अनेक प्रकार के रोग	पारिवारिक सुख, धार्मिक कृत्या तीर्थ यात्रा
बृहस्पति	स्त्री पुत्रादि सुख धार्मिक वृत्ति राज सुख	आरम्भ में विदेश यात्रा बन्धु वियोग अन्त में स्त्री पुत्र राजा से मान	फल पंचमस्थवत्
शुक्र	स्त्री को अरिष्ट	शस्त्र अग्नि चोर से भय पर साधारण धन वृद्धि	राज मान, पिता का सुख धार्मिक वृत्ति
शनि	अति पीड़ा स्त्री से विवाद	सब प्रकार से क्षति	सुख
राहु	स्त्री का नाश, विदेश की यात्रा	मृत्यु भय, सन्तान को अरिष्ट	गुरु पिता का अरिष्ट या पिता की मृत्यु, परदेश यात्रा
केतु	मूत्र कृच्छ रोग. स्त्री को अशुभ फल	पिता की मृत्यु, श्वास कास संग्रहणी आदि रोग	पिता का अरिष्ट

भावगत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	दशम भाव	एकादश भाव	द्वादश भाव
सूर्य	राज सम्मान. अधिकार की प्राप्त सफलता	सब प्रकार स मुख	दशाटन, सब प्रकार से आनष्ट
चन्द्र	कांति विद्योन्नति	कन्या योग, अनेक प्रकार से सुख	अपह्य दु:ख उपार्जित धन का नाश आदि
मंगल	सब प्रकार स अशुभ	धन धान्य समृद्ध लड़ाई म विजयां, कीर्ति	धन हानि भाइयो का परदेशवास
बुध	राज दरबार से अधिकार पुस्तक प्रकाशन, पारिवारिक सुख	किसी द्वारा धन लाभ कृषि या वाणिज्य द्वारा धनाप्ति ।	राज भय, अंग भग, आकस्मिक घटना से मृत्यु भय कुटुम्ब से मतभेद
वृहस्पति	राज मान, शुभ फल प्राप्त, अधिकार	धन, पुत्र, राज की प्राप्ति	नाना प्रकार के क्लेश विदेश यात्रा पर वाहन सुख
शुक्र	राजकीय लाभ, नवीन सम्पत्ति, धार्मिक कार्य	पुस्तक लेखन, यहाँ सब प्रकार से शुभ	राज सम्मान पर स्थानच्युति, मातृ वियोग परदेशवास
शनि	कारावास सम्भव, पदच्युति	नाना प्रकार का सुख कृषि से धन	अग्नि चोर राज से भय विदेशवास
राहु	यदि शुभ युत तो शुभ अन्यथा पाप	नाना प्रकार का सुख,	सब प्रकार से हानि
केतु	मान हानि. अप कीर्ति	सुख, भ्रातृ वर्ग को सुख	च्युत. प्रवासी, शासन द्वारा दंड संभव नेत्र रोग

राशि गत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	मेष	वृष	मिथुन
सूर्य	पैतृक धन व भूमि प्राप्ति	हृदय रोग, नेत्र पीड़ा अशुभ	शास्त्र में रुचि, सुख
चन्द्र	पारिवारिक सुख, खर्चीला, क्रूर स्वभाव भ्राता से विवाद	राजमान, पारिवारिक सुख विजय	देशान्तर भ्रमण, धार्मिक वैभव
मंगल	मंगल कार्य, सन्तान पराक्रम	वाचाल आदर, उपकारी	परदेश यात्रा, अधिक व्यय वात पित्त रोग मित्रों से विरोध
बुध	एक स्थान पर निवास नहीं अशुभ फल मिथ्यावादी	अधिक व्यय, माता को कष्ट चित्त व्यग्र, गले में रोग	मातृ सुख नहीं पारिवारिक सुख पर वाचाल । बकवादी
बृहस्पति	विशेष धन लाभ नायक पारिवारिक सुख	अत्यन्त दुःखी, विदेशवास धन हीन, साहसी	कुटुम्ब जन से विरोध शारीरिक स्वच्छता
शुक्र	धन सुख नाश, भ्रमण चित्त उद्विग्न	कन्या सन्तान, कृषि कार्य, शास्त्रों में रुचि	काव्य कला विलास हास्य प्रिय, यात्रा में रुचि
शनि	दुखी, चर्मरोग ऊँचे से गिरने का योग	शुभ फल राज सम्मान	हास्य विलास मुकदमे में लाभ, स्त्री-कलह
राहु	शुभ फल, पारिवारिक सुख राज भय	पारिवारिक सुख, राजमान आदि शुभ फल	

राशि गत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	कर्क	सिंह	कन्या
सूर्य	कीर्ति वृद्धि, राज भ्रम, क्रोधाग्नि, मित्रों को दुःख	राजा से मान, धन कांति	कन्या का जन्म गुरु प्रीति
चन्द्र	खेती वृद्धि कलाविद, गुप्त रोग	शुभ फल	विदेश यात्रा शिष्य बुद्धि
मंगल	कीर्ति का विस्तार, गुप्त स्थान में रोग, जंगल के पदार्थों से लाभ	नायक बधुजन वियोग	धार्मिक कार्य मे प्रवृत्ति पारिवारिक सुख
बुध	अनेक प्रकार का व्यवसाय विदेशवास, अल्प सुख मित्र विरोध	मित्र तथा पारिवारिक सुख से हीन	धन धान्य समृद्धि लेखक विख्यात
बृहस्पति	दक्ष, उद्यमी, कृतज्ञ	धन प्राप्ति, प्रतिष्ठा , पारिवारिक सुख	राज्यमान पारिवारिक सुख, निम्न वर्ग से कलह
शुक्र	कुल मे प्रधानता, ख्याति बड़ों से मित्रता	पराए धन पर आश्रित महिलाओं द्वारा धन प्राप्त	मन चचल अशुभ फल
शनि	मन चचल, कान नेत्र व्यथा, शरीर निर्बल	अनेक बाधाएँ, पारिवारिक कलह	जल वस्तु, काष्ठ से लाभ। परदेश। धनागम
राहु	पारिवारिक सुख, मान आदि शुभ फल अन्त में सुख का नाश		पारिवारिक सुख वाहन मान आदि शुभ पर अन्त में सुख का नाश

राशि गत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	तुला	वृश्चिक	धनु
सूर्य	अशुभ फल धन स्थान हानि अग्निभय	माता पिता से विरोध	शुभ। सगीत से प्रेम, कुटुम्ब सुख
चन्द्र	मन चंचल, जन स्त्री विवाद	रोगी मानसिक चिंता स्वजन वियोग	पूर्वाजित धन का नाश अन्यत्र स्थान में लाभ
मंगल	अशुभ फल	धन संग्रह, वाचाल कृषि कार्य	राज द्वारा लाभ। कलह, उदासीन
बुध	कला, व्यापार से धन आँख की ज्योति कम	अल्प सुख, दीर्घ व्यय	बहुजन नायक।
वृहस्पति	अल्प भोजन, अविवेकी उत्साहहीन	पुत्र प्राप्ति, विद्या मे शौच पर अव्यवस्थित चित्त	राज पद। शुभ फल कृषि में प्रवृत्ति।
शुक्र	कृषि कार्य, जाति मे मान धन वाहन	प्रतापी, विदशवास ऋण ग्रस्त, कलह	राज सम्मान, शिल्प विद्या शत्रु वृद्धि दुखी।
शनि	अति शुभ, लक्ष्मी प्राप्ति, दयामान	साहसिक कार्य, निर्दयी, कृपण मिथ्या भाषी	शुभ पारिवारिक सुख राज मन्त्रित्व
राहु			पारिवारिक सुख, मान, वाहन पर अन्त में सुख का नाश

राशि गत ग्रहों की दशा के फल का सारांश

ग्रह	मकर	कुम्भ	मीन
सूर्य	अशुभ, कुटुम्ब सुख कम पराधीनता रोग	अशुभ, शत्रु वृद्धि, हृदय रोग	शुभ पारिवारिक शुभ देशाटन
चन्द्र	पारिवारिक सुख, धन वायु प्रकोप। यात्राएँ	वक्ष स्थल मे पीड़ा, ऋणी दूर देश की यात्रा	शुभ। जलोत्पन्न वस्तु से लाभ
मंगल	धन वृद्धि' विवाद में विजय	उद्विग्न मन, अनादर प्रवृत्ति	बहु व्ययी, ऋणी चर्म रोग, अशुभफल
बुध	बहु भोजन, कपट, ऋण आदि अशुभ फल	धन तेज हीन, व्यसनी विदेश यात्रा।	स्थानान्तरण अशुभ फल
बृहस्पति	धन हानि, बन्धु जन विरोध	काम विलास में प्रवृत्ति कला विकला में रुचि	शुभ फल, राज मान, पारिवारिक सुख।
शुक्र	विजयी, कफ वात रोग से दुर्बल। पारिवारिक चिन्ता	व्यसनी, रोगी, मिथ्यावादी	राज्य प्रधान धनी, कृषि से लाभ। सुख
शनि	बड़े श्रम से धनागम विश्वास घात से क्षय	हर प्रकार से शुभ	वैभव, सुख पर उत्साह हीन
राहु			

विभिन्न लग्नों की कुण्डली के कुछ योग (फलदीपिका का मत)

मेष लग्न

दशा में

(१) सूर्यचन्द्र एक दूसरे से सप्तमस्थ राजयोग

(२) दशमस्थ बृहस्पति- मारक हो सकता है।

(३) दशम या नवम में शनि बृहस्पति प्रबल राज योग

(४) मंगल षष्ठेश वा अष्टमेश के साथ- सिर में चोट रक्त चाप

(५) द्वितीयेश शुक्र द्वादश भाव में-

(६) शुभ मंगल गुरु शुक्र के साथ द्वितीयस्थ— योगकारी

(७) मंगल बृहस्पति शुक्र तृतीयस्थ योगकारी

(८) मंगल बृहस्पति चतुर्थस्थ— योगकारी

(९) पंचमस्थ मंगल—अभ्युदय राज

(१०) एकाशदस्थ बृहस्पति—अवनति संभव

(११) मंगल बुध षष्ठस्थ—रक्तदूषण विकार

(१२) मंगल शुक्र (तुला में) सप्तमस्थ बाहु बल से धनार्जन वृद्धि

(१३) अष्टमस्थ मंगल——अभ्युदयराज

(१४) सूर्य शुक्र लग्नस्थ-योग प्रद यदि उन्हें बृहस्पति न देखता हो।

(१५) सूर्य पर बृहस्पति की दृष्टि— योग प्रद

(१६) सूर्य बुध शुक्र एकादशमें—भाग्य वृद्धि

वृष लग्न

(१७) दशमस्थ राहु में—तीर्थ स्नान

(१८) मंगल बृहस्पति- तीर्थाटन

(१९) चतुर्थस्थ चन्द्रमा पर गुरु की दृष्टि—शुभ फल

(२०) सप्तमस्थ मंगल—शुभ (पर इसे मंगलीक कहते हैं)

(२१) एकादस्थ सूर्य शनि- दीर्घायु

(२२) बुध बृहस्पति कहीं भी-- धन योग पर बृहस्पति अष्टमेश होने से बाधक भी है।

(२३) मंगल बुध बृहस्पति एक साथ तो बुध की महादशा में जातक को ऋण, पर मंगल की दशा शुभ होगी।

(२४) बुध शुक्र लग्नस्थ और गुरु सप्तमस्थ बुध की महादशा प्रबल योगकारी।

(२५) मंगल शुक्र लग्नस्थ तथा नवम बृहस्पति शुक्रबुध और बृहस्पति की दशा में भाग्योदय

(२६) शुक्र की दशा साधारणतया शुभ धनागम

(२७) लग्नस्थ चन्द्रमा धनप्रद नहीं। साधारण।

मिथुन लग्न

(२८) सूर्य बुध तृतीयस्थ तो बुध की महादशा अच्छी ।

(२९) चन्द्र मंगल शुक्र द्वितीयस्थ तो शुक्र की महादशा में धन प्राप्ति

(३०) मंगल द्वितीयस्थ तथा चन्द्रमा शनि अष्टमस्थ तो मंगल की दशा में निश्चय से धनागम

(३१) मंगल शनि द्वितीयस्थ तथा चन्द्रमा अष्टमस्थ तो शनि और मंगल की दशा में धन नष्ट

(३२) चन्द्रमा मंगल एकादशस्थ तो विशेष धन योग

(३३) नवमस्थ शनि दशा में धन योग

(३४) बुध एकादशस्थ हो तो दशा में बड़े भाई से विरोध होता है ।

कर्क लग्न

(३५) मंगल यदि पंचमस्थ या दशमस्थ हो तो निश्चय से उन्नति कारक होता है ।

(३६) शुक्र द्वितीयस्थ या द्वादशस्थ हो तो योग प्रद पर अन्य स्थान में नहीं ।

(३७) शुक्र बुध पंचमस्थ तो बुध की दशा योगकारी ।

(३८) सूर्य मंगल दशमस्थ तो धनी योग पर गुरु की दशा मारक हो सकती है

(३९) चन्द्र बृहस्पति लग्न दोनों विशेष राजयोग ।

(४०) चन्द्रमा लग्नस्थ तथा मंगल सप्तमस्थ तो राज योग

(४१) चन्द्रमा लग्नस्थ तथा शनि चतुर्थस्थ तो राजयोग

(४२) चन्द्रमा लग्नस्थ तथा सूर्य दशमस्थ तो राज योग

सिंह

(४३) सूर्य मंगल बुध कहीं एक साथ जातक बहुत धनी ।

(४४) बृहस्पति शुक्र एक साथ हो तो योग भंग होता है ।

(४५) शुक्र तृतीयस्थ हो तो शुभ पर वह यदि दशमस्थ तो अशुभ ।

(४६) सूर्य मंगल बुध लग्नस्थ बुध की दशा में भाग्य वृद्धि ।

(४७) मंगल शनि द्वादशस्थ तो शनि की दशा में शुभ योग ।

कन्या लग्न

(४८) सूर्य का शुक्र या चन्द्रमा से सम्बन्ध हो तो सूर्य की दशा में धन प्राप्ति चन्द्रमा में मिश्र फल

(४९) यदि सूर्य शुक्र का संबन्ध हो तो शुक्र की दशा में जातक धन हीन हो जाता है ।

(५०) बृहस्पति और शुक्र चतुर्थस्थ हो तो दशा में शुभ फल

(५१) शनि एकादशस्थ हो तो दशा में शुभ फल ।

तुला लग्न

(५२) शनि शुभ कारक है । बृहस्पति भी साधारण योग कारी है ।

(५३) बृहस्पति शुक्र एक साथ मंगल

शनि दृष्ट या संबन्धित हो तो गुरु में शुक्र का अन्तर तथा शुक्र में गुरु का अन्तर शीतला विस्फोटकारी रोग होता है।

(५४) यदि चन्द्रमा लग्नस्थ, बृहस्पति षष्ठस्थ या द्वादशस्थ होतो शनि की दशा में भाग्यदा।

(५५) लग्श में सूर्य मारक।

(५६) शनि लग्नस्थ-चन्द्रमा दशमस्थ तो राजयोग।

वृश्चिक लग्न

(५७) बुध बृहस्पति साथ कहीं भी धन कारक

(५८) बृहस्पति तृतीयस्थ तो उदार विशेष।

(५९) बुध सूर्य शुक्र सप्तमस्थ तो बुध की दशा में बहुत यश व राज योग।

(६०) बृहस्पति बुध पंचमस्थ और चन्द्रमा एकादश स्थान में तो धनी और भाग्यशाली।

(६१) चन्द्र बृहस्पति और केतु नवमस्थ तो केतु की दशा साधारण पर बृहस्पति की दशा योग कारी शुभ होती है।

धनु लग्न

(६२) पंचमस्थ शनि की दशा शुभ।

(६३) शनि एकादशस्थ तो शुभ योग।

(६४) सूर्य शुक्र नवमस्थ तथा शनि तृतीयस्थ तो शनि की दशा में धनागम व भाग्यवृद्धि।

(६५) मंगल सूर्य तृतीयस्थ तथा राहु नवमस्थ तो राहु की दशा में तीर्थाटन का योग।

मकर लग्न

(६६) बुध की दशा व अन्तर शुभ प्रद होती हैं।

(६७) बृहस्पति लग्नस्थ शुक्र की दृष्टि तथा बुध अष्टमस्थ तो जातक दीर्घायु पर निर्धन।

(६८) शुक्र पंचमस्थ हो तो योग प्रद।

(६९) चन्द्रमा पंचमस्थ, बृहस्पति की दृष्टि, बृहस्पति शुक्र लग्नस्थ प्रबल राज योग।

(७०) बृहस्पति लग्नस्थ तथा मंगल शुक्रएकादशस्थ तो बृहस्पति की दशा में भाइयों से धन प्राप्ति।

(७१) बुध शनि नवमस्थ तो भाग्यवान।

(७२) राहु बृहस्पति द्वादशस्थ तो राहु की दशा में भाग्योदय।

(७३) मंगल लग्नस्थ तथा सप्तमस्थ चन्द्रमा राजयोग।

कुम्भ लग्न

(७४) शुक्र द्वादशस्थ हो तो योगकारी नहीं होता।

(७५) सूर्य शुक्र लग्नस्थ, राहु दशमस्थ तो राहु तथा बृहस्पति की दशा शुभ होती है।

(७६) बृहस्पति लग्नस्थ तथा शनि द्वितीयस्थ तो बृहस्पति की दशा मिश्रित फल वाली तथा शनि की दशा शुभ योग वाली होती है।

(७७) शनि और शुक्र एकादशस्थ तो शुक्र की दशा शुभ योग प्रद होती है।

(७८) सूर्य बुध और बृहस्पति तृतीयस्थ हो तो सूर्य की दशा शुभ योग कारी होती है।

मीन लग्न

(७९) द्वादशस्थ शनि योगकारी होता है।

(८०) द्वादशस्थ चन्द्रमा दरिद्र योग है।

(८१) पंचमस्थ बृहस्पति की दशा में अधिक कन्याएं तथा थोड़े पुत्र होते हैं।

(८२) चन्द्रमा द्वितीयस्थ हो तथा मंगल भी पंचमस्थ हो तो चन्द्रमा की दशा धनागम की होती है।

(८३) यदि चन्द्र मंगल बुध एकादशस्थ तो वाहन, अचल संपत्ति, धन, का योग।

(८४) चन्द्रमा और शनि लग्नस्थ मंगल एकादशस्थ और शुक्र षष्ठस्थ तो शुक्र की दशा भाग्योदय की होती है।

(८५) दशमस्थ बृहस्पति निश्चय से योग कारी होता है।

जन्म कुण्डली फलादेश की कुंजी

दशाफल-रहस्य

पराशर-मतानुसार दशा-फलादेश में ग्रहों की पूर्ण दृष्टि ही उपादेय है। सब ग्रह अपने स्थान से सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं एवं शनि ३-१० स्थान को और बृहस्पति ५, ९ को और मंगल ४,८ स्थानों को भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। सूर्य, शनि, मंगल नैसर्गिक क्रूर ग्रह तथा गुरु, शुक्र नैसर्गिक सौम्य ग्रह हैं। पूर्णबली चंद्रमा शुभ, क्षीणबली पापी होता है। बुध पापग्रह के साथ पापी, शुभग्रह के साथ शुभद होता है। राहु केतु सहवासानुसार फल देते हैं। सम्बन्ध-मात्र से योग-कारकत्व कहा गया है; परन्तु सम्बन्ध कई प्रकार के होवे हैं जिनमें मुख्य ये सात हैं—

(१) दो या अधिक ग्रह किसी एक ही घर में बैठे हों। (२) दो या अधिक ग्रह एक-दूसरे को देख रहे हों। (३) कोई ग्रह अपने घर में बैठे ग्रह को देख रहा हो (४) कोई ग्रह जिस ग्रह के घर में बैठा हो, उस ग्रह को देख भी रहा

हो (५) दो ग्रह एक-दूसरे के घर में बैठे हों। (६) दो ग्रह एक दूसरे के घर में बैठे हों और उनमें-से कोई एक, दूसरे को देख रहा हो। (७) दो ग्रह एक-दूसरे के घर में बैठकर एक-दूसरे को देख भी रहे हों। ये सात प्रकार के सम्बन्ध उत्तरोत्तर बली होते हैं। ये सात प्रकार के सम्बन्ध जब निम्नांकित भावाधिपतियों में बनते हैं तो निश्चितरूप से उत्कृष्ट फल प्रदान करते हैं। १ आत्मसम्बन्धी—केन्द्रेश त्रिकोणेश का परस्पर सम्बन्ध (उक्त सातों प्रकार में-से कोई भी एक) २—साधर्म्यसम्बन्धी—त्रिकोणेश का त्रिकोणेश के साथ, केन्द्रेश का केन्द्रेश के साथ, त्रिषडायपति का त्रिषडाय-पति के साथ, द्वितीयद्वादशाष्टमपति का द्वितीयद्वादशाष्टम-पति के साथ। दशाफलादेश में इन सभी सम्बन्धों का विचार करना नितान्त आवश्यक होता है; क्योंकि ग्रहों की दशा का सर्वाधिक शुभा-शुभ फल उनके पारस्परिक सम्बन्ध से ही प्राप्त होता है।

कोई भी ग्रह यदि त्रिकोण (१।५।९) वें भाव का स्वामी हो तो शुभ फल देता है। त्रिषडाय (३।६।११) वें भाव का अर्थात् काम, क्रोध, लोभ का स्वामी हो तो अशुभ फल देता है; परन्तु त्रिकोण का स्वामी त्रिषडाय-पति भी हो तो मिश्र-फल देता है। आशय यह है कि लग्न से ग्रह अपने दशा-काल के पूर्वार्ध में त्रिषडाय पति हो तो अशुभ फल देगा और उत्तरार्ध में त्रिकोणपति हो तो शुभ फल देगा एवं पूर्वार्ध में त्रिकोणपति हो तो शुभ फल और उत्तरार्ध में त्रिषडायपति हो तो अशुभ फल देगा। फल-विचार में लग्नेश से पञ्चमेश और पञ्चमेश से नवमेश बली होता है एवं तृतीयेश से षष्ठेश और षष्ठेश से एकादशेश बली होता है।

यदि शुभ ग्रह (गुरु, शुक्र, बुध, पूर्ण चन्द्र) केन्द्रेश हों तो शुभ दशाफल नहीं देते, यदि उनका किसी शुभ ग्रह से सम्बन्ध न हो। पापग्रह (क्षीण चन्द्र, पापयुत बुध तथा रवि, शनि, मंगल) केन्द्र के स्वामी हों तो अपने स्वभावानुसार पाप फल नहीं देते यदि उनका किसी पापग्रह से सम्बन्ध न हो। यदि पापग्रह केन्द्रेश के अतिरिक्त त्रिकोणेश भी हो तो उसमें शुभत्व आ जाता है; यदि त्रिषडाय-पति हो तो अशुभत्व प्राप्त होता है। चतुर्थेश से सप्तमेश और सप्तमेश से दशमेश बली होता है।

जन्म-पत्र में किसी भाव का विचार करवा हो तो उसे तनु (प्रथम) भाव मानकर उसी से व्ययेश (द्वादशेश) एवं धनेश (द्वितीयेश) का विचार करना चाहिए। लग्न के द्वादशेश तथा द्वितीयेश दूसरे ग्रहों के साहचर्य से उनके

इनकी दशा-अन्तर्दशा धन, वैभव और पुत्र देनेवाली होती है। नवमेशयुक्त चतुर्थेश की दशा भी शुभप्रदा होती है। कोई भी ग्रह पञ्चमेश नवमेशयुक्त हो तो उसकी दशा भी शुभ होती है। पापग्रह से युक्त ग्रह की दशा अशुभ और शुभग्रह से युक्त ग्रह की दशा शुभ होती है। चतुर्थेश या पञ्चमेश या नवमेशयुक्त लग्नेश और दशमेश की दशा राज्य-सुख-देनेवाली होती है। नवम स्थान स्थित दशमेश की और चतुर्थेशयुक्त दशमेश की दशा भी सुख और प्रतिष्ठा देनेवाली होती है। सप्तमेश (मारकेश) अष्टमेश (रोगेश) होने पर भी यदि दशम भाव में हो तो उसकी दशा शुभ होती है; जैसे, कर्क लग्न की कुण्डली के दशम भाव में नीच का शनि। यदि द्वितीय और सप्तम दोनों मारक-स्थान का स्वामी एक ही ग्रह होकर भी चतुर्थस्थान में चतुर्थेश से युक्त हो तो उसकी दशा शुभप्रदा होती है—जैसे, मेष लग्न की कुण्डली के चतुर्थ भाव में चन्द्र शुक्र का योग। षष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेश भी यदि पञ्चमेश से युक्त हो तो उनकी दशा भी शुभद होती है। इस प्रकार ग्रहों के बलाबल विचार कर ज्योतिषी को दशा का सूक्ष्म फल निश्चित करना चाहिए। विस्तृत फलादेश के लिए मेरा 'दशाफल विचार' नामक ग्रंथ पढ़िये।

—जगजीवनदास गुप्त

ग्रहों, नक्षत्रों, राशियों, भावों तथा अंकों के पर्यायवाची शब्दों की तालिका—ग्रह सूची

ग्रहों का प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	अरबी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द
सूर्य	Sun ⊙	शम्स आफताब फारसी खुरशेद	आदित्य, अहस्कर, अर्क, अर्यमा, अरुण, अहर्पति, अंशुमाली, अश्विनीपति, इन, ईर्षापति; उष्णरश्मि, कर्मसाक्षी, ग्रहपति, ग्रहराज, चण्डांशु, चित्रभानु, छायानाथ, जगच्चक्षु, तीक्ष्णदीधिति, तमिस्रहा, तेजसांराशि, तरणि, तपन, दिवाकर, द्युमणि, त्रयीतनु, दिनकर, दिनमणि, दिनेश, दिनकृत्, धामनिधि, प्रभाकर, पूषण, पद्माक्ष, पतंग, भग, भानु, भास्वत्, रवि, लोकबन्धु, विभाकर, ब्रध्न, विभास्वद्, विकर्तन, विरोचन, विभावसु, विवस्वान्, सूर, सविता, सहस्रांशु, सप्ताश्व, हेली, हरिदश्व, हंश; द्वादशात्म; भास्कर, मार्तण्ड, मिहिर, मित्र, दीप्तरश्मि।
चन्द्रमा	Moon (Cynthia)	कमर फारसी माह महताब	अब्ज, इन्दु, ओषधीश, कलानिधि, कुमुदबांधव, ग्लौ, चन्द्र, क्षपाकर, (छिपाकर), जैवातृक, द्विजराज, नक्षत्रेश, निशापति, निशाकर, पर्व, मृगांक, मयंक, राकेश, रजनीश; विधु, विधुमनोज, सुधांशु, शुभ्रांशु, सोम, शशि, शशांक, शीतरश्मि, शशधर, सुधाकर, हिमांशु, हिमकर, शीतांशु, कलेश, उडुपति, तारापति तारेश, हिमगु।

ग्रहों का प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	अरबी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द
मङ्गल	Mars ♂	मरीक्ष मिर्रीख फारसी बेहराम	अंगारक, आर, आवनेय, कुज, क्रूरदृक, भौम, महीसुत, महिज, भूसुत, वक्र, लोहितांग, क्षितिज, अवनिज, क्रूरनेत्र, धराज, क्षितिनंदन, (पृथ्वी के पर्यावाची शब्द में नन्दन, पुत्र, सूनु, ज आदि शब्द जोड़ने पर जो शब्द बनें वे सब भौम के पर्यायवाची शब्द होंगे)।
बुध	Mercury ☿	उदारद फारसी तीर	इन्दुसुत; चन्द्रपुत्र, चान्द्रि, चन्द्रात्मज, ज्ञ, बोधन, वित्, सौम्य, रौहिणेय, शान्त, श्यामगाव, अतिदीर्घ, हेम्न, तारातनय, तारासूनु, (चन्द्रमा के पर्यायवाची शब्द के साथ पुत्र, तनय, आत्मज आदि प्रत्यय जोड़ने से)।
बृहस्पति	Jupiter ♃	मुश्तरी फारसी अहूरमज्द	अंगीरस, अंगिरा, आर्य, इज्य, गीष्पति, गुरु, धिषण, चित्रशिखण्डिज, जीव, सुराचार्य, वाचस्पति, सुरगुरु, सूरि, प्रशांत, देवगुरु, त्रिदिवेशवन्द्य।
शुक्र	Venus ♀	जुहरी फारसी नाहीद	उशना, आस्फुजित, कवि, काव्य, भार्गव, भृगु, भृगुसुत, दैत्यगुरु, सित, सूनु, अच्छ, काण, दानवेज्य, असुरपूजित।

ग्रहों का प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	अरबी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द
शनि	Saturn ♄	जुहल फारसी केदवान	असित, आर्कि, कोण, छायात्मज, मंद, मांदि, शनैश्चर, सूर्यसूनु, सूर्यपुत्र, रविज, यम, पंगु, अर्कपुत्र, सौरि, नील, भास्करी। (सूर्य के पर्यायवाची शब्द के साथ पुत्र, ज, आदि शब्द जोड़कर जो शब्द बने)।
राहु	Dragons Head (Node) ☊	रास	अगु, तम, विधुन्तुद, स्वर्भानु, सिंहिकेय, अभि, कृष्णांग, कपिलास. दीर्घ, असुर, गुह, सर्प, फणि, आगव। ध्वांत, पंक, पात, वक्र काकोदर, इन्द्ररिपु।
केतु	Draginns-tail (Node) ☋	जनब	ध्वज, शिखि, राहुपुच्छ, अहि, कृश गुदम्, ध्वज, अम्ल, अनिल, उत्पात, कबंध, धूमज, केतन, विकल, शिखावान, ब्रह्मपुत्र, विषगर्भ, वैजयन्त, अश्लेषाभव आर्द्रानुत्थक,
वरुण	Urauus Harschel	♅	×
वारुणी	Naptume	♆	×
	Pluto	P	×

नोट—मंगल भूमिसुत, बुध चन्द्रपुत्र तथा शनि सूर्य का पुत्र माना गया है। सूर्य को ग्रहपति, चन्द्रमा को तारा (नक्षत्र) पति, बृहस्पति को इन्द्र तथा देवताओं का गुरु शुक्र को दैत्यों का गुरु कहते हैं।

हमने विस्तार भय से ग्रहों तथा राशियों के पर्यायवाची प्रचलित ही शब्द दिए हैं। अधिक विस्तार से पर्यायवाची शब्दों के लिए—

जोतिषविद्वद्वर श्री मुकुन्द शर्मा रचित जोतिष शब्दकोश देखना चाहिए।

अंकानां विलोमतो गतिः—

उदाहरणः—अंक

७ ५
मुनि चाप = ५७ (७५ नहीं)

९ ५
नंद बाण = ५९ (९५ नहीं)

८ ६
वसु शास्त्र = ६८ (८६ नहीं)

९ ४
नंद वेद = ४९ (९४ नहीं)

२ ५
नेत्र चाप = ५२ (२५ नहीं)

३ ६
वह्नि शास्त्र = ६३ (३६ नहीं)

८ ५
वसु बाण = ५८ (८५ नहीं)

मख = म ५ ख २ = २५ (५२ नहीं)

सह = स ७ ह ८ = ८७ (७८ नहीं)

लव = ल ३ व ४ = ४३ (३४ नहीं)

जैमिनीय सूत्र में प्रयुक्त क ट प यादि संख्या चक्र—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ		
ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न		
प	फ	ब	भ	म							
य	र	ल	व	श	ष	स	ह	क्ष	त्र	ज्ञ	

इसी प्रकार सर्वत्र समझना। ऐसे शब्दों का प्रयोग भृगुसंहिता में जातक के फल घटना से वर्षों के लिए किया गया है। कुछ और ग्रन्थों में भी ऐसा प्रयोग हुआ है।

कहीं कहीं अंक के पर्यायवाची उपर्युक्त शब्दों के पर्यायवाची अन्य शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। शब्दों के पर्यायवाची शब्द अमरकोष में है।

नक्षत्र संख्या	नक्षत्र	नक्षत्र के पर्यायवाची शब्द	फारसी नाम	नक्षत्र संख्या	नक्षत्र	नक्षत्र के पर्यायवाची शब्द	फारसी नाम
१	अश्विनी	तुरग दस्र अश्वियुग, हय । जो, यमी वालिनी,	शरती	१०	मघा	पितृ, जनक, आदिजा, पिता, पितृ पर्यायवाची शब्द ।	जब्हा
२	भरणी	यम, कृतान्त, याम्य । ब्य अपभरणी	वर्तान	११	पू० फा*	भाग्य, फाल्गुनी, पूर्वयोनि,योनि पर्यायवाची शब्द ।	झाहेरा
३	कृत्तिका	हुताशन, अग्नि: बहुला । कृ अनल, कृशानु,	सुरैया	१२	उ० फा०	अर्यमा, उत्तरभग, अदितिसुत भग पर्यायवाची शब्द	सफा
४	रोहिणी	विधि विरंचि, शकट । रो, माहेषी, गो उस्ना, सौरभेयी	दबरा	१३	हस्त	भानु, अरुण, अर्क । बाहु पाणि, सावित्री, भवसु	अवा
५	मृगशिरा	सौम्य, चन्द्र, अग्रहायणी, उडुव मृ, आब्ज, आर्य, मस्तकं	हकुआं	१४	चित्रा	त्वष्टा, सुरवर्धकी । तक्षा देव शिल्पी, विश्वकर्मा	समाक
६	आर्द्रा	तारका, रौद्र, द्रा, इश, भर्ग, शिव:, शूली, हारम्	हंजा	१५	स्वाती	मरुत, वात,समीरण,वायु,समीर अनिल, महाबल, वायुपर्याय	गफरा
७	पुनर्वसु	अदिति, सुरजननी । सू, अमर माता, आदितेय, काश्यपी	शिरा	१६	विशाखा	द्विदैवत, इन्द्राग्निक, शूर्पभ । शक्राग्नि, इन्द्रवह्नि पर्याय	झवा
८	पुष्य	तिष्य, अमरेज्य । ष्य, अंगिरा, आर्य, इज्य, जीव	नसरा	१७	अनुराधा	मैत्र । मित्र पर्यायवाची शब्द	अकली
९	आश्लेषा	अहि, भुजंग, श्लेषा । षा उरग, कद्रुज व्याल फणी, कुण्डली, दंदशूक, सर्प पर्यायवाची शब्द	तुर्फा	१८	ज्येष्ठा	कुलिशतारा,शतमख, सुरस्वामी इन्द्र, पौरन्दर,महेन्द्र, सुरस्वामी इन्द्र पर्यायवाची शब्द	कल्ब

नक्षत्र संख्या	नक्षत्र॰	नक्षत्र के पर्यायवाची शब्द	फारसी नाम	नक्षत्र संख्या	नक्षत्र	नक्षत्र के पर्यायवाची शब्द	फारसी नाम
१९	मूल	असुर, क्रतुभुज आशर। जटा दानव शिफा, नैऋति	सोला	२६	उ०भाद्रपदा	अहिर्बुध्न्य, उत्तरा, प्रोष्ठपात उमा	मुअख
२०	पूर्वाषाढ़	पय, सलिल, जल, तोय। जल पर्यायवाची शब्द	नसा	२७	रेवती	पूषा, पौष्ण, अन्त्यं, नष्टदशन	दिखा
२१	उत्तराषाढ़	विश्व। अषाड़ा, उषा, विश्वं विश्व पर्यायवाची शब्द	वलदा	२७	रेवती	इन दोनों नक्षत्रों की सन्धि एक प्रहर प्रमाण=गण्डान्त।	
२२	उत्तराषाढ़		झावे	१	अश्विनी		
		अभिजित। अजः, कः, विधि।					
	चतुर्थचरण			९	आश्लेषा	इन दोनों की सन्धि एक प्रहर तक=गण्डान्त।	
				१०	मघा		
२२	श्रवण	श्रोणा, विष्णु, हरि, श्रुति। अः, अजम्, क्रण	वला	१८	ज्येष्ठा	इन दोनों की सन्धि का एक प्रहर=गण्डान्त।	
२३	धनिष्ठा	श्रविष्ठा, वसु। द्रविण धनं, वसु देवता पर्याय	सोऊद	१९	मूल		
२४	शतभिषा	प्रचेता, शततारका, वरुण। जलेश जल पर्याय	अखवा			ज्येष्ठा मूल की सन्धि एक घटी =अभुक्तमूल	
२५	पू०भाद्रप्रद	अजैकपाद, अजपात् पूर्वप्रोष्ठपद प्रोष्ठपद, भद्र	मुकई				

राशि संज्ञा पर्यायवाची शब्द

राशियों के प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द	फारसी नाम	अरबी नाम
मेष	(Ram) Aries ♈	अज, उरण, क्रिय, एडक छग, छगल, (मेढ़, उरभ्र, ऊर्णायु, वृष्णि, अम्बु मेढ़े के नाम हैं) प्रथम, बस्त, विश्व, आद्य, तुबुर, उरण	बरे	हमल
वृष	Taurus (Bull) ♉	वृषभ, ताबुरी, (उक्षन्, भद्र, बलीवर्द, गो, ऋषभ ये नाम बैल के हैं) । अण्डवान	गत्व	सोर सूर
मिथुन	Gemini (Twine) ♊	जितुम, नृयुक् (द्वंद्व युग्म) यम वीणा,मन्मथ वल्लकी	दोपेकर	जौजा जोझा
कर्क	Cancer (Grab) ♋	कुलीर,कर्कट, आटक इन्दु कीट, कर्म षोडशांघ्रि सलिलचर, विधुभ	खरचंग	सरतान
सिंह	Leo (Lion) ♌	लेय, कंठीरव, (मृगेन्द्र, पंचास्य, हर्यक्ष, केसरी, हरि, वनराज ये नाम सिंह के हैं) हरि, काननेश	शीर	असद्
कन्या	Virgo (Virgin) ♍	पाथोन (अंगना), अबला तन्वी,रमणी,तरुणीकुमारी	खुर्श	सम्बळा
तुला	Libsa (5cale) ♎	जूक (वाणिक) तौलि, घट पिचु, यूक, तंगम आप-णिक, वैदेहक	तराजू	मीजां

राशि संज्ञा पर्यायवाची शब्द

राशियों के प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द	फारसी नाम	अरबी नाम
वृश्चिक ♏	Scorbio (Scorp-ion)	कौर्प्य, अलि, द्रुण (कीट) अष्टम, कौर्पि । अली, कौर्पी द्रोष्ण, भृंग हिरेक, भ्रमर, चंचरीक	कझदुम	अकरब अकब
धनु ♐	(Centaur) Sagitsa-rius (Bow-man)	चाप, तौक्षिक, धन्वी, शरासन, शस्त्री, शांर्ङ्ग हय, इष्वास, कार्मुक, कोदण्ड, निषंगी, शरग, तौक्षी	कमाल	कोष
मकर ♑	Cayri-cornus (Croeo dile	मृग,आकोकेनो(आकेकर), नक्र, नक, एण, कुरंग, कुम्भीर करिकर, मृगभुग, शिशुमार, हरिणास्य, अजितभोज	बोझ	जही
कुम्भ ♒	Aquarius (water carrier)	घट, (द्रोण), घटस्तोय, धराभिधान, व:, कुट, निप: हृद्रोग:	दुल	दलू
मीन ♓	Pisces (Fishes)	अन्यभ, झष, अन्त्यभ, क्रिय, रिष्फ, मंत्स्य, पृथु, रोम, झंठ, तिमि. प्रोष्ठी	माही	हुत
राशि	Signs of zadiac	कक्ष, क्षेत्र	×	×
संधि	Cusp	×	×	×

भावों के पर्यायवाची शब्द

भावों के प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द	भावों से विचार किये जाने वाले विषय (जातक परिजात का मत)
प्रथम	Houses Ascadent	लग्न, उदय, आद्य, तनु, जन्म, विलग्न, होरा	शरीर का वर्ण, आकृति, लक्षण, यश, गुण, स्थान, सुखदु:ख, प्रवास, तेज, बल, स्वास्थ
द्वितीय	II house	स्व, कुटुम्ब, वाक्, अर्थ, मुक्ति, नयन	धन, नेत्र, सुख, विद्या: नयन, कुटुम्ब, भोजन, पैतृकधन, आँख
तृतीय	IIIhouse	दुश्चिक्य, विक्रम=पराक्रम, सहोदर, सहज, वीर्य, धैर्य	भ्रांता, पराक्रम, साहस, कण्ठस्वर, श्रवण, आभरण, वस्त्र, धैर्य, बल, मूल, फल, भगिनी, स्वास
चतुर्थ	Mid Eaven	सुख, पाताल, वृद्धि, हिबुक, क्षिति, मातृ, विद्या, चतुष्टय, तुर्य, वेश्म, यान, अम्बु, गेह, बन्धु, मित्र	विद्या, माता, सुख, गो, बन्धु, मनोगुण, राज्य, यान, भूमि, गृह, हृदय, छाती, लीवर
पञ्चम	V house	धी, बुद्धि, पितृ, नन्दन, पुत्र, देवराज, पञ्चक	देवता, राजा, पुत्र, बुद्धि पुण्य, यात्रा, पुत्रप्राप्ति, पितृ विचार (सूर्य से) पाचन क्रिया
षष्ठ	VI house	रोग, अङ्ग, शास्त्र, भय, रिपु, क्षत	रोग, शत्रु, व्यसन, चोटघाव (मंगल से भी विचारना) विवाद, मामा
सप्तम	VIIhouse	जामित्र, द्यून, काम, गमन, कलत्र, संपत, अस्त	सम्पूर्ण यात्रा, पुत्र-स्त्री सुख, विवाह (शुक्र से भी) व्यापार, पति, पत्नी सम्बन्धी सभी बातें

भावों के प्रसिद्ध नाम	अंग्रेजी नाम	पर्यायवाची संस्कृत शब्द	भावों से विचार किये जाने वाले विषय (जातक परिजात का मत)
अष्टम	VIII house	आयु, रन्ध्र, रण, मृत्यु, विनाश	आयु (शनि से भी) विदेश यात्रा, कर्ज, समुद्र यात्रा, उत्तराधिकार से सम्पत्ति
नवम	IX house	धर्म, गुरु, शुभ, तप, नव, भाग्य, अंक	भाग्य, प्रभाव, गुरु, धर्म, तप, शुभ (वृहस्पति से भी) पिता
दशम	X honse	व्यापार, मेषूरण, मध्य, मान, ज्ञान, राज, आस्पद, कर्म, ख, व्योम	आज्ञा, मान, भूषण, व्यापार, निद्रा, कृषि, प्रवज्या आगम, कर्म, जीवन, जीविका, वृत्ति, यश, बिज्ञान, विद्या, पिता, व्यापार, नेतागिरी
एकादश	XI house	उपान्त्य, भव, आय, लाभ	सम्पूर्ण धन प्राप्ति, आय, लाभ, सरकारी धन, एकादश में सभी ग्रह शुभ
द्वादश	XII house	व्यय, अन्त्यभ	दूर का जाना, दुर्गति, शयन, विभव, वित्तक्षय, व्यय शैया, स्वप्न, निद्रा (शनि राहु से भी) आँख

भाव		संज्ञा	भाव	सज्ञा
१,४,७,१०		केन्द्र	३,६,१०,११	उपचय
१,५,९		त्रिकाण	१,२,४,६,७,८,९,१२	पीडर्क्ष
२,५.८,११		पणफर		
३.६,९;१२		आपोक्लिम		
४,८		चतुरस्त्र		

अंक	अंग्रेजी नाम	अंग्रेजी अंक	पर्यायवाची शब्द
०	Zero	0	ख, शून्य, अभ्र
१	One	1	क, इन्दु, चन्द्र, धरा, क्षिति, भूमि, विधु, इला, भू
२	Two	2	अक्षि, नेत्र, पक्ष, श्रोत, नयन, यम, कर, भय
३	Three	3	राम, वह्नि, अग्नि, गुण, लोभ, पावक, ग
४	Four	4	युग, वेद, कृत, आर्णव, पयोधि, अब्धि, विना, शक्र
५	Five	5	शर, बाण, चाप, इषु; भूत, वायु, लेप, अर्थ
६	Six	6	शास्त्र, रस, तर्क, अग, ऋतु, आदि
७	Seven	7	मुनि, अश्व, शैल, भूधर, आक्, गिरि, आग, अद्रि, स्वर
८	Eight	8	वसु, नाग, गज
९	Nine	9	नग, नन्द, खेट, ग्रह, अंक, अश, रत्न
१०	Ten	10	दिग्, हरिद्, कुम्भ, पंक्ति, आशा, दिग्पाल
११	Eleven	11	रुद्र, ईश, शिव
१२	Twelve	12	अर्क, मास, इन, स्फुट, दिनेश, (सूर्य के पर्याय मास वाची शब्द)
२०	Twenty	20	नख, विंशति, विंश
२५	Twenty-five	25	तत्व
३०	Thirty	30	त्रिंश